श्री जिनायनम

श्रीरत्नमंदिरगणिविकृत उपदेशतरंगिणी

तथा

श्रीहरिभद्रसूरिकृताष्टकानी.

आ अमुल्य उपदेशतरंगिणी ग्रंथमां विविधोपदेशथी
भरेला पांच तरंगोनुं मुलसहित भाषांतर तथा
अष्टकजीमां मुल तेनो भाषांतर अने टीकाना
भावार्थ साथे बत्रीश बाबतोपर तेना बत्रीश
भाग पाडीने अतिउत्तम वीवेचन करेलुं छे ते

समस्त चतुर्विध श्रीसंघने अवश्य वांचवा भणवा
माटे घणोज उपयोगी जाणीने

श्रावक. शा० भीमसिंह माणके,

श्रीमुंबापुरीमध्ये
निर्णयसागर नामक मुद्रायंत्रमां मुद्रीत कराव्यो

वीर संवत २४२३

वीक्रम संवत १९५३ सने १८९७

वैशाख शुदि ३ रवौ

प्रस्तावना

सर्व सुज्ञ जैन बांधवोने मालुम थाय जे आ उपदेशतरंगिणी नामना अतिमनोहर ग्रंथनुं गुजराती जापातर छपावी प्रसिद्ध करवानो अमारो घणा वर्षो थया विचार हतो पण केटलीक अगवडोने लीधे ते कार्य मूलतवी रह्युं हतुं पण हालमा तेनु आ गुजराती जापातर छपावी अमोए प्रसिद्ध करेलु छे. आ ग्रंथना कर्ता श्री रत्नमंदिरगणी जीए तेना पाच तरंगो कर्या छे पेहेला तरंगमा पाच प्रकारना दानोलुं घणुंज रमणीक स्वरूप आपेलुं छे तेम ते दरेक दानोना स्पष्टी करण माटे मनोहर कथाओ आपीने घणाज उत्तम प्रकारथी तेनुं विवेचन करेलु छे बीजा तरगमा जैनधर्मना शास्त्रोमा कहेला साते क्षेत्रोनु घणाज खुलासाथी वर्णन करेलु छे, तथा ते साते क्षेत्रोमा पोतानु द्रव्य खरचवाथी केवो लाज थाय छे ? ते सघलुं दृष्टातो तथा पुरावाओ साथे स्पष्टरीते समजावेलु छे त्रीजो तरंग पूजा पचासकनो छे ते तरंगमा विविध प्रकारनी जिनपूजाओनु स्वरूप तथा तेथी मलता फलो मनोहर कथाओनी साथे समजावेला छे चोथा तरंगमा तीर्थयात्रानु स्वरूप देखाडेलुं छे, अने ते साथे पूरातन कालमा जे जे महान जैनधर्मी शाहुकारोए अत्यत द्रव्यखरचीने तीर्थ यात्राओ करेली छे, तेनुं लोकप्रिय वर्णन करवामा आवेलु छे पाचमो तरग धर्मोपदेशरूप छे तेमा विशेप प्रकारे जैन धर्म सबधि अत्यत रमणीक उपदेश कथाओ सहित आपेलो छे एवी रीते आ ग्रथ पाच तरगोथी बनेलो छे आ ग्रथना कर्ता श्री रत्नमदिरगणी तपगछमा थएला श्री सोमसुदरसूरिजीना शिष्य श्री रत्नशेखरसूरिना शिष्य पडित नदिरत्न गणिना शिष्य हता

तेउ महान् विद्वान् तथा इतिहासिक बाबतोथी वधारे माहित-
गार हता, एम आ तेमनो रचेलो ग्रंथ स्पष्ट रीते सूचवी आपे
छे. आ ग्रंथ एटलो तो उपयोगी तथा रसिक छे के तेनुं आ
जगोए बिलकुल वर्णन नहीं करतां अमो अमारा स्वधर्मी जैन-
बंधुउने ते समस्त ग्रंथ आद्यथी ते अंतसुधी वांची जवानीज
अमो ज्लामण करीए छीए. आ ग्रंथ उपदेशीक होवाथी ते
परम वैराग्यथी जरपूर बनेलो छे. अने तेथी एटलुंज कहेवुं बस
थशे के, दरेक जैन बंधुउए आ ग्रंथनुं मनन करवुं. आ ग्रंथ
वांचवाथी जैनधर्मनुं ज्ञान थवानी साथे जैनधर्ममां थएला म-
हान राजाउ तथा शाहुकारोना इतिहासिक वृत्तांतोनी पण मा-
हेतगारी मली शकशे. अने तेथी अमोने आशा छे के, दरेक
जैनबंधु आ ग्रंथ खरीद करी तेनो लाज लेशे. आ मूल ग्रंथ
संस्कृत जाषामां होवाथी, अने ते जाषानुं हालना समयमां सर्व
जैनबंधुउने जाणपणुं न होवाथी अमोए तेनुं गुजराती जाषांतर
छपावी प्रसिद्ध करेलुं छे. तेमां प्रमादथी के मतिदोषथी जो कंइ
विपरी के उत्सूत्र लखायुं होय ते “ मिछामि डुकडं ” इत्य-
लं विस्तरेण.

श्रावक. जीमसिंह माणेक.

अनुक्रमणिका.

तरंग पहेलो.

तरंग बीजो.

तरंग त्रीजो.

तरंग चोथो.

तरंग पांचमो.

उपदेशतरंगिणी भाषांतर.

(कर्ता श्री रत्नमंदिरगणि)

श्रीनाभेयः स वो देया-दमेयाः परमा रमाः ॥
यन्नामध्यानतः सर्व-सिद्धयः स्युः स्वयंवराः ॥ १ ॥

अर्थ– श्री नाभि राजाना पुत्र प्रथम तीर्थंकर तमोने मापविनानी उत्कृष्ट लक्ष्मी आपो? के जे श्री नाभि राजाना पुत्रना नामना ध्यानथी सर्व सिद्धिओ पोतानी मेळेज आवीने वरे छे ॥१॥

जेमना प्रभावना समूहोथी सर्प पण धरणेंद्र थएलो छे, ते श्री पार्श्वनाथ प्रभु चक्रिवंतोनी अत्यंत ऋद्धिमाटे थाओ?

श्री चंद्रमा सरखा सुंदर यशना समूहथी भरेल छे पृथ्वीनुं तल जेओए तथा मोक्षरूपी लक्ष्मीना मुकुट सरखा एवा श्रीवर्धमान प्रभुने हु नमस्कार करु छुं (आ श्लोकमा कविए पोताना गुरु श्रीसोमसुंदर महाराज तथा श्री रत्नशेखर महाराजने पण गर्भित नमस्कार कर्यो छे)

जेनी कृपाथी जड माणस पण बृहस्पतिनी पेठे जगतमा पूजनीक थाय छे, ते सरस्वती देवी सज्जनोने आनंद आपो?

अमृतसरखी देशनाना रसथी मनोहर थएली, तथा मुनिराजोने पण माननीक एवी आ उपदेशतरंगिणी घणा काळसुधी जय पामो?

श्रीनंदिरत्नना शिष्य एवा श्री रत्नमंदिरगणी साधु हवे उपदेशरूपी मधथी प्राणीओने खुशी करे छे

ते नीचे प्रमाणे-

वसुधाभरणं पुरुषः, पुरुषाभरणं प्रधानतरलक्ष्मीः॥
लक्ष्म्याभरणं दानं, दानाभरणं सुपात्रं च॥ १॥

अर्थ- पुरुष छे ते पृथ्वीनुं आभूषण छे, अने उत्तम लक्ष्मी ते पुरुषनुं आभूषण छे, लक्ष्मीनुं आभूषण दान छे, अने दाननुं आभूषण सुपात्र छे. ॥ १ ॥

परमार्थथी चतुर माणसोए पुरुषोनेज पृथ्वीना आभूषणरूप कहेला छे, केमके, जगतमां जे उत्तम भावो थाय छे, तेउ सघला उत्तम पुरुषना अवतारथी थाय छे. जेमके, पुरुषोमां सिंहसमान एवा तीर्थंकर महाराज ज्यारे विचरे छे, त्यारे आ पृथ्वी मणिना, सुवर्णना तथा रुपाना त्रण गढोवाली, चार द्वारवालां समोसरणवाली, देवोए करेलां सुवर्णमय कमलोवाली, घुंटणपर्यंत सुगंधि पुष्पोना समूहवाली, अशोकवृक्ष तथा सर्व ऋतुनी वनस्पति, पुष्प, तथा फलोना भारथी भूषित थाय छे, तेम मरकी, दुकाल, भय, ईतिउ, वैर, तथा रोग आदिकना उपद्रवो विनानी थाय छे. तेम चक्रवर्ती, तथा वासुदेव आदिक (त्रेसठ) शलाका पुरुषो राज्य करते छते नाना प्रकारनां नगरोनी स्थापना, मोटा मेहेलो, बगीचा, वावडी, कुवा, तलाव, किल्ला, खाइउ, कुंभो, परबो, मठो तथा देवमंदिरोथी पृथ्वी सुंदर थाय छे; तेम चोरोनी धाड, कुलटा स्त्रीउ, लुंटारानां टोलां आदिक दुष्टोनां कष्टोनी श्रेणिउथी रहित थइने मनोहर थाय छे. शास्त्रमां पण कहुं छे के,

पुरिसेहिं रइय तित्थं, न हु पुरिसा हुंति तित्थरईयावि॥
इत्तो पवरं तित्थं, पुरिसं पन्नणंति सव्वणू॥ १॥
पुरिसाउ होइ तित्थं, न हुंति तित्थाउ तिहुअणे पुरिसा॥
सलिलाउ हवइ धणं, नो नीरं होइ धणाउ॥ २॥

अर्थ– एवी रीते तीर्थोने पण पुरुषोएज प्रवर्तावेला छे केमके, अतीत, अनागत अने वर्तमान कालमा अनेक सिद्धोने सिद्धपदनी प्राप्तिथी श्रीशत्रुंजय तीर्थनु "श्रीसिद्धक्षेत्र तीर्थ" एवु नाम प्रसिद्ध थयु छे कह्यु छे के

उस्सप्पिणीइ पढमं, सिद्धो इह पढमचक्किपढमसुउ ॥
पढमजिणस्सय पढमो, गणहारो जत्थ पुंडरिउ ॥ १ ॥
चित्तस्स पुन्निमाए, समणाणं पंच कोडिपरिवरिउ ॥
निम्मलजसपुंडरियं, जयउ तयं पुंडरियतित्थम् ॥ २ ॥

अर्थ– आथी करीनेज हमणाना कालमा पण श्रीशत्रुंजय, सोपारक, वृद्ध नगर आदिक क्षेत्रोमा नाना प्रकारनां स्थानकोथी आवेला संघो चैत्री पुनेमने दिवसे पुष्प, दाम आदिकना दानपूर्वक सिद्धांतोमा कहेली विधिथी पूजा, ध्वजारोपण, घीनी धारावली, तथा प्रदक्षिणा आदिक महोत्सवो करे छे वली कह्यु छे के, जे रायणना वृक्षनी नीचे नाभिराजाना पुत्र श्रीऋषभदेव प्रभु समोसर्या हता, ते रायणनुं वृक्ष वदनिकपणाने प्राप्त थयुं छे वली सारावलि प्रकीर्णकमा पण कह्यु छे के, नवाणु पूर्व वखत श्रीऋषभदेव प्रभु शत्रुजयपर समोसर्या छे एटले ६९८५४ ४०००००००००० वार समोसर्या छे

तेम श्री रैवताचलजीनुं तीर्थ पण अनंता तीर्थकरोना त्रण कल्याणको थवाथी प्रख्यात थएलु छे कह्युं छे के,

दीक्षाकेवलनिर्वृत्ति-कल्याणत्रिकमनंततीर्थकृताम् ॥
युगपदथैकमभवत् ,स जयति गिरिनारगिरिराजः १

श्री नेमीश्वर प्रभुना ज्या त्रण कल्याणको थया हता त्या श्रीकृष्ण वासुदेवे त्रण प्रासादो कराव्या हता, तथा नाना प्रकारना प्रभाववाली राजीमती, गात्र प्रद्युम्नकुमार, क्षात्र जलना

गलवाथी जंगने प्राप्त थएली लेप्यमय प्रतिमाने जोवाथी खिन्न थएला रत्नसार श्रावके अंबिका दिवीनुं आराधन कर्युं; त्यारे तेणीए श्री ब्रह्मेंद्रे बनावेली वज्रमयमूर्ति तेने आपी, अने तेणे ते मूर्तिने त्यां स्थापी; इत्यादि अनेक पूर्वे थइ गएला प्रधानपुरुषोना प्रभावथी ते रैवताचल प्रसिद्धताने प्राप्त थयो, तथा सर्व दर्शनीउंथी जगतमां पूजावा लाग्यो. कह्युं छे के,

सारं सिद्धगिरेर्यदेव विदितं यन्नेमिनः स्वामिनः,
कंदर्पद्विपदर्पमर्द्दनहरेर्वीरावदातास्पदम् ॥
यन्निःसंख्यमहर्षिकेवलरमासंयोगसंकेतभू,
स्तीर्थश्रीगिरिनारनाम तदिदं दिष्ट्या नमस्कुर्महे १

अर्थ– जे श्रीगिरनार नामनुं तीर्थ सिद्धगिरिनो सार छे, तथा कामदेवरूपी हाथीना दर्पने नाश करवामां सिंहसमान एवा श्री नेमिनाथ प्रभुना वीरपणानुं स्थानक छे, तथा जे संख्याविनाना महान ऋषिउंनी केवलज्ञानरूपी स्त्रीना संयोगनी संकेतनी भूमिसरखुं छे, एवा ते श्रीगिरनारजी नामना तीर्थने सारी रीते हुं नमुं छुं. वली तेमज श्री आबुजीनुं तीर्थ पण भरतचक्रीए करावेला श्रीयुगादि प्रभुना प्रासाद तथा बिंबथी, तथा श्री नागेंद्रादिक आचार्योथी प्रतिष्ठित थएली श्री आदीश्वर प्रभुनी प्रतिमाना स्थापनथी, तथा श्रीविमलशा, वस्तुपाल आदिकोए बनावेलां श्रीऋषभदेव, तथा नेमिनाथ प्रभुना प्रासाद आदिक पुण्यकार्योनी परंपराथी पृथ्वीमां प्रसिद्ध थएलुं छे. कह्युं छे के,

नागेंद्रचंद्रनिर्वृत्ति-विद्याधरप्रमुखसकलसंघेन ॥
अर्बुदकृतप्रतिष्ठो, युगादिजिनपुंगवो जयति ॥ १ ॥

तेवीज रीते नागहृदमां रहेलुं नवखंडापार्श्वनाथनुं तीर्थ पण जाणवुं. तेनुं वृत्तांत नीचे प्रमाणे छे.

चित्रकूटनो स्वामी श्री चित्रागद राजा आघाटपुरत्तन जोवा माटे आव्यो हतो त्या तेने रात्रिए स्वप्न आव्युं के, परवाला तथा मोतीना स्वस्तिकथी शोभिता थएला नागहृद नामना कुडमा श्री पार्श्वनाथजीनी प्रतिमा छे पछी ते कुडमाथी ते प्रतिमाने तेणे कढाडीने नागहृद नामना नगरमा देहेरुं वाधीने तेमा स्थापन करी हवे एक दहाडो ते नगरमा ते राजाना वशनो सोम नामे राजा राज्य करतो हतो त्यारे त्या लडवा माटे योगिनी नामना नगरथी असुरोनुं लश्कर आव्यु त्यारे ते सोम राजाए ते प्रतिमानु पूजन कर्यु, त्यारे ते ते प्रतिमाना अधिष्ठायकथी अधिष्ठित शरीरवालो थइने लडवाने गयो, अने ते असुरोना सैन्यनो तेणे पराजय कर्यो पण पोताना शरीरमा त्या तलवारना नव घा वाग्या पछी ज्यारे ते पाछो आव्यो, त्यारे तेणे पोताने अक्षत शरीरवालो, तथा मूर्तिने नव टुकडावाली जोइ त्यारे तेणे त्रण उपवास करीने देवतानुं आराधन कर्यु पछी ते देवताए दीधेला स्वप्नने अनुसारे ते नवे टुकडाओने जोडीने तेणे प्रतिमाने सज्ज करी अने तेथी महामहिमाना स्थानकरूप, तथा सर्व उपद्रवोने हरनारु ते नवखडा पार्श्वनाथनुं तीर्थ थयु

वली तेवीज रीते श्री अष्टापदना तीर्थने पण भरतचक्रीए प्रवर्ताव्युं छे कह्युं छे के,

अष्टापदाद्रिशिखरे, निजनिजसंस्थानमानवर्णधराः ॥
भरतेश्वरनृपरचिताः, सद्रत्नमया जयंति जिनाः ॥१॥

तेवीज रीते सेरिसक तीर्थ पण जाणवुं, तेनुं वृत्तात नीचे प्रमाणे जाणवु

देवचद्र नामना क्षुल्लकने चक्रेश्वरी देवीए सर्व कार्योनी सिद्धिनु वरदान आप्यु हतु, तेणे त्रण भूमिवालु एक अत्यत सुंदर जिनमंदिर एक रात्रिमाज वनाव्यु तथा तेमा श्री पार्श्वनाथ प्रभु

आदिक चोविसे जिनेश्वरोनी कायोत्सर्ग ध्यानमां रहेली प्रतिमार्जने स्थापन करी. ते तीर्थ आ कलिकालमां पण अतुल्य प्रभाववालुं देखाय छे.

वली तेमज श्री कुमारपाल राजाए करावेलुं एवुं अत्यंत उंचा एवा श्री अजितनाथ प्रभुना प्रासादवालुं, अने सर्व लोकोना आनंदरूपी कंदने उत्पन्न करवामां नवीन मेघसरखुं श्री तारंगदुर्ग नामनुं तीर्थ पण प्रसिद्धज छे. तेमज मंडपाचलपर रहेला मोटा मंदिरवालुं तीर्थ पण प्रसिद्ध छे, के जेमां महा सती सीताए गोमयनी श्री पार्श्वनाथ प्रभुनी प्रतिमा बनावी हती, पण तेणीना शीलना माहात्म्यथी ते वज्रमय थइ गइ हती. वधारे शुं कहेवुं? जीरापल्ली, फलवर्धिक, कलिकुंड, कुक्कटेश्वर, पावक, आरासण, शंखेश्वर, रावण पार्श्वनाथ, वीणादीश्वर, चित्रकूट, आघाट, श्रीपूर, स्तंभनपार्श्व, राणकपुरनुं चौमुख प्रासाद, इत्यादिक अनेक तीर्थो के जे आ दुनीयापर हयात छे, थइ गयां छे, अने थवानां पण छे, ते ते सघलां तीर्थो, पुरुषोमां मुकुटसमान तथा पुरुषोमां इंद्र समान एवा प्रधानपुरुषोए प्रवर्तावेलां छे.पण कंइ पोतानी मेलेज उत्पन्न थयां नथी.वली एवुं पण कोइ तीर्थ संभलाएलुं के जोवाएलुं नथी, के जेमांथी पुरुषो उत्पन्न थाय छे,आथी करीनेज पृथ्वीनुं आभूषण पुरुषज छे. कह्युं छे के,

हस्ती भाति मदेन कं जलरुहैः पूर्णेंदुना शर्वरी
वाणी व्याकरणेन हंसमिथुनैर्नद्यः सभा पंडितैः ॥
शीलेन प्रमदा जवेन तुरगो नित्योत्सवैर्मंदिरं
सत्पुत्रेण कुलं नृपेण नगरं लोकत्रयं धार्मिकैः॥ १ ॥

दाराऽधावमृतं धने वितरणं वाणीविलासे श्रुतं
देहेऽन्योपकृतिः फलं वरतरौ वंशे च मुक्ताफलम् ॥

मृत्स्नायां कनकं सुमे परिमलः पंके पयोजं यथा
संसारे पुरुषायुषं निगदित सार तथा कोविदैः ॥२॥
गत्याऽथहत्या श्रुतसंयमाभ्यां,
सद्दानसध्यानतपःक्रियाभिः ॥
अर्हत्पदज्ञानशिवर्द्धिभिश्च,
मानुष्यकं जन्म वरं सुरेभ्यः ॥ ३ ॥

वली ते पुरुषोनुं आजूपण लक्ष्मीज ले पण रूप अने कलादिक गुणो आजूपणरूप नथी कह्यु ले के,

जाइरूवं विज्जातिन्नि, विनिवडंतु कंदरे विवरे ॥
अच्छुच्चिय परिवट्टउ, जेण गुणा पायमा हुंति ॥१॥

वली लक्ष्मीवान माणस अकुलिन होय तोपण उत्तम कुलनो, वन्ने कुलथी शुद्ध, एकसो एक कुलोनो उद्योत करनारो, वन्ने पक्षथी निर्मल राजहंसना अवतार सरखो गणाय ले, वली ते कलाविनानो होय तोपण लक्ष्मीथी बहोंतेर कलानो जाण कहेवाय ले, वली त्रीज के तेरस आदिकना नेदनु जेने ज्ञान पण नथी, एवो पण पुरुष जो द्रव्यवालो होय तो चउद विद्यानो पारगामी तथा बृहस्पति सरखो दुनियामा कहेवाय ले, कुरूपवालो होय तोपण उत्तम रूपवालो कामदेव सरखो, कालो होय तो कृष्णावतारवालो, ठींगणो होय तो वामन वासुदेवना अवतारवालो, उचो होय तो घुटणसुधि लावा हाथवालो, लावा कानोवालो होय तो चपाना छोड जेवो, थाकु बोलनारो होय तो मुखकमलमाथी कर्पूरनी चूरणने खरवावालो, बहुबोलो होय तो वाचाल चाणाक्य सरखो चकोर, थोकु खातो होय तो देवाशी तथा पोपटनी पेठे आहार करनारो, घणु खातो होय तो पूर्व नवे संपूर्ण दान देइने आवेलो अने तेथी पोतानी इच्छा प्र-

माणे भोजन करनारो, आलसु होय तो भाग्यशाली, उद्यमी होय तो साहसिकोमां शिरोमणि, लंगडो होय तो मनोहर हाथीना बच्चांसरखी लीलायुक्त गतिवालो, लोभीष्ट होय तो चिंतामणिनी पेठे गुप्त दान देनारो, पात्र अपात्रना विचार विनानो जो होय तो उदार चरित्रवालो तथा आषाढ मासना वरसादनी पेठे उंच नीच स्थाननो विचार कर्याविना दान देनारो, इत्यादि अनेक दूषणोना समूहवालो होय तो पण लक्ष्मीरूपी स्त्रीथी जे आलिंगित थयो छे, तेना दूषणोने पण लोको गुणपणाथीज जुए छे. कह्युं छे के,

विगुणमविगुणड्ढं रूवहीणं च रम्मम्
जडमवि मइमंतं मंदसत्तंपि सूरम् ॥
अकुलमविकुलीणं तं पयंपंति लोआ
नवकमलदललीणा जं पलोएइ लच्छी ॥ १ ॥

वयोवृद्धास्तपोवृद्धा, ये च वृद्धा बहुश्रुताः ॥
सर्वे ते धनवृद्धस्य, द्वारे तिष्टंति किंकराः ॥ २ ॥

वंद्यते यदवंद्योऽपि, यदपूज्योऽपि पूज्यते ॥
गम्यते यदगम्योऽपि, स प्रभावो धनस्य हि ॥३॥

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः
स पंडितः स श्रुतवान् गुणज्ञः ॥
स एव वक्ता स च दर्शनीयः
सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयंते ॥ ४ ॥

आलस्यं स्थिरतामुपैति भजते चापल्यमुद्योगितां
मूकत्वं मितभाषितां वितनुते मौग्ध्यं भवेदार्जवम् ॥
पात्राऽपात्रविचारसारविरहो यच्छत्युदारात्मतां ।
मातर्लक्ष्मि तव प्रसादवशतो दोषा अपि स्युर्गुणाः ॥

अर्थ– नवा कमलनां दलपर लीन थएली लक्ष्मी जेने जुए छे, ते माणस निर्गुणी होय तोपण गुणवान कहेवाय छे, तथा रूपविनानो होय तोपण मनोहर कहेवाय छे, मुर्ख होय तोपण बुद्धिवान कहेवाय छे, निर्बल होय तोपण शूरो कहेवाय छे, तथा अकुलिन होय तोपण लोको तेने कुलीन कहे छे ॥ १ ॥ वयथी वृद्ध थएला, तपथी वृद्ध थएला, तथा घणा मिश्रुतो जाणीने तेमा जेउं वृद्ध थएला छे, ते सघलाउं धनथी वृद्ध थएलाउंने बारणे चाकर थइने रहे छे. ॥ २ ॥ नहीं वांदवालायक पण जे वंदाय छे, नहीं पूजवालायक पण जे पूजाय छे, अगम्य पण जे गम्य थाय छे, ते सघलो द्रव्यनो प्रजाव छे ॥३॥ जेनी पासे धन छे, ते माणस कुलीन, तेज पंडित, तेज शास्त्रवेत्ता, तेज गुणोने जाणनरो, तेज वाचाल तथा तेज जोवालायक थाय छे, माटे सर्वे गुणो धननो आश्रय करीने रहेला छे. ॥४॥ लक्ष्मीना प्रजावथी आलस स्थिरताने प्राप्त थाय छे, चपलता उद्योगपणाने प्राप्त थाय छे, मुंगापणु मितजाषिपणाने विस्तारे छे, मुग्धपणु आर्जवतारूप थाय छे, पात्र अपात्रनो विचार उदारपणाने आपे छे, माटे हे लक्ष्मीदेवी! तमारी कृपाना वशथी दूषणो पण गुणरूप थाय छे ॥ ५ ॥

हवे वधारे शुं कहेवु? सर्व प्रकारोथी पुरुषोनु आजपण लक्ष्मीज छे. हवे ते लक्ष्मी पण जो न्यायथी उपार्जन करी होय, तोज ते वधारे उत्तम छे, पण अन्यायथी उपार्जन करेली लक्ष्मी उत्तम नथी. कह्युं छे के,

अन्यायसंजवा श्री-रन्यायेनैव याति सा नियतम् ॥
अर्जनहानिक्लेशः, केवलमवशिष्यते कुधियाम्॥१॥

अर्थ– दुष्ट बुद्धि माणसोनी अन्यायथी उत्पन्न थएली ते

लक्ष्मी खरेखर अन्यायथीज चाली जाय छे, फक्त लक्ष्मीना कमावानो अने हानीनो क्लेशमात्र तेने तो बाकी रहे छे. ॥ १ ॥

अन्यायोपार्जितं वित्तं, दश वर्षाणि तिष्ठति ॥
प्राप्ते षोडशमे वर्षे, समूलं च विनश्यति ॥ २ ॥

अर्थ– अन्यायथी उपार्जन करेलुं धन फक्त दश वर्षोसुधिज रहे छे, पण शोलमुं वर्ष आवते छते ते मूल सहित नाश पामे छे.२

वली लक्ष्मीविनाना पुरुषोनां कुल, शील, लावण्य, रूप, तथा विद्यादिक गुणो पण दूषणपणाने प्राप्त थाय छे. कह्युं छे के,

साकारोऽपि सविद्योपि, निर्द्रव्यः क्वापि नार्ध्यते ॥
व्यक्ताक्षरः सुवृत्तोऽपि, द्रम्मः कूटो विवर्ज्यते ॥ १ ॥

अर्थ– उत्तमरूपवालो अने विद्वान एवो पण माणस जो धन रहित होय तो तेने लोको गणकारता नथी; केमके, प्रगट अक्षरवालो अने गोलाकारवालो पण खोटो पैसो वर्जी देवाय छे.॥१॥

वरं रेणुर्वरं भस्म, नष्टश्रीर्न पुनर्नरः ॥
मुक्त्वैनं दृश्यते पूजा, क्वापि पर्वणि पूर्वयोः ॥ २॥

अर्थ– धूल अने राख सारी छे, पण निर्धन पुरुष श्रेष्ठ नथी; केमके ते निर्धन पुरुषविना धूल अने राखनी कोइक पर्वमां पूजा थती देखाय छे. ॥ २ ॥

हवे निर्धन माणस जो उंचो होय तो ते थंभा सरखो, नीचो होय तो कुबडो, जो रुपालो होय तो आमवायुवालो, कालो होय तो वनमां रहेता भील सरखो, थोडुं खातो होय तो मंद, घणुं खानारो होय तो दुकालीउं, उदार होय तो उडाउ, आडंबरवालो होय तो दुराचारी, विनयी होय तो भीखारी, थोडुं बोलनारो होय तो मुंगो अने मूर्ख, वाचाल होय तो बहु बकबकीउं, क्षमावालो होय तो बीकण अने रांक अने शूरो होय

तो धाडपाडनारो कहेवाय छे, वधारे शु कहेवु? निर्धन माणस तो क्याए पण पूजनीक थतो नथी आथी करीनेज पुरुषनु आभूषण उत्तम लक्ष्मी कहेली छे

हवे लक्ष्मीनु आभूषण दान छे कह्यु छे के,

काव्येनेव कविर्धियेव सचिवो न्यायेन भूमीधवः
शौर्येणेव भटो ह्रियेव कुलजः सत्येव गेहस्थितिः ॥
शीलेनैव तपस्विषेव सविता विद्ययेव आध्यात्मवान्,
वेगेनेव हयो दृशेव वदनं दानेन लक्ष्मीस्तथा॥१॥

अर्थ– काव्यथी जेम कवि, बुद्धिथी जेम मंत्री, न्यायथी जेम राजा, शूरापणाथी जेम सुभट, लज्जाथी जेम कुलपुत्र, सती स्त्रीथी जेम घरनी स्थिति, शीलथी जेम तप, कांतिथी जेम सूर्य, ज्ञानथी जेम अध्यात्मी, वेगथी जेम घोडो, तथा आखथी जेम मुख तेम दानथी लक्ष्मी शोभे छे ॥ १ ॥

वळी दानविना लक्ष्मीनो नाश पण संभळाय छे, कह्यु छे के,

श्रीवृद्धिर्नखवच्छेद्या, न धार्यैव कदाचन ॥
प्रमादात्स्खलिते क्वापि, समूलापि विनश्यति ॥१॥

अर्थ– लक्ष्मीनी वृद्धिने नखनी पेठे छेदवी, पण तेने सची राखवी नहीं, केमके, प्रमादथी स्खलना होते छते ते समूळी नाश पामे छे ॥ १ ॥

दान भोगो नाश-स्तिस्रो गतयो भवति वित्तस्य ॥
यो न ददाति न भुंक्ते, तस्य तृतीया गतिर्भवति ॥ २ ॥

अर्थ– दान, भोग अने नाश एम त्रण गतिओ धननी छे, माटे जे दान देतो नथी, के भोगवतो नथी, तेना धननी त्रीजी गति एटले नाश थाय छे ॥ २ ॥

आयासशतलब्धस्य, प्राणेभ्योऽपि गरीयसः ॥
गतिरेकैव वित्तस्य, दानमन्या विपत्तयः ॥ ३ ॥

अर्थ– सेंकडोगमे प्रयासथी मलेला तथा प्राणोथी पण वहाला एवा धननी दानरूपज एक उत्तम गति छे, बाकी तो विपत्तिरूप गतिउं छे. ॥ ३ ॥

दातव्यं भोक्तव्यं, सति धने संचयो न कर्तव्यः ॥
पश्येह मधुकरीणां, संचितमर्थं हरंत्यन्ये ॥ ४ ॥

अर्थ– धन होते छते तेनुं दान देवुं, तथा तेने भोगववुं, पण संचय करी राखवो नहीं; केमके, जुउं? के अहीं भमरीउंए एकठां करेलां धनने (मधने) बीजाउं हरी जाय छे. ॥ ४ ॥
एवी रीते सर्व प्रकारथी विचार करतां थकां लक्ष्मीने शोभावनारुं दानज छे. कह्युं छे के,

सारं तदेव सारं, नियोज्यतेयज्जिनेंद्रभवनादौ ॥
अपरंपुनरफलं, पृथ्वीमलखंडपिंडं वा ॥ ५ ॥

अर्थ– जे धनने जिनभुवनादिकमां जोडवामां आवे तेज धन उत्तम छे, पण बीजुं तो पृथ्वीना मेलना खंड अथवा पिंड सरखुं धन निष्फल छे. ॥ ५ ॥

दानरूपी आभूषण विना लक्ष्मीने पाषाणना मेलरूपज जाणवी. जेम पूर्वे पाटलीपुत्र नामना नगरमां नव नंद नामना राजा थया हता; तेउं अत्यंत कृपण होवाथी तेउंए लोकोपर कर नाखीने तथा तेउंने पीडीने घणुं धन एकठुं कर्युं हतुं तथा ते धनना तेउंए सुवर्णना नव डुंगरो कर्या हता. पण तेउंना अभाग्यना योगथी ते डुंगरो पाषाणरूप थइ गया. अने आजे पण ते डुंगरो पाटलीपुरपासे गंगाना कांठापर पीला पत्थरना देखाय छे.

तेमज एक श्रेष्ठिनी सपूर्ण लक्ष्मी पातालमा लुप्त थइ गइ छे ते-मज राजगृही नगरीमा रहेता मम्मण शेठे अत्यंत लक्ष्मी एकठी करीने मणिनो बलद बनाव्यो हतो. पण छेवटे दानादिकना अ-भावथी तेनी ते सर्व लक्ष्मी फोकटज पृथ्वीपर नाश पामी तेमज संकुल नामना शेठे कपिल बटुने कह्युं के, हु तने आवती काले भोजन करावीश, पण छेवटे तेने भोजन नहीं करावता छमास सुधि तेणे तेने ठग्यो त्यारे कपिल बटुए त्रण उपवासो करीने का-लिका मातानुं आराधन कर्युं, पछी ते देवीए दीधेली रूप बदला-ववानी विद्याना बलथी तेणे संकुलनु रूप धारण कर्युं. तथा तेनी सघली लक्ष्मीनें भोगवी पछी पोतानु रूप प्रगट करीने तेणे सं-कुलने एवो उपदेश आप्यो के,

दातव्यं भोक्तव्यं, सति विभवे संचयो न कर्तव्यः ॥
यदि संचय करिष्यसि, संकुल पुनरागमिष्यामि ॥१॥

अर्थ– हे संकुल! धन होते छते तेनुं दान देवु, तथा तेने भोगवबु, पण तेनो संचय करी राखवो नहीं, माटे हवे फरीने जो तुं धननो संचय करीश, तो हुं पाछो आवीश ॥ १ ॥

माटे हवे वधारे शुं कहेवुं? लक्ष्मीनु आभूषण केवल दानज छे, पण भोगआदिकनी सामग्री तेना आभूषणरूप नथी कह्युं छे के,

आरोहंति सुखासनान्यपटवो नागान् हयांस्तज्जुप-
स्तांबूलाद्युपभुंजते नटविटाः खादंति हस्त्यादयः
प्रासादे चटकादयोऽपि निवसंत्येते न पात्रं स्तुतेः
स स्तुत्यो भुवने प्रयछति कृती लोकाय यः कांक्षितम्।

अर्थ–(केटलाक) मूर्खो पालखीउपर बेसे छे, हाथी घोडाउं-वाला हाथी घोडाउपर चडे छे, नटविटो तांबूलआदिक खायछे,

हाथीआदिको पण खाय छे, मेहेलमां चीडीआदिको पण रहेछे, पण तेउ स्तुतिपात्र नथी; पण जे कृतार्थ माणस आ जगतमां लोकोने इच्छित दान आपे छे, तेज स्तुति करवा लायक छे ॥१॥

वली दीधेलुं दान क्यांएं पण निष्फल जतुं नथी. कह्युं छे के,

पात्रे धर्मनिबंधनं तदितरे प्रोद्यद्दयाख्यापकं
मित्रे प्रीतिविवर्द्धकं रिपुजने वैरापहारक्षमम् ॥
भृत्ये भक्तिभरावहं नरपतौ सन्मानपूजाप्रदं
भट्टादौ च यशस्करं वितरणं न क्वाप्यहो निष्फलम्।

अर्थ—सुपात्रप्रते आपेलुं दान धर्मना कारणरूप छे, तथा अन्यप्रत्ये दीधेलुं दान दयाने जणावनारुं छे, मित्रप्रते दीधेलुं दान प्रीति वधारनारुं छे, शत्रुने आपेलुं दान वैरनो नाश करवामां समर्थ छे, चाकरने दीधेलुं दान भक्तिना समूहने धारण करावनारुं छे, राजाने आपेलुं दान सन्मान अने पूजा आपनारुं छे, तथा भाटआदिकने दीधेलुं दान यशने करनारुं छे; एवी रीते अहो! दान क्यांएं पण निष्फल जतुं नथी.॥ १ ॥

हवे ते दाननुं आभूषण सुपात्रनो संयोगज छे; केमके, सुपात्र प्रते जे दान देवाय तेज कल्याणने अने शांतिने करनारुं छे. नैषधकाव्यमां कह्युं छे के,

पूर्वपुण्यविभवव्ययलब्धा, संपदो विपद एव विमृष्टाः ॥
पात्रपाणिकमलार्पणमासां, तासु शांतिकविधिर्विधिदृष्टः

अर्थ—पूर्वे करेलां पुण्योरुपी विभावना खरचवाथी मलेली संपदाउने आपदाउरुपज मानेली छे; पण ते संपदाउनुं सुपात्रोप्रते हस्तकमलथी जे अर्पण करवुं, ते तेउने विषे ब्रह्माए दीठेलो शांतिनो विधि छे. ॥ १ ॥

सुपात्रोप्रते आपेलुं थोकुं दान पण बहुफलवालुं थायछे कह्युंछे के,

जले तैलं खले गुह्यं, पात्रे दानं मनागपि ॥
प्राज्ञे शास्त्रं सतां प्रीति-र्विस्तारं यात्यनेकधा ॥ १ ॥

अर्थ–पाणीमा नाखेलु तेल, खलप्रते कहेली गुह्यवात, सुपात्र प्रते आपेलु थोकुं पण दान, विद्वानने (जणावेलुं) शास्त्र तथा सज्जनोनी प्रीति अनेक प्रकारे विस्तारने पामे छे ॥ १ ॥

व्याजे स्याद् द्विगुणं वित्तं, व्यवसाये चतुर्गुणम् ॥
क्षेत्रे शतगुणं प्रोक्तं, पात्रेऽनतगुणं पुनः ॥ २ ॥

अर्थ–व्याजमा वेवकु धन थाय छे, व्यापारमा चोगणु थाय छे, क्षेत्रमा सो गणुं थायछे, पण सुपात्रप्रते आपेलु धन अनंतगणुं थाय छे ॥ २ ॥

माटे सुपात्रप्रते आपेलु धन बहु फलदायक छे, अने कुपात्र प्रते आपेलु धन विपरीत फलने देनारुं छे

हवे अहीं कोइ एम कहेके, पात्र अपात्रनो विचार तो कृपणज करे, पण उदार माणस करे नहीं कह्यु छे के, "पात्रनी परीक्षा शा माटे करवी जोइए? केमके वरसतो एवो वरसाद कइ समविसमनी परीक्षा करतो नथी." तेने उत्तर आपे छे के, एम नहीं, केम के,

वरसीउ वरसीउ अबुहर, वरसीडां फल जोइ ॥
धत्तुरए विष इक्खुए रस, एवड अतर होइ ॥ १ ॥

वली स्वाति नक्षत्रमा पाणीमा पण पात्र विशेषनी अपेक्षाए मोटो अतर छे, केमके, तेज पाणी जो सर्पना मुखमा पडेछे तो झेररूप थायछे, अने छीपना मुखमा जो पडेछे, तो मोतीरूप थशे कह्यु छे के–

आम्रे निंबे सुतीर्थे कचवरनिचये शुक्तिमध्येऽहिवक्त्रे ॥
औषध्यादौ विषद्रौ गुरुसरसि गिरौ पांडुभूकृष्णभूम्योः
इक्षुक्षेत्रे कषायद्रुमवनगहने मेघमुक्तं यथांभ
स्तद्वत्पात्रे कुपात्रे जगति निजधनं दत्तमायाति पाकम्॥

अर्थ—आंबापर अने लींबडापर, उत्तम तीर्थमां अने कचराना समूहमां, छीपमां अने सर्पना मुखमां, औषधिआदिकमां अने झेरी वृक्षमां, मोटा तलावमां अने पर्वतपर, सफेद जमीनमां अने काली जमीनमां, तथा सेलडीना क्षेत्रमां अने कषाएला वृक्षोनां वनमां वरसादे वरसावेलुं पाणी जेम जुदा जुदा भावोने भजनारुं थाय छे तेम आ जगतमां सुपात्र अने कुपात्रने आपेलुं पोतानुं धन पण पक्वभावने प्राप्त थाय छे ॥ १ ॥

हवे पात्र पण तेज उत्तम जाणवुं के, जे नाम प्रमाणे गुणोवालुं होय; तेथी विपरीत जे होय ते उत्तम पात्र कहेवाय नहीं. कह्युं छे के—

भौमे मंगलनाम विष्टिविषये भद्रा कणानां क्षये
वृद्धिः शीतलिकेति तीव्रपिटके राजा रजःपर्वणः
मिष्टत्वं लवणे विषे च मधुरं रैकंटिकाद्यं यथा
पात्रत्वं च पणांगनासु रुचिरं नाम्ना तथा नार्थतः ॥२॥

पात्र तो ते कहेवाय के, जे पोते तरवामां अने परने तारवामां समर्थ होय. जेम के, बुडी जाय एवुं पण त्रांबुं पात्ररूप थयुं थकुं पोते तरे छे, तथा तेनो आश्रय करीने रहेली सर्व वस्तुओने पण तारे छे. पात्र परीक्षामां युधिष्ठिर अने भीमनो संवाद नीचे प्रमाणे छे.

हस्तीनागपुरमां एक दहाडो युधिष्ठिर राजा सभामां सिंहास-

नपर वेग हता एटलामा वारणे रहेला जीमे आवीने तेमने विनंती करी के, हे राजेंद्र! एक मूर्ख तपस्वी अने विद्वान शूद्र बन्ने जण वारणे उजा छे, तेमाथी कोने दान आपवु ? त्यारे युधिष्ठिरे कह्युं के, हे जीम! तप तो सुखेथी तपी शकाय छे, पण विद्या मेलववी बहु मुश्केल छे, माटे हु तो विद्याननी पूजा करीश, तपोनु शु प्रयोजन छे ? त्यारे जीमे कह्यु के, हे युधिष्ठर! जेम कुतराना चावमामा प्राप्त थएली गंगा, तथा मदिराना कुजमां पडेलु दूध तेम कुपात्रमा प्राप्त थएली विद्या शा उपयोगनी छे ? त्यारे कृष्ण द्वैपायने कह्युं के, केवल विद्या के तपसाथी पात्रपणु थतु नथी, जेनामा विद्या अने उत्तम आचार छे, तेज सुपात्र कहेवाय छे माटे सुपात्र प्रते आपेलु धन कल्याणकारी छे कह्युं छे के, ॥ १ ॥

सा लक्ष्मीर्या धर्मकर्मोपयुक्ता,
सा लक्ष्मीर्या बंधुवर्गोपजोग्या ॥
सा लक्ष्मीर्या स्वागजोगमसंगा,
यान्या मान्या सा तु लक्ष्मीरलक्ष्मीः ॥ २ ॥

अर्थ– जे लक्ष्मी धर्मकार्योमा जोडाय छे, तथा जे बंधुवर्गना उपजोगमा आवे छे, अने जे पोताना पण उपजोगमां आवे छे, तेज खरेखरी लक्ष्मी छे, पण तेथी विपरीत लक्ष्मीने तो "अलक्ष्मीज" मानवी

माटे धर्मना अर्थी माणसे न्यायथी उपार्जन करेलु, तथा क्षेत्र, काल अने जावथी निर्दोष थएलु एवु दान कीर्ति आदिकनी अपेक्षा राख्याविनाज सुपात्रने आपवु

हवे दान प्रायें करीने हेतुवालु होय छे ते दान देवामा दश हेतुओ नीचे प्रमाणे होय छे

(१) रोगी अथवा जिक्षाचरोने दयाथी दान अपाय छे.

(२) मदद आपनारने संग्रहथी दान अपाय छे. (३) दुर्ज-नोने जयथी दान आपवुं पडे छे. (४) पुत्रादिकने जुदा क-रती वखते कारणीक दान अपाय छे. (५) लोकलज्जाथी दान आपवुं पडे छे. (६) जाट चारणादिकोने गर्वथी दान अ-पाय छे. (७) हिंसकोने अधर्मथी दान आपवुं पडे छे. (८) साधु आदिक चतुर्विध संघने धर्मबुद्धिथी दान अपाय छे. (९) आने हुं दान आपीश तो ते मने कोइ वखते पण उपकार कर-शे एवी बुद्धिथी दान अपाय छे. (१०) तथा पहेलां आणे मने बहु उपकार कर्यो छे, एवी बुद्धिथी दान अपाय छे. एवी रीते दान दश प्रकारनुं छे. तेमांथी त्रण प्रकार आलोक संबंधि दानना छे. कह्युं छे के,

जयलोज्ञ स्तथास्नेह-स्त्रयो दानस्य हेतवः ॥
ये दातारस्त्रयं मुक्त्वा, धन्यास्ते मुक्तिगामिनः ॥१॥

अर्थ– जय, लोज्ञ, तथा स्नेह ए त्रणे हेतुउ दानना छे, ते त्रणे हेतुउने छोमीने जेउ दान आपे छे, ते धन्य मनुष्यो मो-क्षगामी थाय छे.

हवे वधारे शुं कहेवुं ? दाननुं जूषण सुपात्र छे. कह्युं छे के,

उत्तमफलं सुपात्रे, दानं वित्तवस्य मध्यमो जोगः ॥
अधमं व्यसनव्ययगति-रधमाधममवनिविन्यासः ॥ १ ॥

अर्थ– सुपात्र प्रते जे दान देवुं, ते धननुं उत्तम फल छे, जोगो जोगववा ते मध्यम फल छे, तथा व्यसनमां खरचवुं ते अधम फल छे, अने धनने जे जमीनमां जंडारी राखवुं, ते अ-धममां अधम फल छे. ॥ १ ॥

अधः क्षिपंति कृपणा, वित्तं तत्र यियासवः ॥
संतस्तु गुरुचैत्यादौ, तउच्चैः पदकांक्षिणः ॥ १ ॥

अर्थ– कृपण लोको नीची गतिमा जवानी इच्छावाला होवाथी धनने नीचे जमीनमा जंडारी राखे छे, पण सज्जनो उंची गतिना इच्छको होवाथी ते धनने उंचा जिनप्रासादादिकमा वापरे छे माटे हे जव्यलोको ! जाग्यवान एवा तमोए सुपात्रदानरूप धर्मविधिमा सर्वदा उद्यम करवो

॥ इति सुपात्रदानोपदेश. ॥

हवे दानना फलनो उपदेश कहे छे

अजयं सुपत्तदाणं, अणुकंपा उचिअ कित्तिदाणं च ॥
दोहि विमुक्को जणिउं, तिन्नि विजोग्गाइअं दिति ॥१॥

अर्थ– आ जगतमा दान पाच प्रकारनु प्रसिद्ध छे वधबंधनादिक जयथी जयजीत थएला जंतुउने, तेउंना प्राणो वचावीने जे तेउंने निर्जय करवा, तेने पहेलु अजयदान कहेलु छे कह्यु छे के, ॥ १ ॥

जीवानां रक्षणं श्रेष्टं, जीवा जीवितकांक्षिणः ॥
तस्मात्समस्तदानेभ्यो-ऽजयदानं प्रशस्यते ॥ १ ॥

अर्थ– जीवोनुं रक्षण करवुं ते श्रेष्ठ कार्य छे, केमके, जीवो जीवितना अजिलाषिउं छे, माटे सर्व दानोथी अजयदान प्रशंसवा लायक छे ॥ १ ॥

यो दद्यात्काचनं मेरु, कृत्स्ना चैव वसुधराम् ॥
एकस्य जीवित दद्यात्, न च तुल्य युधिष्टिर॥ २ ॥

अर्थ– हे युधिष्ठिर ! कोइ माणस कोइने सुवर्णनो मेरु पर्वत आपी दीए, अथवा समस्त पृथ्वीने आपी दीए, तथा एक जीवने जीवितदान आपे, ते बन्ने एक सरखा नथी (अर्थात् जीवितदान सर्वथी श्रेष्ठ छे ॥ २ ॥

अहिंसा सर्वजीवानां, सर्वज्ञैः परिभाषितम् ॥
इदं हि मूलं धर्मस्य, शेषस्तस्यैव विस्तरः ॥ ३ ॥

अर्थ- श्री सर्वज्ञ प्रभुउए एम कह्युं छे के, सर्व जीवोनी हिंसा नहीं करवी, ए धर्मनुं मूल छे, अने बाकीनी धर्मक्रियाउ तो ते अहिंसानोज विस्तार छे. ॥ ३ ॥

अभयं सर्वसत्वेभ्यो, यो ददाति दयापरः ॥
तस्य देहाद्विमुक्तस्य, भयं नास्ति कुतश्चन ॥ ४ ॥

अर्थ- जे माणस दयामां तत्पर थइने सर्व प्राणीउने अभयदान आपे छे, तेने मृत्युबाद क्यांय पण भय थतो नथी. ॥ ४ ॥

अभयदान देवाथी "आ माणस कल्याणकारी, दयालु, तथा कृपाना समुद्र सरखो छे" एवी रीतनी कीर्ति आ लोकमां थाय छे; अने परलोकमां राज्यसंपदादिक भोगोनो समूह मले छे. कह्युं छे के-

दीर्घमायुः परं रूप-मारोग्यं श्लाघनीयता ॥
अहिंसायाः फलं सर्वं, किमन्यत्कामदैव सा ॥ १ ॥

अर्थ- लांबुं आयुष्य, उत्कृष्टरूप, आरोग्यता तथा कीर्ति ए सघलुं अहिंसानुं फल छे; माटे कामदुघा वली बीजी कइ छे ? ते अहिंसाज कामदुघा छे. ॥ १ ॥

पण जेउ धर्मबुद्धिथी हिंसा करे छे, तेउने कल्याण के, पुण्य थतुं नथी. कह्युं छे के,

हिंसा विघ्नाय जायेत, विघ्नशांत्यै कृतापि हि ॥
कुलाचारधियाप्येषा, कृता कुलविनाशिनी ॥ १ ॥

अर्थ- विघ्नोनी शांतिमाटे पण करेली हिंसा खरेखर विघ्न करनारी थाय छे; तेम कुलाचारनी बुद्धिथी करेली हिंसा पण कुलनो नाश करनारी थाय छे. ॥ १ ॥

यदि ग्रावा तोये तरति तरणिर्यद्युदयति,
प्रतीच्यां सप्तार्चिर्यदि भजति शैत्यं कथमपि ॥
यदि क्ष्मापीठं स्यादुपरि सकलस्यापि जगतः,
प्रसूते सत्वानां तदपि न वधः क्वापि सुकृतम् ॥२॥

अर्थ– जो पत्थर पाणीमा तरे, सूर्य पश्चिम दिशामा उदय पामे, अग्नि कोइक वखते शीतलताने भजे, तथा आ पृथ्वीतल कदाच सर्व जगतनी उपर थइ जाय, तोपण प्राणीओनी हिंसा क्यायपण पुण्य उत्पन्न करे नही ॥ २ ॥

स कमलवनमग्नेर्वासरं भास्वदस्ता,
दमृतमुरगवक्त्रात्साधुवादं विवादात् ॥
रुगुपगममपथ्याज्जीवितं कालकूटा,
दभिलषति वधाद्यः प्राणिनां धर्ममिच्छेत् ॥३॥

अर्थ– जे माणस प्राणीओनी हिंसाथी धर्मने इच्छे छे, ते अग्निथी कमलोना वनने, सूर्यास्तथी दिवसने, सर्पना मुखमाथी अमृतने, विवादथी कीर्तिने, अपथ्य भोजनथी रोगना नाशने, तथा झेरना भक्षणथी जीवितने इच्छे छे ॥ ३ ॥

एवी रीते अभयदानरूप धर्मना आराधनथी घणा भव्य माणसो मोक्षनगरमा गया छे जेम श्री शांतिनाथ प्रभुए बाज पक्षीने पोतानुं मांस आपीने पारापतनु रक्षण कर्युं छे, एवा ते श्री शांतिनाथ प्रभु तमोने शांति आपो! एवीरीते ते श्री शांतिनाथ प्रभुए मेघरथ राजाना भवमा पारापतने अभयदान आपीने त्रणे लोकमा करुणासागरपणु मेलव्यु तेम सुमेरु नामनो हाथी ससलाने अभयदान आपवाथी मगधना राजा श्रेणिकनो मेघकुमार नामनो पुत्र थयो छे तेनी कथा नीचे प्रमाणे जाणवी

विंध्याचलनी अटवीमां सातसो हाथणीउनो स्वामी सुमेरु नामे एक हाथी हतो. एक दहाडो त्यां दावानलने जोइने तेने जातिस्मरण ज्ञान थयुं. तेथी पूर्वभवमां दावानलथी थएला दुःखथी भय पामीने तेणे वर्षाकालमां एक योजनसुधिनी भूमिपरथी घास आदिक वृक्षोने उखेडीने चोख्खुं मेदान करी राख्युं. हवे एक दहाडो ते वनमां फरीने दावानल लाग्यो; त्यारे ते सुमेरु हाथी ते मेदानमां परिवारसहित रह्यो; तेम हरिणादिक बीजा जीवोपण ते मेदानमां आवीने भराया. ते वखते शरीरे खरज आववाथी ते सुमेरु हाथीए पोतानो एक पग उंचो कर्यो. त्यारे बीजाउथी हडसेलातो एक ससलो ते हाथीना पगनी नीचे जग्या खाली थवाथी आवीने भरायो. त्यारे हाथीने दया आववाथी तेणे त्रण दिवसो सुधि पोतानो ते पग उंचोज धारी राख्यो. पछी दावानल शांत थवाथी सर्व जीवो पोतपोताने स्थानके गया; त्यारे ते हाथीए पोतानो ते पग नीचो मूक्यो; पण लोही भराइ जवाथी ते हाथी त्यां पडी गयो; तथा क्षुधा अने तृषाथी पीडित थइने त्यां ते मृत्यु पाम्यो. पछी ते पुण्यना प्रभावथी ते हाथी मगधना राजा श्रेणिकनी धारिणी नामनी राणीना पुत्रपणे उत्पन्न थयो. ते वखते ते राणीने मेघवृष्टिनो दोहलो उत्पन्न थवाथी तेनुं मेघकुमार नाम पाडवामां आव्युं. पछी त्यां ते अत्यंत सौभाग्यना भाजनरूप थयो. छेवटे ते दीक्षा लेइने विजय नामना विमानमां एकावतारी देव थयो. एवी रीते सुमेरु हाथीनुं अभयदान उपरे दृष्टांत जाणवुं.

हवे तेज अभयदान उपरे सौभाग्य देवीनुं दृष्टांत कहे छे.

जयपुर नामना नगरमां मकरकेतु नामना राजाए कोइक चोरने पकडी बांधीने शूलिए चडाववानो हुकम कर्यो. पण कमला नामनी पट्टराणीए तेने एकदिवस माटे छोडाव्यो. तथा ते दिवसे तेनो भोजन, वस्त्र, तथा तांबुलादिकथी सत्कार करीने तेणीए

तेने राजाने सोंप्यो पछी बीजे दिवसे बीजी राणीए, त्रीजे दिवसे त्रीजी राणीए, एम साते राणीउंए तेनो धनादिकथी सत्कार करीने राजाने सोंप्यो आठमे दिवसे सौजाग्यदेवी नामनी अणमानीती राणीए विनयपूर्वक राजाने खुशी करीने ते चोरने अजयदान अपाव्यु, तथा तेने अल्प अने सामान्य जोजन, वस्त्रादिक आपीने गेडी मेल्यो त्यारे ते चोर नृत्य, गीत आदिक करतो थको हर्षित थयो त्यारे राजाए तेने पूछ्युं के, अरे! आजे तो तने सामान्य प्रकारनु जोजनादिक मल्यु छे, त्यारे तु केम नाच्या करे छे? त्यारे ते चोरे कह्यु के, हे स्वामी! आजदनसुधि सर्व राणीउंए जोके मारो घणो सत्कार कर्यो, तोपण मृत्युना जयथी वाघनी समीपे बाधेला एवा लीला यवना जोजनवाला पण घेटानी पेठे में तो डु खज अनुजव्यु, पण आजे तो रसविनाना घाससरखा आहारथी पण व्यापारीने घेर बाधेला बलदनी पेठे हु अजयदानथी सुख अनुजवुं छु, अने तेथी हु नाच्या करतु.एवीरीते अजयदानपर सौजाग्य देवीनु दृष्टांत जाणवु

हवे तेज अजयदानपर आरामिकनी कथा कहे छे

जयपूर नामना नगरमा धन नामना मालीए दयाना परिणामथी पाच पूराउंनु रक्षण कर्यु हतु पछी ते माली मरीने एक कुलपुत्र थयो तेना मातपिता बाल्यावस्थामाज मृत्यु पाम्या पछी ते देशातर जातो थको वनमा एक वडना वृक्षनी नीचे बेगे त्या रहेता पाच यक्षोए तेने जोयो त्यारे ते कुलपुत्रने तेउंए पूर्वजवनो पोतानो उपकारी जाणीने कह्युं के, तने आजथी पाचमे दिवसे राज्य मलशे ते साजली ते हर्षित थयो पछी पाचमे दिवसे नरपाल राजा अपुत्रीउ मरी जवाथी तेने वाराणसी नगरीनु राज्य मल्यु पछी ते तो मत्रीउंने राज्य सोंपीने सुख अनुजववा लाग्यो. एटलामा सीमाडाना राजाउंए तेना नगरने घेरो घाल्यो. ते वात मत्रीउंए राजाने जणावी, पण ते तो जुगारनी

क्रीमामां आसक्त थयो हतो, तेथी ते वात तेणे सांजली नहीं. त्यारे राणीए कहेवाथी तेणे तेणीने कह्युं के, हे कल्याणि! ते वडपर रहेला पांच यक्षो राज्य आपेछे, अने हरेछे; माटे जे थवानुं होशे ते थशे, माटे तुं पाशा नाख? एम कहेवाथी ते यक्षोएज सीमाडाना राजाउने बांधीने तेने पगे पडाव्या. ते जोइ लोकोने आश्चर्य थयुं. पछी एक दिवसे त्यां ज्ञानी महाराज आव्या, तेमने लोकोए पूछवाथी ज्ञानीए कह्युं के, आणे पूर्वजवमां पांच पुराउनुं रक्षण कर्युं हतुं; तेज पूराउना जीवो आ यक्षरूप थयाछे; अने तेउएज तेना राज्यनुं रक्षण कर्युं छे.

वली तेज अजयदान उपरे अवंतिसुकुमालनी कथा कहेछे. श्रीपुर नामना नगरमां कोइक मछीमार हतो; ते पोतानी क्रूर स्त्रीना कहेवाथी रात्रिने चोथे पहोरे जाल लेइने माछलां पकडवा गयो; पण हजु घणी रात्रि होवाथी मार्गमां आवेला आंबाना वृक्षनीचे बेठेला कोइ मुनिपासे गयो. त्यां ते महात्माना उपदेशथी तेणे एवुं नियम लीधुं के, जालमां जे पेहेलुं माछलुं आवे, तेने मारे छोडी देवुं. पछी तेणे समुड्ने कांठे जइ जालमां पेहेला आवेला माछलांने छोडी दीधुं. हवे त्यां देवे तेनी परीक्षा करवा मांडी. तेथी तेने तेज माछलुं वारंवार तेनी जालमां आववा लाग्युं. त्यारे तेणे कोडी बांधीने ते माछलांने निशानी करी. छेवटे निराश थइने ते घेर गयो. त्यां तेनी क्रूर स्त्रीए तेने क्रोधथी घरमांथी कहाडी मेल्यो. त्यारे तेणे तेज साधुनी पासे जइ फरीने धर्म पूछ्यो. त्यारे साधुए जीवदयारूप पेहेलुं व्रत तेने कह्युं. फरीने पूछवाथी पांच अणुव्रतो पण कह्यां. पछी ते धर्मने सारीरीते आराधिने अंते शुजध्यानथी मृत्यु पामीने ते नलिनीगुल्म विमानमां देव थयो. त्यांथी चवीने जड्रा नामनी सार्थवाहनी स्त्रीने पेटे बत्रीस स्त्रीउनो स्वामी अवंतिसुकुमाल नामे पुत्र थयो. त्यां पोताना घरनी चित्रशालामां उतरेला सु-

हस्ति आचार्यना मुखथी पठन थता नलिनीगुल्म अध्ययननुं स्वरूप साजळीने तेने जातिस्मरण ज्ञान थयुं तेथी पूर्वजवनु स्मरण करीने, तथा दीक्षा लेइने ते स्मशानमा रह्या त्या शियालणीए करेला उपसर्गोने सहन करीने ते फरीने नलिनीगुल्म विमानमा उत्पन्न थया. तेमने ज्या उपसर्ग थयो ते जगोए (उज्ञयनीमां) तेमना पुत्रे महाकालनु प्रासाद बनाव्यु ते श्री सिद्धसेनजीए करेला प्रजाववालु महाकालनुं देवल आजे पण उज्जयनीमां हयात छे एवीरीते अजयदानपर अवंतिसुकुमालनुं दृष्टांत जाणवुं

वली तेज अजयदानपर अजयकुमारनी कथा कहेछे

एक दहाडो श्रेणिक राजाए सजामां कह्युं के, हमणा नगरमा कइ वस्तु सोंधी छे ? त्यारे निर्दय एवा क्षत्रिउए कह्यु के, हमणा मास सोंघु छे त्यारे अजयकुमारे विचार्युं के, आजे मारे तेउनी परीक्षा करवी पछी तेणे रात्रिए सर्व क्षत्रिउने घेर जइने जुदु जुदुं कह्यु के, अरे! राजपुत्रो! आजे राजाने मोटो रोग थयो छे तेना वैद्योए घणा औषधो कर्या, पण ते मटतो नथी पण जो मनुष्यना कालजानु बेटाकजार मास मले तो ते राजा जीवी शके, नहींतर ते मृत्यु पामशे माटे तमो आ राजाना गरासीआ छो, तो शु आटलुं पण कार्य तमो नहीं करो? त्यारे एके कह्युं के, तमारे जोइए तो एक हजार सोनामोहोर ल्यो? पण मने ते कार्यथी मुक्त करो? अने बीजापासे जाउं पछी अजयकुमार ते द्रव्य लेइने बीजापासे गया, अने तेने पण तेम कह्यु त्यारे तेणे पण एकहजार सोनामोहोरो आपी, पण मास आप्यु नहीं एवीरीते दरेकने घेर आखीरात जमीने तेणे एकलाख सोनामोहोरो एकठी करी तथा प्रजाते सजामां ते सोनामोहोरो देखाडीने तेणे क्षत्रीउने कह्युं के, अरे क्षत्रिउ! तमो कहेता हता के, आजकाल मास सोंघु छे, पण ते तो आ-

टलावधा धनथी पण मलतुं नथी. त्यारे तेउ सर्व लज्जित थइने मौन धारी वेठा. त्यारे अन्नयकुमारे सर्वेने निष्ठुर्या के, अरे! मूर्खो! पोतानुं मांस तो सर्व जीवोने वहालुं ठे; तमो मांसलुब्ध थइने फोकटज ववड्या करो ठो. केमके, विष्ठामां रहेला कीडाने अने देवलोकमां रहेला इंद्रने जीवितनी इच्छा तथा मृत्युनो नय तुल्यज ठे. वली डुर्गतिमां गएलो जीव पण मरवाने इच्छतो नथी; तथा कुत्सित एवा पण पोतानां नोजनने तेउ स्वादिष्टज माने ठे. वली पशुना शरीरपर जेटला रोमकूपो ठे, तेटला हजार वर्षोसुधी पशुहिंसा करनार प्राणी पकवाय ठे. वली आ जगतमां सुवर्ण, गाय, तथा धन आदिकनुं दान देनाराउ तो सुलन्न ठे; पण जे प्राणीउने अन्नयदान आपेठे ते डुर्लन्न ठे. एवीरीते अन्नयदान उपरे अन्नयकुमारनुं दृष्टांत जाणवुं.

हवे जे माणस जीवहिंसा करे ठे, ते वध बंधनादिक डुःखोने नोगवनारो थाय ठे. जेम एक गोवालीउ वावलनी शूलमां जुंउने परोवतो हतो, अने ते पापथी तेने एकसो आठवार शूलीपर चडवुं पड्युं ठे. तेनी कथा नीचे प्रमाणे जाणवी.

नागपुर नामना नगरमां एक माधव नामे गोवाल हतो. एक दहाडो ते गायो चरावचा माटे मोटी अटवीमां गयो. त्यां तापथी पीडायो थको वावलना वृक्षनीचे वेठो. एटलामां तेनां मस्तक परथी जुउ तेना खोलामां खरीने पडी. त्यारे निर्दयपणाथी तेणे ते जुने वावलनी तीक्ष्ण शूलमां परोवी; अने तेणे विचार्युं के, अरे!! आ मारा शरीरना वलने (रुधिरने) चोरनारी ठे. पठी ते पापना उदयथी तेज नवमां तेने शूलीपर चडीने मरवुं पड्युं. अने एवी रीते बीजा एकसोने सात जुदा जुदा नवो सुधि चोरी आदिकना अपराधथी शूलिपर चडीने तेने मरवुं पड्युं. पठी एकसोने सातमे नवे ते कर्म थोडुं रहेवाथी तेणे तापसी दीक्षा अंगीकार करी. त्यां हमेशां ते वनमां रहीने सुकेलां फल-

पछी खावा लाग्यो. तथा निःसंग व्रत धारण करवा लाग्यो त्या छेवटे तेने विभंग ज्ञान उत्पन्न थयु एटलामा त्यां नजदीकमां रहेली चंपा नामनी नगरीना नरसिंह राजानी पटराणी रत्नादेना आभूषणोनी पेटी एक चोरे चोरी त्यारे पगीओ तेनी शोध करता थका तेनी पाछल लाग्या त्यारे ते चोर ते पेटीने ते तापसपासे मुकीने एक वडपर चडी गयो त्यारे पगीओ ते सुतेला तापसने पेटी सहित पकडीने राजापासे लेइ गया. पछी ते तापस विभंगज्ञानी होवाथी पोतानां कर्मने निंदतो थको त्या मौन रह्यो, तेथी राजाए तेने शूलीए चडाव्यो एवी रीते कर्म क्षय करीने ते देवता थयो एवी रीते जीवहिंसापर ते गोवालनी कथा जाणवी

वली शास्त्रोमा संभलाय छे के, जीवहिंसाथी रूद्र ध्यानमां तत्पर थएला सुभूम अने ब्रह्मदत्त चक्रीओ पण सातमी नरके गया छे वधारे शुं कहेवु ? पोतानु हित इछनार माणसे बन्ने लोकमा सुख करनारा एवा अभयदाननुं आराधन करवुं

हवे सुपात्रदाननु विवेचन करे छे

ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, क्षमा, समता, शील, दम तथा संयम आदिक गुणोने धारण करवामा जे पात्ररूप छे, ते सुपात्र कहेवाय छे. कह्यु छे के,

पाकारेणोच्यते पापं, त्रकारस्त्राणवाचकः ॥
अक्षरद्वयसंयोगे, पात्रमाहुर्मनीषिणः ॥ १ ॥

अर्थ– "पा" एटले पाप, अने तेथी "त्रा" एटले (आत्मानु) रक्षण करवु, एवी रीते ते बन्ने अक्षरोना सयोगथी "पात्र" शब्द थाय छे, एम विद्वानो कहे छे ॥ १ ॥

एवी रीते नामप्रमाणे गुणवालु "सुपात्र" दुर्लभ छे कह्यु छे के, आ दुनीयामा लक्ष्मी मले छे, तथा सर्व इछित सुख पण

मळे छे, पण जगतमां उत्तम एवुं सुपात्रदान डुर्लन्न छे. वळी न्नाग्यवानोनीज लक्ष्मी सुपात्रे देवाय छे. केमके, दुःखथी मेळवेली एवी केटलाकनी लक्ष्मीने तो राजा बलात्कारे लेइ ले छे, केटलाकोनी लक्ष्मीने अकस्मात् अग्नि बाळी नाखे छे, विपयिर्जनी लक्ष्मी वेश्यार्जना घरोमां जाय छे, पण पुण्यशालीर्जनी लक्ष्मी अरिहंत प्रन्नुना बिंबमां, प्रासादमां तथा उत्तम साधुर्जने उपयोगमां आवतां वस्त्रादिकमां वपराय छे, श्रावक उदार मनथी जो न्यायोपार्जित द्रव्यथी मुनिर्जने कल्पे एवां वस्त्र, पात्र, न्नोजन, औषध विगेरे न्नक्तिथी आपे, तो तेने मोक्ष मळे छे, तो पछी देवगति तथा मनुष्यगतिनी तो वातज शी करवी? जेम सुपात्र दानथी शालिन्नद्र त्रणे लोकोमां प्रख्यात थएला छे. केमके, देवरूप थएला तेमना पिता गोन्नद्र हमेशां तेमने आन्नूपणादिकनी पेटी आपता हता, तेणे खरीदेलां तथा तेमनी स्त्रीर्जए पगे लुछीने फेंकी दीधेलां रत्नकंबलो राजानी राणीर्जने पण दुर्लन्न थइ पड्यां, ते सघलुं तेमनां सुपात्रदाननुं फल हतुं.

वळी पण सुपात्ररूपी ते क्षेत्र लांबा कालसुधि जय पामो, के जेमां एकवार वावेला द्रव्यरूपी चोखा हजारो वखत सुधि लणी शकाय छे. पाछलथी अथवा परे दीधेला दाननुं फल तो मळे अथवा न पण मळे, पण पोताने हाथे दीधेला दाननुं फल तो मळेज छे, तेमां संशय नथी. धनसार्थवाहना न्नवमां श्री ऋषन्नदेव प्रन्नुए पण साधुर्जने घृतदान दीधुं हतुं, के जेथी तेमने पण श्री तीर्थंकर पदवी मळी छे. न्नरत चक्रीए पण पूर्वन्नवमां मळेला अन्ननो पांचसो साधुर्ज वच्चे संविन्नाग करी न्नोजन कर्युं हतुं, तेथी तेमने चक्रीनी तथा मोक्षनी पदवी मळेली छे. तेम श्रेयांसकुमारे पण श्री प्रथम प्रन्नुने सेलडी रस वोरावीने सुपात्रदान दीधुं छे, अने तेथी अक्षय त्रीजना पर्वनी प्रवृत्ति थएली छे.

वळी उचित काले सुपात्रप्रते आपेलुं अल्पदान पण, चंदन-

बालाए वीर प्रभुप्रते आपेला बाकुलानी पेठे बहु फलवालु थाय छे ते चंदनबालानु दृष्टांत नीचे प्रमाणे जाणवु

श्री वीर प्रभुए एवो अभिग्रह लीधो हतो के, राजानी पुत्री होय, दासीपणाने प्राप्त थइ होय, पगमां बेडी होय, मस्तके मुंडी होय, क्षुधातुर होय, रुदती होय, एक पग डेहेलीमा होय अने एक पग बहार होय, एवी कोइ स्त्री भावथी जो मने सुपडाना खुणामा रहेला बाकुला वहोरावे, तो मारे पारणु करवु अने एवी रीतनो प्रभुनो अभिग्रह छ मासे चंदनबालाथी संपूर्ण थयो, अने ते वखते देवोए त्या धनावह शेठने घेर साडाबार क्रोड सोनइआनी वृष्टि करी ते जोइ तेनी पडोशणे विचार्यु के, ज्यारे आणे फक्त आ तपस्वीने बाकुला वहोरावीने आटली बधी ऋधि मेलवी, त्यारे हु तपस्वीने वोरावेला एवा घृतसाकर आदिके करीने युक्त दुधपाकना भोजनथी पण वधारे ऋद्धि मेलवीश, एम विचारि तेम करीने ते आकाश सन्मुख जोवा लागी ते जोइने ते तपस्वीए कह्युं के, अरे मुग्धे! तारा भावथी अने तें आपेला आधाकर्मिक आहारथी तो पापाणोनी वृष्टि थशे, पण रत्नोनी कड वृष्टि थशे नहीं एवीरीते सुपात्रदानपर चंदनबालानु दृष्टात जाणवु

वली तेवीजरीते देशातर गएला मूलदेवे एक महिनाना उपवासी मुनिने दीधेला बाकुलाना दानना पुण्यथी उत्कृष्ट राज्य मेलव्यु हतु तेमज श्री वीरप्रभुने हु चतुर्मासनु पारणु करावीश, एवा उत्तम ध्यानथी मृत्यु पामीने जीर्ण शेठे बारमो देवलोक मेलव्यो हतो तेमज कोल्लर नामना गाममा एक चंपक नामे शेठ वसतो हतो, तेणे गुणाकर मुनिनु पात्र ठेक कांठासुधि घीथी भरी आप्यु, पण तेने लाभ थवानो जाणीने तेणे निषेध कर्यो नहीं अने एवीरीते भावनाना वशथी ते शेठ सर्वार्थसिद्धिप्रते गया. अहीं ध्याननो भागो एवो छे के, ते शेठे दान देता

विचार्युं के, अहो! आ मुनि लोजी छे, केमके, ते एकला छतां आटलावधा घीने शुं करशे? एवीरीतना तेना चित्तने जाणीने "अरे पड नहीं पड नहीं" एम कहीने मुनिए तेमने बारमा देवलोकमां स्थाप्या. एवीरीते चंपकश्रेष्ठिनुं उदाहरण जाणवुं. वली बीजुं दृष्टांत कहेछे.

हस्तूर नामना गाममां देवशर्मा अने सोमशर्मा नामना बे ब्राह्मणो हता. तेउमां देवशर्मा मिथ्यात्वी हतो, अने सोमशर्मा श्रावक हतो, पण निर्धन हतो. देवशर्मा धनवान हतो, पण कुपात्रोप्रते दान आपनारो हतो. तेणे लक्ष जोजननो याग कर्यो. सोमशर्मा तेने घेर जोजन पीरसवा आदिकनुं कार्य करतो हतो, अने एवुं जूवुं जोजन खाइने तेनी चाकरी करतो हतो. एक दहाडो पोताना जागमां आवेला सर्व प्रासुक लाडु आदिक तेणे साधुउने अने साधर्मीउने आप्या. ते दानपुण्यना प्रजावथी ते मगध देशना राजा श्रेणिकनो पांचसो राणीउनो स्वामी एवो नंदिषेण नामे पुत्र थयो. तथा ते अत्यंत जाग्यशाली थइने जोगो जोगववा लाग्यो.

वली तेज सुपात्रदानपर रथकार मृगनुं दृष्टांत कहेछे.

श्रीकृष्णना मोटा जाइ रामे दीक्षा लीधी, तथा एक दहाडो ते नगरमां जता हता, त्यां तेमनुं अद्भुतरूप जोइने कुवाना कांठापर पाणी जरवाने आवेली स्त्रीउ तेनापर अत्यंत मोहित थइ. अने तेमनुं रूप जोवामां लीन थएली एक स्त्री घडाने बदले पोताना पुत्रना गलामां रसी बांधीने कुवामां पाणी लेवामाटे नाखवा लागी. ते जोइ मुनिए तेणीने उपयोग आपी तेम करतां निवारी. तथा ते वखते पोते एवो अजिग्रह लीधो के, धिक्कार छे मारारूपने!! आजथी मारे नगरमां जवुं नहीं, एम अजिग्रह लेइने ते राममुनिराज वनमां रहेवा लाग्या. तथा त्यांथी ज्यारे कोइक सार्थ वटाय, त्यारे तेमनी पासेथी जिक्षा

लेइने धर्मध्यानपूर्वक काल निर्गमन करवा लाग्या हवे एटला-मां त्या कोइक रथकार काष्ठ लेवामाटे आवी चड्यो, तथा अ-रधी जागेली डालवाला कोइक वृक्षनी नीचे जोजनमाटे बेठो त्या एक हरिण देखाडेल छे मार्ग जेमने एवा राममुनिराजने जोइने ते खुशी थयो थको तेमने आहार पाणी देवामाटे तै-यार थयो ते मुनि पण त्या आव्या, एटलामा अकस्मात प्रच-डवायुना वेगथी ते डाल त्रुटी पडी, अने तेथी ते त्रणे त्या मृत्यु पामीने पाचमे देवलोके गया

वली एवीज रीते सुपात्रदान देनारा वंकचूलादिको, कोशा वेश्या, तथा अवंति सुकुमाल आदिको पण ससाररूपी समुद्रने तरी गया छे

हवे वली तेज सुपात्रदानपर धनसार व्यवहारीनुं दृष्टात कहे छे

राजग्रही नामनी नगरीमा धनसार नामे एक व्यवहारी र-हेतो हतो, ते महा धनाढ्य तथा एकातरे उपवास करनारो, बन्ने वखत प्रतिक्रमण करनारो, तथा त्रिकाल देवपूजा करनारो हतो केटलेक काले कर्मयोगे ते निर्धन थयो पछी स्त्रीना कहेवाथी ते साथवानु जातु लेइने द्रव्य मागवामाटे गोवर नामना गाममा पोताना शालापासे गयो पण निर्धनपणाथी त्या पण तेनुं धन नहीं मलता उलटु अपमान थयुं त्यारे दिलगीर थइ ते पाछो वल्यो, अने रस्तामा जावपूर्वक एक मासोपवासी मुनिने तेणे ते साथवाथी पारणु कराव्यु तथा पछी स्त्रीने खुशी करवामाटे तेणे नदीमाहेथी केटलाक गोल रगबेरगी काकराओ एकठा करीने पोताना खडीआमा जर्या, तथा पछी घेर आव्यो ते वखते शा-सन देवीना प्रजावथी तेना खडीआमाना काकराओ बहु मूल्य-वाला रत्नो थइ गया एवी रीते सुपात्रदानना प्रजावथी ते फ-रीने धनवान थइ दान आपवा लाग्यो, तथा जिनमंदिरो आ-दिक पुण्यना कार्यो करी पृथ्वीमा ते प्रख्यात थयो

वली आठ स्त्रीउनो नरतार धन्य शेठ सुपात्रदानना महात्म्यथी एकावतारी थइ सर्वार्थसिद्धे गएला ठे. वली तेवीज रीते कयवन्नादिक घणा अन्य माणसो सुपात्रदानथी संसाररूपी समुद्रने तरी गया ठे. तेम वली दुराचारी माणसो पण सुपात्रदानना महात्म्यथी सारी गति मेलवे ठे.

वली अनादर, विलंब, विमुखता, अप्रिय वचन, तथा पश्चात्ताप ए पांचे उत्तम दाननां दूषणो ठे. तेम आनंदाश्रु, रोमांच, बहुमान, प्रियवचन, तथा अनुमोदना ए पांच उत्तम दाननां नूषणो ठे. प्रियवाणीसहित दान, अहंकारविनानुं ज्ञान, क्षमावालुं शौर्य, तथा त्यागवालुं धन ए चारे वावतो दुर्लन ठे. वधारे शुं कहेवुं? कृपणोनुं धन निष्फलज ठे. कह्युं ठे के, निर्बुद्धि माणसने शास्त्रोथी, अंधने दीपकोथी, नपुंसकने स्त्रीउथी, कायरने हथियारोथी, बहेराने वाजित्रोथी, कदरूपाने आनूषणोथी, ज्वरवालाने नोजनोथी, तथा कृपणने मलेलां घणां द्रव्योथी शुं थवानुं ठे? माटे जे माणस सुपात्रप्रते धन आपे ठे, तेज धन्य ठे. कह्युं ठे के, पंडित माणस पोतानुं धन सुपात्रने आपे ठे, मुग्ध माणस पोतानुं धन नोगोमां वापरे ठे, तथा कृपणना धननो फोगट विनाश थाय ठे.

एक दहाडो नोजराजा वनमां गया हता, त्यां तेणे एक गलता मधुकने जोइने धनपाल कविने पूछ्युं के, आ मधुक केम गले ठे? त्यारे कविए कह्युं के, ज्यारे पात्र मले ठे, त्यारे धन होतुं नथी, अने ज्यारे धन होय ठे त्यारे पात्र होतुं नथी, एवी रीतना शोकमां पडेलो आ मधुक अश्रुपातथी रुदन करे ठे, एम हुं मानुं ठुं.

स्थावर अने जंगम, एम बे नेदथी सत्पात्र ठे. तेमां जिनप्रासादादिक रूप स्थावर सत्पात्र दश प्रकारनुं ठे. अने एवी रीतना सुपात्रोप्रते दीधेलुं दान महा फलदायक थाय ठे.

हवे सुपात्र प्रते जे दान आपवुं, ते प्रतिउपकारनी अपेक्षा राख्याविनाज आपवुं तेने माटे एक भागवतनुं उदाहरण कहे छे

कोइक परिव्राजके कोइक भक्तिवान भागवतने कह्युं के, वर्षाकाले हु तारा मकानमां रहीश त्यारे ते भागवते कह्यु के, जो तुं प्रतिउपकार मारापर न करे, तो भले सुखेथी रहे पछी ते वात ते परिव्राजके अंगीकार करवाथी ते भागवते तेने मकान आप्युं तथा भोजनादिकथी ते हमेशा तेनो सत्कार करवा लाग्यो एम करता केटलोक समय गया बाद ते भागवतनो घोडो चोरो चोरी गया पण एटलामा प्रभात थवाथी ते चोरो ते घोडो लइ जवाने अशक्त थवाथी, तेओ ते घोडाने वनमा एक वृक्षसाथे बांधीने नाशी गया एटलामां प्रभाते ते परिव्राजक स्नान करवा माटे तलावपर गयो त्या तलावपासे रहेली झाडीमा ते अश्वने जोइ उतावली कहाव्यो के आ अश्व मारा उपकारी भागवतनो छे पछी तेणे ते झाडीमा पोतानुं धोएलु वस्त्र मुकीने पोताने स्थानके आवी ते भागवतना माणसोने कह्यु के, हु मारु वस्त्र पेली झाडीमा वीसरी आव्यो छु माटे लावी आपो? त्यारे तेओए त्या माणसोने मोकल्या, अने त्या ते घोडाने जोइने तेओ तेने लाव्या ते वातनी भागवतने खबर पडवाथी तेणे विचार्युं के, आ परिव्राजके आवो मिष करीने पण मारापर प्रतिउपकार कया छे, पछी तेणे ते परिव्राजकने बोलावीने कह्यु के, हे भद्र! हवे तु चाल्यो जा? केमके, उपकारी प्रते दीधेलु दान निष्फल थाय छे

वली पण एक मुधाजीवी मुनिनु दृष्टांत कहेछे

कोइक वैराग्यवान राजाए धर्मनी परीक्षा करवामाटे एवो ढंढेरो नगरमा वगडाव्यो के, राजा लाडुओ आपेछे, माटे जेने जोइता होय तेमणे आववु ते सांभली कापडी आदिक पण लोको त्या गया त्यारे राजाए तेओने पुछ्यु के, तमो तमारी आजीविका शीरीते चलावो छो? त्यारे एके कह्यु के, हुं मुखथी

छे, पण अन्न तो हमेशां प्रीति करावनारुं छे. हवे अनुकंपादानपर जगडुशा शेठनुं दृष्टांत कहेछे.

पाटण नामना शेहेरमां रहेता महा धनाढ्य जगडुशाह नामना जैनधर्मी शेठ एक दहाडो भोजन करवाने वेठा हता. ते वखते कोइक वृद्ध सिद्ध पुरुष तेमना द्वारपासे आवी पहोंच्यो, तथा मध्यानकाल थवाथी तेने शेठे भोजन माटे वेसाड्यो. पछी तेने सर्व अन्न पीरस्युं, तथा सर्व पाणी पायुं तो पण ते तृप्त थयो नहीं. त्यारे ते जोइ चमत्कार पामेला जगडुशाह शेठे तेने तेनुं कारण पूछ्युं. त्यारे ते सिद्ध पुरुषे कह्युं के, आजथी मांडीने पांचमे वर्षे नवुं जल अने नवुं धान्य दृष्टिए पडशे. एम कहीने तेज क्षणे ते अदृश्य थइ गयो. पछी ते जगडुशाह शेठे पांच वर्षसुधि दुकाल पडवानो जाणीने पोतानुं सर्व द्रव्य खरचीने सघला देशोमांथी आडतीआउं मारफते जेटलुं मल्युं तेटलुं धान्य खरीद करावीने तेनो संग्रह कर्यो. पछी ज्यारे ते भयंकर दुकाल लोकोने दुःख देवा लाग्यो, त्यारे तेणे दील्ही, खंभात, धोलका आदिक वारसो मोटा मोटा शेहेरोमां दानशालाउं करावी. तथा दुष्ट राजाना डरथी ते दरेक दानशालाउंपर एवी रीतनां नामनां पाटीआं चोडाव्यां के, आ दानशालाउं "रंकमाटेनी" छे. पछी तेणे घणां राजा आदिकोने पण धान्यनी सहायता करी. हवे एवी रीतनी जगडुशाहनी कीर्ति सांभलीने विशलदेव राजाने इर्षा थइ; अने तेथी तेणे पण पोताना नगरमां एक दानशाला मांडी. पण धन खुटवाथी तेणे तेमां अर्थिउंने तेल पीरसवा माड्युं. पण छेवटे ते राजाए पण पोतानो अहंकार तजीने ते जगडुशाहशेठने नमस्कार कर्यो. हवे प्रभातमां जे जगोए वेसीने जगडुशाह दान आपता, त्यां आडो एक पडदो वंधावता, तथा पडदामां पोते वेसीने तेनी अंदरथी याचकना हाथमां दान आपता, के जेथी कुलीनोने ते दानथी लज्जा थाय नहीं. एवी रीते

याचको पोतानो हाथ ते पडदानी अंदर जगडुशाहपासे धरता अने जगडुशाह तरफथी तेमने तेमना भाग्यप्रमाणे मलतुं एम करता करता एक दहाडो विशलदेव राजाने एवी इच्छा थइ के, हुं पण मारा भाग्यनी परीक्षा तो करु, एम विचारि एक दहाडो वेष बदलीने ते त्यां एकाकी गयो, तथा तेणे पोतानो जमणो हाथ पडदानी अंदर नाख्यो त्यारे सामुद्रिक शास्त्रना पारगामी एवा जगडुशाहे तेना हाथनी रेखाउं जोइ विचार्यु के, आ कोइ महा भाग्यवान राजा छे, तथा तेनापर संकट आवी पड्युं छे, माटे तेने एवी वस्तु हुं आपु के, जेथी तेने जीवन पर्यंत दुःख सहन करवुं पडे नहीं एम विचारि तेणे पोतानी आंगलीमा पेहेरेली अमूल्य मणिनी वींटी उतारीने तेना हाथमां मूकी पछी राजाए थोडीवार रहीने पाछो पोतानो डाबो हाथ पडदानी अंदर राख्यो, त्यारे जगडुशाहे वली पोतानी वीजी तेवीज वींटी तेना हाथमा मुकी. एवी रीते बन्ने वींटीउं लेइने राजा तो पोताना मेहेलमा आव्यो पछी वीजे दिवसे तेणे जगडुशाहने सन्मानपूर्वक बोलावीने ते वींटीउंसंबधि हकीकत जाहेर करी त्यारे जगडुशाह शेठे कह्युं के,

सर्वत्र वायसाः कृष्णाः, सर्वत्र हरिताः शुकाः ॥
सर्वत्र सुखिना सौख्यं, दुःखं सर्वत्र दुःखिनाम् ॥१॥

अर्थ — सर्व जगोए कागडाउं श्याम होय छे, तेम सर्व जगोए पोपटो लीला होय छे, वली सुखी माणसोने सर्व जगोए सुख होय छे, अने दुःखिउंने सर्व जगोए दुःख होय छे.

पछी राजाए ते वींटीउं जगडुशाह शेठने पाछी पहेरावी तथा अत्यंत सन्मान पूर्वक हाथीपर चडावीने तेमने घेर पहोंचाड्या. एवी रीते अनुकंपादानपर जगडुशाह शेठनी कथा कही

वळी विक्रमराजानी कथा कहेछे.

विक्रमादित्यराजाए सुवर्णपुरुषना प्रसादथी पृथ्वीपरना मनुष्योने सुवर्ण आपीने तेउने करजरहित करेला छे, अने हजुसुधि पण तेथी तेनो संवत्सर चाले छे. एक दहाडो ते विक्रमादित्य राजा हाथीपर बेसी मार्गे जता हता, तेवामां जमीनपर वेराएला केटलाक चोखाना दाणाउ तेनी दृष्टिए पड्या, तेथी हाथीपरथी उतरीने ते चोखाना दाणाउने तेणे मस्तके धर्या. ते वखते अन्नाधिष्ठायिका लक्ष्मी देवीए प्रसन्न थइ प्रत्यक्ष थइने तेने कह्युं के, हे विक्रमादित्य राजा! तमो मारी पासे वरदान मागो? त्यारे लोकोपर अनुकंपावाला विक्रमराजाए तेणीने कह्युं के, हे लक्ष्मी देवी! तमो मने एवुं वरदान आपो के, आ मालव देशमां कदीपण दुकाल पडे नहीं. त्यारे देवीए पण ते वरदान तेने आप्युं. अने तेथी आजदनसुधि पण मालवा देशमां दुकाल पडतो नथी. कह्युं छे के, दयायुक्त मन आरोग्यताने नजदीक करे छे, प्रशंसा वधारे छे, संसाररूपी समुद्रथी तारे छे, आयुष्य विस्तारे छे, शरीरने सुंदर करे छे, गोत्रनी वृद्धि करे छे, धनने वधारे छे, तथा बळनी पण वृद्धि करे छे.

हवे चोथा उचितदाननुं स्वरूप कहेछे.

अवसर आव्ये छते योग्य परोणाने, देवगुरूना समागम वखते, मंदिर चणाववा समये, प्रतिमानी प्रतिष्ठा करावती वेळाए, वधामणी आपनारने, अथवा काव्य, कथा आदिक संभळावनार उत्तम कवि आदिकने दान आपवुं, ते उचितदान कहेवाय छे.

हवे ते उचितदानपर कुंभकारनी कथा कहेछे.

पाटलिपुत्र नामना नगरमां पंकप्रिय नामनो एक कुंभार वसतो हतो. पण ते कोइक कारणे इर्षाथी ते नगर तजीने वनमां जइ एक मोटा तळावनी पाळपर झुंपडी बांधीने रह्यो हतो. एक दहाडो अवळी चालना घोडाथी खेंचाएलो नरवाहन राजा त्यां

आवी चढ्यो. ते राजा क्षुधा अने तृषाथी अत्यंत पीडित थयो हतो. तेने आ कुंभारे भोजन तथा शीतल पाणी आप्याथी ते बहु खुशी थयो अने तेथी राजाए तेनापर खुशी थइने तेने नगरमा लइ जइ घणु द्रव्य आप्युं, तथा गरास पण आप्यो

वली कोइ कविनी कविताथी खुशी थइ तेने जे राजा आदिको दान आपे छे, ते पण उचित दान कहेवाय छे तेपर कथा कहे छे एक दहाडो शक्तिसिंह राजानो मुगलराज नामनो पुत्र घोडा खेलाववा माटे वनमा गयो त्या तेने कोइक गोपाले अन्योक्तिनी कविताथी रंजन कर्यो. त्यारे राजाए तेने अल्पदान आप्यु, तेथी फरीने तेणे वडवृक्ष प्रतेनी अन्योक्तिथी रंजन कर्यो, त्यारे राजाए तेने घेर बोलावीने तेने भोजनमाटे बेसाड्यो तथा तेनी थालीमा हीरा माणेक, मोती विगेरे अमूल्य वस्तुओ पीरसीने तेने संतुष्ट कर्यो

वली तेवीज रीते सिद्धराज नृपतिए पोतानी समस्या पुरवामाटे पोताना शरीरपरनो सर्व शृंगार श्रीपाल कविने आप्यो छे. वली तेवीज रीते जीर्ण गढनो राजा खेंगार एक दहाडो शिकारमाटे वनमा गयो हतो, त्या मार्ग चूकी जवाथी तेणे एक चारणने मार्ग पूछवाथी तेणे वक्रोक्तिपूर्वक कह्यु के, जीवहिंसा नहीं करवी तेज शुद्ध मार्ग छे ते सांभली राजाए खुशी थइ जीवितपर्यंत जीवहिंसानो त्याग करीने ते चारणने गरास आप्यो वली तेवीज रीते स्तंभपुरमा केटलाक जैनी साधुओए त्याना यवन राजाने पोतानी कविताथी खुशी करीने जैनशासननी प्रभावना विस्तारी हती

वली एक दहाडो ज्यारे सिद्धसेन दिवाकरनो उज्जयनीमा प्रवेश महोत्सव थतो हतो, त्यारे बंदिलोको तेनी सर्वज्ञपुत्रादिकनी प्रशंसापूर्वक बिरुदावलि बोलता हता ते वखते विक्रमादित्य राजा घोडा खेलाववा माटे निकल्यो हतो त्यारे ते राजाए

आचार्यजीनी परीक्षामाटे मनथी तेमने नमस्कार कर्यो, त्यारे आचार्यजीए तेने धर्मलाभ आप्यो. त्यारे राजाए कह्युं के, तमोए मने नमस्कार विनाज धर्मलाभ केम आप्यो? त्यारे आचार्यजीए कह्युं के, हे नरेंद्र! प्रणाम मन वचन अने कायाथी त्रण प्रकारे थाय छे. तेमांथी तमोए मने मानसिक प्रणाम कर्यो छे. त्यारे राजाए खुशी थइने आचार्यजीने पूछ्युं के, आ धर्मलाभनी आशिषथी शुं थाय छे? त्यारे आचार्यजीए कह्युं के, जे धर्मलाभनी आशिषथी महान हाथीओ, पवनना वेगने पण जीतनारा घोडाओ, रथो, लीलायुक्त स्त्रीओ, चामरोथी शोभिती राज्यलक्ष्मी विगेरे उत्तम वस्तुओ मले छे, एवो धर्मलाभ तमोने जय आपो! वली जो दीर्घायुनी आशिष आपवामां आवे तो ते नारकीओने पण होय छे, घणा धनवानपणानी आशिष आपवामां आवे तो ते म्लेछोने पण होय छे, घणा पुत्रवाननी आशिष आपवामां आवे तो ते कुतराओने पण होय छे, माटे सर्व सुखने आपनारी तो धर्मलाभनीज आशिष छे. ते सांभली विक्रमराजाए हाथीपरथी उतरी आचार्यजीने पंचांग प्रणाम कर्यो, तथा तेमने एक क्रोड सोनामोहोरो देवा मांडी. त्यारे आचार्यजीए कह्युं के,

> भुंजीमहि वयं भैक्ष्यं, शीर्णं वासोवसीमहि ॥
> शयीमहि महीपीठे, कुर्वीमहि किमीश्वरैः ॥ १ ॥

अर्थः— अमो तो भिक्षा मागीने भोजन करीए छीए, जीर्ण वस्त्रो पेहेरीए छीए, तथा पृथ्वीतलपर शयन करीए छीए, माटे अमोने धननुं शुं प्रयोजन छे?

एवी रीते आ निस्पृही आचार्यजीए ते धन लीधुं नहीं. त्यारे राजाए पण ते धन पाछुं लेवानी ना पाडवाथी आचार्यजीना उपदेशथी ते धन संघना प्रधान पुरुषोए जिनमंदिरोना जीर्णोद्धार

माटे चापर्यु एवी रीते उचित दानपर विक्रमादित्य राजानी कथा जाणवी

वली तेज उचित दानपर विक्रमराजानी बीजी कथा कहेछे

एक दहाडो विक्रमराजा वसंत ऋतुमा वनमा क्रीडा करवा गयो हतो त्या ते सुंदर केलोना वृक्षोना मंडपमा सुवर्णना सिंहासनपर बेठो हतो ते वखते त्या बत्रीस जातना वाजिंत्रोथी मनोहर पात्रोनु नृत्य थइ रह्यु हतु एवी रीते त्या ते अनेक प्रकारना सासारिक सुखो भोगवतो थको वारवार नीचेनु काव्य भणतो हतो

क्वचिद्वीणावेणुप्रवणरमणीगीतभणितिः
क्वचिद्भट्टश्रेणिः पठति विरुदालीमविरतिः ॥
सहर्षं हेषंते क्वचिदपि हया दंतिनिवहाः
नदंति क्ष्मातलं प्रवरमपरं राज्यसदृशम् ॥ १ ॥

एवी रीते संसारसुखमा निमग्न थएला राजाने धर्माधिकारी मंत्रीए कह्यु के, हे राजन्! जो आ आत्माने संसाररूपी केदखानामाथी आपणे छोडावीए नहीं तो पछी, राज्य, धन, धान्य, आभूषणो, उत्तम जाति, कुल तथा उत्तम गुणो पण शा कामना छे? वली भोगोमा तो रोगोनो भय छे, सुखमा क्षयनो भय छे, धनने अग्नि आदिकनो भय छे, दासपणामा स्वामिनो भय छे, कुलमा खराब चालनी स्त्रीनो भय छे, मानमा म्लानिनो भय छे, गुणोमते दुर्जननो भय छे, शरीरने यमनो भय छे, पण हे राजन्! वैराग्यने कोइनो पण भय नथी ते साभली वैराग्यवान् राजाए कह्यु के, अहो! आ धर्माधिकारिए युक्त वात कही केमके, भ्रमण करी रहेल छे भृकुटिरूपी जलचरो जेमा, तथा केशोरूपी छे शेवाल जेमा, अने कर्णोरूपी छे, आवर्तो जेमा, तथा स्फुरायमान् नेत्रोरूपी छे कमलो जेमा एवा आ शरीररूपी तलावमाथी हमेशा तृषातुर एवो काल आयुष्यरूपी पाणीने पी

जाय छे. वली आ संसारमां आयुष्य तो जलना मोजांनीपेठे क्षणभंगुर छे, अने लक्ष्मीतो स्वप्ननी पेठे नश्वर छे, अने यौवन तो वादलांनीपेठे क्षणिक छे, माटे खरेखर आ संसार वैराग्यरूपज छे. एवी रीते संसारनी असारता जावीने विक्रमराजाए ते धर्मा-धिकारीने आठ क्रोड सोनामोहोरो इनाम तरीके आपी. एवी रीते उचित दानपर अनेक दृष्टांतो छे.

हवे पांचमा कीर्तिदाननुं स्वरूप कहेछे.

पोतानां कुल, वंश, रूप, विद्या, गुण आदिकोना वर्णनमाटे जे भाट, चारण, गवैया, तथा मागण आदिकने जे दान देवुं ते कीर्तिदान कहेवाय छे.

ते कीर्तिदानपर विक्रमराजानी कथा कहेछे.

एक दहाडो विक्रमराजा ज्यारे सभामां बेठेला हता, त्यारे तेमने तृषा लागवाथी नीचेप्रमाणे काव्य भणीने पाणी माग्युं.

स्वच्छं सज्जनचित्तवल्लघुतरं दीनार्थिवच्छीतलं
पुत्रालिंगनवत्तथा च मधुरं बालस्य संजल्पवत्॥
एलोसीरलवंगचंदनलसत्कर्पूरपालीमिलत्-
पाडल्युत्पलकेतकीसुरभि तत्पानीयमानीयताम्॥ १॥

अर्थः- सज्जनोना मननीपेठे स्वच्छ, दीनयाचकनी पेठे हलकुं, पुत्रालिंगननीपेठे शीतल, बालकना वचननीपेठे मधुर, तथा एलची, लविंग अने चंदनथी उल्लसायमान तथा कपुरनी श्रेणिथी मलेला गुलाब, कमल अने केतकीथी मनोहर एवुं पाणी लावो ? ॥ १ ॥

त्यारे मंत्रि सुवर्णना कचोलामां राजामाटे जल लाव्यो. त्यारे पासे बेठेला कवीश्वरे नीचे प्रमाणे काव्य कह्युं.

वक्त्रांभोजे सरस्वत्यधिवसति सदा शोण एवाधरस्ते
बाहुः काकुत्स्थवीर्यस्मृतिकरणपटुर्दक्षिणस्ते समुद्रः॥

वाहिन्यः पार्श्वमेताः कथमपि भवतो नैव मुंचंत्यजस्त्रं
स्वर्वेंऽतर्मानसेऽस्मिन् किमवनिपते तेऽम्बुपानाभिलाषः

एवी रीतना कवीना काव्यने सांभळीने तुष्टमान थएला विक्रमराजाए पाड्यराजापासेथी दंड तरीके आवेली सर्व वस्तुओ तेने इनाममा आपी ते भेट आप्रमाणे हती आठ क्रोड सोना मोहोरो, त्राणु मोतीओना हारो, पचास हाथीओ, दश हजार घोडा, तथा चारसो नाटको तेमा हता

वळी पण तेज कीर्ति दानपर विक्रमराजानी बीजी कथा कहेछे

एक दहाडो विक्रम राजानी धोवण वस्त्रो धोईने तेमने आपवा आवी, त्यारे ते वस्त्रोमा हजु किंचित् मेल बाकी रहेलो होवाथी राजाए तेणीने तेनु कारण पूछ्युं त्यारे ते महा चतुर धोबणे कह्युं के, हे राजन्! आ वर्षाकाल गयो तोपण आपना हाथीओ नदीकिनारापर आवीने एटली बधी धूळ उडाडे छे के, तेथी हजु नदीनुं पाणी स्वच्छ थतु नथी धोबणना ते वचनथी खुशी थइने विक्रमराजाए ते वस्त्रो तथा एक क्रोड सोनामोहोरो तेणीने इनाम आपी

एक दहाडो श्री सिद्धसेन दिवाकर विहार करता थका उज्जयनीमा पधार्या त्यारे संघे एकठा थइने आचार्यजीने विनती करी के, हे भगवन्! आप जो विक्रमराजाने वश करीने, ओंकार नगरमा जे ब्राह्मणो जिनमदिर बाधवा नथी आपता, ते बाधी शकाय तेवुं जो आप करी आपो, तो आपनी विद्या प्रमाणभूत कहेवाय ते सांभळी सिद्धसेनजी चार नवीन श्लोको रचीने राजदरबारमा गया अने डमीदारने मुखेथी राजापासे नीचेप्रमाणे श्लोक जणाव्यो

दिदृक्षुर्भिक्षुरेकोऽस्ति, वारितो द्वारि तिष्ठति ॥
हस्तन्यस्तचतुःश्लोको, यद्वागच्छतु गच्छतु ॥ १ ॥

अर्थः– आपने मलवानी इच्छावालो कोइक भिक्षु चार श्लोको हाथमां लेइने अटकाव्याथी वारणे उभो छे, ते आवे के चाल्यो जाय ? त्यारे राजाए कह्युं के, तेने दश लाख सोना मोहोरो आपो? अने तेनी इच्छा होय तो सुखेथी अहीं आवे, अने जो तेनी इच्छा न होय तो ते सुखेथी जाय. त्यारे सिद्धसेनजीए छडीदारने कह्युं के, मारे सोनामोहोरोनो खप नथी, एम कही ते राजसभामां गया. त्यां विक्रमराजा पूर्व सन्मुख सिंहासनपर बेठा हता. तेने जोइ आचार्यजीए नीचे प्रमाणे एक श्लोक कह्यो.

अपूर्वेयं धनुर्विद्या, भवता शिक्षिता कुतः ॥
मार्गणौघः समभ्येति, गुणो याति दिगंतरम् ॥ १ ॥

अर्थः– हे राजन्! आवी अपूर्व धनुर्विद्या तमो क्यांथी शीख्या ? केमके, तमारां बाणोनो समूह (पक्षे–याचकोनो समूह) नजीक आवे छे, अने दोरी (पक्षे–तमारा गुणो) उलटा दिशांतरमां जाय छे !! ॥ १ ॥

ते सांभली राजा पूर्व सन्मुखनुं सिंहासन छोडीने दक्षिणतरफ बेठा. त्यारे आचार्यजीए नीचे प्रमाणे बीजो श्लोक कह्यो.

सर्वदा सर्वदोऽसीति, मिथ्या संस्तूयसे बुधैः ॥
नारयो लेभिरे पृष्ठं, न वक्षः परयोषितः ॥ २ ॥

अर्थः– हे राजन्! हमेशां तमो "सर्व वस्तु आपनारा छो" एवी रीते पंडितो तमारी फोकट स्तुति करे छे, केमके शत्रुओ तमारी पीठने मेलवी शकता नथी, तेम परस्त्रीओ तमारां वक्षस्थलने मेलवी शकती नथी. ॥ २ ॥

ते सांभलीने विक्रमराजा पश्चिम दिशातरफ बेठा. त्यारे आचार्यजीए नीचेप्रमाणे त्रीजो श्लोक कह्यो.

आहते तव निःस्वाने, स्फुटितं रिपुहृद्घटैः ॥
गलिते तत्प्रियानेत्रे, राजञ्चित्रमिदं महत् ॥ ३ ॥

अर्थ – हे राजन्! तमारु निसान वागते छते शत्रुओना हृदयरूपी घडाओ फूटी गया, पण जल तो तेओनी स्त्रीओना नेत्रोमांथी निकळ्युं! ए मोटुं आश्चर्य छे! ॥ ३ ॥

ते सांभळीने विक्रमराजा उत्तरतरफ वेठा त्यारे आचार्यजीए नीचेप्रमाणे चोथो श्लोक कह्यो

सरस्वती स्थिता वक्त्रे, लक्ष्मीः करसरोरुहे ॥
कीर्तिः किं कुपिता राजन्, येन देशांतरं गता ॥४॥

हे राजन्! सरस्वती तो तमारा मुखमां वेठेली छे, अने लक्ष्मी तो तमारा हस्तकमलमां वेठेली छे, त्यारे तमारी कीर्ति शुं (शोक्यपणाना) जयथी कोप पामी छे? के जे ते देशांतरमां चाली गइ छे ॥ ४ ॥

एवी रीते चोथो श्लोक सांभळीने विक्रमराजाए सिंहासनथी उतरीने आचार्यजीने नमस्कार कर्यो, अने कह्युं के हे जगवान्! में आपने चारे दिशाओनुं राज्य आपी दीधुं छे त्यारे आचार्यजीए कह्युं के, हे राजन्' अमो निस्पृही मुनिओ राज्यने शुं करीशुं? एम कही आचार्यजीए पोतानो मुनिव्यवहार तेमने कही संजळाव्यो छेवटे राजाए घणी खेंच करी पण आचार्यजीए कंइ पण वस्तु लीधी नहीं पछी विक्रमराजा त्यारथी जैनधर्मी थइ शुद्ध श्रावकपणुं पाळवा लाग्या, तथा हमेशां सिद्धसेनदिवाकरना चरणो सेवीने तेणे शत्रुंजयादिक तीर्थोनो उद्धार कर्यो, तथा ओंकारादिक शेहेरोमां जिनमंदिरो वधाव्या

एवी रीते कीर्तिदानपर विक्रमादित्य राजानी कथा जाणवी वळी एवीज रीते जोजराजाए पण पोतानी कीर्तिमाटे का-

लिदास, वररुचि, मयूर, तथा वाण आदिक कविउने सेंकडो गमे गाम आदिकनुं दान आप्युं ठे.

वली ते कीर्तिदानपर जोजराजा अने धनपाल कविनी कथा कहेठे.

सर्वदेव ब्राह्मणनो पुत्र धनपाल पोताना जाइ शोजनाचार्य करेला उपदेशथी प्रतिवोध पामीने परम जैनी थयो हतो. एक दहाडो जोजराजा ज्यारे शिकारे जतो हतो, त्यारे तेणे वलात्कारे धनपाल पंडितने साथे लीधो. पठी त्यां पोताना वाणथी एक हरिणने मार्याथी ते हरिण पृथ्वीपर पडीने पोतानी पुंठडी फफडाववा लाग्युं. त्यारे जोजराजाए धनपाल कविने तेनुं कारण पूठ्युं. त्यारे कवीश्वरे कह्युं के, हे राजन्! ते हरिण पुंठडी फफडावीने एम सूचवे ठे के,

रसातलं यातु तदत्र पौरुषं
दुर्नीतिरेषा धरणीजृतानां ॥
निहन्यते यद्बलिनापि दुर्बलो
हहा महाकष्टमराजकं जगत् ॥ १ ॥

अर्थः- राजाउनुं ते पौरुष रसातलमां जाउ? तेम आ तेउनी कुनीति ठे; केमके, वलवान माणस पण दुर्वलने जे हणे ठे, तेथी अरेरे!! आ जगत् तो राजाविनानुं लागे ठे. ॥ १ ॥

पदे पदे संति जटा रणोद्यता,
न तेषु हिंसारस एष पूर्यते ॥
धिगीदृशं ते नृपते कुविक्रमः,
कृपाश्रये यः कृपणे मृगे मयि ॥ २ ॥

अर्थः-वली आ जगतमां पगले पगले सुजटो रणसंग्राममां तत्पर थएला ठे; पण तेउनो हिंसारस संपूर्ण थतो नथी; माटे हे रा-

जन्! दया करवाने योग्य एवा हुं मृगप्रते जे तें आ तारूं खराब पराक्रम फोरव्युं ते, ते तारा पराक्रमने धिक्कार छे

वैरिणोऽपि हि मुच्यंते, प्राणांते तृणभक्षणात्॥
तृणाहाराः सदैवेते, हन्यते पशवः कथम्॥ ३॥

प्राणांतकाले मुखमा तृण लेवाथी माणसो वैरिओने पण छोडी मुके छे, तो हमेशा तृण भक्षण करनारा एवा आ पशुओने शामाटे हणवा जोइए?

आवी रीतनी धनपालनी वाणी सांभळीने भोजराज मनमा जरा क्रोधातुर थयो पछी आगळ चालता ते राजा पोते बनावेला एक तळावपासे आव्यो, तथा ते तळावनु वर्णन करवाने तेणे धनपाल कवीश्वरने कह्यु, त्यारे धनपाले कह्युं के,

एषा तटाकमिषतो वरदानशाला,
मत्स्यादयो रसवतीप्रगुणा सदैव॥
पात्राणि यत्र बकसारसचक्रवाकाः,
पुण्यं कियद्भवति तत्र वयं न विद्मः॥ १॥

अर्थ – तळावना मिषथी खरेखर आ तो एक दानशाळा लागे छे, केमके त्या मत्स्यादिकरूप रसोइ हमेशा तैयार होय छे, तथा तेमा बगला, सारस, चक्रवाक आदिक पक्षिओ अतिथि तरीके आवे छे, माटे आ तळाव बांधवाथी केटलुक पुण्य थाय छे? ते अमो जाणी शकता नथी ॥ १ ॥

ते सांभळीने पण भोजराजा तो मनमा गुस्से थयो पछी तेओ नगरमा आव्याबाद त्या यज्ञमंडपमा होमवामाटे बांधेला बकरानी बूमो सांभळीने राजाए धनपाल पंडितने कह्यु के, आ बकरो शुं बोले छे? त्यारे धनपाले कह्यु के ते एम कहेछे के

नाहं स्वर्गफलोपभोगतृषितो नाभ्यर्थितस्त्वं मया
संतुष्टस्तृणभक्षणेन सततं साधो न युक्तं तव ॥
स्वर्गं यांति यदि त्वया विनिहता यागे ध्रुवं प्राणिनो
यज्ञं किं न करोषि मातृपितृभिः पुत्रैस्तथा बांधवैः ॥१॥

अर्थ—हे राजन्! मने स्वर्गफलना उपभोगनी तृष्णा नथी, तेम में तमारी पासे कंइ याचना करी नथी; तेम हुं तृणभक्षणथी संतुष्ट थयो छुं. माटे तमारे मने मारवो उचित नथी; वली कदाच तमोए यज्ञमां मारेला प्राणीउ जो स्वर्गमां जता होय, तो तमो तमारा मातपिता तथा पुत्रो अने बांधवोनो यज्ञ केम करता नथी? १

ते सांभली क्रोधायमान थएला भोजराजाए धनपालनी आंखो कहाडी लेवाने इछ्युं. धनपाल पंडिते पण चेष्टाथी राजानो ते विचार जाणी लीधो. पछी चालतां थकां ज्यारे तेउ दरवाजामां आव्या, त्यारे कोइक डोशीने मस्तक धुणावती तेउए दीठी, तथा तेनीपासे एक मुग्ध छोकरी पण उभी हती. ते जोइ राजाए धनपालने तेनुं कारण पूछ्युं. त्यारे धनपाल कविए कह्युं के, हे स्वामी! आ डोशीने ते मुग्धबालिका नीचेप्रमाणे पूछे छे, अने तेनो ते डोशी निषेध करे छे.

किं नंदी किं मुरारिः किमुत
सुरपतिः किं जलः किं कुबेरः
किं वा विद्याधरोऽसौ किमु
रतिरमणः किं विधुः किं विधाता ॥
नायं नायं न चायं न खलु
न हि न वा नापि नासौ न चैष
क्रीडां कर्तुं प्रवृत्तः स्वयमिह
हि हले भूपतिर्भोजदेवः ॥ १ ॥

अर्थ'– शुं आ महादेव छे? के विष्णु छे? के इंद्र छे? के नल छे? के कुबेर छे? के कोइ विद्याधर छे? के कामदेव छे? के चंद्र छे? के ब्रह्मा छे? त्यारे ते मोशीए कह्युं के, अरे मुग्धे सखि! तेओमाथी ते कोइ पण नथी, आ तो भोजराजा पोते क्रीडा करवाने जाय छे

ते साभली भोजराजाए कह्युं के, हे कवीश्वर! मने विष्णु आदिकनी उपमा शीरीते घटी शके छे? त्यारे धनपाल कवीश्वरे कह्यु के, हे राजन्! साभलो

अभ्युद्धृता वसुमती दलित रिपूरः-
क्रोडीकृता बलवता बलिराजलक्ष्मीः॥
एकत्र जन्मनि कृतं तदनेन यूना,
जन्मत्रये यदकरोत्पुरुषः पुराणः ॥ १ ॥

अर्थ-बलवान एवा तमोए एकज जन्ममा पृथ्वीने उंधरी छे, शत्रुओने दल्या छे, तथा (बलिराजनी) बलवान राजाओनी लक्ष्मीने वश करी छे, अने विष्णुए तो त्रण जन्ममा ते त्रणे कार्यो कर्या छे

ते साभली तुष्टमान थएला भोज राजाए कवीश्वरने कह्यु के, हे कविराज! तमो कइ पण वरदान मागो? त्यारे धनपाले कह्यु के, जो एम छे तो मने (मारी) आखो आपो? त्यारे राजाए कह्यु के, ते आखो तो प्रथमथीज तमारीपासे छे त्यारे कवीश्वरे कह्यु के ते आखो छे, पण नहीं होवासरखी हती, केमके, आपे मनथी ते लेइ लेवानीज इच्छा करी हती त्यारे राजाए कह्यु के, तमोए ते शी रीते जाण्यु? त्यारे कविराजे कह्यु के,

आकारैरिंगितैर्गत्या, चेष्टया भाषणेन च ॥
नेत्रवक्त्रविकारैश्च, लक्ष्यतेऽतर्गत मनः ॥ १ ॥

आकार, इंगित, गति, चेष्टा, वचन, अने नेत्र तथा मुखना विकारथी प्राणीओनु अतरग मन जणाय छे ॥ १ ॥

ते सांजळी राजाए कह्युं के, हे कविराज! तमो शांत थाउ? में तमोने ते तमारां चक्षुउ आप्यां. इत्यादि ज्ञोजराजाए घणां कीर्तिदानो आप्यां छे.

वळी तेज कीर्तिदानपर सिद्धराज राजानी कथा कहेछे.

एक दहाडो सिद्धराज ग्रीष्मऋतुमां, क्रीडा करवामाटे वनमां गया हता. त्यां मार्गमां रामचंद्र नामना साधु तेमने मळ्या. त्यारे ते राजाए तेमने पूछ्युं के, ग्रीष्म ऋतुमां दिवसो लांबा केम होय छे? त्यारे रामचंद्रे कह्युं के,

देव श्रीगिरिदुर्गमल्ल ज्ञवतो दिग्जैत्रयात्रोत्सवे
धावद्वीरतुरंगनिष्ठुरखुरक्षुण्णक्ष्मामंडलात् ॥
वातोद्धूतरजोमिलत्सुरसरित्संजातपंकस्थली-
दूर्वाचुंबनचंचुरा रविहयास्तेनातिवृद्धंदिनम् ॥१॥

अर्थ– हे गिरिदुर्गने जीतनारा राजन्! तमारा दिग्विजय समये दोडता एवा सुज्ञटोना घोडाउनी उग्र खरीउना घातथी खोदाएली पृथ्वीपरथी पवने करीने उडेली रजथी आकाशगंगामां कादव थयो, अने तेथी तेमां उगेली धोकडने खावानी लालचथी सूर्यना घोडाउ थोज्ञी गया छे, अने तेथी दिवसो मोटा थया छे.

ते सांजळी तुष्टमान थएला सिद्धराजे तेमने "कविकट्टारमल्लनुं" विरुद आप्युं. एवी रीते सिद्धराजे पण श्रीपाल आदिक कविउने घणुं कीर्तिदान आप्युं छे.

वळी तेज कीर्तिदानपर कुमारपाल राजानी कथा कहेछे.

एक दहाडो कुमारपाल राजाए सपाद लक्षना राजाअर्णाधिपपर चडाई करी; ते वखते तेना सामंतोए गुप्त रीते तेनी हांसी करीके, अरे! आ वणिकनी पेठे जैनधर्म पाळनारो छे, तो हिंसाथी डरीने शत्रुउने शी रीते जीती शकशे? ते वात राजाना क-

एंपर आगमाथी ते सामंतोने पोतानु बळ देखाडवा माटे कुमारपाळे मार्गमा पमेली एक आखी सोपारीनी गुणीने पोताना जाळावती उचकी लीधी, तथा एक धोबीना सात कराया के, जे एक चीजापरसाथे पडेला हता, तेउने जालाथी वींधी नाख्या ते समये आघभट्ट कविए समयोचित राजानी प्रशसा करवाथी कुमारपाळे तेने दरेक अक्षरप्रते घोडाउ आप्या

पन्नी अर्णराजाए केटलुक द्रव्य आपीने कुमारपालना केटलाक सामंतोने ज्यारे पोताना पक्षमा लीधा त्यारे कुमारपाळ शोकातुर थयो, त्यारे एक चारणे तेने कह्यु के,

कुमारपाल मम चिंत करेइ, चिंतिउ किंपि न होइ ॥
जिणें तुज राज समप्पिउं, चिंत करेसिइ सोइ ॥ १ ॥

पन्नी ज्यारे कुमारपालनो जय थयो त्यारे कविए कह्यु के,

जीयाच्चिरं कीर्तिलतालवाल,
कुमारपाल क्षितिपाल जास्वान् ॥
यस्य प्रतापो हि वनेऽप्यरीणा,
स्वेदोदविंदूनधिकाश्चकार ॥ १ ॥

अर्थ– हे कीर्तिरूपी वेलडीना क्यारासमान अने सूर्यसरखा कुमारपाल राजा तमो घणा कालसुधी जय पामो ? के जे कुमारपालराजाना प्रतापे वनमा रहेला शत्रुउने पण अधिक पसीनाना बिंदुउ करेला हे ॥ १ ॥

विहारं कुर्वता वेरि-वनिताकुचमंडलम् ॥
महीमंडलमुद्दंड-विहार येन निर्ममे ॥ २ ॥

अर्थ– वली जे कुमारपाल राजाए पृथ्वीपर विहार करता थका शत्रुउनी स्त्रीउना स्तनमंडलने हारोरहितानु कर्यु हे ॥२॥

इत्यादि तेनी प्रशंसाना अनेक काव्यो कविए कर्या हे, अने तेथी कुमारपालराजाए तेने घणुज कीर्तिदान आप्यु हे

वळी एवीज रीते कुमारपाल राजा एक दहाडो पोताना गुरु श्री हेमचंद्राचार्यनीसाथे शत्रुंजयपर जई चैत्यनां दर्शन करता हता, ते वखते हेमचंद्रजीए तेमनो डावो हाथ झाल्यो हतो, ते जोइ कपर्दि कविए कह्युं के,

श्रीचौलुक्य स दक्षिणस्तवकरः पूर्वं समासूत्रित-
प्राणिप्राणविघातपातकसखः शुद्धो जिनेंद्रार्चनात् ॥
वामोऽप्येष तथैव पातकसखः शुद्धिं कथं प्राप्नुयात्
न स्पृश्येत करेण चेद्यतिपतिः श्रीहेमचंद्रः प्रभुः ॥१॥

अर्थ– हे चौलुक्यवंशना राजा कुमारपाल ! पूर्वे करेली प्राणीहिंसाथी पापिष्ट थएलो तमारो जमणो हाथ तो श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजाथी शुद्ध थएलो छे; अने तेवीज रीते तमारो डावो हाथ पण के जे पापिष्ट हतो, तेने जो आ महान आचार्य श्री हेमचंद्रजीए स्पर्श कर्यो नहोत, तो ते पण शुद्ध क्यांथी थात?

ते सांभळी कुमारपालराजाए कपर्दि कविने घणुं द्रव्य आपी संतुष्ट कर्यो.

वळी तेज कीर्त्तिदानपर विशलदेवराजानी कथा कहेछे.

एक दहाडो विशलदेवराजाए भोजन कर्याबाद हाथमां एक तृण लेइने अरिसिंह नामना कविने कह्युं के, तमो आ तृणनुं वर्णन करो? अने तेमां जो तमो चमत्कारिक भंगीथी वर्णन करशो, तो तमोने हुं बेवडो गरास आपीश, अने तेम जो नहीं थाय, तो तमारो जे गरास छे, ते पण आंचकी लेइश. ते सांभळी कविराजे कह्युं के,

क्षारोऽब्धिः शिखिनोमखा विषमयं भक्त्रं क्षयांऽडमुधा
प्राहुस्तत्र सुधामियं तु दनुजस्तत्रैव लीनातृणे ॥

पीयूषप्रसवो गवां यदशनाद्दत्वा यदासोनिजे
देव त्वत्करवालकालमुखतो निर्याति जातिर्द्विषाम् ॥१॥

एवी रीतना चमत्कारिक वर्णनने सांजलीने विशालदेवराजाए ते कविराजने वमणो गरास आप्यो

वली तेज कीर्तिदानपर उदयसिंह राजानी कथा कहेछे

एक दहाडो योगिनी नामना नगरथी जलालुद्दिन नामनो बादशाह मोटु लश्कर लेइने गुजरातपर चडी आव्यो, तथा ते देश जीतीने ज्यारे ते पाछो वल्यो त्यारे गोपगिरिना राजा उदयसिंहे पोतानु लश्कर लेइने तेनापर हुमलो कर्यो, तथा ते बादशाहना लश्करने हरावीने तेनो सघलो असबाब पोते लुटी लीधो तथा एवी रीते जय पामीने ज्यारे ते नगरमा प्रवेश करतो हतो त्यारे एक चारणे तेने कह्यु के,

सुदरसरिअसुरहंदतलि, जलपिधउं वयणेहि ॥
उदयनरिंदहि कट्ठीउं, तीहं नारीनयणेहि ॥ १ ॥

एवी रीतनी चारणे कहेली गाथाने सांजलीने तुष्टमान थएला उदयसिंहराजाए ते चारणने पोताने लुंटमा मलेलो सर्व असबाब आपी दीधो

एवी रीते कर्णराजा, वनराज, भीम, आमराजा आदिक राजाउना कीर्तिदानना प्रबंधो जाणी लेवा

हवे मंत्रि, प्रधान, व्यापारि आदिकोना कीर्तिदाननु स्वरूप कहे छे तेमा प्रथम आम्रदेव मंत्रिनी कथा कहेछे–

एक दहाडो गुजरातना राजा कुमारपाले कोइ वंदिना मुखथी कोंकणना राजा मल्लिकार्जुननी प्रशंसा सांजली तेथी तेने क्रोध चड्यो, अने तेदवामाटे तेणे पोताना मंत्रि आम्रदेवने तेने जीतवामाटे बलवान लश्करसहित त्या मोकल्यो त्या लडाइमा

ते आम्रदेव मंत्रिए मल्लिकार्जुनने मार्यो, तथा त्यां रहेता माछी-मारोनी आजीविकानो बंदोबस्त करावीने तेउपासेनी त्रणसो जाळोने वाळी नाखी. तथा ते देशमां सर्व जगोए कुमारपाळनी आज्ञा वर्तावी. पछी त्यांथी पाछा वळतां सोपारक नगरमां जीवंत स्वामी तथा श्री युगादि प्रभुना मंदिरमां तेणे अट्टाइ महोत्सव कर्यो, तथा त्यांथी मेळवेली अमूल्य वस्तुउ लेइने तुरत पाटणमां आव्यो, अने सर्व वस्तुउ तेणे कुमारपाळराजाने सोंपी. ते जोई तुष्टमान थएला राजाए ते आम्रदेवने "राजपितामहनुं" विरुद आप्युं, तथा तेनीसाथे एक क्रोड सोना मोहोरो, त्रण सोनाना कळशो, अने चोवीस उत्तम घोडाउ पण आप्या. त्यारे आम्रदेवे ते त्रण कळशोने भृगुकछादिकमां जिनमंदिरोपर चडाववामाटे राख्या, अने बाकीनुं राजाए आपेलुं द्रव्य तथा पोताना घरमां रहेलुं द्रव्य पण तेणे भाट चारण आदिकोने आपी दीधुं. ते जोई राजाने ईर्षा थई, त्यारे आम्रदेवे कह्युं के, हे स्वामी! आप तो बार गामना स्वामी एवा त्रिभुवनपाळना पुत्र छो, अने हुं तो तमो के जे अढार देशोना राजा छे, तेनो पुत्र छुं, माटे अधिक दान केम न आपुं? ते सांभळी कुमारपाळराजा संतुष्ट थया. वळी ते आम्रदेव मंत्रिए भरुचमां श्री मुनिसुव्रतस्वामिना मंदिरमां आरति उतारतीवखते घणुं द्रव्य याचक लोकोने आप्युं हतुं. कह्युं छे के,

द्वात्रिंशल्लक्षमल्ला भृगुपुरवसतेः सुव्रतस्यार्हतोऽग्रे
कुर्वन्मांगल्यदीपं स सुरनरवरश्रेणिभिःस्तूयमानः ॥
यो ऽदादर्थिव्रजस्य त्रिजगदधिपतेः सद्गुणोत्कीर्तनायां
स श्रीमानाम्रदेवो जगति विजयतां दानवीराग्रयायी १

अर्थ– भरुचमां श्रीमुनिसुव्रतस्वामिजीपासे मंगळ दीपकरतां थकां, देवो अने उत्तम मनुष्योनी श्रेणिउथी स्तुति करा-

एवा जे श्री आम्रदेव मंत्रीए, त्रिलोकना स्वामिना गुणोत्कीर्तन करनार भोजक आदिकोने बत्रीस लाख सोनामोहोरो आपी छे, एवा महा दानेश्वरी श्रीआम्रदेव मंत्री जगतमां जय पामो?

वली ज्यारे ते मंत्रीश्वरे भरुचमां जिनमंदिरनो प्रतिष्ठामहोत्सव कर्यो त्यारे तेनी उदारता जोई चकित थएला हेमचंद्राचार्यजीए पण कह्यु के,

किं कृतेन न यत्र त्वं यत्र त्वं, किमसौ कलिः॥
कलौ चेद्भवतो जन्म, कलिरस्तु कृतेन किम् ॥ १ ॥

ते सांभली एक लाख अने बत्रीस हजार सोनामोहोरोनु श्री हेमचंद्राचार्यपर लुंछन करीने आम्रदेवे ते सर्व द्रव्य याचकोने वहेंची आप्यु

एवी रीते किर्तिदानपर कुमारपालराजाना महामंत्री आम्रदेवनी (अबडदेवनी) कथा कही

हवे तेज कीर्तिदानपर विमलशाहनी कथा कहे छे

विमलशाह शाहुकारे ज्यारे आबु पर्वतपर जिनमंदिरो बांधवानो प्रारंभ कर्यो, तेसमये ते भूमिनो अधिष्ठाता वालिनाह तेमने अंतराय करवा लाग्यो, तथा मदिरा अने मांसना निवेदनी याचना करवा लाग्यो, त्यारे विमलशाहे अंबिकादेवीना आराधनथी तेने वश कर्यो, अने तेथी ते फक्त वडाना निवेदथीज खुशी थयो पछी ते विमलशा शेठे जिनमंदिर पूरु कर्याबाद अत्यंत भक्तिथी संघनी सेवा करी तथा भिक्षुक लोकोने एवा तो संतुष्ट कर्या के, हजुसुधि पण " विमलश्रीसुप्रभात " एवी रीतनी लोकवाणी चाली आवे छे, अने याचक विगेरे पोताना यजमानने ते वचन कहीने आशीर्वाद आपे छे ते आशीर्वाद वचननो अर्थ एवो छे के, जेम विमलशाह शेठ अने तेनी स्त्री श्रीदेवीनो

प्रख्यात जगतो हतो, तेवो प्रख्यात तमारो पण जगो? वली एक चारणे विमलशाह शेठनी प्रशंसा करी के,

मंडीमुरकीरइ करइ, मिल्हीअमंसग्गाह ॥
विमलहिं खंडजंकह्नीउं, नठ्ठ वालिनाह ॥१॥

ते सांभली विमलशाह शेठे ते चारणने एक लाख सोनामोहोरो आपी हती. एवी रीते विमलशाह शेठना कीर्तिदाननी कथा जाणवी. वली तेज कीर्तिदानपर वस्तुपालनी कथा कहे छे.

वस्तुपाल मंत्री दर वर्षे त्रणवार चतुर्विध संघनी पूजा करता हता; अने अत्यंत दान आपता हता. एक दहाडो कोइक दरिद्री ब्राह्मणे तेमने विनंति करी के, हे देव! तमो तो कल्पवृक्षनीपेठे सर्व लोकोनी इच्छाउं पूरो छो, तो एक दिवस मारा तरफ पण दृष्टि करो के, जेथी मारी दरिद्रताने तो हुं जलांजलिज देउं. ते सांभली मंत्रिए पोताना माणसोने कह्युं के, अरे! आने कंइक वस्त्र आपो? त्यारे माणसोए कह्युं के, वस्त्रो बांधवानी एक जाडी चादर अहीं हाजर छे. त्यारे मंत्रिए जरा हसीने कह्युं के, ते आपो? पछी ते चादर लेइने ब्राह्मणे कह्युं के,

क्वचित्सूत्रं क्वचित्तूलं, कार्पासास्थि क्वचित् क्वचित् ॥
देव त्वदरिनारीणां, कुटीतुल्या पटी मम ॥ १ ॥

अर्थ— आ वस्त्रमां तो कोइक जगोए सुतर, तो कोइक जगोए पुंवडां, तो क्यांक क्यांक तो वली कपासीआ पण वलगेला छे, माटे हे देव! आ मारुं वस्त्र तो आपना शत्रुउनीकुटी सरखुं छे. ॥१॥

ते सांभली जरा हसीने मंत्रीश्वरे कह्युं के, फरीने ते श्लोक तुं बोल? ते सांभली ते ब्राह्मण सत्तर वखत ते श्लोक फरी फरीने बोली गयो; तेथी तुष्टमान थएला मंत्रीश्वरे तेने सत्तरसो सोनामोहोरो आपी.

एक दहाडो वस्तुपालमंत्री यात्रा वखते नरचंद्र आचार्यजीने वादवा माटे आव्या, त्यारे आचार्यजी जरा ध्यानमा हता. त्यारे मंत्रीश्वरे कह्युं के, हे जगवन्! आ समये आप निद्रामा केम छो? त्यारे आचार्यजीए कह्युं के, हुं कंइ निद्रामा नथी, पण समुद्रमा रहेला लक्ष्मी अने विष्णु वातो करे छे, ते साजलुं छुं त्यारे मंत्रीश्वरे पूछ्युं के, तेओ शुं वातो करे छे? त्यारे आचार्यजीए कह्युं के,

लक्ष्मि प्रेयसि केयमास्यशितिति वैकूठकुंठोऽसि किम् ॥
नो जानासि पितुर्विनाशमसम संघोत्थितैःपांसुभिः
माज्रीर्जीरु गज्ञीर एव ज्नविताज्ञोधिध्थिर नंदतात्,
संघेशो ललितापतिर्जिनपतेःस्नानावुकुल्या सृजन् १

ते साजली मंत्रीश्वरे तेमना मानमाटे सुवर्णनुं सिंहासन रचाव्युं.
एक दहाडो वालचंद्र साधुए वस्तुपालनी प्रशंसा करी के,

गौरी रागवती त्वयि त्वयि वृषो बध्धादरस्त्वं पुन-
र्भूत्या त्वं च समुल्लसद्गुणगणः किं वा बहु ब्रूमहे
श्रीमंत्रीश्वर नूनमीश्वरकलायुक्तस्य ते युज्यते
वालेंदुं चिरमुच्चकैरचयितुं त्वत्तोऽपरः कः क्षमः २

ते साजली मंत्रीश्वरे तेमनुं पादोपवेशन कर्युं

एक दहाडो तेजपालमंत्री जृगुकच्छ (जरुच) नामना नगरमा पधार्या त्यारे मुनिसुव्रतस्वामिना चैत्यमा रहेता आचार्योए तेमने कह्युं के, हे मंत्रीश्वर! एक संदेशो छे तमोने कहुं ते साजलो? त्यारे मंत्रीश्वरे हाथ जोडीने कह्युं के, हे जगवन्! आप फरमावो? त्यारे आचार्यजीए कह्युं के, आजे पाछली रात्रिए मने एक वृद्ध स्त्रीए आवीने कह्युं के,

तेजःपालकृपालुधुर्यविमलप्राग्वटावगाध्वज
श्रीमन्नयडकीर्तिरर्धं वदति त्वत्सुख मन्मुखात्॥

आजन्मावधि वंशयष्टिकलिता भ्रांताहमेकाकिनी
वृद्धा संप्रति पुण्यपुंजभवतः सौवर्णदंडस्पृहा॥१॥

ते सांभली तेजपाल मंत्रीश्वरे जिनमंदिरोपर बहोतेर सोनाना कलशो अने दंडो चडाव्या. तथा दश हजार सोनामोहोरोनुं आचार्यजीने लुंछणुं कर्युं.

वली एक दहाडो वस्तुपालमंत्री शत्रुंजय पर्वतपर सर्व संघनी समक्ष श्री युगादीश प्रभुनी आरति उतारता हता ते वखते याचको दान लेवामाटे उपरा उपर पडता हता. ते वखते सोमेश्वर कविए कह्युं के,

इछासिद्धिसमुन्नते सुरगणे कल्पद्रुमैः स्थीयते
पाताले पवमानभोजनजने कष्टं प्रणष्टो बलिः ॥
नीरागानगमन् मुनीन् सुरभयश्चिंतामणिःक्वाप्यगात्
तस्मादर्थिकदर्थनां च सहतां श्रीवस्तुपालःक्षितौ १

अर्थः– कल्पवृक्षो तो इछासिद्धिवाला देवोपासे गया, अने महादानेश्वरी बलिराजा पातालमां गया, कामधेनुउ नीरागी मुनिउपासे गइउ, अने चिंतामणिरत्न तो कोण जाणे क्यांयें चाल्युं गयुं; माटे हवे तो आ पृथ्वीपर याचकोनी पीडा तो वस्तुपालनेज सहन करवी बाकी रही छे.

ते सांभली मंत्रीश्वरे सोमेश्वर कविराजने एक हजार सोनामोहोरो आपी. त्यारे फरीने सोमेश्वरे कह्युं के,

के निधाय वसुधातले धनं, वस्तुपाल न यमालयं गता
त्वं तु नंदसि निवेशयन्निदं, दिक्षु धावति जने क्षुधावति

अर्थ–हे वस्तुपालमंत्री! आ पृथ्वीपर धनने छोडीने यमने स्थानके कोण गया नथी! पण तमोतो ते धनने दिशाउप्रते दोडता एवा क्षुधातुर माणसने आपता थका आनंद पामो छो.॥१॥

ते सांजली मंत्रीश्वरे फरीने तेने एक हजार सोनामोहोरो आपी वली ते समये अरिसिंह कविराजे कह्युं के,

श्रीवासांबुजमाननं परिणतं पचांगुलिव्याजतो
जग्मुर्दक्षिणपंचशाखमयता पंचापि देवद्रुमाः ॥
वांछापूरणकारण मणयिनां जिह्वैव चिंतामणि-
र्जाता यस्य किमस्य शस्यमपरं श्रीवस्तुपालस्य न

अर्थ– जे वस्तुपालनुं मुख तो लक्ष्मीने निवास करवाने कमल सरखुं छे, तथा हाथमा रहेली पांचे आंगलीओना मिषथी पांचे जातिना कल्पवृक्षो तो जेने स्वाधीन थएला छे, तेम लोकोना वांछितोने पूरनारी जेनी जिह्वा तो चिंतामणिरत्नसमान छे, माटे एवी रीते श्रीवस्तुपालमंत्रीनुं बीजुं पण शुं प्रशंसवालायक नथी?
ते सांजली मंत्रीश्वरे तेने बे हजार सोनामोहोरो आपी
एक दहाडो वीरधवल राजाए तुष्टमान थइने वस्तुपाल मंत्रीने दश लाख सोनामोहोरो इनाममां आपी, पण ते मघली सोनामोहोरो तेणे घेर पहोचता पेहेलाज मार्गमा याचकोने आपी दीधी त्यारे कोइ कविए कह्युं के,

श्रीमंति दृष्ट्वा द्विजराजमेकं,
पद्मानि संकोचमवाप्नुवंति ॥
समागतेऽपि द्विजराजलक्षे,
सदा विकाशी तव पाणिपद्मम् ॥ १ ॥

अर्थ– लक्ष्मीवान एवां कमलो एकज द्विजराजने देखता पण जोइने संकोचाइ जाय छे, पण हे मंत्रीश्वर! लाखो द्विजराज (ब्राह्मणो) आवते छते पण तमारं हस्तकमल तो हमेशा प्रफुल्लितज रहे छे!! ॥ १ ॥

एवी रीतनी पोतानी स्तुति सांभलीने वस्तुपाल मंत्री लज्जाथी नीचुं जोवा लाग्या; ते जोइ नाना नामना कविए कह्युं के,

एकस्त्वं भुवनोपकारकइति श्रुत्या सतां जल्पितं
लज्जानम्रशिरा धरातलमिदं यद्वीक्षसे वेद्मि तत् ॥
वाग्देवीवदनारविंदतिलकश्रीवस्तुपाल ध्रुवं
पातालाद्बलिमुद्दिधीर्षुरसकृन्मार्गं भवान् मार्गसि॥१॥

अर्थ– "तुं एकज जगतनो उपकारी छे" एवी सज्जनोनी वाणी सांभलीने लज्जाथी मस्तक नमावीने जे तमो नीचे जुओ छो तेनुं कारण हुं जाणुं छुं; हे सरस्वतीना मुखपर तिलकसमान एवा वस्तुपाल मंत्री ! खरेखर तमो पातालमांथी बलिराजाने खेंची कहाडवानी इच्छाथी मार्गने शोधो छो. ॥ १ ॥

ते सांभली मंत्रीश्वरे ते कविराजने सुवर्णनी जीभ आपी.

एक दहाडो सोमेश्वर कवि वस्तुपालने घेर आव्यो, त्यारे मंत्रीश्वरे तेमने बेसवामाटे उत्तम आसन आप्युं, पण तेपर ते बेठो नहीं; त्यारे मंत्रीश्वरे तेनुं कारण पूछ्युं; त्यारे कविए कह्युं के,

अन्नदानैः पयः पानै-र्धर्मस्थानैश्च भूतलम् ॥
यशसा वस्तुपालेन, रुध्धमाकाशमंडलम् ॥ १ ॥

अर्थ– वस्तुपाल मंत्रीश्वरे अन्नदानथी, जलदानथी, तथा धर्मनां मकानोथी पृथ्वीतलने रोक्युं छे, तेम यशथी आकाशमंडलने रोक्युं छे, (माटे जगो नहीं मलवाथी हुं बेसतो नथी.)

ते सांभली मंत्रीश्वरे तेने नव हजार सोनामोहोरो आपी.

एक दहाडो वस्तुपाल मंत्री संघपूजा करता हता त्यारे विजयसेनसूरिजीए कह्युं के, आजे तो इंद्रना नंदनवनना उद्यानपालके इंद्रनी सभामां जइ एवो पोकार कर्यो छे के,

देव स्वर्नाथ कष्टं ननु क इह भवान्नंदनोद्यानपालः ॥
खेदस्तत्कोऽथ केनाप्यहह हत हतः काननात्कल्पवृक्षः॥

अर्थ- हे इन्द्र महाराज आजे तो मने मोटुं कष्ट थयुं छे, त्यारे इन्द्रे कह्युं के, तु तो नंदनवननो उद्यानपाल छे, तने आजे शु कष्ट छे? त्यारे उद्यानपाले कह्युं के, अरेरे !! आजे तो कोइ नंदन-वनमांथी कल्पवृक्षने उपाडी गयु छे !! ते सांभळी इन्द्रे कह्युंके,

हुं मा वादीस्तदेतत्किमपि करुणया मानवानां मयैष ॥
प्रीत्यादिष्टोऽयमुर्व्यास्तिलकयति तलं वस्तुपालच्छलेन॥१॥

अर्थ-अरे ! उद्यानपाल ! तु एम नहीं बोल? ते कल्पवृक्षने तो में मनुष्योपर कृपा लावीने मनुष्य लोकमां जवाने कह्यु छे अने तेथी आजे ते कल्पवृक्ष वस्तुपाल मंत्रीश्वरना मिषथी पृथ्वी-तलने शोभावे छे ॥ १ ॥

वळी ते समये कोइके रोहणाचल पर्वतने प्रश्न कर्यो के,

हंहो रोहण रोहति त्वयि मुहुः किं पीनतेयंसदा

अर्थ- हे रोहणाचल ! हालमां तने आवी पुष्टता ते हमेशां केम मळती जाय छे? त्यारे रोहणाचले कह्यु के,

भ्रातः संप्रति वस्तुपालसचिवत्यागैर्जगत्प्रीयते ॥
तेनास्त्वेव ममार्थिकुट्टनकथा प्रीतिर्दरीकिन्नरी-
गीतैस्तस्य यशोऽमृतैश्च तदियं मेदस्विता मेऽधिकम्॥१॥

अर्थ- हे भाइ ! हमणां तो वस्तुपाल मंत्रीश्वरना दानोथी जगत आनंद पामे छे, अने तेथी याचकोथी थतां मारां खोदा-णनी कथाज नष्ट थइ छे, तेम गुफाओमां रहेली किन्नरीओना गी-तोथी मने प्रीति थइ छे, अने ते वस्तुपाल मंत्रीश्वरना यशोरूपी अमृतथी मारी पुष्टता अधिक अधिक वृद्धि पामे छे ॥ १ ॥

एवी रीतनुं काव्य सांभळीने ते ब्राह्मणने शालिगराजाए घणुं धन आप्युं.

वळी विक्रम संवत् १३७१ मां समराशाहे ज्यारे शत्रुंजय तीर्थनो उद्धार कर्यो, त्यारे रामभट्ट नामना कविए कह्युं के,

अधिकं रेखया मन्ये, समरं सगरादपि ॥
कलौ म्लेच्छबलाकीर्णे, येन तीर्थं समुद्धृतम् ॥ १ ॥

अर्थ- हुं तो सगरचक्रीथी पण समराशाहने अधिक पराक्रमवाळो जाणुं छुं, केमके तेणे आ कलिकालमां म्लेच्छोना लश्करथी भरेला एवा पण समयमां तीर्थनो उद्धार करेलो छे. ॥१॥

ते सांभळी तुष्टमान थएला समराशाहे ते कविने सुवर्णनी जीभ आपी. एवी रीते सारंग, संग्रामसोनी, जगसी मोणसी, पेथरू, झांझण आदिकना कीर्तिदानो बीजा ग्रंथोथी जाणी लेवा.

एवी रीते अभयदान, सुपात्रदान, अनुकंपादान उचितदान तथा कीर्तिदान मळीने पांच प्रकारनां दानोनुं स्वरूप कह्युं.

हवे ते पांचे दानोमांथी अभयदान अने सुपात्रदानथी शांतिनाथ प्रभु तथा चंदनबाळा दिकोनीपेठे मोक्ष थाय छे, वळी अनुकंपादान, उचितदान, तथा कीर्तिदानथी मेघकुमारादिकनी पेठे भोगादिक मळे छे. एवुं जाणीने विवेकी माणसोए सर्व प्रकारे दानधर्मनुं आराधन करवुं.

हवे शीलसंबंधि उपदेश कहेछे.

ये यौवने शीलधरा नराः स्यु-
स्तेषामहो सत्पुरुषेषु रेखा ॥
ते तारकाः स्युः भविशांति पूरे,
तरंगिणीनां तरणक्षमा ये ॥ १ ॥

अर्थ- जे माणसो यौवन अवस्थामांज शीलने धारण करे छे,

तेउनीज गणत्री सज्जनोमा थाय छे, केमके, जे तारुउ नदी-उना पूरमा प्रवेश करे छे, तेउज खरेखरा तारूउ कहेवाय छे ॥

आ जगतमा जे लोको यौवन अवस्थामा पण शीलथी शणगारेला थइने रहे छे, तेउज सज्जनतिए जनारा छे कह्यु छे के,

ये न स्खलति ते दक्षाः, कृष्णकेशतमोऽन्तरे ॥
वार्धके तु सदोद्योतः, शिरस्थपलितेंऽदुतः ॥ १ ॥

अर्थ– जेउ श्याम केशोरूपी अंधकारना समूहमा स्खलना पामता नथी, तेउज डाह्या पुरुषो छे, केमके, वृद्धावस्थामा तो मस्तकपर रहेला श्वेतपालरूपी चंद्रथी हमेशा प्रकाश थाय छे १ वली यौवनावस्थामाज व्रतपालवुं डुष्कर छे कह्यु छे के,

यौवनं विकरोत्येव, मनः संयमिनामपि ॥
राजमार्गे प्ररोहंति, वर्षाकाले किलांकुराः ॥ १ ॥

अर्थ– यौवनावस्था छे ते मुनिउना मनमा पण विकार उत्पन्न करे छे, केमके, वर्षाकालमा तो राजमार्गमा पण अंकुराउ उगी निकले छे ॥ २ ॥

शीलरूपी रत्नवाला पुरुषे हमेशा मनमा स्त्रीना स्वरूपनु निंदनिकपणुज चिंतववु जेम के,

प्राप्नु पारमपारस्य, पारावारस्य पार्यते ॥
स्त्रीणा प्रकृतिवक्राणा, डुश्चरित्रस्य नो पुनः ॥ १ ॥

अर्थ– अपार एवा समुद्रनो पार तो पामी शकाय छे, पण स्वभावथीज वक्र एवी स्त्रीउना डुराचरणनो पार पामी शकातो नथी ॥ १ ॥

इय निहिणा ससारे, महिलारूवेण मंडियं पास ॥
वज्झंति जाणमाणा, अयाणमाणावि वज्झंति ॥ ७ ॥

अर्थ– अरेरे !! ब्रह्माए आ संसारमां स्त्रीरूपी पास मांड्यो छे, के जे पासमां ज्ञानीउं अने अज्ञानीउं पण फसाइ जाय छे.॥

संसार तव निस्तार-पदवी न दवीयसी ॥
अंतरा दुस्तरा न स्यु-र्यदि रे मदिरेक्षणाः ॥ ३ ॥

अर्थ–हे संसार! तारामां अंदर जो दुस्तर एवी स्त्रीउं न होत तो तरा पारने पहोंचवुं कंइ मुश्केल न होतुं. ॥ ३ ॥

कामं कुलकलंकाय, कुलजातापि कामिनी ॥
शृंखला स्वर्णजातापि, वंधनाय न संशयः ॥ ४ ॥

अर्थ– कुलीन एवी पण स्त्री कुलना कलंक माटे खरेखर थाय छेज, केमके, सोनानी सांकल पण वंधनकारक छे, तेमां संशय नथी. ॥ ४ ॥

इत्यादिक स्त्रीनुं निंदनिक स्वरूप जाणीने शील पालवुं. हवे वली प्रकारांतरथी शीलनुं माहात्म्य कहे छे.

मनुष्याः किंकरायंते, देवा निर्देशवर्तिनः ॥
शीलभाजोऽथवा कस्य, कल्पवृक्षो न वल्लभः ॥१॥

अर्थ– शीलधारी पुरुषपासे मनुष्यो तो चाकर थइने रहे छे, तथा देवोपण तेनो हुकम माथे चडावे छे; वली एवुं कल्पवृक्ष सरखुं शील कोने वहालुं होतुं नथी ? ॥ १ ॥

शीलं प्रधानं न कुलं प्रधानं,
कुलेन किं शीलविवर्जितेन ॥
नैके नरा नीचकुले प्रसूताः,
स्वर्गं गताः शीलमुपेत्य धीराः ॥ २ ॥

अर्थ– शील उत्तम छे, पण कंइ कुलनी प्रशंसा थती नथी,

केमके, शीलविना कुल शु उपयोगनु छे ? वली घणा धीर पुरुषो नीच कुलमा पण जनमीने शीलने पामीने स्वर्गे गएला छे ॥२॥

विजूतयोऽपि माऽजूवन्, शीलम्लानिपचेलिमाः ॥
गेहदाहसमुद्भूत-मुद्योत कः समीहते ॥ ३ ॥

अर्थ- शीलने मलीन करनारी एवी विजूतिउं (द्रव्य) पण उपयोगनी नथी, केमके, घरने सलगाववाथी उत्पन्न थएला प्रकाशने कोण इच्छे छे ? ॥ ३ ॥

हवे ते शील पालवा माटे स्त्रीउंने उपदेश करे छे.

ऐश्वर्यराजराजोऽपि, रूपमीनध्वजोऽपि च ॥
सीतया रावण इव, त्याज्यो नार्या नरः परः ॥ १ ॥

अर्थ- ऐश्वर्यथी राजाउंना पण राजा सरखा, तथा कामदेव सरखा रूपवंत एवा पण रावणने जेम सीताए तज्यो छे, तेम स्त्रीए परपुरुषने तजवो ॥ १ ॥

सीतया डुरपवादभीतया,
पावके स्वतनुराहुतीकृता ॥
पावकस्तु जलतां जगाम य-
त्तत्र शीलमहिमाविजृम्भितम् ॥ २ ॥

अर्थ- पोताना अपवादथी डरेली सीताए पोताना शरीरनी अग्निमां आहुति आपी, पण ते समये अग्नि तो जलरूप थइ गयो, माटे तेमां शीलनुज माहात्म्य जाणवु ॥ २ ॥

सुविसुद्धसीलजुत्तो, पावइ किर्त्ति जसं च इह लोए ॥
सव्वजणवल्लहच्चिय, सुहगइभागीय परलोए ॥ ३ ॥

अर्थ- उत्तम अने शुद्ध शीलने करीने युक्त थयलो प्राणी आ

लोकमां कीर्ति अने जश मेलवे छे; तेम ते सर्व लोकोने वहालो थाय छे, अने परलोकमां शुभ गतिने जजनारो थाय छे. ॥ ३ ॥

देवदाणवगंधव्वा, जक्करक्कस्सकिन्नरा ॥
वंजयारं नमंसंति, डुक्करं जे करंति ते ॥ ४ ॥

अर्थ– जे माणसो आ जगतमां दुष्कर ब्रह्मचर्य पाले छे, तेने देव, दानवो, गंधर्वो, यक्षो, राक्षसो अने किन्नरो नमस्कार करेछे.

जो देइ कणयकोडिं, अहवा कारेइ कणयजिणज्जवणं ॥
तस्स न तत्तीयपुन्नं, जत्तिय वंजवए धरीए ॥ ५ ॥

अर्थ– जे माणस क्रोडोगमे सोनामोहोरोनुं दान आपे छे, अथवा सोनानुं जिनमंदिर वंधावे छे, तेने पण तेटलुं पुण्य थतुं नथी, के जेटलुं ब्रह्मचर्य पालनारने थाय छे. ॥ ५ ॥

अन्यदर्शनीउना शास्त्रोमां पण कह्युं छे के,

एकरात्रोषितस्यापि, या गतिर्ब्रह्मचारिणाम् ॥
न सा क्रतुसहस्रेण, प्राप्तुं शक्या युधिष्टिर ॥ १ ॥

अर्थ– हे युधिष्टिर! ब्रह्मचर्य पालनाराउनी एक रात्रिना उपवासथी पण जे गति थाय छे, ते गति एक हजार यज्ञोथी पण मली शकती नथी. ॥ १ ॥

एक दहाडो अणहिल्लपुर पाटणमां श्री हेमचंद्राचार्य सिद्धराजनी सज्ञामां पधार्या, त्यारे राजाए आसन आपवाथी तेपर ते विराज्या. पछी राजाए पूछ्युं के, आजकाल व्याख्यानमां आप शुं वाचो छो? त्यारे हेमचंद्रजीए कह्युं के, हालमां तो स्थूलज्ञद्र चरित्रनुं व्याख्यान वंचाय छे. त्यारे राजाए पूछ्युं के, ते चरित्रमां शुं वृत्तांत छे? त्यारे आचार्यजीए कह्युं के, पूर्वना परिचयवाली कोशा नामनी वेश्यानो तेमणे त्याग कर्यो छे, तथा

तेनेज घेर रही पट्रस जोजन करता थका तेमणे शील पाड्युं छे, इत्यादिक वृत्तांत ते अथमा छे ते सांजली क्रोध पामेला देवबोधि आदिक ब्राह्मणो बोली उठ्या के,

विश्वामित्रपराशरप्रभृतयो ये शुष्कपत्राशिन-
स्तेऽपि स्त्रीमुखपंकजं सुललितं दृष्ट्वैव मोहं गताः ॥
आहारं सघृतं पयोदधियुतं भुंजंति ये मानवा-
स्तेषामिंद्रियनिग्रहः कथमहो दंभः समालोक्यताम् ॥१॥

अर्थ— विश्वामित्र पारासर आदिक ऋषिउं के जेउं सूका पादडा आदिक खानाराउं हता तेउं पण मनोहर एवां स्त्रीना मुखरूपी कमलने जोइनेज मोह पामेला छे, तो जे माणसो हमेशा घृत, दहीं, दूध आदिकवालां जोजनो जमे छे, तेउंने इंद्रियदमन ते क्याथी होय? माटे अहो आमनु कपटीपणु तो जुउं? ॥

ते सांजली हेमचंद्र आचार्यजीए कह्यु के,

सिंहो बलिद्विरदशूकरमांसभोजी,
संवत्सरेण रतिमेति किलैकवारम् ॥
पारापतः खरशिलाकणभोजनोऽपि,
कामी भवत्यनुदिनं वद कोऽत्र हेतुः ॥ २ ॥

अर्थ— बलवान एवा हाथीओना तथा शुकरना मांसने खानारो सिंह तो वर्षमां फक्त एकज वार कामविकारी थाय छे, अने पारेवु (कबुतर) तो येनु खाय छे छता पण हमेशां कामी थाय छे, माटे हे माणसो! तमो कहो के तेनो हेतु शु छे? ॥२॥

एवी रीते आचार्यजीए मरद छत्तर आप्याथी राजा खुशी थया पछी तेज शीलना माहात्म्यनी प्रशंसा करे छे

वेश्या रागवती सदा तदनुगा षड्भीरसैर्भोजनं
रम्यं धाम मनोरमं वपुरहो नव्यो वयःसंगमः ॥
कालोऽयं जलदागमस्तदपि यः कामं जिगायादरात्
तं वंदे युवतिप्रबोधकुशलं श्रीस्थूलभद्रं प्रभुम् ॥ १ ॥

अर्थ— जे स्थूलभद्रजीपर वेश्या हमेशां रागवाली हती, तथा तेना कहेवा प्रमाणे वर्तती हती, वली, जे तेने त्यां रही षड्रस भोजन जमता हता, मकान पण सुंदर हतुं, शरीर पण मनोहर हतुं, वय पण युवान हती, समय पण वर्षाकालनो हतो, तो पण जेमणे आदरपूर्वक कामदेवने जीत्यो हतो, एवा ते स्त्रीउंने प्रबोध करवामां कुशल एवा श्रीस्थूलभद्रजीने हुं नमस्कार करुं छुं. १

श्रीनेमितोऽपि शकडालसुतं विचार्य
मन्यामहे भटममुं वयमेकमेव ॥
देवोऽद्रिदुर्गमधिरुह्य जिगाय मोहं
यन्मोहनालयमयं तु वशी प्रविश्य ॥ २ ॥

अर्थ— श्रीनेमिनाथ प्रभु करतां पण अमो शकडालमंत्रीना पुत्र एकज श्रीस्थूलभद्रजीने वधारे शूरा मानीए छीए, केमके, श्रीनेमिनाथजी प्रभुए तो पर्वतना किल्लापर चडीने मोहराजाने जीत्यो हतो, पण आ जितेंद्रिय एवा स्थूलभद्रजीए तो मोहना स्थानकमांज जइने तेने जीत्यो ॥ २ ॥

एवी रीते श्रीस्थूलभद्रजीनुं दृष्टांत ध्यानमां लेइने हमेशां शीलनुं आराधन करवामां प्रयत्न करवो.

सीमाखानिषु वज्रखानिरगदंकारेषु धन्वंतरिः
कर्णस्त्यागिषु देवतासु कमला दीपोत्सवः पर्वसु ॥

ॐकारः सकलाक्षरेषु गुरुषु व्योम स्थिरेषु क्षितिः
श्रीरामो नयतत्परेषु परमं ब्रह्म व्रतेषु व्रतम् ॥ १ ॥

अर्थ– खाणोमा जेम हीरानी खाण, वैद्योमा जेम धन्वंतरि, दातारोमा जेम कर्ण, देवीउंमा जेम लक्ष्मी, पर्वोमां जेम दीवाळी, सघळा अक्षरोमा जेम ॐकार, मोटी वस्तुउंमा जेम आकाश, स्थिर वस्तुउंमा जेम पृथ्वी, अने न्यायी राजाउंमा जेम श्रीरामचंद्रजी तेम सर्व व्रतोमां ब्रह्मचर्य व्रत श्रेष्ठ छे ॥ १ ॥

आ शीलव्रत उपरना हजारोगमे दृष्टांतो शीलोपदेशमाला, शीलकुलक आदिक ग्रंथोथी जाणी लेवा, अहीं ग्रंथगौरवताना जयथी लख्या नथी.

श्रीमन्नेमिजिनो दिनोऽघतमसां जंबूप्रभुः केवली
सम्यक् दर्शनवान् सुदर्शनगृही स स्थूलभद्रो मुनिः ॥
साचंकारि सरस्वती च सुभगा सीता सुभद्रादयः
शीलोदाहरणे जयति जनितानंदा जगत्यद्भुताः ॥ १ ॥

वळी एवीज रीते श्रीनेमिश्वर प्रभुना भाइ रथनेमिजीने जो के रागरूपी घोडे पछाडी नाख्या हता तो पण, तथा पर्वतनी गुफामा रहेली नग्न राजीमतीने जोइने विकारयुक्त थया हता तो पण ते राजामतीना उपदेशथी प्रतिबोध पामी तप तपीने मोक्षे गएला छे कह्यु छे के,

रागद्वेषतुरंगम-पौनःपोनाधिरोहपतनशतैः ॥
विहिताभ्यासस्तदुपरि-दत्तपदस्त्वरितमेति शिवम् ॥ १ ॥

अर्थ– रागद्वेषरुपी घोडापर वारंवार चडवाथी अने ते परथी सेंकडो गमेवार पडवाथी अभ्यास करीने अनुक्रमे ते घोडापर पग मुकीने प्राणी तुरत मोक्षमां जाय छे ॥ १ ॥

वळी ते ब्रह्मचर्यव्रतपर जिनदासनुं दृष्टांत कहेछे.

वसंतपुर नामना नगरमां शिवंकर नामे एक शेठ वसतो हतो. ते परम जैनी हतो. एक दहाडो ते नगरमां श्रीधर्मदास नामना आचार्य महाराज पधार्या; तेमने वांदवा माटे ते शिवंकर शेठ त्यां गयो; पछी गुरुजीने वांद्यावाद हर्षसहित शिवंकरे कह्युं के, हे भगवन्! मने मारा मनमां एवो मनोरथ थयो छे के, हुं एक लाख साधर्मी भाइउने जमाडुं; पण शुं करुं के, तेटलुं धन मारी पासे नथी. त्यारे आचार्यजीए कह्युं के, तुं अहींथी भरुचमां श्रीमुनीसुव्रतस्वामिजीनी जात्रा करवा माटे जा? अने त्यांना रहेवासी जिनदास नामना श्रावकने तेनी स्त्री सुहागदेवी सहित भोजन करावजे, तथा तारी शक्ति मुजब तेने वस्त्राभूषणो आपजे? अने एवी रीते तेनुं वात्सल्य करवाथी तने लाख साधर्मीउने जमाड्या जेटलुं पुण्य प्राप्त थशे. पछी ते शिवंकरे त्यां भरुचमां जइ ते जिनदास शेठनुं यथोक्त वात्सल्य कर्युं. पछी ते शिवंकर शेठे वजारमां आवी लोकोने पूछ्युं के, आ जिनदास उत्तम माणस छे के, कपटी छे? त्यारे लोकोए ते शिवंकरने कह्युं के, तुं सांभळ? आ जिनदास ज्यारे सात वर्षनी उमरनो हतो त्यारथी तो ते पौषधशाळामां सुए छे; एक दहाडो त्यां गुरुना मुखथी शीलोपदेशमाळानुं व्याख्यान सांभळीने एकांतरे ब्रह्मचर्य व्रत पाळवानुं तेणे नियम लीधुं; हवे एवीज रीते आ सुहागदेवीए पण साधवीउ पासेथी एकांतरे शीलव्रत पाळवानुं नियम लीधुं. त्यारवाद दैवयोगे तेउ बन्नेनां परस्पर लग्न थयां; अने तेमां एम बन्युं के, जे दिवस जिनदासने छुटो होय, ते दिवस सुहागदेवीने नियमवाळो होय, अने जे दिवस सुहागदेवीने छुटो होय, ते दिवस जिनदासने नियमवाळो होय. त्यारे एक दहाडो सुहागदेवीए पोताना स्वामिने कह्युं के, हे स्वामी! तमो बीजी स्त्री परणो? अने हुं दीक्षा लेइश. ते सांभळी जिनदासे

ठेक जीवितपर्यंत ब्रह्मचर्यव्रत अंगीकार कर्युं, एवी रीते ब्रह्मचर्य व्रतपर जिनदासनी कथा जाणवी

एवीज रीते वली द्रौपदी, कलावती, मृगावती, शीलवती, सुभद्रा, सुलसा आदिकना शीलना महात्म्यवाला दृष्टांतो जाणवा अहीं ग्रंथगौरवताना भयथी वधारे लख्या नथी एवी रीते शीलोपदेशनु स्वरूप कह्यु हवे तपोपदेशनु स्वरूप कहेछे

चक्रे तीर्थकरैः स्वयं निजगदे तैरेव तीर्थेश्वरैः
श्रीहेतुर्भवहारि दारितरुजं सन्निर्जराकारणम् ॥
सद्यो विघ्नहरं हृषीकदमनं मांगल्यमिष्टार्थकृत्
देवाकर्षणमारदर्पदलनं तस्माद्विधेयं तपः ॥ १ ॥

अर्थ– जे तप तीर्थंकरोए पोते करेलो छे, तथा तेज तीर्थंकरोए जेने कह्यो छे, तेम जे लक्ष्मीनो हेतु छे, ससारने हरनारो छे, रोगोने दूर करनारो छे, उत्तम निर्जरा करावनारो छे, तुरत विघ्नने हरनारो छे, इन्द्रियोने दमनारो छे, मंगलरूप छे, वांछित पदार्थोने करनारो छे, देवोनु आकर्षण करनारो छे, कामदेवना दर्पने दलनारो छे, माटे ते तपने (हमेशा) आदरवो

श्री ऋषभदेव प्रभुए वरसी तप करेल छे, तथा श्रीमहावीर प्रभुए छमासी तप करेल छे, वली श्री तीर्थंकर प्रभुओए पोते पण बार प्रकारनो तप प्ररुप्यो छे वली ते तपथी सुवर्णपुरुषादिकनी सिद्धिओ थाय छे, अने एवी रीते ते तप लक्ष्मीना हेतुरूप छे वली तेज तप चिलातिपुत्रादिकनी पेठे ससारनो क्षय करनारो छे वली श्रीपाल महाराजनी पेठे तेज तप कुष्टादिक रोगोने पण उपशमावे छे दृढप्रहारि आदिकनी पेठे तेज तप कर्मोनी निर्जरा करे छे वली द्वारिका नगरीमा द्वैपायन देवे करेला उपसर्गोने जेम आवेल आदिक तपथी बार वर्षोसुधी रोकवामा आवेला छे, तेम ते तप विघ्नोने हरनारो छे वली तेज तप

इंद्रिउने पण महामुनिराजोनी पेठे दमे ठे. वली तेज तप पांम्-वादिकोनी पेठे मंगलिक करनारो ठे. वली तेज तपथी हरिकेशी बलमुनिनी पेठे देवो पण सेवामां हाजर थाय ठे. तथा तपस्याथी कामदेव पण पोतानुं पराक्रम प्राणीउपर चलावी शकतो नथी ते तो प्रसिद्धज ठे. वली जेम दूषणवालुं एवुं पण सुवर्ण अग्निथी शुद्ध थाय ठे, तेम तपथी प्राणीनुं शरीर अने तेनो आत्मा पण शुद्ध थाय ठे.

श्री गोपगिरिमां आम राजाने एकांतरीउ ताव आवतो हतो, पण महातपस्वी एवा श्री वप्पन्नट्टिजी आचार्यजीए करेला उप-चारथी ते ताव शांत थयो ठे. वली तपस्वीना मूत्रथी पाषाणो पण सुवर्णरूप थाय ठे, जेम श्रीपादलिप्तसूरिजीने नागार्जुने सिद्ध रस मोकल्यो हतो, पण पादलिप्तसूरिजीए ते रसने पृथ्वीपर ढोली नाख्यो, अने खप्परमां पोतानुं मूत्र जरीने ते तेने आचार्यजीए मोकलाव्युं, तेथी क्रोधायमान थएला नागार्जुने ते मूत्रसहित खप्परने लोखंमनी शीलापर पठाडी फोमी नाख्युं, त्यारे ते शीला सुवर्णमय थइ गइ; ते जोइ नागार्जुने पादलिप्तसूरिजीने नमस्कार कर्यो, तथा तेमनो सेवक थयो.

वली तपस्वीना हाथना स्पर्शथी सर्व वस्तुउ अक्षय्य थाय ठे. जेम श्रीगौतमस्वामिए पोतानी लब्धिथी पांचसो तापसोने एक पात्रमां रहेली क्षीरथी जोजन कराव्युं हतुं.

हवे तप केवो करवो तेने माटे कहे ठे.

सोअ तवो कायव्वो, जेण मणो मंगुलं न चिंतेइ ॥
जेण इंदिअहाणी, जेण य जोगा न हायंति ॥ १ ॥

अर्थ– तप एवी रीतनो करवो के, जेथी मनने असमाधि न थाय, इंद्रिउनी हानी न थाय तथा जेथी मन वचन अने कायाना जोगोनी हानि न थाय.

पूजालोभप्रसिध्यर्थं, तपस्तप्येत योऽल्पधीः ॥
शोष एव शरीरस्य, न किंचित्तपसः फलम् ॥ १ ॥

अर्थ– जे अल्पबुद्धिवालो माणस मान, लोभ, अने कीर्तिमाटे तप तपे छे, तेने तो फक्त शरीरनो शोषज छे, पण तेने कंइ तपसानु फल मलतुं नथी

विवेकेन विना यच्च, तत्तपस्तनुतापकृत् ॥
अज्ञानकष्टमेवेद, नो भूरिफलदायकम् ॥ १ ॥

अर्थ– विवेकविना जे तप तपवो, ते फक्त शरीरने खेदकारीज छे, तेम ते अज्ञानकष्टज छे, तेवी रीतनो तप कइ घणु फल आपनारो नथी (अहीं तामलि तापसनु दृष्टांत जावी लेवुं)

ये रात्रौ सर्वदाहार, वर्जयंति सुमेधसः ॥
तेषां पक्षोपवासस्य, फलं मासेन जायते ॥ १ ॥

अर्थ– जे सुबुद्धि माणसो रात्रिए सर्वथा प्रकारे आहारनो त्याग करे छे, तेओने एक मासमा पक्षोपवासनु फल मले छे

अने तेथीज आ दुर्लभ मनुष्य भव पामीने हमेशा तप करवो अहीं बाहुबलि, ढढणकुमार, गजसुकुमाल आदिकना दृष्टांतो जाणी लेवा

दुःखव्यूहापहाराय, सर्वेंद्रियसमाधिना ॥
आरंभपरिहारेण, तपस्तप्येत शुद्धधीः ॥ १ ॥

अर्थ– शुद्ध बुद्धिवान माणसे दुःखोनो समूह दूर करवा माटे सर्व इंद्रिओनी समाधिपूर्वक आरंभरहित तप तपवो

यद्दूरं यद्दुराराध्य, यच्च दूरे व्यवस्थितम् ॥
तत्सर्वं तपसा साध्य, तपो हि दुरतिक्रमम् ॥ १ ॥

अर्थ– जे दूर तथा दुष्प्राप्य छे, ते सघलु तपथी साधि शकाय छे, माटे तप महा बलवान छे

तपस्वी माणसे क्रोधनो तो सर्वथा प्रकारे परिहार करवो; केमके नहींतर क्रोधरूपी अग्नि तपरूपी चंदनने बालीने भस्म करेछे.

एकेन दिनेन तनो-स्तेजः षाण्मासिकं ज्वरो हंति ॥
कोपः क्षणेन सुकृतं, यदर्जितं पूर्वकोट्यापि ॥ १ ॥

अर्थ- ताव छे ते एकज दिवसमां छ मासना शरीरना तेजने हणे छे, पण क्रोध छे ते क्रोडोगमे पूर्वोमां मेलवेला पुण्यने एक क्षणवारमांज नष्ट करे छे.

द्रुमोद्भवं हंति विषं न हि द्रुमं,
न वा भुजंगप्रभवं भुजंगमम् ॥
अदःसमुत्पत्तिपदं दहत्यहो,
महोल्बणं क्रोधहलाहलं पुनः ॥ १ ॥

अर्थ- वृक्षथी उत्पन्न थएलुं झेर वृक्षने हणतुं नथी, तेम सर्पथी उत्पन्न थएलुं झेर सर्पने हणतुं नथी, पण आ तपथी उत्पन्न थएलुं पद महाबलवान एवा क्रोधरूपी झेरने बाली नांखे छे.

कषाया देहकारायां, चत्वारो यामिका इव ॥
यावज्जाग्रंति पार्श्वस्था-स्तावन्मोक्षः कुतो नृणाम् ॥ १ ॥

अर्थ- आ शरीररूपी केदखानामां ज्यांसुधि चार कषायोरूपी चोकीदारो जागता बेठा छे, त्यांसुधि माणसोनो मोक्ष क्यांथी.

नाशांबरत्वे न सितांबरत्वे, न तत्ववादे न च तर्कवादे ॥
न पक्षसेवाश्रयणेन मुक्तिः, कषायमुक्तिः किल मुक्तिरेव॥

अर्थ- दिगंबरपणामां, के श्वेतांबरपणामां, के तत्ववादमां, के तर्कवादमां के पक्षसेवामां पण मुक्ति नथी, पण कषायोने जे छोडवा तेज खरेखरी मुक्ति छे. (अहीं कुरगडुक मुनिनुं दृष्टांत जाणी लेवुं.)

हवे तप कर्यावाद तेनु उजमणु करवु, ते विषेनो उपदेश

प्रासादे कलशाधिरोपणसमं बिंबे प्रतिष्टोपमं
पुण्यश्रीस्फुटसंविभागकरणं विश्वद्विशिष्टे जने ॥
सौभाग्योपरिमंजरीप्रतिनिभं पूर्णे तपस्यावधौ
यः शक्त्योद्यपनं करोति विधिना सम्यग्दृशां सोऽग्रणीः।

अर्थ– देवल बनाव्या पछी जेम तेपर कलश चमाववो, तथा बिंब भराव्या पछी जेम तेनी प्रतिष्ठा करावची, उत्तम माणसने जेम अतिथिसंविभाग करवो तेम जे माणस तप पूरो थये छते, सौभाग्यनी माजर सरखु पोतानी शक्तिमुजब उजमणु करे छे, ते समकीतिउंमा अग्रेसरी छे

शुद्धं तपः केवलमप्युदारं,
सोद्यापनस्यास्य पुनःस्तुमः किम् ॥
हृद्यं पयो धेनुगुणेन तत्तु,
द्राक्षासिताचूर्णयुत सुधेव ॥ १ ॥

अर्थ– केवल शुद्ध तप तपवो ते पण मनोहर छे, त्यारे उजमणासहित तपनी तो वातज शी करवी ? केमके, गायना गुणथी दूध मनोहर तो छे, तेमा पण ज्यारे साकर अने द्राक्ष मले, त्यारे तो ते अमृतसरखु थाय छे

सिंहस्तपःप्रक्रम एव ताव-दुःकर्मदंतावलमंडलीनाम् ॥
तदद्य तस्मिन् प्रखरानिवेशो,यद्दद्यउद्यापनविस्तरोऽयम्

अर्थ– तप छे ते दुःकर्मोरूपी हाथीउनी श्रेणिउंनो नाश करवामा सिंहसमान छे, अने तेनु उजमणुं करवु, ते तपरूपी सिंहने पाखर पेराववा सरखु छे

वृक्षो यथा दोहदपूरणेन,
कायो यथा सद्रसभोजनेन ॥

विशेषशोभां लभते यथोक्ते-
नोद्यापनेनैव तथा तपोऽपि ॥ १ ॥

अर्थ- वृक्ष जेम दोहद पूरवाथी, शरीर जेम उत्तम रसवालां भोजनथी, तेम यथोक्त उजमणाथी तप पण विशेष शोभा पामे छे.

लक्ष्मीः कृतार्था सफलं तपोऽपि,
ध्यानं सदोच्चैर्जिनबोधिलाभः ॥
जिनस्य भक्तिर्जिनशासनश्री-
र्गुणाःस्युरुद्यापनतो नराणाम् ॥ १ ॥

अर्थ- उजमणुं करवाथी माणसोनी लक्ष्मी कृतार्थ थाय छे, तप सफल थाय छे, उत्तम ध्यान थाय छे, समकीतनी प्राप्ति थाय छे, प्रभुनी भक्ति थाय छे, तथा जिनशासननी शोभा थाय छे, इत्यादि गुणो प्राप्त थाय छे.

एवुं विचारीने पुण्यना अर्थी माणसोए हमेशां उजमणुं करवामां प्रयत्न करवो. हवे भावनानो उपदेश कहेछे.

ज्ञेयान्यंगानि दानादी-न्येव धर्मनरेशितुः ॥
तस्य तेष्वधुना जीवो, भावनाभा निगद्यते ॥ १ ॥

अर्थ- धर्मरूपी राजानां दान आदिक अंगो जाणवां अने तेउमां भावनारूपी जीव छे.

दानं तपस्तथा शीलं, नृणां भावेन वर्जितम् ॥
अर्थहानिक्षुधापीडा, कायक्लेशश्च केवलम् ॥ १ ॥

अर्थ- भावनाविनाना माणसोनां, दान, तप, अने शील फक्त (अनुक्रमे) धननी हानीरूप, क्षुधानी पीडारूप, तथा शरीरना कष्टरूपज छे.

चिरादेकेन दानादि-क्लेशैः पुण्यं यदर्जितम् ॥
तस्यानुमोदनाद्भावात्, क्षणादन्यस्तदर्जयेत् ॥ १ ॥

अर्थ– कोइ माणसे घणा कालसुधी दानादिक क्लेशोने सहन करीने जे पुण्य मेलव्युं होय, ते पुण्यने तेना अनुमोदनथी बीजो माणस क्षणवारमा पण मेलवी शके छे

भावना छे ते भरतराजानी पेठे उत्तम भोगोथी पण मुक्ति देनारी छे, वली मरुदेवा माता के जेणीए कोइपण दिवसे एकासणादिक कंइ पण तप कर्यो न होतो, ते पण भावनाथी मोक्षे गएला छे प्रसन्नचंद्र राजऋषि पण भावनाथी केवलज्ञान पाम्या छे वली गौतमस्वामिए प्रतिबोधेला पंदरसो तापसो पण भावनाथी मोक्षे गएला छे वली एक देडको के जे श्रीवीरप्रभुने वांदवामाटे आवतो हतो ते मार्गमां घोडानी खरीथी कचरावाथी मृत्यु पामीने दर्दुराक देव थयो, तथा छेवटे ते भावनाथी केवलज्ञान पाम्यो छे अहीं सर्व भावना कुलक पोतानी मेले वाची लेवु

औचित्येन गुणोच्चयः प्रियगिरा दानं गृहस्थक्रमः
लक्ष्म्यांभश्चयसेचनेन विपिनं सामेन तत्त्वज्ञता ॥
प्रेम्णा स्त्रीजनविभ्रमः सुमुनिता ब्रह्मव्रतेनाऽगिना
धत्ते भावनयाश्रितः सफलतां सर्वोऽपि धर्मक्रमः॥१॥

अर्थ– जेम उचिततायी गुणोनो समूह, प्रिय वाणीथी दान, लक्ष्मीथी गृहस्थाश्रम, जलसमूहना सेचनथी वन, समताथी तत्त्वज्ञान, प्रेमथी स्त्रीओनो विलास, तथा ब्रह्मचर्यथी जेम उत्तम मुनिपणुं सफल थाय छे, तेम प्राणीओनो सर्व प्रकारनो धर्मक्रम भावनाथी सफल थाय छे

वित्तसाध्यमिह दानमुत्तम,
शीलमप्यविकलं सुदुर्धरम् ॥
दुःकराणि च तपांसि भावना,
स्वीयचित्तवशगेति भाव्यताम् ॥ १ ॥

अर्थ– अहीं उत्तम दान धनथी थाय छे तेम निर्मल शील पण दुर्धर छे, तपो पण दुःकर छे, अने भावना तो पोताना मनथी थाय छे, एम भाववुं.

भावस्यैकांगवीरस्य, सान्निध्याद्बहवः शिवम् ॥
ययुर्नैकोऽपि दानाद्यै-र्भावहीनैर्धनैरपि ॥ १ ॥

अर्थ– एक भावनारूपी सुभटना सहायथी घणाउ मोक्षे गएला छे, पण भावना विनाना घणा एवा दानादिकथी पण कोइ मोक्षे गया नथी.

भावो धर्मस्य हृन्मित्रं, भावः कर्मेंधनानलः ॥
सत्कृत्यन्नघृतं भावो, भावो नीवी शिवश्रियः ॥१॥

अर्थ– भाव छे ते धर्मनो दिलोजान दोस्तदार छे, कर्मोरूपी काष्टोने बालवामां अग्निसमान छे, पुण्यरूपी अन्नमां घृतसमान छे, तथा मोक्षरूपी लक्ष्मीनी कटिमेखला छे.

इति भावनोपदेशः

जातः श्रीयुतसोमसुंदरगुरुः श्रीमत्तपागछप-
स्तत्पादांबुजषट्पदो विजयते श्रीनंदिरत्नोगणिः ॥
पादांभोरुहरत्नमंदिरगणिस्तस्यालिलीलाधर-
स्तद्ब्रध्धप्रभवोपदेशसरिति प्राच्यस्तरंगोऽभवत् ॥१॥

इति श्रीतपागछनायक श्रीसोमसुंदरसूरि श्रीरत्नशेखरसूरि नंदिरत्नगणिशिष्य रत्नमंदिरमुनिगुंफितायां श्रीउपदेशतरंगिण्यां दान, शील, तपो, भावभेद चतुर्विधजिनधर्म प्रकाशकः पंचदशोपदेशपेशलः प्रथमस्तरंगः ॥ श्रीरस्तु ॥

अथ द्वितीयः सप्तक्षेत्रोपदेशरूपस्तरंगः

जिनभवनबिंबपुस्तक-चतुर्विधश्रमणसंघरूपाणि ॥
सप्तक्षेत्राणि सदा, जयति जिनशासनोक्तानि ॥ १ ॥

अर्थ— जिनशासनमां कहेलां जिनभवन, जिनबिंब, पुस्तक अने चतुर्विध श्रमण संघरूप साते क्षेत्रो हमेशां जयवंतां वर्ते छे

हवे तेमांथी प्रथम जिनभवननो उपदेश कहे छे

जिनभवनं निर्माप्यं, सफलीकर्तुं निजां लक्ष्मीम् ॥
धन्यैः स्वपरश्रेयः-पुण्योद्भवबोधिलाभाय ॥ २ ॥

अर्थ— धन्य पुरुषोए पोतानी लक्ष्मीने सफल करवा माटे, अने पोताना अने परना कल्याणथी उत्पन्न थतां पुण्यथी बोधिलाभ माटे जिनमंदिर बंधाववुं तेनापर दृष्टांत कहे छे

एक दहाडो कोरंटक नामना गाममां विक्रम संवत १२५२ मां श्री देवसूरि महाराज चतुर्मास रह्या त्यां नाहड नामे मंत्रि हतो, तेना नाना भाइनुं नाम सालिग हतुं तेउं बन्नेना पांचसो कुटुंबोने आचार्यजीए प्रतिबोध कर्यो आसु सुद पांच नवमीने दिवसे तेउंए आचार्यजीने कह्युं के, अमारी गोत्रदेवी जे चंडिका छे, ते बलिदानमां पाडानी मागणी करे छे, माटे हवे अमारे शुं करवुं ? ते सांभळी गुरुमहाराजे रात्रिए चंडिकाने प्रयक्ष करीने तेणीने कह्युं के, तुं पूर्वभवमां श्रीपुर नामना नगरमां धनसार नामना व्यापारीनी जैनधर्मी स्त्री हती पांचमने दिवसे पवित्र वस्त्रो पेहेरीने तुं बालक पुत्रने घेर राखीने देवमंदिरे गइ, ते जोइ तारो बालक पुत्र तारी पाछळ रडतो रडतो रस्तामां चालवा लाग्यो, एटलामां कोइक भडकेला पाडाए तेने पाडी नाख्यो अने तेथी ते मृत्यु पाम्यो त्यारे तुं पण ते पुत्रवियोगना दुःखथी मृत्यु पामीने चंडिका थइ छे, अने पूर्वभवना वैरथी तुं बीजा

पाडाउने पण शामाटे हणे छे? जरा दया राख? अने शांत था?. त्यारे चंडिकाए कह्युं के, हे भगवन्! हुं भारेकर्मी छुं, अने तेथी जीवहिंसा तजवाने शक्तिवान थती नथी. त्यारे आचार्यजीए कह्युं के जो एम छे, तो तुं नाहडमंत्रिना कुटुंबने तारां बलिदानथी मुक्त कर? पछी ते वात तेणीए पण कबुल राखी. पछी धर्ममां दृढ थएला नाहडमंत्रिए कोरंटकादिकमां "नाहडवसहि" आदिक बहोतेर जिनमंदिरो बंधाव्यां. अने तेउनी प्रतिष्ठा आचार्यजीए विक्रम संवत १२५२ मां करी. वली नाहड मंत्रिए जावोजीवपर्यंत भोजन कर्या पेहेलां जिनपूजनादिकनो अभिग्रह लीधो.

रम्यं येन जिनालयं निजभुजोपात्तेन कारापितं
मोक्षार्थं स्वधनेन शुद्धमनसा पुंसा सदाचारिणा ॥
वेद्यं तेन नरामरेंद्रमहितं तीर्थेश्वराणां पदं
प्राप्तं जन्मफलं कृतं जिनमतं गोत्रं समुद्योतितम् ॥१॥

अर्थ— जे शुद्धमनवाला तथा सदाचारि माणसे पोताने हाथे उपार्जन करेला धनथी मोक्ष माटे जिनमंदिर बंधाव्युं छे, ते माणसो देवोथी पूजाएला तीर्थंकरपदने मेलवे छे, वली तेणेज पोताना जन्मनुं फल मेलव्युं छे, तथा तेणेज जिनशासनने अने पोताना गोत्रने पण दीपाव्युं छे.

वली पोतानां घरो तो सुघरी, कागडा, चकलां विगेरे पोतानी शक्ति मुजब बनावे छे, पण भाग्यवान तो तेनेज जाणवो के, जे पोतानी शक्ति मुजब उत्तम जिनमंदिर बंधावे छे. ते पर दृष्टांत कहे छे.

श्रीरियं पुरुषान् प्रायः, कुरुते निजकिंकरान् ॥
कुर्वते किंकरीं तां ये, तेरसौ रत्नसूरसा ॥ १ ॥

अर्थ– प्रायें करीने लक्ष्मी पुरुषोने पोताना चाकर करे छे पण तेणीने जेउं दासीरूप करे छे, तेउंश्रीज आ पृथ्वी रत्नगर्भा थएलीछे

ते सांभलीने आमराजाए गोपगिरिमां श्रीमहावीरप्रभुनुं मंदिर बंधाव्युं ते मंदिर एकसो एक हाथ उचुं हतुं साडात्रण क्रोड सोनामोहोरोनो रस करीने तेनी प्रतिमा बनावीने तेमा स्थापन करी. ते मंदिरमा रंगमंडप बनाववामा एकवीस लाख सोनामोहोरो खरची मूल मंडपमा एक लाख पचीस हजार सोनामोहोरो खरची वली ते राजाए विक्रम संवत ८११ मा एक क्रोड सोनामोहोरो खरचीने श्री बप्पभट्टिजीना सूरिपदनो महोत्सव कर्यो वली ते राजाए तेज आचार्यजीना उपदेशथी शत्रुंजय अने गीरनारपर उद्धारो कर्या छे. तेनु विशेष वृत्तांत चतुर्विंशतिप्रबंधमाथी जाणी लेवुं.

ये कारयंति जिनमंदिरमादरेण
बिंबानि तत्र विविधानि विधापयंति ॥
संपूजयंति विधिना सततं जयंति
ते पुण्यभाजनजना जनितप्रमोदाः ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणसो आदरपूर्वक जिनमंदिरो बंधावे छे, तथा तेमा विविध प्रकारना बिंबो भरावे छे, अने तेउंने हमेशा विधिपूर्वक जेउं पूजे छे, ते पुण्यशाली तथा हर्ष उत्पन्न करनारा लोको जयवता वर्ते छे

जे उत्तम पुरुषो आदरपूर्वक द्रव्य खरचीने उचा तोरणोवाला जिनमंदिरो बधावे छे, अने तेमा सुवर्णमय बिंबो स्थापे छे, ते पुरुषोज आ जगतमा जीवता बेठा छे, केमके, तेउं गणधरादिकनी पदवी भोगवीने मोक्षमा जाय छे ते पर दृष्टांत कहेछे

हेमाचार्यजीए प्रतिबोधेला श्रीकुमारपाल राजाए तारंगाजी, तथा गुजरात आदिक नगरोमा १४४४ नवा जिनमंदिरो बधाव्या

छे. तेउपर तेणे सुवर्णना दंडो अने कलशो स्थापन कर्या छे. वली तेणे पाटणमां पोताना पिताजी त्रिभुवनपालना नामनी यादगीरी माटे "तिहुणविहार" नामनुं वहोतेर देवकुलिकासहित जिनमंदिर बंधाव्युं छे. ते मंदिरमां तेणे चोवीस सोनानी, चोवीस रुपानी, चोवीस पीत्तलनी इत्यादि प्रतिमाउ स्थापी हती. वली तेमां १२५ आंगुलनी अरिष्ठरत्ननी श्रीनेमिनाथ प्रभुनी प्रतिमा तेमणे स्थापी हती. सर्व मली तेमां छन्नु क्रोड सोनामोहोरो खरची हती. तेमां उदयन, आम्रदेव, कुबेरदत्त आदिक अढार हजार श्रावको हमेशां नृत्यगायन सहित स्नात्रमहोत्सव करता हता.

श्रीमज्जैनगृहे जिनप्रतिकृतौ जैनप्रतिष्ठाविधौ
श्रीजैने तपने जिनार्चनविधौ श्रीसंघपूजादिके ॥
श्रीजैनागमलेखने च सततं श्रीतीर्थयात्रादिके
येषां स्वं विनियोगमेति धनिनां धन्यास्तएव क्षितौ ॥१॥

अर्थ— जे धनवान माणसोनुं द्रव्य जिनमंदिरमां, जिनप्रतिमामां, जिनप्रतिष्ठाविधिमां जैन तपमां, स्वामिवात्सल्यमां, जैनागम लखाववामां, तथा तीर्थयात्रादिकमां वपराय छे, तेउनेज आ पृथ्वीमां धन्य छे. कह्युं छे के,

ज्वलनजलचौरचारण-नृपखलदायादवंदिकोधृतम् ॥
धन्योऽसौ यस्य धनं, जिनभवनादौ शुभे लग्नम्॥ १ ॥

अर्थ— अग्नि, जल, चोर, चारण, राजा, दुष्टपुरुषो, पितराइउ, तथा भाटआदिकना भयथी मुक्त थएलुं एवुं जे माणसनुं धन जिनमंदिर आदिक शुभ कार्यमां लागेलुं छे, तेनेज धन्य छे. तेमां पण जिनमंदिर बंधाववाथी अपार पुण्य थाय छे, कह्युं छे के,

काष्टादीनां जिनावासे, यावंतः परमाणवः ॥
तावंति वर्षलक्षाणि, तत्कर्ता स्वर्गभाग् भवेत् ॥१॥

अर्थ– जिनमंदिर बांधवामां जेटला काष्ट आदिकना परमाणुओ होय छे, तेटला लाख वर्षोसुधी तेनो कर्ता स्वर्गनुं आयुष्य भोगवे छे परमाणुनुं लौकिक स्वरूप नीचेप्रमाणे छे

जालांतरगते सूर्ये, यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः
तस्य त्रिंशत्तमो भागः,परमाणुः स उच्यते॥१॥

अर्थ– जालीमांथी सूर्यनो तडको पडतां जे सूक्ष्म रज देखाय छे, ते रजनो पण जे त्रीशमो भाग ते परमाणु कहेवाय छे

नूतनार्हद्वारवास-विधाने यत्फलं भवेत् ॥
तस्मादष्टगुणं पुण्यं, जीर्णोद्धारे विवेकिनाम्॥१॥

अर्थ– नवुं जिनमंदिर बंधाववामां जेटलुं पुण्य थाय छे, तेथी आठगणुं पुण्य विवेकीओने जीर्णोद्धारथी थाय छे

वली आज हेतुथी पद्म नामना चक्रवर्तीए पोतानी माताना हर्ष माटे हमेशां एकेकुं जिनमंदिर बंधाव्युं हतुं वली तेज बाब तपर संप्रति राजानुं दृष्टांत कहेछे

संप्रति राजा त्रिखंड भरतक्षेत्रनो दिग्विजय करीने शोल हजार मुकुटधारी राजाओथी परिवर्यो थको उजायनीमां आव्यो ते वखते नगरना लोकोए तेनो घणाज आनंदथी प्रवेशमहोत्सव कर्यो पछी ते पोताना मेहेलमां जइ पोतानी माता कमलाने पगे पड्यो पण ते वखते पोतानी माताने दिलगिर मुखवाली जोइने तेणे पूछ्युं के, हे माताजी! मारा जेवो आपने पुत्र छे, तोपण तमो केम दिलगिर थाओ छो? त्यारे माताए कह्युं के, हे वत्स! संसार साधनारा, तथा छेवटे नरक आपनारा एवा तमारां राज्योपार्जनथी मने कंइ पण हर्ष थतो नथी, पण जो तमो जिनप्रासादो करावीने मारी पासे आवो, तो मने घणो हर्ष थाय ते सांभली संप्रतिराजाए मोटा निमित्तिआओने बोलावीने तेओने पो-

ताना आयुष्यनुं प्रमाण पूछ्युं; त्यारे तेउए कह्युं के, हे राजन्! तमारुं आयुष्य सो वर्षोनुं छे. त्यारे राजाए मंत्रिउने पूछ्युं के, एकसो वर्षना केटला दिवसो थाय? त्यारे मंत्रिउए कह्युं के, एकसो वर्षोना छत्रीस हजार दिवसो थाय. पछी तेणे शत्रुंजयादिक तीर्थोमां जिनमंदिरो बंधाववामाटे पोताना माणसोने हुकम कर्यो अने हमेशां एक मंदिर संपूर्ण थयानी खबर मेलवीने ते पोतानी माताने चरणे नमवा लाग्या. ते सांभली कमला माता पण हर्ष सहित हमेशां पोताना पुत्रने पोताने हाथे तिलक करती हती. एवी रीते संप्रति राजाए सवालख जिनमंदिरो बंधाव्यां. तेउमां छत्रीस हजार तो सिद्धपुरादिकमां श्रीनेमिश्वरविहारादिक कराव्यां. नेव्यासी हजार जीर्णोद्धार कराव्या. सवाक्रोड जिनबिंबो भराव्यां. हालमां पण सिंधुदेशमां आवेला मरोठपुरमां संप्रति राजानी बनावेली पंचाणु हजार मोटी पित्तलनी जिनप्रतिमाउ छे. ते मांहेली श्रीमहावीर प्रभुनी प्रतिमा गिरनारपर खरतरवसतिमां विद्यमान छे. वली ते संप्रति राजाए सातसो तो दानशालाउ करावी. वली तेणे अनार्य देशोमां पण जैनधर्मना फेलावा माटे प्रथम साधुवेषधारी पुरुषोने मोकल्या हता, तथा एवी रीते त्यांना लोकने साधुउना व्यवहारथी जाणीता करीने पाछलथी त्यां उत्तम साधुउने पण जैनधर्मना फेलावा माटे मोकल्या हता. एवी रीतनां पुण्यनां कार्यो करीने संप्रति राजाए पोतानुं धन, अने पोतानो जन्म सफल कर्यो हतो.

जिनभवनं जिनबिंबं, जिनपूजां जिनमतं च यः कुर्यात्
तस्य नरामरशिवसुख-फलानि करपल्लवस्थानि ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणस जिनमंदिर, जिनपूजा, अने जिनमतनो फेलावो करे छे, तेने नर, देव, अने मोक्षनां सुखो हथेलीमां आवी पडे छे.

श्री देवसूरिजीना उपदेशथी सिद्धराजे पण विक्रम संवत् ११८३ मां पाटणमां श्रीऋषभदेव प्रभुनुं जिनमंदिर बंधाव्युं हतुं तेमां पंच्यासी अंगुलना प्रमाणवाली श्रीऋषभदेव प्रभुनी प्रतिमा स्थापन करी हती, अने ते मंदिरनुं नाम "राजविहार" राखवामां आव्युं हतुं एक दहाडो ते जिनमंदिरमां पासिल नामनो कोइक निर्धन श्रावक पूजा करवा माटे आव्यो, तथा मोटी प्रतिमा जोइने आश्चर्यसहित ते प्रतिमानुं ते माप लेवा लाग्यो. ते वखते नेवुं लाख सोनामोहोरोना अधिपति छाडा नामना व्यापारीनी हासी नामनी बालविधवा पुत्री पण दर्शन करवा आवी हती पासिलने ते प्रतिमानुं माप लेतो जोइने तेणीए हासीथी तेने पुछयुं के, शुं तारे आवी नवी प्रतिमा कराववी छे? ते सांभली पासिले कह्युं के, हे बेहेन! ते समये तमारे प्रतिष्ठामहोत्सवपर जरूर पधारवुं. तेणीए पण ते कबुल कर्युं पछी पासिले दश उपवास करीने आरासणनी अधिष्ठाता अंबिकादेवीनुं आराधन कर्युं त्यारे तेणीए संतुष्ट थइने तेने कह्युं के, आ सुवर्णनी खाणमांथी तने नवुं जिनमंदिर बांधवा माटे जोइशे तेटलुं धन निकलशे, एम कही ते अदृश्य थइ पछी ते खाणमांथी पस्तालीस हजार सोनामोहोरोनी किंमत जेटलुं सुवर्ण निकल्याथी ते द्रव्य खरचीने पासिले एक सुंदर जिनमंदिर बंधाव्युं ते वखते तेणे हासीने पण निमंत्रण करीने श्री देवसूरिजीने हाथे प्रतिष्ठा करावी हासीए पण नव लाख सोनामोहोरो खरचीने ते जिनमंदिरनो रंगमंडप बांध्यो हवे जीर्णोद्धारनो उपदेश कहे छे

जीर्णोद्धारःकृतो येन, विभवेन सुचारुणा ॥
जिनाज्ञा पालिता तेन, क्लेशकूपारपारदा ॥२॥

अर्थ— जे माणसे पोताना उत्तम द्रव्यथी जीर्णोद्धार करेलो छे, तेणे क्लेशरूपी समुद्रनो पार पहोंचाडनारी जिनाज्ञा पालेली छे

हवे ते जीर्णोद्धारपर दृष्टांत कहे छे.

उदा नामना मंत्रिना वंशमां थएलो सज्जन नामनो सिद्धराजनो एक कोटवाल हतो; तेने योग्य जाणीने सिद्धराजे सौराष्ट्र देशनो हाकेम कर्यो हतो. ते सज्जने त्रण वर्षनी उपज एकठी करीने राजानी आज्ञा लीधाविनाज बहोतेर लाख सोनैया खरचीने गिरनारपर श्रीनेमिश्वर प्रभुना जिनमंदिरनो उद्धार कराव्यो, केमके, ते जिनमंदिर पूर्वे काष्टोनुं बांधेलुं हतुं, अने तेनापर वीजली पडवाथी तेमां नुकशान थयुं हतुं. पछी केटलेक काले कोइक दुर्जने ते वात जाहेर करी राजाने कह्युं के, सज्जन तो राजद्रव्यनो आवी रीते गेर उपयोग करे छे. त्यारे राजाने सोमनाथ जवानो अभिग्रह होवाथी ते मिष करीने ते पाटणथी चाल्यो. सोमनाथने नमन करीने ते संकली नगरीमां आव्यो. ते वखते सज्जने तेमनी सामे आवीने तेमने नमस्कार कर्यो पण राजाए ते वखते पोतानुं मुख फेरवी नांख्युं. त्यारे सज्जने विचार्युं के, राजा मारापर गुस्से थया छे. पछी सज्जने तो वामनस्थलीमां (वणथलीमां) जइने सांमतो तथा व्यापारिओ पासेथी बहोतेर लाख सोनामोहोरो एकठी करी. पछी सिद्धराजे आलिंग प्रधानने पूछ्युं के आ पर्वत कयो छे? अने अहीं कयुं तीर्थ छे ? त्यारे प्रधाने कह्युं के, हे स्वामी! आतो श्री गिरनार तीर्थ छे, माटे तेनां दर्शन कर्याविना आपणे जवुं उचित नथी. ते सांभली राजा गिरनारपर चड्या, अने त्यां नवुं मनोहर जिनमंदिर जोइने हर्षथी बोली उठ्या के, जे माणसे आवुं सुंदर जिनमंदिर बंधाव्युं छे, तेनी माताने धन्य छे!! तेज समये पाछल रहेला सज्जने कह्युं के, धन्य छे माता मयणल्लदेवीने के, जेणीए एवी रीतना पुरुषरत्नने जन्म आप्यो छे. ते वचनने सिद्धराजे सज्जननी सन्मुख जोयुं, अने मंत्रिने पूछ्युं शुं छे? त्यारे आलिंगमंत्रिए कह्युं के, हे स्वामी! एक आ श्रीगिरनारजीना जीर्णोद्धारनुं पुण्य छे, तथा ते

उद्धार करवामा जेटलु द्रव्य खरचायु छे, तेटलुं द्रव्य सघ आपने समर्पण करे छे, माटे ते बन्नेमाथी जे लेवानी आपनी इच्छा होय ते फरमावो ? ते साम्भली अत्यंत प्रमुदित थएला सिद्धराजे कह्युं, के 'मारे तो तीर्थोद्धारना पुण्यनीज जरूर छे, द्रव्यनी जरूर नथी एम कही तेणे ते तीर्थनी पूजा माटे, तथा तेना रक्षण माटे बार गामो भंडारमा आप्या, तथा शत्रुंजय अने गिरनार, ए बन्ने तीर्थोने जोडवामाटे तेणे बार योजननी रेशमी वस्त्रनी धजा बधावी, तथा सघेपण एकठु करेलुं द्रव्य खरचीने वामनस्थलीमा (वनथलीमा) वीरप्रभु आदिकना चार जिनमंदिरो बधाव्या. एवी रीते सज्जन (साजण) कोटवालनु दृष्टात साम्भलीने बीजा भव्य लोकोए पण जिनमंदिरोनो जीर्णोद्धार कराव्यो

यावत्तिष्ठति जैनेंद्र, मंदिरं धरणीतले ॥
धर्मस्थितिः कृता ताव-ज्जैनसौधविधायिना ॥ १ ॥

अर्थ– आ पृथ्वीआपर ज्यासुधि जैनमंदिर हयातिमा रहे छे, त्यासुधि जैनमदिर बधावनारे (आ जगतमा) धर्मनी स्थिति करेली छे, एम जाणवु

एक दहाडो श्रीदेवसूरि महाराज मेरूता गाममा चतुर्मास करीने फलवधि गाममा पधार्या, अने त्या मासकल्प कर्यो त्याना पारस नामना एक श्रावके ते समये नगरनी नजदिक झाडीमा एक मटोडीनो ढग जोयो, तथा तेपर पुष्पो पडेला जोया ते वात आचार्यजीने कहेवाथी आचार्यजीए ते ढगने बहुज जालवणीथी खोदवानु कह्युं पछी ते पारस श्रावके तेम कर्या बाद तेमाथी श्री पार्श्वनाथजीनी प्रतिमा निकली पछी तेमना अधिष्ठाता पार्श्व नामना यक्षे ते श्रावकने स्वप्नमा एक जिनमदिर बाधी तेमा ते प्रतिमा स्थापन करवानुं कह्यु त्यारे पारस श्रावके कह्यु के, मारी पासे द्रव्य नथी, माटे प्रासाद शी रीते बधावुं त्यारे यक्षे कह्यु

के, आ प्रतिमानीपासे तुं अक्षतनो स्वस्तिक हमेशां करजे, अने ते अक्षतो सुवर्णमय थइ जशे, अने ते द्रव्य वापरीने तुं जिनमंदिर बंधावजे. पछी ते पारस श्रावक हमेशां तेम करतो गयो, अने जिनमंदिर बंधाववा लाग्यो. एम करतां थकां एक बाजुनो तो सर्व मंडप तैयार थयो. एटलामां ते श्रावकना पुत्रे पोताना पिताजीने पूछ्युं के, आ द्रव्य तमोए क्याथी मेलव्युं? ते पारस श्रावके द्रव्यागमननुं खरेखरुं स्वरूप तेने कही बताव्युं. अने त्यारथी तेने द्रव्य मलवा न लाग्युं, अने तेथी आजदनसुधि पण ते जिनमंदिर तेटलुंज अधुरुं छे. ते मंदिरमां विक्रम संवत ११९९ मां फागणसुदि दशमने दिवसे प्रतिमानी प्रतिष्टा थइ; तथा १२०४ मां माहासुदि तेरसने दिवसे तेपर धजा चढी; अने एवी रीते ते फलवर्धि (फलोधि) पार्श्वनाथजीनुं तीर्थ प्रसिद्ध थयुं.

कारयंति जिनेंद्राणां, तृणवासानपीह ये ॥
मणिरत्नविमानानि, तैर्लभ्यंते भवे भवे ॥ १ ॥

अर्थ– जेओ आ जगतमां श्री जिनेश्वरोनां घासनां पण मंदिरो बंधावे छे, तेओने दरेक भवोमां मणि अने रत्नोनां विमानो मले छे.

माणिक्यहेमरत्नाद्यैः, प्रासादान् कारयंति ये
तेषां पुण्यैकमूर्तीनां, को वेद फलमुत्तमम् ॥ १ ॥

अर्थ– वली जे माणसो माणेक, सुवर्ण तथा रत्नादिकोथी जिनमंदिरो बंधावे छे, ते पुण्यशालीओना उत्तम फलने तो जाणीज कोण शके छे? (हवे तेपर दृष्टांत कहे छे.)

श्री विमलशाह नामना शेठ गुजरातना राजा भीमदेवना प्रधान हता. एक दहडो कोइ दुष्टे राजाना कर्णो भंभेरवाथी राजानी तेनापर इतराजी थइ. तेथी पांचसो घोडा, पांच क्रोड सोनामोहोरो, तथा घणां उंटोसहित ते त्यांथी रात्रिए नाशीने चं-

डाजतीमा गयो त्यारे तेना मरथी त्यानो धारावर्ष राजा नाशी गयो, पछी त्याना माडलिकोए विमलशाहने त्यांनो राजा ठराव्यो पछी ते विमलशाह शेठे शाकम्भरी, मेदपाट, जावालिपुर विगेरेना राजार्जने जीतीने श्रावुपर छत्र धारण कर्यु वली एक दहाडो तेणे रोम नगरना बार सुबाउने हरावीने पोताना चाकरो कर्या, अने तेउना बारे छत्रो पोते धारण कर्या वली श्राबुपर वागता तेना निशानोना शब्दो साजलीने जय पामेला जीमराजाए तेने क्रोड सोनामोहोरोनी जेट करी एक दहाडो ते विमलशाह शेठे धर्मसार सूरिजीना मुखथी एवी वाणी साजली के,

चउहिं ठाणेहिं नरयाउअं
वज्झति जीवा, तं जहा म- ॥
हारंजयाए महापरिग्गहाए
कुणिमाहारेणं पंचिंदिअवहेणमिति ॥

अर्थ- जीवो चार स्थानकोथी नरकनु श्रायुष्य बांधे ठे ते श्रावी रीते के महा श्रारंजथी, महापरिग्रहथी, (मामादिकना) क्षीद जोजनथी, अने पंचेंद्रिना वधथी

ते साजलीने पापोथी डरेला विमलशाह शेठे गुरुमहाराजने चरणे नमीने कह्युं के, हे स्वामी ! में संग्राममा हजारो मनुष्योनो वध कर्यो कराव्यो ठे, तो मने तेनी श्रालोचना श्रापो ? ते साजली श्राचार्यजीए कह्युं के, हवे तमो सर्व जीवोप्रते अमारीपटह वजडावो ? तथा जिनमंदिर श्रादिक वधारीने पुण्योना कार्यो करो ? ते साजली विमलशाह शेठे अंबा माताजीनु श्राराधन कर्यु त्यारे ते प्रसन्न थइने तेमने कहेवा लागी के, तमो कंइ वरदान मागो ? त्यारे विमलशाह शेठे कह्यु के, पुत्रनी प्राप्ति तथा जिनप्रासादनी निष्पत्तिरूप बे वरदान श्रापो ? त्यारे देवीए कह्यु के, कातो पुत्रप्राप्तिनु वरदान मागो ? अथवा प्रासादनिष्प-

त्तिनुं वरदान मागो? ते बेमांथी एक वरदान आपीश. त्यारे ते माटे शेठे पोतानी स्त्री श्रीदेवीने पूछ्युं, त्यारे तेणीए कह्युं के, प्रासादनी निष्पत्तिनुंज वरदान मागो? पुत्रनी आपणे कंइ जरूर नथी. पछी अंबामाताए बहोंतेर लाख सोनामोहोरो सहित जिनप्रासाद बांधवामाटे विमलशाह शेठने अर्बुदाचलपर भूमि सोंपी. पछी त्यां विमलशाह शेठे जिनमंदिर बांधवानो प्रारंभ कर्यो, पण दिवसे करेली चणतर रात्रिए पडीजवा लागी. अने एवी रीते छ महिनाउं वीती गया. त्यारे शेठे अंबिका मातानुं स्मरण करीने तेनुं तेणीने कारण पूछ्युं; त्यारे देवीए कह्युं के, आ भूमिना अधिष्ठाता वालीनाहनुं तारे त्रण उपवासपूर्वक आराधन करवुं; अने तेम करवाथी जो ते निरवद्य नैवेद्य मागे तो तारे तेने ते आपवुं. पण मदिरादिक सावद्य नैवेद्य आपवुं नहीं; अने तेम छतां जो ते सामो थाय, तो तारे खड्ग कहाडीने तेने डरावबो. पछी विमलशाह शेठे तेने आराधवाथी ते प्रत्यक्ष थइ सावद्य नैवेद्य याचवा लाग्यो; त्यारे विमलशाह शेठे खड्ग कहाडी तेने डराव्यो; अने ते खड्गमां अंबिकाना अवतरणथी ते वालीनाह त्यांथी नाशी गयो. तथा छेवटे अंबाजीना वचनथी त्यां क्षेत्रपाल थइने ते रह्यो. अने पछी विघ्नरहित जिनमंदिर संपूर्ण थयुं. तेमां विक्रम संवत १०८८ मां मूलनायक श्री युगादीश प्रभुनी स्थापना थइ. वली त्यां अंबिका देवी तथा वालिनाह क्षेत्रपालनी पण देरीमां स्थापना करी. वली ते प्रतिष्ठामहोत्सवमां विमलशाह शेठे चतुर्विध संघनी अत्यंत सेवा करी; तथा याचकोने एवा तो तेणे खुशी कर्या के, आजे पण तेउं यजमानने "विमल श्री सुप्रभातनी" आशिष आपे छे.

सारं तदेव सारं, नियुज्यते यज्जिनेंद्रभवनादौ ॥
अपरं पुनरपरधनं, पृथ्वीमलखंडपिंडं वा ॥ १ ॥

अर्थ– तेज द्रव्यने उत्तम जाणवु, के जे जिनेंद्रभुवनादिकमा वपराय छे, अने वाकीनुं धन तो परनु अथवा पृथ्वीना मेलना पिंड सरखु छे.

ते पर हवे वस्तुपाल तेजपालनी कथा कहे छे

महामंत्री वस्तुपाल अने तेजपाल प्रथम यात्रा माटे ज्यारे धोलकाथी हडाला गामे आव्या, त्यारे एवी खवर मली के, मार्गमा लुंटारुओनी मोटी धाड तेमनी राह जोती बेठेली छे त्यारे तेओए परस्पर विचार करीने रात्रिए सर्व द्रव्य त्रावाना कलशोमा भरीने एक तलावने कांठे आवेला घणा क्षेत्रमा रहेला खीजडाना वृक्ष नीचे दाटवा मांड्यु, पण त्या जमीन खोदता तेमना भाग्योथी उलटुं सुवर्णनिधान निकल्युं ते जोइ तेमने मोटु आश्चर्य थयु पछी ते निधान तथा पोतानु पण सघलु द्रव्य त्या तेओए स्थापन कर्युं पछी तेओ चितातुर थया थका ज्यारे पाछा आव्या त्यारे, अनुपम देवीए तेनु कारण पूछ्यु, त्यारे तेओए तेणीने एकातमा सर्व हकीकत कही त्यारे तेणीए कह्यु के, हे स्वामी! धन एवी रीते गुप्त न रखाय, पण एवी रीते राखवु के, जे धनने सर्व कोइ जोइ शके, पण लेइ शके नहीं, अर्थात् ते द्रव्य खरचीने जिनमंदिरो बंधाववा, केमके, उत्तम पुरुषोनो तेज आचार छे कह्यु छे के,

अधः क्षिपंति कृपणा, वित्तं तत्र यियासवः ॥
सतस्तु गुरुचैत्यादौ, तदुच्चैःपदकांक्षिणः ॥ १ ॥

अर्थ– जे कृपणोने नीची गतिमा जावानी इच्छा होय, तेओज नीचे भूमिमा द्रव्यने दाटे छे, पण जेओने उंचि गतिमा जावानी इच्छा छे, एवा उत्तम माणसो तो मोटा जिनमंदिरादिकमा ते द्रव्य खरचे छे

एवी रीतना तेणीना वचनोथी उत्पन्न थएल छे विवेक जेओने

विलास अघटित छे. वली अहीं करेलां नानां पगथीआंउ संताननो अन्नाव सूचवनारां छे. वार हाथ लांवां न्नारोटीआं अनुचित छे, केम के, तेउना न्नांगवाथी प्रासादनो विनाश थवानो संन्नव छे. वली वाह्यघ्वारमां जे कसोटीना स्तंन्नो कर्या ते पण अयुक्त छे, केमके, ते मूल्यवान होवाथी सर्वनी दृष्टिए पमवाथी कदाच प्रासादन्नंगनो न्नय रहे छे. इत्यादि घणां दूषणो निवेदन कर्यां. तेनां ते वचनोने सत्य मानीने शोन्ननादिके यशोवीरनी स्तुति करी तथा कह्युं के, जे बनवानुं हतुं ते बनी चुक्युं छे.

एक दहाडो मंत्रीश्वरनी स्त्री अनुपमदेवी एक जैनसाधुने आहार आपी नमस्कार करती हती, ते वखते प्रमादथी साधुनुं घीथी न्नरेलुं पात्र तेणीनापर पडी गयुं, अने तेथी तेणीनुं नवरंगी चीर घीवालुं थयुं, ते जोइ घरना कोइक दुष्ट चाकरे साधुने गाल आपी. त्यारे अनुपमदेवीए क्रोध पामीने तेने घरमांथी कहाडी मेल्यो, अने कह्युं के, हुं जो कोइ तेलीनी के कंदोइनी स्त्री होते तो, दरेक पगले मारां वस्त्रो घृत अने तेलथी मलीन थते. आ तो मारुं परम न्नाग्य छे के, मुनिराजना पात्रथी मारुं देहसिंचन थयुं. इत्यादि आ मंत्रीश्वर माटेनुं विशेष वृत्तांत प्रबंधामृतदीर्घीका विगेरेथी जाणी लेवुं; तथा एम विचारि सर्व लोकोए पोतानी लक्ष्मीने धर्ममार्गे वापरीने पोतानो जन्म सफल करवो.

स्वैर्डव्यैर्जिनमंदिराणि रचयत्यभ्यर्चयत्यर्हत-
स्त्रिन्नक्त्या यतिनां तनोत्युपचयं वस्त्रान्नपात्रादिन्निः ॥
धत्ते पुस्तकलेखनोद्यममुपष्टभ्यातिसाधर्मिकान्
दीनाभ्युघ्दरणं करोति कलयत्येवं सुपुण्यार्जनम् ॥ १ ॥

अर्थ— प्राणी पोतानां डव्योथी जिनमंदिरो बंधावे छे, जिने-

श्वरोने पूजे छे, त्रण प्रकारना भक्तिथी मुनिउंने वस्त्र, अन्न तथा पात्र प्रमुख आपे छे, पुस्तको लखावे छे, स्वामीवात्सल्य करे छे, दीनोनो उद्धार करे छे, तथा एवी रीते उत्तम पुण्य उपार्जन करे छे

तप गच्छनायक श्री धर्मघोषसूरिजीना उपदेशथी पेथडशाह तथा झांझणशाह विक्रम सवत १३२१ मा जीरावली तथा शत्रुजयादिकपर सुवर्ण कलशो सहित चोर्यासी जिनमंदिरो बधाव्या छे ते वखते देवगिरि तथा ओंकार आदिक नगरोमा ब्राह्मणोए जिनमंदिर नहीं बाधवा देवाथी तेमणे त्याना राजा रामदेवना मोटा प्रधान हेमादिकना नामोथी घणी दानशालाउं माडी, तथा तेमा कापडी विगेरे पंथिउंने लाडु, दाल, शाक, भात विगेरे तेउंने पेटपूर आपवा माड्युं अने तेथी ते पंथिउं हेमादिकनी अत्यंत प्रशसा बोलवा लाग्या, अने ते नगरोमा पण हेमादिकनी कीर्ति लोको घरे घरे गावा लाग्या ते जोइ ते हेमादिक प्रधानोए विचार्यु के, आपणे तो कइ पण दान आप्युं नथी, माटे खरेखर कोइक कारणथी महा पुण्यशाली जीवे आपणा नामोथी आ दानशालाउं खुल्ली करी छे पछी ते विषेनी वातमी मेलवता ते सर्व वृत्तात तेउंना जाणवामा आव्यो. पछी ते हेमादिक प्रधानोए राजाने कहीने ते पेथडशाहने देवगिरिना चौटामा जिनमदिर माटे जगो अपावी पछी ज्यारे त्या पायो खोदवा माड्यो, त्यारे जमीनमाथी मीठुं पाणी निकल्युं ते देवगिरिमा मीठुं पाणी बहु दुर्लभ हतु, तेथी कोइ चाडीआए जइने कह्यु के, त्या तो मीठु पाणी निकल्यु छे, माटे त्या आप वाव बंधावो, अने पेथडशाहने साटे बीजु स्थानक आपजो त्यारे... कह्यु के, प्रभाते हु तेनो तपास करीश ते वात... वातमी मळवाथी तेणे गुप्त रीते रात्रिए ते... थाय छे, पण तेथी जिनशा... पछी प्रभाते राजा ज्यारे तेनी तपास... तपर तेउं जुदे जुदे समये चउ्या

वली ते वाहड मंत्रीए गिरनारपर पगथीउं बंधावी, के जेथी वृद्धो अने बालोने पण तेपर चडवानुं सुगम थयुं. ते पगथीउं बांधवा पाछल तेमणे त्रेसठ लाख सोनामोहोरो खरची हती. कह्युं छे

त्रिषष्टिलक्षद्रम्माणां, गिरिनारगिरौ व्ययात् ॥
नव्या वाहडदेवेन, पद्या हर्षेण कारिता ॥ १ ॥

अर्थ— त्रेसठ लाख सोनामोहोरो खरचीने वाहडदेव मंत्रिए श्री गिरनार तीर्थपर हर्षथी मनोहर पगथीउं बंधावी छे.

जिणनवणाणि जे उद्धरंति, नत्तीइ सडीयपडियाइं ॥
ते उद्धरंति अप्पणं, नीमाउ नवसमुद्दाउ ॥ १ ॥

अर्थ— जे माणसो नक्तिथी जीर्ण थएलां तथा पडी गएलां जिनमंदिरोनो उद्धार करे छे, ते माणसो नयंकर एवा आ नवसमुद्रमांथी पोताना आत्मानो उद्धार करे छे.

गोपगिरिपर आमराजाए पोतानुं अमूल्य सिंहासन श्री वप्पनट्टिजी सूरिजीने बेसवा माटे अर्पण कर्युं, ते जोइ क्रोधातुर थएला ब्राह्मणोए राजाने कह्युं के, हे स्वामी! आ श्वेतांबरो तो शूद्रो छे, तेउने सिंहासन आपवुं उचित नथी. एवी रीते वारंवार राजाने कहेवाथी राजाए ते नवलक्ष नामनुं सिंहासन पाछुं पोताना नंडारमां मुकाव्युं, तथा तेनी जगोए एक नानुं सिंहासन राख्युं. प्रनाते ज्यारे आचार्यजीए ते जोयुं, त्यारे राजाना मननो अनिप्राय जाणी तेमणे कह्युं के,

मर्द्दयमानमतंगजदर्पं,
विनयशरीरविनाशनसर्पम् ॥
क्षीणो दर्पाद्दशवदनोऽपि,
यस्य न तुल्यो नुवने कोऽपि ॥ १ ॥

ते सांनली लज्जातुर थएला आमराजाए फरीने ते नवलक्ष

सिंहासन त्यां स्थाप्युं. फरीने ते ब्राह्मणो राजाने ज्यारे कहेवा गया, त्यारे राजाए पात्र अपात्रनी परीक्षा माटे तथा ते ब्राह्मणोने प्रतिबोध आपवा माटे आठ हजार रुपामोहोरो सजामां मगावी अने ब्राह्मणोने कह्यु के, मारे आ सुपात्रोने आपवी छे ते सांभ-ळी सर्वे ब्राह्मणो कहेवा लाग्या के, हे स्वामी! अमो चतुर्वेदी ब्राह्मणों छीये, माटे अमारासरखां बीजा कोण उत्तम पात्रो छे? एवी रीते आत्मप्रशंसा करता थका कहेवा लाग्या के, ते द्रव्य अमोने आपो? एम कही एक बीजापर हडसेला मारी तेओए ते सर्व द्रव्य लुंटी लीधु बीजे दिवसे श्री बप्पभट्टीजी सूरिराजने बोलावी तेमनी पासे सवा क्रोड सोनामोहोरो मुकीने राजाए तेमने कह्यु के, हे भगवन्! आप कृपा करीने आ द्रव्य ग्रहण करो! एवी रीते वारंवार राजाए कहेवाथी आचार्यजीए तेने कह्यु के, हे राजन्!

आरंभे णत्थि दया, महिलासंगेण नासए बंभं ॥
संकाए सम्मत्त, पव्वज्जा दव्वगहणेण ॥ १ ॥

अर्थ- आरंभ करवाथी दया रहेती नथी, स्त्रीना संगथी ब्रह्मचर्यव्रत नाश पामे छे, शंकाथी सम्यक्त्व खंडित थाय छे, तथा द्रव्य लेवाथी प्रव्रजानो विनाश थाय छे

इत्यादिक शास्त्रोनी गाथाओ कहीने ते द्रव्य तेमणे लीधुं नही पछी ते आम राजाए आचार्यजीना उपदेशथी ते द्रव्य खरचीने एकसो जिनमंदिरोनो उद्धार कराव्यो

यस्तृणमयीमपि कुटीं, कुर्याद्दद्यात्तथैकपुष्पमपि ॥
भक्त्या परमगुरुभ्यः, पुण्योन्मानं कुतस्तस्य ॥ १ ॥

अर्थ-जे माणस भक्तिथी परम गुरुमाटे एक घासनी पण झुं-पडी बंधावी आपे छे, तथा तेमने फक्त एकज पुष्प आपे छे, तेना पुण्यनु पण कोण माप करी शके तेम छे? ॥ १ ॥

किंपुनरुपचितघन-शिलासमुद्घातघटितजिनभवनम् ॥
ये कारयंति सुमतयो-विमानिनस्ते महाधन्याः ॥ २ ॥

अर्थ– जे उत्तम बुद्धिवान माणसो महान् अने उत्तम पाषाणोथी जिनभवन बंधावे छे, तेउना पुण्यनी तो त्यारे वातज शुं करवी ? ते महा भाग्यवंत पुरुषो देवलोकमां जइ वसे छे.॥२॥

जिनभुवन बंधाववा माटे कयो माणस अधिकारी छे ? ते हवे कहेछे.

न्यायोपार्जितवित्तो, मतिमान् स्फीताशयः सदाचारः ॥
गुर्वादिमतो जिनभवन-कारकस्याधिकारी स्यात् ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणसे न्यायथी धन उपार्जन करेलुं छे, तेम जे बुद्धिवान् छे, मनोहर आशयोवालो छे, सदाचारि छे, तथा जे गुरु आदिकथी अनुमत थएलो छे, तेज माणस जिनमंदिर बंधाववाने अधिकारी छे. (तेपर हवे दृष्टांत कहेछे.)

राजगृही नामनी नगरीमां धनसार अने गुणसार नामना बे बांधवो हता. तेउमांथी मोटा धनसारनी स्त्री शिलादिक गुणोएं करीने शोभिती हती; पण नाना भाइ गुणसारनी काली नामनी स्त्री महा दुराचारी हती, अने तेणीना कहेवाथी ते नानो भाइ पोताना मोटा भाइथी जुदो थइ पृथक् घरमां रहेवा लाग्यो. दैवयोगे ते नाना भाइने त्यां लक्ष्मी वृद्धि पामी, अने मोटा भाइनी लक्ष्मी अल्प थइ गइ. एक दहाडो नगरमां केटलाक शालाटो धंधा अर्थे आवी चड्या, अने तेउए गुणसारना घरनां द्वारपासे तेनी स्त्री कालीने अमूल्य आभूषणोवाली जोइ पूछ्युं के, हे शेठाणी ! आ नगरमां कोइ भुवन बंधवनारो छे ? ते सांभली पोताना धनना मदथी तेणीए कह्युं के, मारो जेठ धनसार भुवन बंधाववानो छे, माटे तेने त्यां तमो जाउ ? पछी तेउ ज्यारे धनसारने घेर गया त्यारे तेनी स्त्रीए तेउने आववानुं का-

रण पूछीने बेसाड्या भोजन माटे धनसार शेठ ज्यारे घेर आव्या, त्यारे तेणीए ते शलाटोनी सर्व हकीकत कहीने कह्यु के, आ लोकोने मारी देराणीए मोकल्या छे ते सांभळी ते शेठे ते स्त्रीना आंभूषणो वेंचीने त्याना एक जीर्ण प्रासादनो जीर्णोद्धार ते शलाटो पासे कराव्यो पछी प्रतिष्ठाना खरच माटे द्रव्य उपार्जन करवा माटे ते धनसार शेठ परदेश चाल्या, त्या मार्गमा तेमने एक योगी मळ्यो ते योगीने शेठे पोतानु वृत्तात जणाववाथी ते योगी तेने एक पर्वतनी गुफामा तेडी गयो. ते गुफामा अंधारु होवाथी योगीए जेसना पुडडाओ सळगावीने तेमा अजवाळु कर्यु त्यार बाद ते गुफामा तेओने वींछी, भमरा तथा स्त्री आदिकना उपद्रवो थया, पण शीलव्रतधारी ते साहसिक शेठ तेथी रूर्यो नहीं योगी तो त्यां एक स्त्रीने जोइ लपटाइ गयो, तथा ते स्त्रीए त्याज तेने मारी नाख्यो शेठ तो ज्यारे गुफानी अंदर पहोंच्यो त्यारे तेणे त्या एक सुवर्णना हिंचोळापर एक महा तेजस्वी व्यतरेंद्रने जोयो ते व्यंतरेंद्रे पण शेठने जोइ तेने घणा आदरमानपूर्वक पोतानी पासे बेसाड्यो, अने कह्यु के, हे शेठ ! तमो मारा भाइ तुल्य छो, पूर्वजन्ममा हु राजगृही नगरीमा जिनदास नामे व्यापारी हतो, अने ते समये में जे जिनमदिर बधाव्यु हतुं, तेनो तमोए जीर्णोद्धार कराव्यो छे, माटे हु तमारापर तुष्टमान थयो छु, एम कही तेणे तेने अमूल्य रत्नोनी पोटली आपीने तेने स्थानके मेल्यो पछी त्या ते धनसार शेठे मोटा महोत्सवपूर्वक प्रतिष्ठामहोत्सव कर्यो, सघनु अत्यंत भक्तिथी स्वामिवात्सल्य कर्यु, अने एक रत्नजडित सुवर्णनी जीह्वा तेणे पोतानी भाभी कापीने आपी त्यारे सघादिक लोकोए ते जीह्वा आपवानु तेने कारण पूछवाथी तेणे जणाव्युं के, अमोने आ जीर्णोधार तथा प्रतिष्ठा आदिक माटे धनप्राप्तिनु कारण ते मारी भाभीनी जीहाज छे पछी ते धनसार शेठे छेक जीवित-

पर्यंत पोतानुं द्रव्य धर्ममार्गे वापरी सफल कर्युं. छेवटे स्त्रीसहित श्री धर्मघोष आचार्यजी पासे दीक्षा लेइ काल करी पेहेला देवलोकमां ते महा ऋद्धिवंत देव थया.

हवे पौषधशाला माटेनो उपदेश कहेछे.

पुण्याट्टं पौषधागारं, तत्रैत्य ग्राहको जनः ॥
व्रतादिपण्यं क्रीणाति, क्रमेणानंतलाभदम् ॥ १ ॥

अर्थ— पौषधशाला छे ते एक पुण्यनी दुकान छे, केमके, त्यां आवेलो ग्राहक व्रतादिरूप करीआणुं खरीद करे छे, के जे करीआणुं अनुक्रमे अनंत लाभ देनारुं थाय छे ॥ १ ॥

कलिबुद्धिः कुरुक्षेत्रे, यथा स्नेहवतामपि ॥
तथा स्याद्धर्मशालाया-मधमस्यापि धर्मधीः ॥ २ ॥

अर्थ— जेम स्नेहीउंने पण कुरुक्षेत्रमां क्लेशनी बुद्धि उत्पन्न थाय छे, तेम धर्मशालामां अधम प्राणीने पण धर्मबुद्धि थाय छे.

हवे तेपर दृष्टांत कहेछे.

पेथडदेनो देद नामनो पिता कोइक कार्यप्रसंगे देवगिरि नामनी नगरीमां गयो; त्यां रहेला आचार्यजीने नमवा माटे ते कोइक उपाश्रयमां गयो, अने त्यां आचार्यजीने वांद्यावाद, त्यां एक बाजुए बेठेला केटलाक श्रावकोने पण तेणे नमस्कार कर्यो, ते श्रावको त्यां एकठा थइने एक पौषधशाला बांधवानो विचार करता हता. तेउंना ते विचारने जाणीने देदा शेठे तेमनी पासे खोलो पाथरी कह्युं के, जो मारापर कृपा करीने तमो मने आज्ञा आपो तो हुं अहीं ते पौषधशाला बंधावुं, केमके, हुं तो एक संघनो दास छुं. ते सांभली ते श्रावकोमांना एक मुख्य श्रावके तेमने कह्युं के, आप कहो छो ते युक्तज छे, पण ते पौषधशाला सर्व संघनी बंधावेली जोइए, पण एक धणीनी बंधावेली न जोइए. केमके, जो एक आसामी ते बंधावे तो ते शय्यातर थाय,

अने तेथी मुनिओ तेना घरनु अन्नादिक ले नहीं, अने जो घणा लोको एकठा थइ बधावे तो मुनिओ हमेशा अकेकना घरनो त्याग करे एवी रीते युक्तिओथी तेने समजाव्या छता पण तेणे मान्युं नहीं. त्यारे वली एक बीजो श्रावक बोली उठ्यो के, अहीं जो कोइ पौषधशाला बंधावाने शक्तिमान् न होय तो तो आपनी हठ पण व्याजबी गणाय, पण अत्रे तेवा घणाओ छे, पण ते छता जो तमो ते पौषधशाला सुवर्णनी इंटोनी बधावो, तो तेम पण करीएं ते सांभली देदा शेठे संघने पगे पडी कह्यु के, हुं ते पौषधशाला सुवर्णनी इंटोथी बंधावीश पछी ते शेठने आचार्य महाराजे समजाव्या के, तेम करवाथी आ कलिकालमां बहु विघ्न थवानो संभव छे, केमके, ते कीमती जाणीने दुष्ट लोको लोभना मार्या तेनो विनाश करशे त्यारे शेठे कह्यु के, हु ते पौषधशाला इंटोनी बनावी तेनापर सुवर्णनु पतरु जमावीश तेम करवानो पण गुरु महाराजे ज्यारे निषेध कर्यो, त्यारे तेणे ते सुवर्ण जेटली किम्मतनुं केशर लेइ ते घुटावीने चुनामा नाख्युं, अने एवी रीते करीने पण ते पौषधशाला तेणे बंधावी अने ते पौषधशाला "कुंकुमोलशाला" नामथी जगतमा प्रसिद्ध थइ

यस्तनोति वरपौषधशाला,
सर्वसिद्धिललनावरमालाम् ॥
सर्वदैव लभते सुविशाला,
बोधिबीजकमलां विमला सः ॥ १ ॥

अर्थ- जे माणस सर्व प्रकारनी सिद्धिरूपी स्त्रीने वरवामा वरमाला सरखी एवी विशाल पौषधशाला बधावे छे, ते माणस हमेशा निर्मल एवी बोधिबीजरूपी लक्ष्मीने मेलवे छे ॥ १ ॥

तेम गोपगिरिपर श्री बप्पभट्टिजी महाराजना उपदेशथी आम राजाए एक मनोहर अने विशाल पौषधशाला बधावी

हती. ते पौषधशालामां एक हजार तो स्तंभो हता. तेमां साधु, साधवी, श्रावक अने श्राविकाउ सुखेथी आवी जइ शके, ते माटे तेनां त्रण विशाल द्वारो कर्यां हतां. वली तेमां दूर दूर वे-ठेला साधुउने पडिलेहण तथा स्वाध्यायादिक सात मांगलिक वेलाउनी चेतवणी आपवामाटे मध्यस्तंभमां मोटा नादवालो घंट बांधवामां आव्यो हतो. तेमां वली व्याख्याननो मंडप त्रणलाख सोनामोहोरो खरचीने बांध्यो हतो. अने तेमां एवां तो चंद्रकांतादिक तेजस्वी रत्नो जडाव्यां हतां के, जेथी रात्रिए पण त्यां बिलकुल अंधकार जणातो नहोतो, अने तेना तेजथी रात्रिए पण साधुउ त्रसकायादिकनी विराधना विना पुस्तको विगेरे वांची शकता हता.

पापनिष्कंधनं धर्म-सदनं कारयंति ये ॥
तारयंति भवाब्धेः स्वं, ते जनाः कुलतेजनाः ॥१॥

अर्थ– कुलनो उद्योत करनारा एवा जे माणसो पापोने नाश करनारी पौषधशाला बांधे छे, तेउ पोताना आत्माने आ भव-रूपी समुद्रथी तारे छे. ॥ १ ॥ तेपर दृष्टांत कहेछे.

सिद्धराज जयसिंहना वखतमां तेना राज्यनो पांच हजार घोडेस्वारोनो अधिपति शांतु नामे एक सेनापति हतो. ते श्री देवसूरिजी महाराजनो परमभक्त हतो. एक दहाडो तेणे चोर्यासी-हजार सोनामोहोरो खरचीने राजमेहेल सरखुं एक पोतानुं घर बंधाव्युं, अने ते घरने जोइ सर्व लोको तेनी तारिफ करवा लाग्या. एक दहाडो तेणे पोतानुं ते घर श्री देवसूरिजी महाराजने पण बताव्युं, पण गुरुमहाराजे तेनां वखाण कर्यां नहीं; त्यारे सेनापतिए पूछ्युं के, हे भगवन्! सर्व लोको तो आ सुंदर घरनां वखाण करे छे, पण आप केम करता नथी? ते सांभली देवसूरिजीना शिष्य श्री माणिक्यचंद्रसूरिजीए कह्युं के, हे सेनापति! तमोए जो आवी पौषधशाला बंधावी होते तो तो, गु-

रुमहाराज तेनी प्रशंसा करते, पण गृहस्थीना घरनी प्रशंसा साधु करे नहीं, केमके गृहस्थीना घरमा चुलो, खाडणी, सावरणी विगेरे हिंसक पदार्थोनो उपयोग थाय छे ते सांजली शांतु मंत्रिए ते घरनी पौषधशाळा बनावी, अने तेमा पुरुषना शरीर जेवडा बे दर्पणो बंधाव्या

कारयंति नरा धन्या, जावात्पौषधशालिकाम् ॥
संसारसागरं तीर्त्वा, ते लजंते परं पदम् ॥ १ ॥

अर्थ– जे धन्य माणसो जावथी पौषधशाळा बंधावे छे, ते आ संसाररूपी समुद्रने तरीने मोक्षे जाय छे

हवे ते पर दृष्टांत कहे छे

पाटणमा एक आजड नामे कोइक निर्धन श्रावक रहेतो हतो ते कसाराउने घेर घूघराउ घसीने तेथी हमेशा मळता पाच द्रम्मोथी ते पोतानी आजीविका चलावतो हतो एक दहाडो तेणे हेमचंद्राचार्यजीने कह्यु के, हे जगवन्! मने सातसो सोनामोहोरोना परिग्रहनु प्रत्याख्यान करावो ते सांजली हेमचंद्राचार्ये तेना हस्तनी रेखाउ जोइ पराणे त्रण लाख सोनामोहोरोनुं नियम कराव्यु. एक दहाडो तेने घेर पुत्र आववाथी तेने दूध पावा माटे एक बकरी वेचाती लेवा माटे ते ग्रामांतरे गयो त्या बकरीना टोळामा एक बकरीने गळे तेणे इंद्रनीलमणी बांधेलु जोयु ते बकरीनु तुच्छ मूल्य आपीने तेणे गोवाळ पासेथी वेचाती लीधी पछी ते मणि सिद्धराजने तेणे देखाड्याथी तेणे पोताना हारमा नाखवा माटे सवा लाख सोनामोहोरो आजडने आपी खरीद कर्यु एक दहाडो तेणे केटलीक मंजीठनी गुणीउ वेचाती लीधी, पण तेना जाग्यथी तेमाथी सुवर्ण नीकळी पड्यु, अने तेथी ते करोडपति थइ गयो पछी पोताना परिग्रहप्रमाणने याद लावीने तेणे चोर्यासी पौषधशालाउ बंधावी, तथा चोरीसे

तीर्थंकरोनां चोवीस जुदां जुदां जिनमंदिरो बंधाव्यां, अने एवी रीते तेणे साते क्षेत्रोमां नेवु लाख सोनामोहोरो खरची. वली स्तंभतीर्थमां कोइक भीम नामना श्रावके नगरनी अंदर जगो नहीं मलवाथी नगरनी बहार घणुं द्रव्य खरचीने चंदन अने हाथीदांतोथी एक पौषधशाला बंधावी. त्यारे कोइके तेने कह्युं के, आ नगरनी बहार पौषधशाला करी, ते तो फोकट द्रव्य खरच्युं, केमके, तेमां तो कदाच भिल्लो आवीने निवास करशे. ते सांभली भीमे कह्युं के, कोइक विहार करीने थाकेला मुनि खरेखर तेमां कायोत्सर्गादिक ध्यान धरशे, अने तेथी ते पौषधशाला सफल थशे. छेवटे नगरनी वसती वधवाथी ते पौषधशाला हाल नगरनी अंदरज आवी गइ छे. वली वस्तुपाले पण सातसो पौषधशालाउ बंधावी छे. एम विचारि बीजा भाग्यवान् पुरुषोए पण पौषधशाला बंधावी पुण्य संपादन करवुं.

हवे जिनबिंबोनो उपदेश कहेछे.

अंगुष्ठमानमपि यः प्रकरोति बिंबम्
वीरावसानवृषभादि जिनेश्वराणाम् ॥
स्वर्गे प्रधानविपुलर्धिसुखानि भुंक्त्वा
पश्चादनुत्तरगतिं समुपैति धीरः ॥ १ ॥

अर्थ–जे धीर माणस ऋषभदेव प्रभुथी मांडीने महावीर प्रभुपर्यंतना अंगुठा जेवडां पण बिंबो भरावे छे, ते स्वर्गमां उत्तम ऋद्धिनां सुखोने भोगवीने पाछलथी मोक्षे जाय छे.

भरतचक्रीए पोतानी वींटीमां श्री आदिनाथ प्रभुनी मणिमय प्रतिमा करावी हती; अने ते प्रतिमा आजे पण देवगिरि देशना कल्यपाक नगरमां माणिक्यस्वामिना नामथी प्रसिद्ध छे. वली तेज चक्रीए अष्टापद तीर्थपर सर्व जिनेश्वरोनी पोतपोताना शरीरना प्रमाणनी रत्नमय मूर्तिउ भरावेली छे. वली अखंडे

जरावेली श्रीनेमिनाथ प्रज्जुनी मूर्ति गिरनारपर विराजे ठे सम्प्रति राजाए सवाक्रोड नवा जिनबिंबो जराव्यां ठे जावडीशाहे पोताना पिताना पुण्य माटे ठंगणीश लाख सोनामोहोरो खरचीने शत्रुंजयपर श्री ऋषजदेव प्रज्जुनी तथा वे पुंरुरीकजीनी प्रतिमा करावी ठे ते प्रतिमार्जनी प्रतिष्ठा विक्रमनी १०७ नी सालमा श्रीवज्रस्वामीजीए करावेली ठे कह्युं ठे के,

अष्टोत्तरे च किल वर्षशते व्यतीते
श्रीविक्रमादथ वहुड्विणव्ययेन ॥
यत्र न्यवीविशत जावडिरादिदेवं
श्रीपुंरुरीकयुगलं जवजीतिजेदि ॥ १ ॥

एम विचारि जव्य पुरुषोए जिनबिंबो करावनां

जो जव्या जवजीमसागरगतैर्मानुष्यदेहादिका
सामग्री न सुखेन लभ्यत इति प्रायः प्रतीत सताम् ॥
तद्युष्माजिरिमा पुरातनशुजैरापाद्य सद्योऽनर्घा
सर्वज्ञप्रतिमादिके प्रतिदिनं धर्मे कुरुध्व मनः ॥ १ ॥

अर्थ– हे जव्य लोको! आ जवरूपी जयकर समुद्रमा पडीने मनुष्यदेहादिकरूप सामग्री सुखेथी प्राप्त थती नथी, एम सर्व बुद्धिवानोने खातरी ठे माटे हमेशा जिनप्रतिमादिक धर्मकार्यमा मनने जोडवु

हवे ते पर वस्तुपालमंत्रीनु दृष्टांत आपे ठे

एक वखते दिल्हिना वादशाहनी माता मक्के हज करवा माटे जता सारु ज्यारे खंजातबंदरमा आवी त्यारे वस्तुपाल मंत्रीए प्रथम तेणीने माणसो मारफते लुंटावी, अने पठी तेनो सर्व असबाब तेणीने पोते स्वाधिन कर्यो, अने ठेक मक्कासुधि ते तेणीनी साथे गयो वली त्या मक्कामा पण तेणीना मान खातर तेणे त्रण लाख सोनामोहोरो खरचीने तोरण बांध्यु अने पाठी तेणीने

सुखे समाधे दील्ही पहोंचाडी. ते वखते सन्मुख आवेला बादशाहे तेणीने पुछयुं के, तारी हज तो सुखे समाधे थइनी? ते सांजली तेनी माताए कह्युं के, मारा धर्मपुत्र वस्तुपालनी कृपाथी मारी हज सुखे समाधे थइ छे. ते सांजली हर्षित थएला बादशाहे तुरत वस्तुपालने दील्ही बोलाव्यो. ते ज्यारे दिल्ही आव्यो त्यारे बादशाहे तेनी सन्मुख जइ घणा आदरमानथी तेनुं सामैयुं कर्युं. पछी बादशाहे तेने ज्यारे पोतानुं अर्ध राज्य आपवा मांड्युं त्यारे वस्तुपाले कह्युं के, मारे राज्यनो खप नथी, फक्त नागपुर पासे आवेली मम्माणीनी खाणमांथी त्रण जिनप्रतिमा थाय तेवा पत्थरो जोइए छीए. ते सांजली तुष्टमान थएला बादशाहे ते आखी खाण तेने स्वाधिन करी. पछी वस्तुपाले ते खाणमांथी मम्माणीना उत्तम पत्थरो कढावीने तेमांथी एक रुषजदेवप्रजुनी एक पुंडरीकजीनी, अने एक पार्श्वनाथजीनी एम त्रण जव्य प्रतिमाओ करावी. अने अनुक्रमे शत्रुंजय पर्वतपर तथा तेजलपुरमां सुंदर जिनप्रासादो करावी तेमां स्थापी. वली ते मंत्रिए रत्नोनी, सुवर्णनी, रूपानी, पित्तलनी, आरसपाणनी, तथा मम्माणीनी सर्व मली सवा लाख जिनप्रतिमाओ करावी छे, अने ते सर्व प्रतिमाओने तेणे पोते करावेला पांच हजार जिनालयोमां स्थापन करी छे.

जे माणसो पोते करावेली जिनप्रतिमाने पोताने हाथे पूजे छे, तथा ते प्रतिमाओने जिनालयोमां स्थापी बीजाओने हाथे पूजावे छे, तेओनुं पुण्य व्याजु मुकेला ऊव्यनी पेठे वृद्धि पामे छे. वली जिनपूजा करनारने हीनजातिपणुं प्राप्त थतुं नथी.

जेम अजयकुमारे आर्द्र नामना म्लेछना पुत्र आर्द्रकुमारने जिनप्रतिमानी जेट मोकली हती, अने ते प्रतिमा जोइने ते आर्द्रकुमारने जातिस्मरण ज्ञान थवाथी तेणे दीक्षा लीधी हती, तथा छेवटे ते मोक्षे गया हता. कह्युं छे के,

निर्मायार्हतबिंबमार्हतपदस्थानाग्रिमं धार्मिकः
स्वात्मानं च पर च निर्मलयति स्तुत्यर्चनावंदनैः ॥
मंत्रीश्रेणिकसूरिवाङ्कसुत मोहांधकारस्थितं
दीपः पुष्यति कस्य चापि न मुदं श्रेयःश्रियामास्पदम् ॥

वली स्वयंभूरमण समुद्रमा मत्स्यरूपे रहेला भव्य जीवो त्या जिनप्रतिमाना आकारवाला मत्स्योने जोइने जातिस्मरण ज्ञान पामी अनशन करी स्वर्गे जाय छे, वली शय्यंभवसूरिजी पण जिनप्रतिमाना दर्शनथी प्रतिबोध पामेला छे कह्यु छे के,

सिज्जंभवं गणहरं, जिणपडिमादंसणेण पडिबुद्धं ॥
मणगपिअरंदसकालिअगस्स निज्जूहगं वंदे ॥ १ ॥

श्री शय्यंभवाचार्यजीनी कथा लोकप्रसिद्ध छे

पित्तलसुवन्नरुप्पय- रयणेहिं चंदकंतमाईहिं ॥
जो कारवेइ जिणवर-पडिमं सो पावए मुक्खं ॥ १ ॥

अर्थ— पित्तलनी, सोनानी, रूपानी, तथा चंद्रकांतादिक रत्नोनी जिनप्रतिमाओ जे कोइ करावे छे, ते खरेखर मोक्ष पामे छे.

जेम भीमश्रावके आबु पर्वतपर जिनमंदिर बधावीने तेमा मूल नायकनी ५१ अंगुलनी प्रतिमा स्थापवा माटे घणीवार गाली गालीने उत्तम पित्तलनो रस कराववा माड्यो एटलामा पालणपुरना रहेवासी धनाशाए आवी तेने विनंति करी के, हे भीम! आ प्रतिमा बनाववामा तु मारो भाग ले? पण भीमे ना पाडवाथी ते रस ढालती वखते धनाशा पोताना कजानी बाहोमा गुसरीने केटलुक सुवर्ण लाव्यो, अने हाथ पहोला करवाना मिषथी ते सुवर्ण ते पित्तलना रसमा नाखी दीधु, अने तेथी आजे पण ते प्रतिमा अत्यंत झगझगायमान देखाय छे, ते पर श्यामता आवती नथी अने हालमा ते प्रतिमा गुजमेरपर

पूजाय छे. वली वनवासमां रहेला लक्ष्मणजीए सीताने पूजवा माटे एक गाणनी पार्श्वनाथजीनी प्रतिमा बनावी आपी हती, पण सीताना शीलना माहात्म्यथी ते प्रतिमा वज्रमय थइ गइ. अने आजे पण मंडपदुर्गमां ते प्रतिमा पूजाय छे, ते प्रतिमानो महिमा एवो छे के, तेथी सर्व उपद्रवोनो नाश थाय छे.

सन्मृत्तिकामलशिलातलदारुरूप्य-
सौवर्णरत्नमणिचंदनचारुबिंबम् ॥
कुर्वंति जैनमिह ये स्वधनानुरूपं
तेऽप्यामरीं च शिवसंपदमाप्नुवंति ॥ १ ॥

अर्थ– जे लोको अहीं पोतानी शक्तिमुजब उत्तम माटीनी, उत्तम पत्थरनी, काष्ठनी, रूपानी, सोनानी, मणिरत्ननी, तथा चंदननी जिनप्रतिमा बनावे छे, तेओ पण देवलोकनी तथा मोक्षनी संपदा मेलवे छे.

संवत १३७१ मां ज्यारे समराशाहे शत्रुंजयनो उद्धार कर्यो, त्यारे तेणे भाट आदिकोने चौदसो सोनानी वींटीओ आपी. ते समये मल्लभट्ट नामना भाटने शेठे भूलथी लाखनी वींटी आपी. पछी ज्यारे तेओ सर्वने भोजनमाटे बेसाड्या, त्यारे ते मल्लभट्टे पोतानी वींटी आंगलीमांथी कहाडीने नीचे मेली. ते जोइ शेठे तेनुं कारण पूछवाथी तेणे कह्युं के, आ वखते आ उष्ण भोजनथी तमारी आपेली लाखनी वींटी ओगली जाय माटे में नीचे मूकी छे, अने तेम जो न करुं तो पछी मारा देशमां जइ हुं लोकोने तमारी तरफथी भेट मलेली वस्तु शीरीते बतावी शकुं? ते सांभली शेठे ते वींटी हाथमां लेइ तपासी जोइ, अने ते लाखनी मालुम पडवाथी तेनी माफ मागीने शेठे तेने दशे आंगलीओमां रत्नजडित सुवर्णनी वींटीओ पहेरावी. ते वखते सकल संघनी समक्ष ते मल्लभाट बोली उठ्यो के,

अधिकं रेखया मन्ये, समरं सगरादपि ॥
कलौ म्लेच्छबलाकीर्णे, येन तीर्थं समुद्धृतम् ॥ १ ॥

ते सांभळी तुष्टमान थएला समराशाह शेठे तेने जीवितपर्यंत वरशासन करी आप्युं

कारापय्य प्रतिमा जैनीं, पूजयतीह चानिशं ॥
ये जनास्ते द्रुतं पूज्या, भवंति महतामपि ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणसो जैन प्रतिमा करावीने आ जगतमां हमेशां पूजे छे, तेओ तुरत महान पुरुषोने पण पूजनीक थाय छे ते पर दृष्टांत कहेछे

जिनदासनी पुत्री हासीना गांधार नगरना रहेवासी केशवना पुत्र मुकुंद साथे लग्न कर्यां हतां लग्न कर्याबाद जान तेणीने लेइने गांधारनगर प्रते चाली, अने सेढी नदीने किनारे सर्व लोको भोजन माटे बेठा त्यारे हासीए कह्युं के, हुं जिनपूजा कर्याविना भोजन करती नथी ते सांभळी तेणीना देवरोए महकरीथी वाए अने वेलु एकठी करीने तेणीना माटे एक जिनप्रतिमा बनावी, तथा ते प्रतिमापर पत्रो अने पुष्पो चडावीने हासीने तेनु पूजन करवाने कह्युं तेणीए पण नमस्कारपूर्वक ते प्रतिमानुं भावथी पूजन कर्युं, अने त्यारबाद तेणीए भोजन कर्युं तेज वखते तेणीना शीलमाहात्म्यथी ते प्रतिमा वज्रमय अने देवताथी अधिष्ठित थइ पडी त्यारे त्याथी जान चालवा लागी त्यारे ते अधिष्ठायक देवे सर्व गाडाओने थंभी राख्यां त्यारे ते लोकोए त्यां एक जिनमंदिर बंधावीने तेमां ते प्रतिमाने स्थापी, अने ते प्रभाव जोइने सर्व लोको जैनधर्मी थया, तथा पछी सुखे समाधे गांधार नगरे तेउं पहोंच्या हवे ते प्रतिमाने हमेशां त्यां

एक वृद्ध स्त्री पूजवा लागी, तथा तेनी पासे द्रव्यनी याचना करवा लागी. एक दहाडो तेणीनी भक्तिथी तुष्टमान थएला अधिष्ठायक देवे तेणीने स्वप्नमां कह्युं के, तारे हमेशां हवेथी प्रभातमां आवी प्रतिमाना हाथमां रहेली एकेक सोनामोहोर लेवी. पछी तेम करतां ते वृद्ध स्त्री पासे घणुं द्रव्य थयुं. एक दहाडो तेणीनी पडोशणे तेणीने पूछयुं के, तारी पासे आटलुं बधुं द्रव्य क्यांथी आव्युं? ते सांभली ते डोशीए मुग्धपणाथी यथार्थ वात कही संभलावी. ते सांभलीने बीजे दिवसे ते पडोशण प्रभातमां वहेली त्यां जइने प्रतिमाना हाथमांथी सोनामोहोर लेवा लागी, तो ते सोनामोहोर तुरत ते प्रतिमाजीना हाथमांज चहोंटी गइ, अने त्यारथी रूष्टमान थएला अधिष्ठायके पेली डोशीने पण सोनामोहोर आपती बंध करी. हजुसुधि पण ते सोनामोहोर ते प्रतिमाजीना हाथमां चोंटेली मालुम पडे छे, वली त्यां जलथी दीवाउ बले छे, अने पखालनुं पाणी क्यां जाय छे? ते मालुम पडतुं नथी. एम विचारी बीजा भव्य माणसोए पण जिनप्रतिमा भरावची.

हवे जैन पुस्तको लखाववा माटेनो उपदेश कहेछे.

ये लेखयंति जिनशासनपुस्तकानि
व्याख्यानयंति च पठंति च पाठयंति ॥
शृण्वंति रक्षणविधौ च समाद्रियंते
ते देवमर्त्यशिवशर्म नरा लभंते ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणसो जिनशासननां पुस्तको लखावे छे, तेनी व्याख्या करे छे, भणे छे, भणावे छे, सांभले छे, तथा ते पुस्तकोनुं जेउ रक्षण करे छे, तेउ देवतानां, मनुष्यनां अने मोक्षनां सुखो मेलवे छे.

लेखयित्वा सदा शास्त्रं, श्रोतव्यं च विचक्षणैः॥
निरंतरसुखप्राप्त्यै, प्रारब्धादासमाप्तिकम् ॥ १ ॥

अर्थ– हमेशां विचक्षण माणसोए शास्त्र लखावीने निरंतर सुखनी प्राप्ति माटे आरंभथी ते अंत सुधि सांभळवुं

सद्ज्ञानांबुप्रपा धर्म- सत्रं पुस्तकवाचना ॥
येन कार्यंत तेनाप्त-मैहिकामुष्मिकं सुखम् ॥ १ ॥

अर्थ– उत्तम ज्ञानरूपी पाणीना परब सरखुं, तथा धर्मनी दानशाळा सरखुं, एवुं पुस्तकोनुं वाचवुं जे करे छे, तेणे आ लोक अने परलोकसंबंधी सुख मेळव्युं छे

एषा शुभ्रा पुस्तकदानशाला,
नानाविधार्थावलिभोज्यमाला ॥
पूर्वर्षिनामामृतपूरपूर्णा,
सदा सतां स्यात्सुखसेवनीया ॥ १ ॥

अर्थ– विविध प्रकारना अर्थोनी श्रेणिरूपी जोजनोवाळी, तथा पूर्वाचार्योना नामोरूपी अमृतना समूहथी जरेली एवी आ पुस्तकरूपी दानशाळाने सज्जनोए हमेशां सुखेथी सेववी

धर्मे यत्नः शुभ्रा बुद्धिः, सारासारत्वनिर्णयः ॥
हेयोपादेयविज्ञानं, संवेगोपशमौ श्रुते ॥ १ ॥

अर्थ– सिद्धांतो जाण्याथी धर्ममां प्रयत्न थाय छे, उत्तम बुद्धि थाय छे, सारासारपणानो निश्चय थाय छे, हेयोपादेयनुं ज्ञान थाय छे, तथा वळी तेथी वैराग्य अने शांतता थायछे श्रीधर्मघोष सूरिजीना उपदेशथी पेथडशाहे तेमना मुखथी अ-ग्यारे अंगो सांभळ्यां मांड्यां, तेमां पांचमा अंग मध्ये ज्यां ज्यां "गोअमाए" एवी रीतनो शब्द आवतो गयो, त्यां त्यां ते ना-

मथी आनंद पामीने दरेक नामे तेणे एकेक सोनामोहोर मुकी, अने एवी रीते तेणे छत्रीस हजार सोनामोहोरोथी ते आगमनी पूजा करी, अने ते द्रव्यथी तेणे सर्व शास्त्रो लखावीने नृगुकच्छादिक दरेक शेहेरोना जंडारमां राख्यां. वली तेवीज रीते श्रीकुमारपाल राजाए सातसो लैयाउं राखीने छ लाख अने छत्रीस हजार आगमो लखाव्यां छे. वली तेमणे दरेक आगमनी छ छ प्रतिउं तो सोनाना अक्षरोथी लखावी छे. हेमचंद्राचार्ये रचेलां व्याकरण तथा चरित्रादिक ग्रंथोनी तेमणे एकवीस एकवीस प्रतिउं लखावी छे. वधारे शुं कहेवुं? सर्व दानोमां ज्ञानदान अति श्रेष्ठ छे एम ज्ञानीउंए कहेलुं छे. कह्युं छे के,

ज्ञानाजयोपग्रहदानजेदा-त्तच्च त्रिधा सर्वविदो वदंति॥
तत्रापि निर्वाणपथप्रदीप-ज्ञानस्य दानं प्रवरं वदंति १

हवे ते ज्ञानदान आ पुस्तकविना थइ शकतुं नथी, अने तेथी हमेशां जाविक श्रावकोए पुस्तक लखाववां ते युक्तज छे.

लेखयंति नरा धन्या, ये जैनागमपुस्तकान्॥
ते सर्ववाङ्मयं ज्ञात्वा, सिद्धिं यांति न संशयः १

अर्थ—जे धन्य पुरुषो जैनागमनां पुस्तको लखावे छे, तेउं केवलज्ञान पामीने मोक्षे जाय छे, तेमां संशय नथी.

वली जिनागम लखावनारने आ संसारमां पण कंइ कष्ट थतुं नथी. कह्युं छे के,

न ते नरा दुर्गतिमाप्नुवंति, न मूकतां नैव जडस्वजावम्
नैवांधतां बुद्धिविहीनतां च, ये लेखयंत्यागमपुस्तकानि १

अर्थ— जे लोको आगमोनां पुस्तको लखावे छे, तेउं दुर्गतिमां जता नथी, तेउंने मुंगापणुं, मूर्खता, अंधपणुं, तथा निर्बुद्धिपणुं पण थतुं नथी. ॥ १ ॥

पुस्तको लखाववा ए सर्व प्रकारनु पुण्य करवारूप छे, केमके ते पुस्तको धर्मनी दानशालाओ सरखा छे जेम पर्युषण पर्वमा श्री कल्पसूत्र वाचवा साभलवाथी श्रावको दान, पूजा, शील, तप विगेरेमा उद्यम करे छे, अने तेथी घणु पुण्य मेलवे छे वली पुस्तकविना पंडितपणु पण प्राप्त थतु नथी जेम श्रीवस्तुपाल मत्रिए सात क्रोड सोनामोहोरो खरचीने सुवर्णनी शाहीथी तथा मषीनी शाहीथी, ताडपत्रो अने उत्तम कागलोपर पुस्तको लखावीने सात सरस्वती भडारो स्थाप्या हता, अने तेथी श्रीउदयप्रभसूरिजीए तेमने नीचेप्रमाणे आशिर्वाद आप्यो हतो

जंबूद्वीपो जलधिपरिखाभूषितो यावदास्ते
ज्योतिष्चक्रं सुरगिरितटीं पर्यटत्येव यावत् ॥
यावत्कूर्मो वहति वसुधां त्वद्यशःपुजसार्धं
जीयाज्जैनं मुखमिव परं पुस्तक वस्तुपाल ॥१॥

अर्थ– हे वस्तुपाल ! ज्यासुधी समुद्ररूपी खाडथी भूषित थएलो आ जंबूद्वीप हयात छे, तथा आ ज्योतिष्चक्र ज्यांसुधी मेरुपर्वतना तटने भ्रमण करे छे, अने ज्यासुधी काचबाए आ पृथ्वीने धारी राखी छे, त्यासुधी आ श्री जिनेश्वर प्रभुना उत्तम मुख सरखु पुस्तक तमारा यशनी साथे जयवतु वरतो ?

एम विचारि वीजाओए पण पुस्तको लखावबा तथा ते पुस्तकोना रक्षणमाटे उदरादिक जीवोना तथा जल अग्नि विगेरेना उपद्रवविनाना स्थानको बधाववा एम जाणी पुस्तको लखाववानो आदर करवो कह्यु छे के,

तैरात्मा सुपवित्रितः स्वजनन तैर्निर्मलं निर्मित
तैः संसारमहाधकूपपततां हस्तावलंबो ददे

दत्तं तैरिह सर्वसौख्यजननं सद्ज्ञानदानं नृणा
श्रीसर्वज्ञचरित्रपुस्तकमहो ये लेखयंत्यादरात्॥१॥

अर्थ– जे माणसो आदरपूर्वक श्री सर्वज्ञ प्रभुउंना चरित्ररूप पुस्तकने लखावे छे, तेउंए पोतानो आत्मा पवित्र करेलो छे, तेउंए पोतानो जन्म निर्मल करेलो छे, तेउंए संसाररूपी मोटा अंधारा कुवामां पमता प्राणीउंने हाथथी टेको आपेलो छे, अने तेउंए आ जगतमां सर्व सुख उत्पन्न करनारुं उत्तम ज्ञाननुं दान लोकोने आपेलुं छे.

ये तीर्थनाथागमपुस्तकानि,
न्यायार्जितार्थैरिह लेखयंति
ते तत्वतो मुक्तिपुरीनिवास-
स्वीकारपत्रं किल लेखयंति ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणसो आ जगतमां पोतानां न्यायोपार्जित द्रव्यथी जिनेश्वर प्रभुना आगमोनां पुस्तको लखावे छे, तेउं तत्वथी (जोइयें) तो खरेखर मुक्ति पुरीना निवासनां स्वीकारपत्रो लखावे छे.

वली ज्ञान जाणनार माणस हिंसादिकनो पण त्याग करे छे, अने तेथी तेने सुगति मले छे. कह्युं छे के–

न शुकः क्वापि मांसाशी, उच्चरे रामपाठतः
यस्याभ्यासः श्रुतांशेपि, तस्य हिंसामति कुतः १

अर्थ– चौटावच्चे रामनो पाठ करनारो होवाथी पोपट कोइ पण जगोए मांसभक्षी होतो नथी, केमके, ज्ञानना अंशनो पण जेने अभ्यास होय छे, तेने हिंसाबुद्धि क्यांथी होय?

अहीं ज्ञानथी केवा केवा फायदा थाय छे? तेपर चिलाती

पुत्र, रौहिणेयक, कुवरकुमार, हरिज्ञद्रसूरिजी, सिद्धसेनदिवाकरादिकना दृष्टांतो जाणी लेवा

यदि गाथापद चैकं,गुणाय महते ज्ञवेत्॥
धन्यास्त एव ये ज्ञानं, सम्यगाराधयंत्यहो ॥ १॥

अर्थ— ज्यारे गाथानु एक पद पण मोटा गुणमाटे थाय ठे, त्यारे तेर्जनेज धन्य मानवा के, जे सम्यक् प्रकारे ज्ञानने आराधेठे

यानपात्रसमं ज्ञानं, ब्रुडतां ज्ञववारिधौ ॥
मोहांधकारसंहारे, ज्ञानं मार्तंडमंडलम् ॥ २ ॥

अर्थ— आ ज्ञवरूपी समुद्रमा बुरुता प्राणीने ज्ञान ठे ते वहाणसरखु ठे, तेम मोहरूपी अंधकारनो नाश करवामा ते सूर्यना मंडलसरखु ठे

तृतीयं लोचनं ज्ञानं, द्वितीयो हि दिवाकरः॥
अचौर्यहरणं वित्तं, विनास्वर्णविज्ञूषणम् ॥ ३ ॥

अर्थ— ज्ञान ठे ते त्रीजा लोचनसरखु, वीजा सूर्यसरखु, तथा चोरोथी पण न हराय एवा द्रव्यसरखु, अने सुवर्णविना आज्रूषणसरखु ठे

लेखनीयमतो जैनं, शास्त्रं वाच्य सुबुद्धिज्ञिः॥
श्रोतव्यमुत्तमैर्ज्ञानं, तृतीय नेत्रमिछुज्ञिः ॥ ४ ॥

अर्थ— माटे ज्ञानरूपी त्रीजा नेत्रनी इछावाला उत्तम बुद्धिवानु माणसोए जैनशास्त्रो लखाववा, वाचवा अने सांजलवा ४

हवे नियमग्रहणनो उपदेश करे ठे

नियम ग्रहण करवाथी आ लोक अने परलोकमा पण लाज थाय ठे जेम धम्मपूज श्रावकने अजाण्या फलआदिकना नि-

यमो पोतानां आतमानी रक्षा माटे थएलां छे. वळी विमलना पुत्र कमले जो के उत्कंठ नियमो लीधां हतां, तो पण तेने ते नियमो महालाभकारक निवडेलां छे.

हवे नमस्कारस्मरणनो उपदेश कहे छे.

विमुच्य निद्रां चरमे त्रियामा
यामार्धभागे शुचिमानसेन ॥
दुष्कर्मरक्षोदमनैकदक्षो,
ध्येयस्त्रिधा श्रीपरमेष्ठिमंत्रः ॥ १ ॥

अर्थ– रात्रिना छेल्ला अर्ध पहोरे निद्रा छोडीने शुद्ध चित्तथी दुष्कर्मरूपी राक्षसने दळवामां समर्थ एवा पंच परमेष्ठी मंत्रने मन, वचन अने कायाथी ध्याववो.

किं मंत्रयंत्रौषधिमूलिकाभिः
किं गारुडस्वर्गमणींद्रजालैः ॥
स्फुरंति चित्ते यदि मंत्रराज-
पदानि कल्याणपदप्रदानि ॥ २ ॥

अर्थ– जो मनमां कल्याणपद आपनारां मंत्राधिराजनां पदो स्फुरायमान थइ रहेलां छे, तो मंत्र, यंत्र, औषधिओ, जमीबुटी गारुडीविद्या, चिंतामणि तथा इंद्रजालोनो पण शुं खप छे?

श्रीमन्नमस्कारपदानि सर्व-सिद्धांतसाराणि नवापि नूनं
आद्यानि पंचातिमहांति तेषु,मुख्यं महाध्येयमिहामनंति

अर्थ– नवे नमस्कारनां पदो खरेखर सर्व सिद्धांतोनां साररूप छे; तेओमां पण पहेलां पांच पदो महान् छे, केमके, तेओनुं ध्यान अहीं मुख्य कहेलुं छे. ॥ ३ ॥

पंचादौ यत्पदानि त्रिभुवनपतिभिर्व्याहृता पंचतीर्थी
तीर्थाण्येवाष्टषष्टिर्जिनसमयरहस्यानि यस्याक्षराणि
यस्याष्टौ संपदश्चानुपमतममहासिद्धयोऽदैतशक्ति-
र्जीयाल्लोकद्वयस्याभिलषितफलदःश्रीनमस्कारमंत्रः ४

अर्थ– जे नमस्कारना पहेलां पांच पदोने तो श्री जिनेश्वर प्रभुर्जए पंचतीर्थीरूप कह्या छे, अने जेना अडसठ अक्षरोने जिनसिद्धांतना रहस्यरूप कहेला छे, अने तेनी आठ संपदार्जने तो अपूर्व शक्तिवाली अनुपम महासिद्धिरूप कहेली छे, एवी रीतनो बन्ने लोकोमा इच्छित फलोने देनारो श्री नवकार मंत्र जय पामो

पंचतायाः क्षणे पंच-रत्नानि परमेष्टिनाम् ॥
आस्ये दधाति यस्तस्य, सद्गतिः स्याद्भवांतरे ॥१॥

अर्थ– जे माणस मृत्यु समये परमेष्ठी नमस्कार रूप पाच रत्नोने पोताना मुखमां धारण करे छे, तेनी भवांतरमा सद्गति थायछे

याताः प्रयाति यास्यंति, पारं ससारवारिधेः ॥
परमेष्ठिनमस्कारं, स्मारं स्मारं घना जनाः ॥ १ ॥

अर्थ– परमेष्ठि नमस्कारनुं स्मरण करीने घणा माणसो आ ससाररूपी समुद्रना पारने पहोंच्या छे, पहोंचे छे, तथा पहोंचशे.

सिंहेनेव मदांधगंधकरिणो मित्रांशुनेव क्षिपा-
ध्वांतौघो विधुनेव तापततयः कल्पद्रुणेवाधयः ॥
तार्क्ष्येणेव फणाभृतो घनकदंबेनेव दावाग्नयः
सत्वानां परमेष्ठिमंत्रमहसा वल्गंति नोपद्रवाः ॥१॥

अर्थ– सिंहथी जेम मदोन्मत्त गंधहस्तीर्ज, सूर्यना किरणथी जेम रात्रिसंबंधी अधकारनो समूह, चंद्रथी जेम तापनी श्रेणिर्ज, कल्पवृक्षथी जेम आधिर्ज, गरुडथी जेम सर्पो अने वरसादना

समूहथी जेम दावानलो तेम परमेष्ठिमंत्रना तेजथी प्राणीउंने उपद्रवो वृद्धि पामता नथी.

संग्रामसागरकरींद्रभुजंगसिंह-
दुर्व्याधिवह्निरिपुबंधनसंभवानि ॥
चौरग्रहभ्रमनिशाचरशाकिनीनां
नश्यंति पंचपरमेष्ठिपदैर्भयानि ॥ १ ॥

अर्थ– पंच परमेष्ठिना पदोथी, सांग्राम, समुद्र, हाथी, सर्प, सिंह, दुर्व्याधि, अग्नि, शत्रु, बंधन, चोर, ग्रह, भ्रम, राक्षस, केशाकनीना भयो नाश पामे छे.

ध्यातोऽपि पापशमनः परमेष्ठीमंत्रः
किं स्यात्तपःप्रबलितो विधिनार्चितश्च ॥
दुग्धं स्वयं हि मधुरं कथितं तु युक्त्या
संमिश्रितं च सितया वसुधासुधेव ॥ १ ॥

अर्थ– परमेष्ठीमंत्र छे ते ध्यान धरवाथी पण पापोने उपशमावनारो छे; त्यारे तेने जो तपथी बलवान कर्यो होय, अने विधिपूर्वक ते मंत्रने जो पूज्यो होय, तो तो पछी तेना माहात्म्यनी वातज शुं करवी? केमके, दुधने स्वभावथीज मधुरुं तो कहुं छे अने तेमां जो साकर मिश्रित करवामां आवे, तो तो ते आ जगतमां अमृतसरखुंज छे.

मंताणमंतो परमोइमुत्ति, धेयाणधेयं परमंइमुत्ति ॥
तत्ताणतत्तं परमं पवित्तं, संसारिसत्ताणदुहाहयाणं १

अर्थ– आ नवकार मंत्र, सर्व मंत्रोमां परममंत्ररूप, सर्व ध्यानोमां परमध्यानरूप, सर्व तत्वोमां परमतत्वरूप, तथा संसारथी तारनारो, अने दुःखोने हरनारो छे.

ताणं अन्नं तु नो अत्थि, जीवाणं जवसायरे ॥
बुडुंताणं इमं मुत्तं, नवकारं सुपोयण ॥ १ ॥

अर्थ– आ जवरूपी समुद्रमा बुडता जीवोने आ उत्तम नवकारमंत्रशिवाय वीजुं पण कोइ पण शरणुं नथी

अणेगजम्मंतरसंचिआणं,
डुहाणसारीरियमाणसाणं ॥
कुत्तो अन्नघाणहविज्ज नासो,
न जाव पत्तो नवकारमंतो ॥ १ ॥

अर्थ– ज्यांसुधी नवकार मंत्र प्राप्त थयो नथी, त्यासुधी अनेक जवोमा संचय थएला एवा शरीर अने मन संबंधी डुःखोनो नाश क्याथी थाय?

हरइ डुहं कुणइ सुहं, जणइ जसं सोसए जवसमुद्दं
इहलोए परलोए, सुहाणमूलं च नवकारो ॥ १ ॥

अर्थ– नवकार मत्र ठे ते डुःखने हरे ठे, सुख करे ठे, जश उत्पन्न करे ठे, जवरूपी समुद्रने शोषे ठे, तेम आ लोक अने परलोकमा पण सुखोनुं मूल नवकारमत्रज ठे

आसता मनुजा दूरे, तिरश्चामपिनिश्चितम् ॥
मंत्रोऽसौ सद्गतिं दत्ते, मातकाले स्मृतोऽपिहि ॥१॥

अर्थ– मनुष्यो तो एक बाजु रहो, पण तिर्यंचोने पण आ नवकारमंत्र, मृत्यु समये स्मरण करवाथी खरेखर सद्गति आपे.

जिणसासणस्स सारो, चउदस्स पुव्वाण जो समुद्धारो॥
जस्स मणे नवकारो, ससारो तस्स किं कुणइ ॥ १ ॥

अर्थ– जिनशासनना एक साररूप, तथा चौदे पूर्वना उद्धा-

रूप एवो आ नवकार मंत्र जेना मनमां वसी रह्लो छे, तेने आ संसार शुं करवानो हतो?

एसो मंगलनिलउ, भवविलउ सयलसंतिजणउअ ॥
नवकारपरममंतो, चिंतिअमित्तो सुहं देइ ॥ २ ॥

अर्थ— आ नवकारमंत्र परम मंगलरूप, भवोनो नाश करनारो, सर्व शांतिने उत्पन्न करनारो, अने चिंतित सुख देनारो छे.

आ नवकारमंत्रना माहात्म्यवाला राजसिंह, रत्नवती आदिकनां दृष्टांतो पमावश्यकमां प्रसिद्ध छे. तेम आ कालमां पण ते नवकारनो महिमा दृष्टिए पडे छे. तेपर कथा कहे छे.

धाव नामना गाममां भीमाक नामे एक शेठ वसतो हतो. एक दहाडो तेने कोइ मंत्रवादी योगी मल्यो. तेने ते शेठे खीरनुं भोजन कराव्युं, तेथी ते मंत्रवादी योगीए तेने कह्युं के, हे श्रेष्ठि! तारे जो कंइ कार्य होय तो मने कहे, के जेथी मारी मंत्रशक्तिथी हुं तारो मनोरथ संपूर्ण करुं. ते सांभली शेठे कह्युं के, हे योगींद्र! मने अष्टापदपर्वतपर जवानो मनोरथ छे. ते सांभली योगीए एक पाटलो चंदनादिकथी पूज्यो, अने पोताना अमोघ मंत्रथी तेने मंतर्यो. पछी शेठ तेपर जेवो बेठो के, तुरत ते पाटलो आकाशमार्गे उडवा लाग्यो, अने मध्यान्हकाले अष्टापदप्रते पहोंच्यो. ते वखते त्यां सूर्यना अत्यंत उष्णकीरणोथी ते शेठने बहु ताप लागवा मांड्यो, पण ते पाटलो त्यांथी पाछो हठ्यो नहीं. ते जोइ शेठे मृत्युनो भय विचारि नमस्कारमंत्रनुं स्मरण कर्युं, अने ते मंत्रना प्रभावथी ते पाटलो पाछो आकाशवाटे उडीने ते योगी पासे शेठसहित आव्यो. ते जोइ योगीए कह्युं के, में हजु पाटलो पाछो आववानो तो मंत्र कह्यो नथी, छतां ते केम आव्यो? त्यारे शेठे कह्युं के, में नवकारमंत्रनो जाप कर्यो, तेथी ते पाछो आव्यो छे; ते सांभली ते योगीए पण

त्यारथी नमस्कार मंत्र जपना माड्यो, अने तेथी ते तेने सर्व सिद्धि करनारो थयो. एवी रीते आ नवकारमंत्रना माहात्म्यपर बीजा दृष्टांतो पण जाणी लेवा.

हवे न्यायनीतिनो उपदेश कहेछे

न्यायमार्ग सेववाथी आ लोक अने परलोकमां पण यश, कीर्ति, प्रतिष्ठादिक लाभो थाय छे, तथा सद्गति मलेछे कह्यु छे के,

यांति न्यायप्रवृत्तस्य, तिर्यंचोऽपि सहायताम् ॥
अपथानं तु गच्छंत, सोदरोऽपि विमुञ्चति ॥ १ ॥

अर्थ– न्यायमार्गे चालनार माणसने तिर्यंचो पण सहाय करेछे, अने अन्यायमार्गे चालनार माणसने सगो भाइ पण तजी आपेछे

पंचेंद्रियनो निग्रह, प्रतिक्रमण, सामायिक, तथा पौषध, अने दुष्कर एवी प्रतिमादिक वहवाथी मोटो लाभ थायछे

इंद्रियोना विषयो खरेखर अनर्थ करनारा छे कह्यु छे के,

कुरंगमातंगपतंगभृंग-
मीना हताः पंचभिरेव पंच ॥
एकः प्रमादी स कथं न हन्यात्,
यः सेवते पंचभिरेव पंच ॥ १ ॥

अर्थ– हरिण, हाथी, पतंग, भ्रमर तथा मत्स्यो अनुक्रमे श्रोत्रेंद्रि, स्पर्शेंद्रि, नयनेंद्रि, घ्राणेंद्रि तथा रसेंद्रिना लोलुपीपणाथी हणाएला छे, तो जे प्रमादी माणस ते पांचे इंद्रियोने लोलुपी थइने सेवेछे, ते केम हणाय नहीं ?

चक्षुर्दग्धं परस्त्रीभिः, हस्तौ दग्धौ प्रतिग्रहैः ॥
जिह्वा दग्धा परान्नेन, गतं जन्म निरर्थकम् ॥१॥

अर्थ– जेनी आंखो परस्त्रीउने (जोवाथी) दग्ध थएली छे, जेना हाथो चोरी करवाथी दग्ध थएला छे, तथा जेनी जीह्वा-परना अन्नथी दग्ध थएली छे, तेनो जन्म निरर्थक गयेलो छे.

एवी रीते वैराग्यनी वासनावालो प्राणी शुभ गतिने मेलवे छे; अहीं प्रदेशी राजादिकनां दृष्टांतो भावी लेवां.

हवे चतुर्विध श्रमणसंघनी भक्तिपूजानो उपदेश कहे छे.

रत्नेषु चिंतामणिरत्नयद्व-त्सारस्तरूणामिव कल्पवृक्षः॥
देवेषु सर्वेष्वपि वीतराग-स्तद्वत्सुपात्रेषु सुसाधुसंघः॥१॥

अर्थ– रत्नोमां जेम चिंतामणिरत्न उत्तम छे, तथा वृक्षोमां जेम कल्पवृक्ष उत्तम छे, तथा देवोमां पण जेम वीतराग प्रभु उत्तम छे, तेम सुपात्रोमां श्रमणसंघ उत्तम छे.

ज्ञानादिनिश्शेषगुणौघरत्ना-
करे च बिंदुरिवांभसोऽंतः ॥
संघे नियुक्तो निजवित्तलेशः,
स्यादक्षयः क्षीणपरिक्षयेऽत्र ॥ १ ॥

अर्थ– ज्ञानादिकरूप सर्व गुणोना समूहरूपी रत्नोना समूह-वाला एवा संघमां, जलना बिंदुनी पेठे नाखेलुं पोतानुं अल्प द्रव्य पण अक्षय थाय छे.

श्री श्रमणसंघने रत्नाकरनी उपमा युक्तज छे. कह्युं छे के,

पंचपरमिट्ठिरयणाइं, बहुमूलाइं जस्स मज्झंमि ॥
उपज्जंति सया विहु, स संघरयणायरो जयउ ॥१॥

अर्थ– जे संघरूपी रत्नाकरमांथी पंचपरमेष्ठीरूप अमूल्य रत्नो उत्पन्न थाय छे, ते संघरूपी रत्नाकर हमेशां जयवंतो वर्तो, श्रमणसंघ छे ते पचीसमा तीर्थंकररूप छे, केमके, तेने सर्व तीर्थंकरो पण नमस्कार करे छे. कह्युं छे के,

लोकेभ्यो नृपतिस्ततोऽपि हि वरश्चक्री ततो वासवः
सर्वेभ्योऽपि जिनेश्वरः समधिको विश्वत्रयीनायकः ॥
सोऽपि ज्ञानमहोदधिः प्रतिदिनं संघं नमस्यत्यहो
वज्रस्वामिवदुन्नतिं नयति तं यः स प्रशस्यः क्षितौ॥१॥

अर्थ– लोकोथी उत्तम राजा, तेथी उत्तम चक्री, तेथी उत्तम इन्द्र, अने ते सर्वथी उत्तम त्रणे जगतना नायक श्री जिनेश्वर प्रभु छे, एवा ज्ञानना दरिया सरखा जिनेश्वर पण हमेशा जे सघने नमे छे, ते सघनी वज्रस्वामीनी पेठे जे उन्नति करे छे, ते जगतमा प्रशसनीय थाय छे (अहीं सघनी भक्तिपर श्री वज्रस्वामिनो समस्त प्रबध वाची लेवो)

पुत्रजन्मविवाहादि-मंगलानि गृहे गृहे ॥
परं भाग्यवता पुसा, श्रीसघार्चादिमंगलम् ॥ १ ॥

अर्थ– पुत्रजन्मना तथा विवाहादिकना मंगलो तो घरे घरे होय छे, पण श्री सघनी पूजादिकनु मगल तो भाग्यवान पुरुषोनेज घेर होय छे

रुचिरकनकधारा प्रागणे तस्य पेतुः,
प्रवरमणिनिधान तद्गृहातः प्रविष्टं ॥
अमरतरुलतानामुद्गमस्तस्य गेहे,
भवनमिह सहर्ष यस्य पस्पर्श संघः ॥ १ ॥

अर्थ– आ जगतमा जे माणसना घरने संघे स्पर्श करेलो छे, तेना आगणामा मनोहर सुवर्णधारा पडेली छे, अने उत्तम मणिर्उनु निधान ते माणसना घरमा दाखल थयु छे, तथा तेने घेर कल्पवल्ली उगेली छे

आ हेतुथीज श्री वस्तुपाल मंत्री दरेक वर्षे त्रणवार संघनी पूजा करता हता. कह्युं छे के,

एकं वासः सुरेशैः कृतसुकृतशतैर्जन्मकाले जिनानां
दत्तं दीक्षाक्षणे वा ध्वजवसनमथो एकमेवांबरं च ॥
सूर्यादीनां ग्रहाणां पुनरपि विधिना दत्तमस्मिन् क्षणेऽसौ
श्रीसंघे भूरि यच्छन्नधरितसुरपो दानदाता स मंत्री ॥१॥

अर्थ– करेलां छे सेंकडो गमे सुकृत जेओए एवा इंद्रोए जिनोना जन्म वखते एकज वस्त्र आप्युं छे, तथा दीक्षा वखते पण एकज वस्त्र आप्युं छे, तेम ब्रह्माए सूर्यादिक ग्रहोने पण एकज अंबर-वस्त्र (आकाश) आप्युं छे, पण आ वस्तुपाल मंत्रीए तो संघप्रते घणां वस्त्रो देइने इंद्रादिकोथी पण पोतानी कीर्त्ति वधारी छे. ते दान देती वखते वस्तुपाले कह्युं हतुं के,

कदा किल भविष्यंति, मद्गृहांगणभूमयः ॥
श्रीसंघचरणांभोज-रजोराजिपवित्रिताः ॥ १ ॥

अर्थ– श्री संघनां चरणकमलोनी रजोनी श्रेणिओथी मारा घरना आंगणानी भूमिओ हवे क्यारे पवित्र थशे ?

एम विचारिने भाग्यवान पुरुषे पोतानी शक्तिमुजब दरवर्षे श्री श्रमणसंघनी पूजा करवी.

अर्हतामपि मान्योऽयं, पूज्यः पुण्यवतामपि ॥
सेव्यः सुरासुरेशानां, संघः पूज्यस्ततो बुधैः ॥ १ ॥

अर्थ– आ संघ श्री अरिहंत प्रभुओने पण माननीक छे, तेम पुण्यवानोने पण पूजनीक छे, वली देव अने दानवोना इंद्रोने पण सेवनीक छे, माटे बुद्धिवान माणसोए संघने पूजवो.

संघः सद्गुणसंघसंहतिकरः संघो जिनैर्वेदितः
संघः शासनवृद्धिहेतुरसकृत्संघः सतां मुक्तिदः ॥
तद्भक्तया विहितं भुजार्जितधनैः संघस्य यैः पूजनं
किं तैर्नाम न पूजितं सुकृतिभिः किं वा न लब्धं फलम्

अर्थ– संघ छे ते उत्तम गुणोना समूहने करनारो छे, तीर्थंकरोथी वदाएलो छे, हमेशा शासननी वृद्धिनो हेतु छे, तथा उत्तम माणसोने मुक्ति उपजावनारो छे, एवी रीतना संघनुं पोतानी भुजाथी उपार्जन करेला धनथी जे माणसोए पूजन करेलुं छे, ते पुण्यशालीओए शुं पूज्युं नथी? तथा शुं फल मेलव्युं नथी? अर्थात् सर्व मेलव्युं छे

संघनी पूजा वस्त्र, पात्र, अलंकार तथा तांबूल आदिक भेदोथी चार प्रकारे कराय छे कह्युं छे के,

न्यायोपात्तैः सितैर्वस्त्रैः, संघमभ्यर्चयंति ये ॥
तद्गेहपंजरे लक्ष्मीः, कुरुते सारिकाव्रतम् ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणसो न्यायथी उपार्जन करेला एवा निर्मल वस्त्रोथी संघनी पूजा करेछे, तेना घररूपी पांजरामा लक्ष्मी मेनानीपेठे आवीने रहेछे

यज्जन्मैव गुणास्पदं जगति यच्छृंगार आद्यो नृणां
शीतोष्णाद्यमुपद्रवं हरति यन्निर्लज्जताबाधहम् ॥
प्रासादध्वजकैतवादिव सुरैरारोप्यते मूर्ध्नि यत्
तद्देयं गुरवे विशुद्धवसनं धन्यैः सुपुण्यात्मने ॥ १ ॥

अर्थ– जे वस्त्रनो जन्मज गुणोथी (तंतुओथी) छे, तथा जे माणसोनो मुख्य शृंगार छे, तथा जे वस्त्र टाढी तथा तापादि-

कना उपद्रवने हरे छे, वली जे निर्लज्जताना भावनो नाश करे छे, वली जे वस्त्रने देवो पण प्रासादपर रहेली ध्वजाना मिषथी मस्तके धरे छे, एवुं पवित्र वस्त्र पुण्यशाली गुरुने आपवुं.

पतद्ग्रहादिकं पात्रं, देयं योग्यं सुसाधवे ॥
संसारसागरोत्तार-हेतवे धातुवर्जितम् ॥ १ ॥

अर्थ– संसाररूपी समुद्रथी तरवामाटे धातुविनानुं योग्य पात्र उत्तम साधुने समर्पण करवुं.

पट्टकूलादिवासांसि, स्वर्णादितिलकानि च ॥
साधर्मिकाणां सम्यक्त्व-शुद्ध्यै देयानि भावतः ॥

अर्थ– सम्यक्त्वनी शुद्धिमाटे साधर्मिक लोकोने भावथी पट्टकूलादिक वस्त्रो तथा स्वर्णादिकना तिलको देवां. कह्युं छे के,

साहम्मियंमि पत्ते, घरंगणे जस्स हुइ नेहो ॥
जिणसासणभणियमिणं, सम्मत्ते तस्स संदेहो १

अर्थ– घेरने आंगणे स्वामीभाइ आव्या छतां पण, तेनापर जेने स्नेह थतो नथी, तेना सम्यक्त्वमां संदेह छे, एम जिनागमोमां कहेलुं छे.

रूप्यस्वर्णादिकैष्टंकैः, क्रमुकैः शुभभावतः ॥
नागवल्लीदलैर्देयं, तांबूलं श्रावकैः सदा ॥ १ ॥

अर्थ– श्रावकोए हमेशां शुभ भावथी रूपाना तथा सुवर्णना सिक्कासहित, सोपारीसाथे नागरवल्लीना पानोनुं तांबूल आपवुं.

एवी रीतना प्रकारोथी विवेकी माणसोए संघनी पूजा करवी.

यः ससारनिरासलालसमतिर्मुक्त्यर्थमुत्तिष्ठते
यं तीर्थं कथयंति पावनतया येनास्ति नान्यः समः ॥

यस्मै तीर्थपतिर्नमस्यति सता यस्माच्छुभं जायते
स्फुर्तिर्यस्य परावसंति च गुणा यस्मिन्स संघोऽर्च्यताम्॥

अर्थ– जे संघ संसारथी विरक्त बुद्धिवालो थइने मुक्तिमाटे प्रयत्न करे छे, तथा जेने पवित्रपणाथी तीर्थरूप कहे छे, तथा जेनासमान बीजो कोइपण नथी, वली जे संघने तीर्थंकर प्रभु पण नमस्कार करे छे, तथा जेथी बुद्धिमानोने कल्याण थाय छे, वली जे संघनी प्रख्याति छे, तथा जेनामा गुणो वसी रह्या छे, ते संघनी पूजा करवी

भावार्थ– आचार्य, उपाध्याय, साधु, साध्वी, श्रावक अने श्राविकारूप एवो जे संघ, क्रिया, ज्ञान, दर्शन, दान, शील, तथा तपादिक रूप पुण्योथी मुक्तिमाटे उद्यम करे छे, वली जे संघने महान् ऋषिउं उत्कृष्ट तीर्थरूप गणे छे, वली आ आर्यदेशमा उत्पन्न थवाथी ते संघसमान बीजो कोइ पण नथी केमके, सुद्रव्य, सुकुलमा जन्म, सिद्धक्षेत्र, समाधि, अने संघ ए पाचे सकारो दुर्लभ कह्या छे वली धर्म देशना देती वेलाए "नमो तिथ्थस्स" एम कहीने श्री तीर्थंकर प्रभु पण ते संघने नमस्कार करे छे वली ते संघथीज जिनप्रासाद, जिनप्रतिमा, तीर्थयात्रा, पदप्रतिष्ठा, स्वामिवात्सल्य, दान शालाउं, अमारी पटह विगेरे मागलीकना कार्यो थाय छे वली ते संघनो महिमा पण मोटो छे, केमके, राजा जेवाउं पण संघनी आज्ञा पोताना मस्तकोपर चडावे छे, अने तेनी विराधना करता नथी वली जे संघनी सामे थइ उलटी रीते चाले छे, तेउं गर्दभिल्लराजा तथा नमुचीप्रधान आदिकनीपेठे दुःख पामे छे वली तेज संघमा दान, शील तथा तपादिक गुणो वसी रहेला छे एवी रीतना महा प्रभाविक संघने वस्तुपालमंत्रीनी पेठे पुण्यशालीउंए जो-

जन, पान, खादिम, स्वादिम आदिक आहारोथी, तथा विविध प्रकारना वस्त्रो, पात्रो तथा आभूषणो आदिकथी सत्कारपूर्वक पूजवो. कह्युं छे के,

चौलुक्यः परमार्हतो नृपशतस्वामी जिनेंद्राज्ञया
निर्ग्रंथस्य जनाय दानमसमं न प्राप जानन्नपि ॥
संप्राप्तस्त्रिदिवं स्वचारुचरितैः सत्पात्रदानेछया
तद्भूपोऽवततार गुर्जरभुवि श्रीवस्तुपाल ध्रुवम् ॥ १ ॥

अर्थ– हे वस्तुपालमंत्री ! परम जैनधर्मी, तथा सेंकडो गमे राजाउनो अधिकारी एवो चौलुक्यवंशनो राजा कुमारपाल जिनेंद्रप्रभुनी आज्ञाथी जाणता छतां पण साधुलोकने घणुं दान दइ शक्यो नहीं. (राजपिंड जैन मुनिउने लेवो कल्पे नहीं, एम श्री जिनेश्वरप्रभुउए जिनागमोमां कहेलुं छे.) छेवटे पोताना मनोहर आचरणोथी ते देवलोकमां गयो, पण सुपात्रोप्रते दान देवानी पोतानी इछाथी ते तमारुं रूप करीने खरेखर आ गुर्जर भूमिमां पाछो अवतरेलो होय एम भासन थाय छे. (आवी रीते कोइक कविए वस्तुपालमंत्रीमाटे उत्प्रेक्षा करेली छे.)

रत्नानामिव रोहणः क्षितिधरः खं तारकाणामिव
स्वर्गः कल्पमहीरुहामिव सरः पंकेरुहाणामिव ॥
पाथोधिः पयसां शशीव महसां स्थाने गुणानामसा-
वित्यालोच्य विरच्यतां भगवतः संघस्य पूजाविधिः॥ २॥

अर्थ– रत्नोनुं स्थानक जेम रोहणाचल पर्वत छे, ताराउनुं स्थानक जेम आकाश छे, कल्पवृक्षोनुं स्थानक जेम स्वर्ग छे, कमलोनुं स्थानक जेम तलाव छे, पाणीनुं स्थानक जेम समुद्र छे, तथा तेजनुं स्थानक जेम चंद्र छे, तेम आ संघ, विनयादि अ-

नेक गुणोनुं स्थानक छे, एम विचारीने आ भाग्यवान संघनी पूजाविधि करवी.

यद्भक्तेः फलमर्हदादिपदवी मुख्यं कृषेः शस्यवत्
चक्रित्वत्रिदशेन्द्रतादि तृणवत् प्रासंगिकं गीयते ॥
शक्तिं यन्महिमस्तुतौ न दधते वाचोऽपि वाचस्पतेः
संघः सोऽघहरः पुनातु चरणन्यासैः सतां मंदिरम्॥१॥

अर्थ– खेतीमाथी जेम धान्य, तेम जे संघनी भक्तिनुं मुख्य फल अरिहंतादिकनी पदवी छे, तथा चक्रीपणुं अने इन्द्रपणुं तो खेतरमा उगता घासनी पेठे प्रासंगिक छे, वली जे संघना माहात्म्यनी स्तुति करवामाटे बृहस्पतिनी वाणी पण समर्थ नथी, एवो पापोने हरनारो ते संघ पोताना चरणन्यासोथी सज्जनोना घरने पवित्र करो ?

हवे ते संघवात्सल्यपर दृष्टांत आपे छे

एक दहाडो श्री हेमचंद्राचार्य शाकम्भरी नगरीमा पधार्या ते नगरमा एक धनाशा नामे निर्धन श्रावक रहेतो हतो तेणे पोताने शीयालामा ओढवामाटे, पोतानी स्त्रीने हाथे सुतर कतावीने तेनो एक जाडो चोफाल बनाव्यो हतो, पण भाव आववाथी तेणे ते चोफाल श्री हेमचंद्रसूरिजीने वोराव्यो पछी ज्यारे ते हेमचंद्राचार्य पाटणमा पधार्या त्यारे कुमारपालादिक बहोतेर राजाओ तथा कुबेर आदि अढार हजार श्रावको पोतपोतानी ऋद्धिसहित तेमनी सामे आव्या ते वखते आचार्यजीए पोताना शरीरपर तेज जाडो पाणकोरानो चोफाल ओढ्यो हतो ते जोइ कुमारपाल राजाए तेमने कह्युं के, हे भगवन् ! आप मारा गुरु थइने आवां निर्माल्य वस्त्रो पहेरो छो, तेथी मने लज्जा थाय

छे. ते सांभली हेमचंद्र महाराजे तेमने कह्युं के, हे राजन्! तमो आ पृथ्वीपर राज्य करो छो, अने तमारा आ वस्त्रदान देनारा साधर्मी श्रावको ज्यारे महा मुशीबने पोतानुं गुजरान चलावे छे, तेथी तमोने शुं लज्जा नथी थती? अमो निस्पृही मुनिओ तो जो सामान्य वस्त्रो पेहेरीयें तोज अमारी गुरुना जलवाइ रहे छे. केमके सर्वज्ञ प्रभुए पण कह्युं छे के,

त्यक्तसंगो जीर्णवासा, मलक्लिन्नकलेवरः ॥
भजन् माधुकरीं वृत्तिं, मुनिचर्यां कदाश्रयेत् ॥ १ ॥

ते सांभली कुमारपाल राजाए अभिग्रह लीधो के, आजथी हवे मारे दरवर्षे स्वामिवात्सल्य करवुं, अने निराधार श्रावकने दरवर्षे मारे दरवर्षे हजार सोनामोहोरो आपवी. एवी रीते दान देतां थकां तेने वर्षनी एक क्रोड सोनामोहोरो जोइती हती अने चौद वर्षो दरम्यान तेणे एवी रीते चौद क्रोड सोनामोहोरो साधर्मी भाइओने आपी.

कल्पोर्वीरुहसंततिस्तदजिरे चिंतामणिस्तत्करे
श्लाघ्या कामदुघानघा च सुरभी तस्यावतीर्णा गृहे ॥
त्रैलोक्याधिपतित्वसाधनसहा श्रीस्तन्मुखं वीक्षते
संघो यस्य गृहांगणं गुणनिधिः पादैः समाक्रामति॥१॥

अर्थ– गुणोना भंडाररूप एवो संघ जे माणसना घरना आंगणामां आवे छे, तेना आंगणामां कल्पवृक्षोनी श्रेणि उगेली छे, तेना हाथमां चिंतामणि रत्न आवेलुं छे, तेनें घेर मनोहर कामधेनु उतरेली छे, तथा त्रणे लोकना अधिपतिपणाने सूचवनारी लक्ष्मी तेनी सन्मुख जुए छे. (हवे तेपर दृष्टांत कहे छे.)

तपगच्छ नायकश्री सोमतिलकसूरि एक वखते सुरगिरिमां शा.

जगसिंहना घरमा तीर्थंकर प्रभुने नमवा माटे गया ते वखते ते-
मना उपदेशथी जगसिंह शेठे सातसो सोनामोहोरो खरचीने
संघने तांबूल आप्या हता वळी निशलशाहनी स्त्री सीमाबाइ-
ए श्री सोमसुंदरजी महाराजना उपदेशथी सर्व देशोना श्राव-
कोने साकरनी लाणी करी हती

एवी रीते अहीं संघपूजापर बीजा पण प्राचीन अने अर्वा-
चीन दृष्टांतो पोतानी मेळेज वाची लेवा.

हवे साधर्मिकवात्सल्यनो उपदेश कहे छे

साधर्मिकाणां वात्सल्यं, भोजनाच्छादनादिभिः ॥
यस्तनोति नरो भावात्, तज्जन्म सफलं भवेत् ॥१॥

अर्थ– जे माणस भावथी भोजन तथा वस्त्रादिकोथी सा-
धर्मी लोकोनुं वात्सल्य करे छे, तेनो जन्म सफल थाय छे
कह्युं छे के,

न कयं दिणुद्धरणं, न कयं साहम्मिआणवच्छलं ॥
हिययम्मि वीअराओ, न धरिओ हारिओ जम्मो ॥ १ ॥

अर्थ– जेणे दीन लोकोनो उद्धार कर्यो नथी, तथा जेणे स्वा-
मिवात्सल्य कर्युं नथी, तेम जेणे हृदयमां श्री वीतराग प्रभुने
धार्या नथी, तेणे पोतानो जन्म फोकट गुमाव्यो छे

हवे ते साधर्मिकवात्सल्य भावना वशथी अनेक प्रकारनुं छे
जेम प्रति उपकारनी इच्छाथी मोटा शाहुकारोने भोजन आपवुं
ते शाहवात्सल्य कहेवाय छे दुर्जनादिकोने भयथी भोजन आ-
पवुं ते भयवात्सल्य कहेवाय छे मात पिता, तथा श्वसुरपक्षा-
दिकना स्वजनोने प्रीति आदिकनी वृद्धिमाटे जे भोजन दान देवुं,
ते स्वजनवात्सल्य कहेवाय छे पण ते त्रणे दानोमा धर्मबुद्धिनो

अनाव होवाथी ते दानो निरर्थक छे. सार्थक दान तो ते कहेवाय के प्रति उपकारनी इछाविनाज फक्त धर्मबुद्धिथी पैसादार अने गरीब एवा साधर्मी नाइउने नेद राख्याविना सन्मानपूर्वक उदार चित्तथी जे दान देवुं. अने तेज दान महा लानकारी थाय छे. कह्युं छे के,

मिथ्यादृष्टिसहस्रेषु, वरमेको ह्यणुव्रती ॥
अणुवृत्तिसहस्रेषु, वरमेको महाव्रती ॥ १ ॥

अर्थ– हजारो गमे मिथ्यादृष्टिउमां एक अणुव्रतधारी श्रेष्ठ छे, अने हजारो गमे अणुव्रतीउमां एक महाव्रतधारी श्रेष्ठ छे.

महाव्रतिसहस्रेषु, वरमेको हि तात्विकः ॥
तात्विकसमं पात्रं च, न नूतं न नविष्यति ॥१॥

अर्थ– हजारो गमे महाव्रतिउमां एक तत्ववेत्ता श्रेष्ठ छे, तत्ववेत्तासमान सुपात्र थयुं नथी, अने थशे पण नहीं.

जेम नरतचक्रीए बारव्रतधारी श्रावकोने तेउनी उलखाणमाटे काकीणी रत्नथी बार तिलको कर्यां हतां, अने छेक जीवितपर्यंत तेमणे साधर्मीवात्सल्य कर्युं हतुं. वली तेवीज रीते संप्रति राजाए त्रिखंड नरतक्षेत्रमां दरेक गामे स्वामिवात्सल्य कर्युं छे. वली वढवाणना रहेवासी एवा रत्न नामना एक श्रावकपासे दक्षिणावर्त शंख हतो, ते शंखे तेने एक दहाडो स्वप्नमां कह्युं के, हवे हुं वस्तुपालपासे जवानो छुं. ते सानली तेणे बहुमानपूर्वक तेने सात दिवसोसुधि राख्यो. एटलामां सात लाख माणसो सहित वस्तुपाल त्यां संघ कहाडीने शत्रुंजय जतां आवी पहोंच्या. त्यारे ते रत्न श्रावके ते संघने अत्यंत आदरमानथी नोजन करावीने ते शंख वस्तुपालने सोंप्यो. ते रत्नश्रावकनुं वृत्तांत चतुर्विंशति प्रबंधथी जाणी लेवुं.

सिद्धिपुरंध्रीवरणं, श्रावकधर्मश्रियो वराजरणम् ॥
कृतजिनमतसाफल्य, रचयत साधर्मिकेषु वात्सल्यम् ॥

अर्थ– मोक्षरूपी स्त्रीसाथे वरावनारुं, श्रावकधर्मनी लक्ष्मीना उत्तम आजूपण सरखुं तथा जिनमतने सफल करनारुं, एवुं साधर्मिकवात्सल्य करो ?

नागपुर नामना नगरमा पूनम नामे एक महा धनाढ्य श्रावक वसतो हतो. तेने मौजुद्दीन बादशाहनी बीबी प्रेमकलाए पोतानो जाइ कर्यो हतो तेणे विक्रम संवत १२७३ मा पेहेली शत्रुंजयनी यात्रा करी हती पछी विक्रम संवत १२८६ मा तेणे बीजीवार यात्रा करी ते वखते तेनीसाथे संघमा १००० गाडाओ तथा केटलाक माडलिको पण हता पछी ते पूनम श्रावक संघसहित ज्यारे धोलकापासे आव्यो त्यारे वस्तुपाल अने तेजपाल मंत्री तेनीसामे गया ते समये पवनथी जेजे दिशामा संघनी रज उडती हती, ते ते दिशातरफ ते मंत्रिओ जवा लाग्या ते जोइ बीजा माणसोए तेओने कह्यु के, हे मंत्रीराज ! ते बाजु तो घणी रज उडे छे, माटे तमो आतरफ आवो ? त्यारे मंत्रीए कह्यु के, आ रजनो स्पर्श तो पुण्योथी थाय छे ते रजनो स्पर्श कर्मोनो नाश करे छे कह्यु छे के,

श्रीतीर्थपाथरजसा विरजीजवंति,
तीर्थेषु च भ्रमणतो न जवे भ्रमंति ॥
द्रव्यव्ययादिह नराः स्थिरसंपदः स्युः,
पूज्या जवंति जगदीशमथार्चयतः ॥ १ ॥

अर्थ– तीर्थमार्गनी रजथी माणसो कर्मरहित थाय छे, अने तीर्थोमा जमवाथी माणसोने जवमा जमवु पमतु नथी, वली

तीर्थमां धन खरचवाथी माणसो स्थिर संपदावाला थाय छे, तेम तीर्थमां प्रभुनी पूजा करवाथी पूजनीक थाय छे.

पछी त्यां ते मंत्री अने पुनड बन्ने एकठा थया, संघ पण तलावने किनारे स्थिर थयो. ते वखते मंत्रिए विचार्युं के, संघना चरणरजोथी मारां घरनुं आंगणुं क्यारे पवित्र थशे? एम विचारि तेणे संघने भोजनमाटे निमंत्रण कर्युं. पछी प्रभाते रसोइ तैयार थया वाद संघना लोको ज्यारे भोजन माटे आव्या, त्यारे मंत्रि ते सर्वना चरणोने पोताने हाथे क्षालन करवा लाग्या, तथा तेउने तिलक करवा लाग्या. एम करतां वे पोहोरो व्यतीत थया, त्यारे तेजपाले वस्तुपाल मंत्रीने कह्युं के, हे भाइ हवे संघनी भक्ति बीजाउ पण करशे, तमो भोजन करीह्यो? त्यारे वस्तुपाले कह्युं के, हुं पाछलथी भोजन करीश, केमके, आवो अवसर वारंवार मलतो नथी. पछी संघने भोजन करावीने तेमणे वस्त्रादिकनुं दान आप्युं. त्यारवाद पूनडशाहनी प्रेरणाथी मंत्री पण संघनी साथे शत्रुंजयपर पधार्या, तथा त्यां भावपूर्वक यात्रा करीने तेउ बन्ने पोतपोताने स्थानके गया.

जिनभक्तिः कृता तेन, शासनस्योन्नतिस्तथा ॥
साधर्मिकेषु वात्सल्यं, कृतं येन सुबुद्धिना ॥ १ ॥

अर्थ— जे सुबुद्धि माणसे साधर्मीउनुं वात्सल्य कर्युं छे, तेणे जिनभक्ति तथा शासननी उन्नति करेली छे. (तेपर दृष्टांत कहे छे.)

थारापद्र नामना नगरमां श्रीमाली वंशनो आभू नामे एक शेठ वसतो हतो, तेने पश्चिम मांमलीकनुं विरुद मल्युं हतुं. एक दहाडो मंरूपत्तुर्गमां झांझणशाह पासे ते आभूना माटे एवुं वर्णन कर्युं के, आभूशा पोताने घेर आवेला साधर्मीकोने भोजन कराव्याविना पोते भोजन करता नथी. ते सांभली चमत्कार पामेला झांझणे तेनी परीक्षा करवा माटे तजवीज करी, अने तेथी ते

बत्रीस हजार साधर्मीकोना संघ सहित जुदे जुदे मार्गेथी चौदसने दिवसे थारापद्र नगरमा आव्यो. ते दिवसे आजूशाहे तो पौंषध लीधो हतो, पण तेना जाइ जिनदासे संघने आवेलो जाणी तुरत तेमने जोजनमाटे निमंत्रण कर्युं, तथा एक पोहोरनी अंदर समस्त संघने सोना अने रूपाना थालोमा जोजन कराव्युं, तथा उपर वस्त्रादिकनु दान पण आप्यु ते जोइ झांझशाहे आजू शेठने पगे पडी कह्यु के, आपे मारो अपराध क्षमा करवो, केमके, आवी रीते करीने मे आपनी परीक्षा करी एवी रीते तेनी क्षमा मागीने शत्रुंजयनी यात्रा करीने झांझण शेठ मरूपदुर्गमा गया.

चक्रे तेन जिनार्चनं स विदधे सम्यग्गुरूपासनं
तत्वं तेन जिनागमस्य विदितं संघोन्नतिं स व्यधात् ॥
सत्यंकारितमेव तेन सुधिया निर्वाणसौख्यं जवात्
यः साधर्मिकगौरवं वितनुते हृष्टो गुरूणामिव ॥ १ ॥

अर्थ– जेणे हर्षित थइने गुरुर्उनी पेठे साधर्मीकोनुं वात्सल्य कर्युं छे, तेणे जिनपूजा करेली छे, सारी रीते गुरुनी उपासना करेली छे, तेणे जिनागमनु तत्व जाण्यु छे, तेणे संघनी उन्नत्ति करी छे, वली ते सुबुद्धिए मोक्ष सुखने वेगथी हस्तगत करेलु छे

जेम सुरगिरिमा जगसिंहशाहे द्रव्य आपीने पोताना त्रणसो साठ साधर्मीकोने पोताना जेवाज शाहुकारो बनाव्या हता एवी रीते अहीं जावडशाह, उदायनमंत्री, वाहडमंत्री, पेथडशाह, झांझणशाह, जगडुशाह, तथा जीमाशाह आदिकना हजारोगमे दृष्टांतो जाणी लेवा एम विचारि सर्व माणसोए संघवात्सल्य करीने पोतानो जन्म सफल करवो

जिनौकः पौषधौकश्च, जैनागमसुलेखनम् ॥
साधौ साधर्मिके जक्तिः, कुर्वन्नल्पजवो जवेत् ॥ १ ॥

अर्थ- जिनमंदिर, पौषधशाला, जिनागमोनुं लखाववुं, साधु तथा साधर्मीकोनी भक्ति इत्यादिक शुभ कार्यो करवाथी प्राणी अल्पभवी थाय छे.

जिनमंदिरादिक साते क्षेत्रोमां भक्ति करनारो माणस महा श्रावक कहेवाय छे. कह्युं छे के,

नरेषु धरणीपतिस्तरुषु दिव्यकारस्कर:
करिष्वमरसिंधुर: फणधरेषु शेष: पुन: ॥
सुपर्वसु पुरंदरो गिरिषु रत्नसानुर्यथा
तथा सुकृतवत्स्वसौ महाश्रावक: कथ्यते ॥ १ ॥

अर्थ- माणसोमां जेम राजा, वृक्षोमां जेम कल्पवृक्ष, हाथीउमां जेम ऐरावण, नागोमां जेम शेषनाग, देवोमां जेम इंद्र तथा पर्वतोमां जेम मेरु तेम पुण्यशालीउमां (साते क्षेत्रोनी भक्ति करनारो माणस) महाश्रावक कहेवाय छे.

श्री हेमचंद्राचार्ये पण कुमारपाल पासे नीचे प्रमाणे महा श्रावकनुं लक्षण कह्युं छे.

एवं व्रतस्थितो भक्त्या, सप्तक्षेत्र्यां धनं वपन् ॥
दयावानतिदीनेषु, महाश्रावक उच्यते ॥ १ ॥

अर्थ- एवी रीते व्रतमां रहेलो, तथा भक्तिथी साते क्षेत्रोमां धनने वापरनारो, अने अति दीन प्राणीउ प्रते दयालु एवो माणस महाश्रावक कहेवाय छे.

इति श्री तपागच्छ नायक श्री सोमसुंदरसूरि, श्रीरत्नशेखरसूरि पं० नंदिरत्नगणि शिष्यरत्नमंदिरगणि गुंफितायां श्री उपदेशतरंगिण्यां श्री जिनभवनादि सप्तक्षेत्रवित्त वितरण विवेक प्रकाशकश्चत्वारिंशदुपदेशमनोहरो द्वितीयस्तरंग: समाप्त: श्रीरस्तु ॥

तृतीयस्तरंगः प्रारभ्यते

हवे पूजापचाशक नामनो त्रीजो तरग कहेछे

पूजया पूर्यते सर्वं, पूज्यो भवति पूजया ॥
ऋद्धिवृद्धिकरी पूजा, पूजा सर्वार्थसाधनी ॥ १ ॥

अर्थ- पूजाथी सर्व वस्तुउ मले छे, तेम पूजाथी प्राणी पूजनीक थाय छे, पूजा छे ते ऋद्धिनी वृद्धि करनारी तथा सर्व अर्थोने साधनारी छे

जे माणस विधि पूर्वक रागद्वेष विनाना श्री जिनेश्वर प्रभुने पूजे छे, ते माणस त्रीजे भवे मोक्षे जाय छे, कदाच ते भारेकर्मी होय तो ते सात आठ भवे तो मोक्षे जाय छेज कह्यु छे के,

जिणपूअणं तिसंझ, कुणमाणो सोहए सम्मत्तं ॥
तित्थयरनामगुत्तं, पावइ सेणीयनरिंदव्व ॥ १ ॥

अर्थ- त्रिकालजिन पूजा करनार माणस पोतानु सम्यक्त्व शुद्ध करे छे, तथा श्रेणिक राजानी पेठे तीर्थंकर नाम गोत्रने पामे छे

वेहेला उत्तम अने सुगधि पुष्पो नहीं मलवाथी सवारमा वासक्षेपनी पूजा करवी. कह्यु छे के,

प्रातः प्रपूजयेद्वासै, र्मध्याह्नेकुसुमैर्जिनं ॥
संध्यायां धूपनैर्दीपै-स्त्रिधा देव प्रपूजयेत् ॥ १ ॥

अर्थ- प्रभाते वासक्षेपथी, मध्याह्ने पुष्पोथी, तथा संध्याकाले धूप अने दीपकोथी, एवी रीते त्रिकाल श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजा करवी

सामान्य प्रकारना तुच्छ पुष्पोथी जिनपूजा करवी नहीं कह्यु छे के,

न शुष्कैः पूजयेद्देवं, कुसुमैर्न महीगतैः ॥
न विशीर्णदलैस्तुच्छै-र्नाशुभैर्नाविकाशिभिः ॥१॥

अर्थ– सूकां, पृथ्वीपर पडेलां, तुटेली पांखडीओ वालां, तुच्छ अशुभ, तथा नहीं प्रफुल्लित थएलां एवां पुष्पोथी देवपूजा करवी नहीं.

पुष्पद्यर्चा तदाज्ञा च, तद्द्रव्यपरिरक्षणम् ॥
उत्सवस्तीर्थयात्रा च, भक्तिः पंचविधा जिने ॥१॥

अर्थ– जिनेश्वर प्रभुनी पुष्पादिकोथी पूजा, तेमनी आज्ञा, तेमना द्रव्यनुं रक्षण, तेमनो उत्सव, तथा तेमना तीर्थनी यात्रा एवी रीते पांच प्रकारे जिनभक्ति थाय छे.

चंपक, मालती, कमल, मोगरो, तथा गुलाव आदिक उत्तम पुष्पो, तथा आदि शब्दथी मोतीओना हार, सुवर्णना छत्र, मुकुट, कुंडल आदिक पण जिनपूजा माटे जाणी लेवां. तेमां पण आभूषणनी पूजा शाश्वती छे. कह्युं छे के,

म्लायंति पुष्पनिचयाः प्रहरार्धकेन,
वैगंध्यमेति दिवसेन कृतोऽंगरागः ॥
जीर्यंति रम्यवसनान्यपि भूरिवर्षै,
र्नो जीर्यते युगशतैर्जिनरत्नपूजा ॥ १ ॥

अर्थ– पुष्पोना समूहो अरधा पोहोरमां म्लानि पामे छे, विलेपन एक दिवसमां निर्गंध थाय छे, मनोहर वस्त्रो घणे वर्षे जीर्ण थाय छे, पण रत्नादिकोना आभूषणोथी करेली पूजा सेंकडो गमे युगोमां पण जीर्ण थती नथी.

ज्यारे वस्तुपाल मंत्री सात लाख मनुष्यो सहित गिरनारपर यात्रा करवा गया हता, त्यारे तेमनी स्त्री अनुपमा देवीए बत्री-

सलाख सोनामोहोरोनी किमतना आनूषणोथी श्री नेमीश्वर प्रभुनी पूजा करी हती कह्यु ठे के,

द्वात्रिंशतद्रम्मलक्षै-रेकदा रैवताचले ॥
नेमीश्वरस्यानुपमा, पूजां चक्रे प्रमोदतः ॥ १ ॥

अर्थ– अनुपमादेवीए एक दिवसे रैवताचलपर हर्षथी श्री नेमिनाथ प्रभुजीनी बत्रीसलाख सोनामोहोरोथी पूजा करी हती

वली ते जोइने तेजपाल मंत्रीए हर्षित थइने बत्रीसलाख सोनामोहोरोनी पोते पण त्यां पूजा करी वली शत्रुंजयपर अनुपमा देवीए श्री ऋषन्नदेव प्रभुनी पण बत्रीसलाखना आजरणोथी पूजा करी, ते जोइ तेनी देराणी ललिता देवीए पण बत्रीसलाखना आजरणोथी पूजा करी शोजना नामनी दासीए पण ते वखते एक लाख सोनामोहोरोना आजरणोथी पूजा करी, अने वस्तुपाल मंत्रीए ते सर्वथी अधिक पूजा करी. वली देवगिरिना रहेवासी धाइ देव नामना श्रावके मोती, प्रवाला, हीरा, माणेक तथा सुवर्णना पुष्पोथी श्री ऋषन्नदेव प्रभुनी आगी करावी हती, अने पछी नवलाख चंपाना पुष्पोथी पूजा करी हती

जिनेश्वर प्रभुनी आज्ञा पण सम्यक् प्रकारे पालवी कह्यु ठे के,

आणाइ तवो आणाइ संजमो, तहेव दाणमाणाए ॥
आणारहिर्ज धम्मो, पलालफुल्लव्व पडिहाइ ॥ १ ॥

अर्थ– जिननी आणा तेज तप, संयम, तथा दान ठे, आणाविनानो धर्म पलाल पुष्पनी पेठे पडवाइ ठे, अर्थात् निरर्थक ठे.

आणाखंडणकारी, जइवि तिकालं महाविनूइए ॥
पूएइ वीयरायं, सव्वपि निरत्थयं तस्स ॥ १ ॥

अर्थ– जिननी आणाने खंडित करनारो माणस कदाच त्रिकाल मोटी ऋद्धिथी प्रज्ञुने पूजे, तो पण तेनुं ते सर्व कार्य निरर्थक छे.

वली देव ऋव्यनुं रक्षण करवुं, तथा ते ऋव्यनी जे वृद्धि करवी ते पण जिनपूजाज छे. कह्युं छे के,

वढ्ढंतो जिणदव्वं, तित्थयरत्तं लहइ जीवो ॥
ज्ञक्खंतो जिणदव्वं, अणंतसंसारिउ ज्ञणिउ ॥ १ ॥

अर्थ– जिनऋव्यने वधारतो थको जीव तीर्थंकरपणुं पामे छे, अने जिनऋव्यनुं ज्ञक्षण करतो थको जीव अनंत संसारि थाय छे, एम कह्युं छे.

ज्ञक्खणे देवदव्वस्स, परत्थीगमणेण य ॥
सत्तमं नरयं जंति, सत्तवाराउ गोअमा ॥ १ ॥

अर्थ– हे गौतम ! देवऋव्य ज्ञक्षण करवाथी, तथा परस्त्री गमन करवाथी माणस सात वार सातमी नरके जाय छे.

वली अफाइ महोत्सव, पर्युंपणमां कल्पसूत्रनुं श्रवण, तथा प्रज्ञावनादिक जे उत्तम कार्यो कराय छे, ते सघलां शासननी उन्नत्तिना हेतुउ होवाथी जिनज्ञक्तिरूपज छे.

एवुं जाणीने पुण्यवान माणसोए तीर्थ यात्रादिक महोत्सवो पूर्वक जिनज्ञक्ति करवी.

सयं पमज्जणे पुन्नं, सहस्सं च विलेवणे ॥
सयसाहस्सीआ माला, अणंतं गीयवाइअं ॥१॥

अर्थ– जिनप्रतिमानुं प्रमार्जन कर्याथी सोगणुं, विलेपन करवाथी हजारगणुं, पुष्पमाला चडाववाथी लाखगणुं, अने तेनी पासे गीत अने अने वाजित्रोनी पूजा कर्याथी अनंतगणुं उपवासोनुं पुण्य थाय छे.

मणसा होइ चउत्थं, छठफल उठिअस्स संभवइ ॥
गवणस्सय पारंभे, होइ फलं अठमोवासो ॥ १ ॥
गमणे दसमं तु भवे, तहेव डुवालसम गए किंचि॥
मज्झे पक्खुववासो, मासोवासं च दिठेणं ॥ २ ॥
संपत्तो जिणभवणे, पावइ छम्मासियं फलं पुरिसो॥
संवछरियं तु फलं, वारंमिय संठिउ लहइ ॥ ३ ॥
पायखणेण पावइ, वरिससयफलं लउ जिणे महिए॥
पावइ वरिससहस्सं, अणंतपुण्ण जिणे थुणीए ॥४॥

अर्थ– जिनमदिर प्रते जवानी मनमा इच्छा करवाथी एक उपवासनु, त्या जवाने उठवाथी छठ्ठनुं, जवानी तैयारी करता अठमनु, जता थका दश उपवासनु, थोडुंक चालवाथी बार उपवासनुं, मध्य भागे पहोंचवाथी पक्षोपवासनु, जिनमदिर जोवाथी मासोपवासनु, जिनभुवनपासे पहोंच्याथी छमासीनुं, जिनमंदिरना बारमा गयाथी वरसीतपनु, जिनेश्वरप्रभुने जोवाथी सो वर्षना उपवासनु, जिनेश्वरप्रभुने पूजवाथी एक हजार वर्षोना उपवासनु, तथा जिनेश्वर प्रभुनी स्तुति करवाथी अनत उपवासोनु पुण्य थाय छे

जेम रावण राजाए अष्टापद पर्वतपर भरत राजाए बधावेला जिनमदिरमा श्री ऋषभदेव प्रभुनी पूजा करीने, पोतानी मदोदरी आदिक शोल हजार राणीउ सहित नृत्य करवा माड्यु हतु, अने ते समये वीणानो तार त्रुटी जवाथी, जिनगुणना गायनना रगमा भग पडवाना डरथी पोताना शरीरनी नस त्रोडीने पण तेवी रीतनी जिनभक्तिथी तेणे तीर्थंकर गोत्र कर्म बाध्यु हतु अने तेथी ते महाविदेह क्षेत्रमा तीर्थंकर थशे एम विचारि बीजाउए पण जिनपूजा माटे उद्यम करवो

अंगपूजा, अग्रपूजा, अने जावपूजा एम पूजा त्रण प्रकारनी छे. पूष्पादिक चमावथी अंगपूजा थायछे, नैवेद्य आदिक मूकवाथी अग्रपूजा थाय छे, तथा स्तुति आदिकथी जावपूजा थाय छे. अंगपूजा जलथी, पुष्पोथी तथा आजूषणोथी एम त्रण प्रकारोथी थायछे. जलपूजा, कर्पूरना जलथी, पुष्पोना जलथी, केसरना जलथी तथा निर्मल सामान्य जलथी एम चार प्रकारे थायछे. पुष्प पूजा कमल, चंपक, मालती आदिक अत्यंत सुगंधि पुष्पोथी हारो गुंथीने तथा छुटां पुष्पोथी पण थायछे. आजूषण पूजा, मुकुट, कुंमल, रत्नजडीत हार विगेरेथी थायछे. एवी रीतेज धूपपूजा, वासक्षेपनी पूजा इत्यादिक अंगपूजामां आवी जाय छे. सोनारूपाना अक्षतो, नालीएर, मोदक, विविध प्रकारनां पकवानो विगेरे जिनप्रतिमापासे धरवां, ए अग्र पूजा छे. तथा स्तुति आदिकथी जावपूजा थायछे. ते पूजाउं अष्टप्रकारी, सतरजेदी, एकवीस प्रकारी विगेरे अनेक प्रकारोथी थाय छे. एम विचारि जाग्यवान माणसे यथाशक्ति जिनपूजा करवी. कह्युं छे के,

पुष्पैर्गंधैर्बहुपरिमलैरक्षतैर्धूपदीपैः
सन्नैवेद्यैः शुज्रफलगणैर्वारिसंपूर्णपात्रैः ॥
कुर्वाणास्ते जगदधिपतेरर्चनामष्टजेदां
सर्वाशंसारहितमतयो विश्ववंद्या जवंति ॥ १ ॥

अर्थ— सर्व प्रकारनी आशारहित बुद्धिवाला जे माणसो पुष्पोथी, सुगंधिउंथी, बहु परिमलवाला अक्षतोथी, धूपोथी, दीपकोथी, उत्तम नैवेद्योथी, उत्तम फलोना समूहोथी अने जलथी जरेलां पात्रोथी एवी रीते आठ प्रकारोथी जिनपूजा करे छे, तेउं जगतथी पण वंदाय छे.

एवी रीते आठे प्रकारनां साधनोनी जोगवाइ कदाच न मले

तो अक्षत अने दीपक पूजा तो अवश्य करवीज केमके, अक्षतपूजाथी अक्षय सुख मले छे, तथा दीपकपूजाथी उत्कृष्ट तेज मले छे वली दीपकपूजाथी सर्व प्रकारना विघनो तथा मरकी आदिकना उपद्रवनो नाश थाय छे (हवे ते अष्टप्रकारी पूजाना फलोनो उपदेश कहे छे)

पूअइ जो जिणचंदं, तिन्निवि सज्झासु पवरकुसुमेहिं ॥
सो पावइ सुरसुक्ख, कम्मेण मुक्ख सयासुक्खं ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणस त्रणे सध्यावखते उत्तम पुष्पोथी श्री जिनेश्वर प्रभुने पूजे छे, ते देवलोकनुं सुख पामे छे, तथा अनुक्रमे शाश्वता सुखवाली मुक्ति पामे छे

इक्केणवि कुसुमेणं, भत्तीइ वीअरायपूआए ॥
पावइ परमविभूइं, जीवो सिरिकुमारपालुव्व ॥ १ ॥

अर्थ– भक्ति पूर्वक एक पुष्पथी पण जे माणस वीतराग प्रभुनी पूजा करे छे, ते श्रीकुमारपाल राजानी पेठे उत्कृष्टी ऋद्धि पामेछे श्री कुमारपाल राजाए पूर्व भवमा पोतानी पासे रहेली पाचकोडीओनी किम्मतना फक्त अढार पुष्पोथी वीतराग प्रभुनी पूजा करी हती, अने ते पुण्यथी ते महाराजाधिराज थया, वहोतेर राणाओ तेना चरणोनी सेवा करवा लाग्या, अढार देशोना ते राजा थया, चौदसो नवा जिनमंदिरो तेणे बधाव्या, साते व्यसनोनुं तेणे निवारण कर्युं, ब्रह्मचर्य व्रत धारण करीने तेणे अढारे देशोमा अमारीपटह वगडाव्यो श्री हेमचंद्राचार्यना चरणोने आराधनावाला थया, अने एवी रीते जिनभक्तिथी ते एकावतारी थया छे इत्यादि तेनु सर्व वृत्तात कुमारपाल प्रबंधथी जाणी लेवुं

अंगं गधसुगंध, वन्नं रुव सुहं च सोहग्गं ॥
पावइ परमपयपि, पुरिसो जिणगंधपूआए ॥ १ ॥

अर्थ— सुगंधि द्रव्योथी जिनपूजा करवाथी माणस पोतानुं सुगंधवालुं शरीर, रूप, वर्ण, सुख तथा सौभाग्य, अने मोक्ष पण पामेछे.

भावार्थ— सुगंधि वरास, चंदन, कर्पूर कस्तूरी विगेरे वास क्षेपथी जिनपूजा करवाथी माणसोनुं शरीर सुगंधयुक्त थायछे, तेने उत्तम स्वरूप मले छे, मोदक आदिकनां उत्तम भोजनो मले छे, पद्मिनी आदिक उत्तम सौभाग्यवाली स्त्रीउ मले छे, तथा छेवटे गुणधर कुमारनी पेठे मोक्ष पण मले छे.

वली श्री जिनेश्वर प्रभु पासे उत्तम प्रकारना अक्षत, घउं आदिकना लाखोगमे दाणाउथी, ज्ञान, दर्शन अने चारित्रनी कल्पना पूर्वक जे त्रण पुंजो करे छे, तेउ अखंड सुखोने मेलवे छे. कह्युं छे के,

अक्षतैरुज्ज्वलैः स्थालं, भृतं येन जिनाग्रतः ॥
श्रेयोभिस्तादृशैरेव, तैरात्मा परिपूरितः ॥ १ ॥

अर्थ— जे माणसे उज्ज्वल अक्षतोथी श्री जिनेश्वर प्रभु आगल स्थाल भरीने मेल्यो छे, ते माणसे तेवांज (उज्ज्वल) कल्याणोथी पोताना आत्माने परिपूर्ण करेलो छे. (आ अक्षत पूजापरनी कथा श्री पार्श्वनाथ प्रभुना चरित्रथी जाणी लेवी.)

कर्पूरादिकनो उत्तम धूप करवाथी तेनो धुंवाडो जे उंचो चडे छे, ते एवुं सूचवे छे के, ते धूपपूजा करनारी परलोकमां ऊर्ध्वगति थशे तथा आ लोकमां तेने उंचा प्रकारना भोगोनी सामग्री मलशे, अने सकल लोको तेनी प्रशंसा करशे.

जो देइ दीवयं जिणवरस्स, भवणंमि परमभत्तीए ॥
सो निम्मलबुद्धिधरो, रमइ नरो सुरविमाणेसु ॥ १ ॥

अर्थ— जे माणस परम भक्तिथी जिनेश्वर प्रभुना मंदिरमां

दीपक करे छे, ते निर्मल बुद्धिवालो अने देवविमानोमा क्रीडा करेछे

जो जिणवरस्स पुरउ, देइ पईवं पराइभत्तिए ॥
एमेव तस्स भज्जइ, पावपयंगो न संदेहो ॥ २ ॥

अर्थ– जे माणस जिनेश्वर प्रभुनी समीपे उत्कृष्ट भक्तिथी दीपक धरे छे, तेना पाप पतंगो बलीने भस्म थाय छे, तेमा संदेह नथी

जिणबिंबाणं पुरउ, दीवं दिन्नस्स पवरसद्धाए ॥
देहस्स होइ दीत्ति, रयणाणि बहुप्पयाराणि ॥ ३ ॥

अर्थ– परम श्रद्धाथी जिनबिंबनी पासे दीपक धरवाथी पोताना शरीरनी कांति वधे छे, तथा उत्तम रत्नो मले छे ते दीपकपूजापर हवे दृष्टांत कहेछे

मणियारपुर नामना नगरमा सूर्यना मंदिरमा एक स्वयंभू नामे पूजारो हतो. एक दहाडो कंइक कार्य प्रसंगे ते एक घांचीने घेर जइ तेल लावीने एक जिनमंदिरमा गयो त्यां तेणे गभारामा एक वस्त्राभूषणोथी शोभिती थएली जिनप्रतिमा दीठी ते प्रतिमानी पासे तेणे भावथी दीपक कर्यो, अने तेनु तेज जोइ ते विचारवा लाग्यो के, पूर्वे में घणा देवोनी पासे दीपको कर्या छे, पण आ देवनी पासे करेला दीपको सरखा शोभता नहोता. एम चिंतवता तेणे मनुष्य भवनुं आयुष्य बांध्यु अनुक्रमे त्यांथी काल करीने ते वीतशोका नामनी नगरीमा तेजसार नामे राजा थयो त्यां केटलाक भोगो भोगव्याबाद वैराग्यथी पोताना मणिरथ कुमारने राज्य सोंपीने तेणे केवली भगवान पासे दीक्षा लीधी. दीक्षा पाली काल करी ते विजय विमानमा देव थयो, तथा त्यांथी चवीने ते मोक्षे जशे आ तेजसारनी कथा पांचसो ग्रंथोना प्रमाणवाली छे, अने तेनु विशेष वृत्तांत प्राकृतभाषामा मनोरमाना चरित्रथी वांची लेवु

दीपं विधाय देवाना-मग्रतः पुनरेव न ॥
गृहकार्यं च कर्तव्यं, तिर्यग्रूपी भवेन्नरः ॥ १ ॥

अर्थ— देवोनी पासे दीपक धरीने, ते दीपकथी घरनुं कार्य करवुं नहीं, नहींतर तेम कर्याथी तिर्यंचपणुं प्राप्त थाय छे.

इंद्रपुर नामना नगरमां ज्यारे अजितसेन नामे राजा राज्य करतो हतो, त्यारे त्यां एक देवसेन नामे शेठ वसतो हतो. तेज नगरमां एक धनसेन नाममो उंटोनो व्यापारी रहेतो हतो. तेने घेर रहेली उंटणीउमांथी एक उंटणी हमेशां देवसेनने घेर आववा लागी. ते उंटणीने धनसेन लाकडीउनो प्रहार करे तोपण ते ते देवसेननुं घर छोडे नहीं. पछी एवुं जाणीने देवसेने ते उंटणीने वेचाती लीधी. एक दहाडो ते नगरमां धर्मघोष नामना आचार्य पधार्या, तेमने देवसेन शेठे पूछ्युं के, हे भगवन्! आ उंटणी मारुं घर छोडीने वीजे कोइ पण स्थानके रहेती नथी, तेनुं शुं कारण छे? त्यारे आचार्यजीए पण पोताना ज्ञानथी जाणीने कह्युं के, हे श्रेष्ठी! आ उंटणी पूर्वभवमां तमारी माता हती. ते हमेशां जिनेश्वरप्रभु आगल दीपक करीने, तेज दीपकथी पोतानां घरनां कार्यो करती हती. ते दीपकमां काकडी सलगावीने चूलो संधरूकती हती. ते कर्मनी आलोचना नहीं लेवाथी ते उंटणी थइ छे, अने पूर्वभवना स्नेहथी ते तारा घरनुं आंगणुं छोडती नथी. एम विचारीने देवसंबंधि निर्माल्य वस्तु पण ग्रहण करवी नहीं, तेम देवद्रव्य व्याजे पण राखवुं नहीं.

ढोअइ बहुभत्तिजुउ, नेवज्जं जो जिणंदचंदाणं ॥
भुंजइ सो वरभोए, देवासुरमणुअनाहाणं ॥ १ ॥

अर्थ— जे माणस बहुभक्तिपूर्वक श्री जिनेश्वर प्रभुने नैवेद्य धरे छे, ते माणस देव, दानव, अने मनुष्योना अधिपतिउना उत्तम भोगो भोगवे छे.

पकवान, पुडला, जात, दाल, घी, जुदी जुदी जातिना शाक, दहीं, शीखड, लवंग, विगेरे नैवेद्य जाणवा एवी रीते नैवेद्य पूजा जाणवी

वरतरुपवरफलाइं, ढोयइ जो जिणवरस्स जत्तीए ॥
जम्मंतरेवि सहला, जायंति मणोरहा तस्स ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणस जक्तिपूर्वक श्री जिनेश्वर प्रजु आगल उत्तम वृक्षोना सुदर फलो धरे छे, तेना सर्व मनोरथो जन्मांतरमा सफल थाय छे

नालीएर, सोपारी, दाडिम, आंबा विगेरे फलो जाणवा एवी रीते फलपूजा जाणवी

ढोयइ जो जलजरियं, कलसं जत्तीइ वीयरायाणं ॥
सो पावइ परमपयं, सुपसन्नं जावसुद्धीए ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणस जक्तिथी श्री वीतराग प्रजुने जलथी जरेलो कलश चडावे छे, ते जावशुद्धिथी मोक्षपदने पामे छे

कर्पूर, केसर, चदन, कस्तुरी विगेरे सुगधि द्रव्योथी मिश्रित करेला जलोथी जलपूजा जाणवी

आ आठे प्रकारी पूजापर तेना फलोना दृष्टातो पूजाष्टक नामना ग्रथथी वाची लेवा

मनो वाक्कायवस्त्रोर्वी-पूजोपकरणस्थितौ ॥
शुद्धिः सप्तविधा कार्या, श्रीजिनेंद्रार्चनक्षणे ॥१॥

अर्थ– श्री जिनेश्वर प्रजुनी पूजा समये, मनशुद्धि, वचनशुद्धि, कायशुद्धि, वस्त्रशुद्धि, जूमिशुद्धि, पूजानां उपकरणोनी शुद्धि, तथा स्थितिशुद्धि, एम सात प्रकारे शुद्धि करवी

घर दुकान, व्यापार तथा स्त्री आदिकना ध्यानना परिहारथी

मननी शुद्धि थाय छे, सावद्यवचनना परिहारथी अने मौन धारण करवाथी वचनशुद्धि थाय छे; कह्युं छे के, विचक्षण माणसोए व्याख्या वखते, पूजा वखते प्रतिक्रमण वखते, ज्ञोजन वखते, गमनवखते तथा वीजाउनां दूषणो वोलवामां मौन रहेवुं. वली सावद्य कार्यने साधनारी एवी हाथनी के ज्ञृकुटीनी संज्ञा पण करवी नहीं. ते पर जिणह कोटवालनुं दृष्टांत कहे छे.

एक दहाडो ज्ञीमराजाए जिणह कोटवालने तेनी वहादुरीथी खुशी थइने धोलका नगर आप्युं. ते नगरमां तेनी वाहादुरीथी कोइ पण चोर के लुंटारा वसता नहोता, अने तेथी ते पोतानुं निष्कंटक राज्य चलावतो हतो. त्यां तेणे श्री कलिकुंम पार्श्वनाथादिकना चार जिनमंदिरो वंधाव्यां, अने तेमां मौन धरीने ते त्रिकाल पूजा करतो हतो. एक दहाडो सौराष्ट्रना रहेवासी कोइक चारणे तेनी परीक्षा माटे राजानो एक उंट चोर्यो. त्यारे पोलीसना माणसो ते चारणने वांधीने जिणह कोटवालपासे लेइ गया. ते वखते मध्यान्हकाल होवाथी कोटवाल जिनमंदिरमां एकाग्र मनथी मौन धरीने पूजा करतो हतो. पोलीसना माणसोए तेने कह्युं के, आ उंटना चोरने अमोए पकड्यो छे. ते सांज्ञली कोटवाले आंगलीनी संज्ञा करीने तेनुं मस्तक छेदवाने तेउने हुकम कर्यो. पण ते पोलीसना माणसो समजी शक्यां नहीं. ते जोइ कोटवाले पुष्पनुं एक डींटीउं तोमीने संज्ञा करी. ते जोइ ज्ञयज्ञीत थएला चारणे कह्युं के,

इकजिणहा नइ जिणवरह, न मिलइं तारेतार
जेहिं अमारणपूजाइ, ते किम मारणहार ॥ १ ॥
इक्का चोरी सा करी, जा खोलडइ न माइ ॥
वीजा चोरी जु करइ, तु चारण चोर न थाइ ॥ २ ॥

ते सांजली मंत्रिए मिथ्याडुःकृत देड, तेनु स्वरूप पत्नीने, ते चारणने पेहेरामणी सहित रवाना कर्यो

स्नानादिकनीशुद्धि पूर्वक कायशुद्धि करवी उपलक्षणथी जिनपूजन करता शरीरे खरज करवी नहीं, तेम थुकवु के श्लेश्मादिक कहाडवुं नहीं साधेलु, वलेवु, फाटेलु, अने परनुं वस्त्र जिनपूजा करता नहीं पेहेरवु, एवी रीते वस्त्रशुद्धि जाणवी मल, तथा श्लेश्मादिक अशुचि पदार्थोथी अपवित्र थएली भूमिपर रही देवपूजा करवी नहीं उपलक्षणथी कलश, रकाबी, लोटा विगेरे पूजाना उपकरणोने घरना कार्योमा वापरवा नहीं चोर्यासी प्रकारनी आशातना वर्जवाथी स्थितिशुद्धि थाय छे

संसारपारगं वीत-रागं मुक्तिसुखप्रदम् ॥
चंपकादिकविस्तीर्ण-कुसुमैः पूजयेद्बुधः ॥ १ ॥

अर्थ– आ ससाररूपी समुद्रथी पार गएला, अने मोक्षसुखने देनारा एवा श्री वीतराग प्रभुने चपक आदिक प्रफुल्लित पुष्पोथी डाह्या माणसे पूजवा

जिनपूजा समये अपवित्र पुष्पो वापरवा नहीं, तेम हाथथी पडेला, पृथ्वीपर पडेला, पगे अडकेला, सुकाएला, खराब वस्त्रमा राखेला, नाभिथी नीचे धारण करेला, दुष्ट लोकोथी स्पर्शित थएला, कीडाओथी खवाएला विगेरे दूषणयुक्त थएला पुष्पो जिनपूजामा वापरवा नहीं जे माणस दूषणयुक्त पुष्पोथी जिनपूजा करे छे, तेने पण तेवुज मळे छे. तेपर दृष्टात कहेछे

कामरूप नामना नगरमा मातंगोना कुलमा एक दातो सहित पुत्रनो जन्म थयो एवी रीतनो तेने जोइ तेनो पिता तो नाशी गयो, अने तेथी ते पुत्रनी माता भयथी ते पुत्रने घरनी बहार छोडी आवी. एटलामा रयवाडीए चडेला राजाए ते बालकने जोइ तेने लेइ लीधो, अने पालीपोषीने मोटो कर्यो पत्नी दीक्षा

लवानी इच्छाथी राजाए तेने राज्यनी गादीपर बेसाड्यो, अने पोते दीक्षा लीधी. केटलेक काले ते राजऋषिने ज्ञान थवाथी ते ते तेने प्रतिबोधवामाटे त्यां पधार्या. ते समये राजा लोकोनी साथे तेमने वांदवा माटे गया. ते वखते पेली मातंगी पण तेमने वांदवा माटे त्यां आवी हती. राजाने जोइ तेणीने अत्यंत हर्ष थयो, अने राजाने पण तेणीनापर मातृस्नेह आव्यो. ते समये ते राजऋषिए सर्व वृत्तांत तेमने कही संभलाव्यो. पछी राजाए ज्यारे तेमने पोताना पूर्व भवनो वृत्तांत पूछ्यो, त्यारे राजऋषिजीए कह्युं के, तुं पूर्व भवमां कोइक नगरमां महा धनाढ्य व्यापारी हतो. एक समये जिनपूजा करतां पद्मासनपर पडेलां केटलांक पुष्पो तें प्रभुने चडाव्यां हतां. त्यारबाद ते कर्मनी आलोचना नहीं करवाथी तुं मृत्यु पामीने आ मातंगना कुलमां उत्पन्न थयो. पण जिनपूजाना प्रभावथी तने राज्य मल्युं. ते सांभली ते राजाने जातिस्मरण ज्ञान थयुं, अने तेथी दीक्षा लेइ ते स्वर्गे गयो, अने त्यांथी मोक्षे जशे. एवी रीतनी कथा सांभलीने अशुचि पुष्पोथी जिनपूजा करवी नहीं. वली दमयंतीए पोताना वीरमतीना पूर्व भवमां चोवीसे जिनेश्वरोनी रत्नोनां तिलकोथी पूजा करी हती, अने तेथी तेणीना ललाटमां महा तेजस्वी तिलक हतुं, अने त्रण खंडना स्वामी नलराजानी ते पटराणी थइ हती. वली पुष्पपूजा करवाथी तीर्थंकरनी पदवी पण मले छे, केमके, तीर्थंकरो पण पूर्वना तीर्थंकरोनीज पूजा करवाथी तीर्थंकर पदने पाम्या छे.

धूपं दहति पापानि, दीपो मृत्युविनाशकः ॥
नैवेद्यैर्विपुलं राज्यं, प्रदक्षिणा शिवप्रदा ॥ १ ॥

अर्थ—धूपपूजा पापोने बाले छे,दीपक मृत्युने नाश करनारो छे, नैवेद्यथी विस्तीर्ण राज्य मले छे,अने प्रदक्षिणा मोक्षने आपनारी छे.

वीतराग प्रभुनी स्तोथी पूजा करवाथी चक्रवर्तिनी पदवी मले छे, वधारे शु कहेवु ? तेथी मोक्षनी पण प्राप्ति थायछे

वीतरागं स्मरन् योगी, वीतरागत्वमश्नुते ॥
ईलिका भ्रमरीभीता, ध्यायंती भ्रमरीं यथा ॥१॥

अर्थ– वीतरागनु स्मरण करतो थको योगी वीतरागपणु पामे छे, जेम भमरीने ध्यावती एवी ईलिका भ्रमरीपणाने पामी

जिनस्य पूजनं हंति, मातः पापं निशाभवम् ॥
आजन्मविहित मध्ये, सप्तजन्मकृतं निशि ॥ १ ॥

अर्थ– प्रभाते करेलु जिनपूजन रात्रिना पापोनो नाश करे छे, मध्यानकाले करेलुं जिनपूजन जीवितपर्यंतनु पाप नाश करे छे, तथा रात्रिए करेलु जिनपूजन सात भवोना पापोनो नाश करे छे

एवी रीते योग्य अवसरे करेली जिनपूजा लाभकारक थायछे कह्यु छे के,

जलाहारौषधस्वाप-विद्योत्सर्गकृतिक्रियाः ॥
सत्फलाः स्वस्वकाले स्यु-रेवं पूजा जिनेश्वरे ॥१॥

अर्थ– जलपान, भोजन, औषधग्रहण, निद्रा, विद्या, तथा मलशुद्धि आदिक क्रियाओ पोतपोताने अवसरे करवाथी जेम सफल थाय छे, तेम जिनपूजा पण जाणवी

ते जिनपूजा पण पेथडशाहनी पेठे एकाग्र मनथी करवी पेथडशाह शेठ हमेशां त्रिकाल जिनपूजन करता हता एक दहाडो ते पूजा समये सिद्धराज राजाए तेने पाच हजार माणसो मोकलीने बोलाव्यो, पण पूजाना एकाग्रपणाथी ज्यारे तेणे जवाब आप्यो नहीं, त्यारे राजा पोते त्या आव्यो ते समये पेथडशाहने देवपूजामा लीन थएलो जोइने तेनी पासेना पुष्पो आपनाने बेठेला माणसने उठाडीने राजा पोते गुप्त रीते बेसीने पुष्पो आपवालाग्यो

पण पुष्पो आपवानी विधिने नहीं जाणवाथी ते वीजां वीजां पुष्पो आपवा लाग्यो. ते जोइ पेथडे पाछुं वालीने जोयुं, तो राजाने जोया; तेज वखते ते उज्ञो थवा जतो हतो, पण सिद्धराजे तेनो हाथ झालीने तेने वेसाडी दीधो, अने देवपूजामां तेनुं एकाग्रपणुं जोइने खुशी थइ कहेवा लाग्यो के, हे पेथडशाह ! हुं तमोने वोलावुं ते वखते जो तमो जिनपूजामां हो तो तमारे आववुं नहीं. एम कहीने राजा पोताने स्थानके गयो. एवी रीते एकाग्र चित्तथी त्रिकाल देवपूजन करवुं.

स्वर्गस्तस्य गृहांगणं सहचरी साम्राज्यलक्ष्मीः शुभ्रा
सौभाग्यादिगुणावलिर्विलसति स्वैरं वपुर्वेश्मनि ॥
संसारः सुतरः शिवं करतलक्रोडे लुठत्यंजसा
यः श्रद्धाभरभाजनं जिनपतेः पूजां विधत्ते जनः ॥१॥

अर्थ– श्रद्धाना समूहनो भाजनरूप एवो जे माणस श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजा करे छे, तेने स्वर्ग तो घरना आंगणांरूप थाय छे, मनोहर एवी राज्यलक्ष्मी तो तेनी सोवतण थाय छे. तेम तेना शरीररूपी घरमां सौभाग्यादिक गुणोनी श्रेणि विलास करे छे, संसार सुखेथी तराय छे, अने मोक्ष तो तुरत तेनी हथेलीमां आवीने रहेछे. (तेपर दृष्टांत कहेछे.)

देवपाल नामे कोइक गोवाल गायोने वनमां चरावतो हतो. एक दहाडो नदीनी पडी गएली भेखडमां तेणे एक जिनप्रतिमा जोइ. पछी तेणे वनमांज एक झुंपडी बांधीने तेमां ते प्रतिमाने तेणे स्थापन करी, अने एवो अभिग्रह लीधो के, आ प्रतिमानी पूजा कर्याविना हुं भोजन करीश नहीं. एवी रीते हमेशां ते प्रतिमाने ते पूजवा लाग्यो. एक दहाडो नदीमां पूर आव्युं, अने ते पूर सात दिवसोसुधि रह्युं, अने तेथी ते देवपालने सात उपवासो थया. आठमे दिवसे पूजा करीने तेणे भोजन कर्युं, तेनी

एवी दृढता जोइने शासनदेवीए तुष्टमान थइ तेने वरदान मागवानुं कह्युं त्यारे तेणे पासेना एक नगरनुं राज्य माग्यु शासनदेवीए पण ते राज्य तेने आप्युं पछी केटलाक अहंकारी सामंतो, जेओ ते देवपालनी आज्ञा नहीं मानता हता, तेओने पण तेणीए वाधीने वश कर्या जीवित पर्यंत राज्य पालीने ते स्वर्गे गयो (एवी रीते जिनपूजानुं फल जाणीने तेमा उद्यम करवो.)

जिनपूजनं जनाना, जनयत्येकमपि संपदो विपुलाः ॥
जलमिव जलदविमुक्तं, काले शस्यश्रियो ह्यखिलाः॥१॥

अर्थ– एक जिनपूजन पण (पुण्यानुबंधि पुण्यथी) माणसोने विस्तीर्ण सपदाओ आपे छे, केमके आर्द्रादिक अवसरे वरसादथी पडेलु पाणी धान्यनी सघली संपदाओने आपे छे

(तेपर दृष्टांत कहेछे)

एक पर्वतमा एक भील अने भीलडी वसतां हता एक दहाडो त्या कोइ जैनमुनि आवी चड्या ते मुनिए तेओनी पासे जिनपूजानु फल कह्यु ते सांभली भीलडीए पोताना लघुकर्मपणाथी ते अंगीकार कर्यु, अने त्यारथी ते भीलडी वनमा रहेला एक जिनमंदिरमा जइने श्री ऋषभदेव प्रभुने पूजवा लागी ते जोइ भीले तेणीने कह्यु के, अरे!! आ तो वाणीआना पारसनाथ छे, माटे ते आपणे पूजवाना नथी एवी रीते ते भील तेणीने वारंवार वारतो, पण भीलडीए पोतानु कार्य तज्युं नहीं अनुक्रमे केटलेक समये ते भीलडी काल करीने पासेना एक नगरना राजानी पुत्री थइ यौवनपणु पामीने एक दहाडो ज्यारे ते झरुखामा बेठी हती, त्यारे तेज भीलने त्याथी जतो तेणीए जोयो, अने तेने जोवाथी तेणीने जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयु पछी ते भीलने तेणीए बोलावीने कह्यु के, तु मने ओलखे छे? एवी रीते कहीने तेणीए तेने कह्यु के, पूर्वे भवमा ते मारु कह्यु

मान्युं नहीं. एवी रीते तेने उपदेश देइने तेने जिनपूजनमां दृढ कर्यो. ते राजपुत्री पण केटलुंक सुख जोगवीने स्वर्गे गइ.

माटे एम विचारिने जाग्यवान माणसे जावपूर्वक जिनजक्ति करीने पोतानुं जीवितव्य सफल करवुं. तेपर दृष्टांत कहेछे.

कोइएक नगरमां नंदक अने जद्रक नामना वे व्यापारीउ वसता हता. तेउ बन्नेनी डुकानो साम सामी हती. जद्रक हमेशां प्रजातमां उठीने पोतानी डुकाने जतो हतो, अने नंदक तो हमेशां प्रजातमां उठीने देवपूजा माटे जिनालयमां जतो हतो. ते जोइ जद्रक हमेशां मनमां एम विचारतो हतो के, धन्य छे आ नंदकने, के जे हमेशां प्रजातमां उठीने वीजुं कार्य छोडीने जिनपूजा करे छे. अने हुं महापापी दरीद्री धन मेलववानी इच्छाथी प्रजातमांज अहीं आवीने पामरोनां मुखो जोउं छुं, माटे मारां जीवतरने धिक्कार छे, एवी रीतना शुद्ध ध्यानरूपी जलथी ते हमेशां पोतानां कर्मोरूपी मेलने दूर करतो हतो, अने पुण्यरूपी वीजने सिंचतो हतो. नंदक हमेशां एम चिंतवतो हतो के, हुं ज्यारे देवपूजामां रोकाउं छुं त्यारे मह्ना पक्को जद्रक ग्राहको पासेथी खूव धन कमाइ ले छे; पण करुं शुं ? केमके में मूर्खे देवपूजानो अजिग्रह लीधो छे; हवे ते देवपूजाथी मलवानुं फल तो एकवाजु रह्युं, पण आथी तो उलटुं द्रव्य पण पेदा थइ शकतुं नथी. एवी रीतना कुविकल्पोथी नंदक पोतानुं पुण्य हारी गयो; एम विचारि डाह्या माणसोए एकतानथी जिनपूजन करवुं.

एकैव हि जिनपूजा, दुर्गतिगमनं नृणां निवारयति ॥
प्रापयति श्रियमखिला-मामुक्तेर्जक्तितो विहिता ॥ १ ॥

अर्थ– एकज जिनपूजा माणसोना दुर्गतिगमनने निवारे छे, तेम जक्तिथी छेक मोक्षसुधिनी सघली लक्ष्मीने प्राप्त करावे छे. (वली आ जिनपूजा सर्व पुण्यकरणीउमां मुख्य होवाथी का-

रण पछी नि संग यतिरूपण भव्य जीवोने तेनो उपदेश देइने वज्रस्वामिनी पेठे करावे छे)

फल पूजाविधातुः स्या-त्सौभाग्यं जनमान्यता ॥
ऐश्वर्य रूपमारोग्यं, स्वर्गमोक्षसुखान्यपि ॥ १ ॥

अर्थ– पूजा करनार माणसने, सौभाग्य, लोकोतरफनु मान, मोटाई, रूप, आरोग्यपणु, अने स्वर्ग तथा मोक्षना सुखो पण फलरूपे थाय छे कह्यु छे के,

खीरेण जोभिसेअ, करइ जिणदस्स भत्तिराएण ॥
सो खीरधवलविमलो, रमइ विमाणेसु चिरकाल ॥१॥

अर्थ– जे माणस भक्तिरागथी जिनेश्वरप्रभुने दूधथी अभिषेक करे छे, ते दूधसरखो उज्ज्वल अने निर्मल थईने लांबा वखतसुधि विमानोमा रमे छे

कचणमोत्तियविद्दुम-रयणाभरणेहिं भावसंजुत्तो ॥
जो पूयइ जिणंद, सो पावेइ सासयं ठाणं ॥ १ ॥

अर्थ– कंचन, मोती, परवाला तथा रत्नआदिकना आभरणोथी भावसहित जे माणस जिनेश्वरप्रभुने पूजे छे, ते खरेखर मोक्षसुख पामे छे (जेम श्रीवस्तुपालमत्रीए पोतेज भरावेला सवालाख जिनबिंबोने, तथा शत्रुंजयपरना जिनबिंबोने सुवर्ण अने रत्नोना आभूषणो पहेराव्या हता)

यः पुष्पैर्जिनमर्चति स्मितसुरस्त्रीलोचनैः सोऽर्च्यते
यस्त वंदत एकशस्त्रिजगता सोऽहर्निश वंद्यते ॥
यस्तं स्तौति परत्र वृत्रदमनस्तोमेन स स्तूयते
यस्तं ध्यायति क्लृप्तकर्मनिधनः स ध्यायते योगिभिः १

अर्थ– जे माणस चपक आदिक सुगंधि पुष्पोथी जिनेश्वर प्रभुनी पूजा करे छे, ते माणस विकस्वर थएला एवा देवागना-

उनां नयनोथी पूजाय छे. अने जे माणस प्रभुने एकज वखत वंदन करे छे, ते हमेशां त्रणे जगतोथी वंदाय छे. वळी जे माणस जिनेश्वरप्रभुनी स्तुति करे छे, ते परलोकमां इंद्रोना समूहथी स्तवाय छे, अने जे माणस तेमनुं ध्यान धरे छे, ते कर्मरहित थइने योगीउथी पण ध्यावाय छे.

नौरेषा भववारिधौ शिवपदप्रासादनिःश्रेणिका
मार्गःस्वर्गपुरस्य दुर्गतिपुरद्वारप्रवेशार्गला ॥
कर्मग्रंथिशिलोच्चयस्य दलने दंभोलिधारासमा
कल्याणैकनिकेतनं निगदिता पूजा जिनानां परा १

अर्थ– श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजा आ भवरूपी समुद्रमां नावसमान छे, तेम मोक्षपदरूपी मेहेलनी नीसरणी छे, स्वर्गपुरनो मार्ग छे, दुर्गति नगरनां द्वारमां प्रवेश करवाने आडी भागोळसरखी छे, भोगांतराय तथा दानांतराय आदिक कर्मोरूपी पत्थरोना समूहने भांगवामां वज्रधारासरखी छे, अने कल्याणना एक स्थानकरूप छे.

नेत्रानंदकरी भवोदधितरी श्रेयस्तरोर्मंजरी
श्रीमद्धर्ममहानरेंद्रनगरी व्यापल्लताधूमरी ॥
हर्षोत्कर्षशुभप्रभावलहरी भावद्विषां जित्वरी
पूजा श्रीजिनपुंगवस्य विहिता श्रेयस्करी देहिनाम्

अर्थ– श्री जिनेश्वरप्रभुनी करेली पूजा नेत्रोने आनंद करनारी छे, भवरूपी समुद्रमां वहाणसमान छे, कल्याणरूपी वृक्षनी मांजर छे, श्रीमान् धर्मराजानी नगरी छे, आपदारूपी वेलोने नाश करवामां धूमरीसरखी छे, हर्षनो उत्कर्ष तथा उत्तम भावोनी लहरीसरखी छे, भावशत्रुउने जीतनारी छे, तथा प्राणीउनुं कल्याण करनारी छे. (तेपर दृष्टांत कहे छे.)

जयंती नामनी नगरीमा एक नरसिंह नामे राजा हतो. ते निःपुत्रीउ हतो तेज नगरमा एक कमल नामे शेठ वसतो हतो, तेने रूप, लावण्य, सौभाग्य तथा विनयादिक गुणोथी मनोहर एवो सुदरकुमार नामे पुत्र हतो राजानी तेनापर अत्यंत प्रीति थवाथी तेणे तेने पुत्र करीने राख्यो, अने तेथी ते हमेशा राजानी-साथे अरधा आसनपर बेसतो एक दहाडो ते नगरमां एक श्रीपाल नामे कोटिध्वजशेठ बत्रीस जातना करीआणाउसहित व्यापार करवाने आव्यो तेणे रत्न, मोती, प्रवालाविगेरेथी एक सुवर्णनो थाल भरीने, तेपर एक दिव्यसुगंधिवालु एक हजार पांखडीउनुं कमल मुक्यु, अने ते थाल राजाने भेट कर्यो ते वखते कमलनी सुगधिथी सर्व सभा खुशी थई. राजाए पण ते कमल हाथमा लेइ विचार्यु के, आवुं मनोहर कमल मारे सुदरकुमारनेज आपवुं, एम विचारि तेणे ते कमल ते कुमारने आप्यु ते लेइ सुदरकुमार ज्यारे घेर आववा लाग्यो, त्यारे मार्गमा जिनमंदिर जोइ तेणे विचार्यु के, आ उत्तम कमलतो जिनेश्वर प्रभुने चडाववु तेज योग्य छे एम विचारी तेणे ते कमल जिनमंदिरमा आवीने जिनप्रतिमाना मुकुटपर मुक्युं, अने तेथी ते प्रतिमा बहुज सुदर देखावा लागी एटलामा त्या दर्शन करवा माटे व्यापारीनी चार पुत्रीउ आवी हती तेउए ते दीव्य कमल जोइने सुंदर कुमारनी अत्यत अनुमोदना करी अनुक्रमे ते सुदरकुमार ते चारे कन्याने परण्यो अने ते पुण्यथी ते पाचे त्याथी काल करीने देवलोकमा महा ऋद्धिवंत देवो थया त्याथी चवीने तेउ एक मोटा व्यापारीना पुत्रो थया, अने त्यापण एक दहाडो उत्तम जिनपूजा जोइने तेउने जातिस्मरण ज्ञान थयु. पछी दीक्षा लेइ केवलज्ञान पामी तेउ मोक्षे गया

दर्शनाद्दुरितध्वंसी, वदनाद्वांछितप्रदः ॥
पूजनात्पूरकः श्रीणां, जिनः साक्षात्सुरद्रुमः ॥१॥

अर्थ- जिनेश्वर प्रनु (तेमनां) दर्शनथी पापोनो नाश करनारा छे, वंदनथी वांछित अर्थने देनारा छे, पूजवाथी लक्ष्मीने पूरनारा छे, अने एवी रीते ते साक्षात् कल्पवृक्ष सरखा छे. (ते-पर दृष्टांत कहेछे.)

अर्बुदाचलना परमारवंशना राजा पाल्हणे एक पित्तलनी प्रतिमा गलावी नांखी, अने ते पापथी तेने गलत्कुष्टनो रोग थयो. गोत्रीउंए तेनुं राज्य लेइ लीधुं; पछी मृत्युना डरथी ते देशांतरमां गयो. एक दहाडो भ्रमतां थकां तेने शीलधवल नामना आचार्यजीनो मेलाप थयो. तेमनी पासे तेणे पोतानुं पाप कही बताव्युं गुरुए पण तेने प्रतिबोध आप्यो. पछी पश्चात्ताप थवाथी तेणे गुरुजीने चरणे नमी कह्युं के, हे भगवन्! आप कृपा करीने ते पातकना क्षयनो उपाय कहो? त्यारे गुरुए तेने कह्युं के, हे राजन्! हवे तमो जिनमंदिर तथा जिनप्रतिमा आदिक पुण्यनां कार्यों करो? ते सांभली तेणे पोताना नामथी प्रल्हादनपुर (पालणपुर) नामनुं नगर वसाव्युं, अने त्यां तेणे सुवर्णना शोल कोंगरांवालुं पाल्हणविहार नामनुं जिनमदिर बंधाव्युं. ते मंदिरमां तेणे श्री पार्श्वनाथजीनी प्रतिमा स्थापी. ते पुण्यना प्रभावथी तेना कुष्टरोगनो नाश थयो. जीवित पर्यंत जिनभक्ति करीने ते देवलोके गयो.

पापं लुंपति दुर्गतिं दलयति व्यापादयत्यापदं
पुण्यं संचिनुते श्रियं वितनुते पुष्णाति नीरोगताम् ॥
वैराग्यं विदधाति पल्लवयति प्रीतिं प्रसूते यशः
स्वर्गं यच्छति निर्वृतिं च रचयत्यर्चार्हतां निर्मिता ॥ १ ॥

अर्थ- करेली एवी श्री अरिहंत प्रभुनी पूजा पापने लोपे छे, दुर्गतिने दले छे, आपदाने नष्ट करे छे, पुण्यने एकठुं करे छे, लक्ष्मीने विस्तारे छे, आरोग्यपणाने पुष्ट करे छे, वैराग्य करे छे, प्री-

तिने नवपल्लव करे छे, यशने उत्पन्न करे छे, स्वर्ग आपे छे, तथा मोक्षने रची मेले छे

याति दुष्टदुरितानि दूरतः, कुर्वते सपदि संपदः पदम् ॥
भूषयंति भुवनानि कीर्तयः, पूजया विहितया जगद्गुरोः

अर्थ– जगतना गुरु एवा श्री तीर्थंकर प्रभुनी पूजा करवाथी दुष्ट पापो दूर जाय छे, संपदाउ पोतानु स्थानक करे छे, तथा कीर्तिउ भुवनने शोभावे छे (तेनापर दृष्टांत कहे छे)

वाणारसी नामनी नगरीमा देवपाल नामे एक व्यापारी वसतो हतो तेणे लक्ष्मीनु चंचलपणु जाणीने पोतानुं धन साते क्षेत्रोमा खरची नाख्यु, अने पोते चणावेला जिनमंदिरमा ते हमेशा विविध प्रकारनी पूजा करावतो हतो अनुक्रमे ते निर्धन थइ गयो, तेथी ते एक पासेना गाममा गयो, अने त्या खेती आदिक करीने घणीज मुशीबते ते पोतानी आजीविका चलाववा लाग्यो, तथा निर्धन होवाथी ते पोताना जिनमंदिरमा कइ पण पूजादिक कार्य करी शक्यो नहीं. ते जोइ प्रतिमाना अधिष्ठायक देवे विचार्यु के, हालमा आ मंदिरमा पूजादिक कार्य केम थतु नथी ? पछी अवधिज्ञानथी ज्यारे तेणे शेठनु स्वरूप जाण्यु, त्यारे तेनापर उपकार करवा माटे ते देव दूर देशमा रहेला एवा तेना भाणेजानु स्वरूप करीने तेने घेर आव्यो, अने पोतानी मामीने पूछ्यु के, मारा मामा क्या छे ? तेणीए कह्यु के ते खेतरे गया छे ते सांभळी ते मामाने मलवा माटे खेतरे गयो, अने त्या मामाने प्रणाम करीने तेणे तेनी आजीविकानु स्वरूप पूछ्यु त्यारे शेठे पण पोतानुं सर्व वृत्तांत तेने कही बताव्यु पछी ज्यारे मध्यान्हकाल थयो त्यारे भाणेजे कह्यु के, हे मामाजी ! चालो हवे आपणे भोजन माटे घेर जइए ते सांभळी मामाए कह्यु के, आटला माणाउ ज्यारे कपाइ रहेशे, त्यारे घेर जवाशे. ते सांभळी ते

नाणेज रूप थएला देवे ते सर्व सांगाउ एकदम वाढी नांख्या. अने तेनो नारो बांध्यो. पछी ते नारो लेइने जेवा तेउं बन्ने घेर आव्या के ते समये मामीए पोताना यारमाटे उत्तम नोजन करी राख्युं हतुं; पछी जेवी ते यारने नोजनमाटे बेसाडे छे, तेवा ते मामोनाणेज बन्ने घरमां दाखल थया. तेउंने आवता जोइ ते दुष्ट मामीए पोताना जारने ढोरनी कोडमां संताड्यो अने तेनापर घास नाखी दीधुं. नाणेजे पण पेलो सांगानो नारो ते यारपर नांख्यो. पछी मामो ज्यारे नोजनमाटे बेसवा लाग्यो त्यारे नाणेजे कह्युं के, हे मामाजी! तमो देवपूजा कर्याविना केम नोजन करो गे? त्यारे मामाए कह्युं के, निर्धनपणाथी ते सर्व कार्य हुं विसरी गयो छउं. त्यारे जिनपूजा विना नोजन न करवुं एवुं नियम नाणेजे मामाने आप्युं. पछी तेउं बन्ने ज्यारे नोजन माटे बेठा त्यारे दुष्ट मामीए तेउंने अत्यंत रसविनानुं नोजन पीरस्युं. ते जोइ नाणेजे कह्युं के, अरे! वासणमां रहेली लापसी, दाल, नात विगेरे पीरसोनी? ते सांनली मामीए ते नोजन पीरस्यां. पछी नोजन कर्या बाद नाणेजे कह्युं के, हे मामाजी! हवे तो चालो तो आपणे बजारमां जइएं. ते सांनली मामाए कह्युं के, हजु तो आ सांगाउमांथी अनाजना कणो कहाडवाना छे. ते सांनली नाणेजे मुशल लेइने ते नारापर जोरथी मारवा मांड्युं, अने तेथी अनाजना कणीआउतो छुटा पड्या, पण अंदर रहेला ते दुष्ट यारना हाडकां खोखरां थइ गयां. पछी नाणेजे मामीने कह्युं के, हवे तमो आ दाणा एकठा करी लेजो? एम कही तेउं बन्ने बजारमां गया. त्यार बाद शेठाणीए पोताना यारने तेमांथी कहाड्यो, तथा ज्यां रुधिर निकल्युं हतुं त्यां त्यां शंखनी चूर्ण दाबीने तेने पोताने घेर रवाना कर्यो. हवे ते नाणेजरूप थएला देवे हमेशां जिनपूजानुं माहात्म्य देखाडीने, तथा

द्रव्यनो भंडार पण देसामीने शेठने धर्ममा दृढ कर्यो पछी संपत्ति थवाथी तेणे पोताना एक पुत्रनो विवाह करवा मांड्यो तेमा मारु-वाने दिवसे ते शेठे सघला सगाउने तथा नातीलाउने जोजन माटे तेड्या, मामीए पोताना यारने पण नोतरुं आप्युं हतु अने तेथी ते पण स्त्रीनो वेष लेइने पंगतमा छेडे वेसी गयो ते वखते सघला पुरुषवर्गनी आगतास्वागता शेठ करवा लाग्या, अने जाणेज स्त्रीउनी आगतास्वागता करवा लाग्यो पछी स्त्रीउनी पंगतमा पीरसतो पीरसतो जाणेज ज्यारे ते यार आगल आवतो, त्यारे तेने धीमेथी ते कहेतो के, ते दिवसे सांढाउनी नीचे तुं हतो के? त्यारे ते कहे तो के, “नहीं, नहीं, हुं नहीं” त्यारे ते जाणेज लोकोने एम समजावतो के, आ स्त्री कहेछे के, मारे ते लाडु जोइता नथी एवी रीते वारवार कहीने ते जाणेजे तेने कयुं पण पीरस्युं नहीं पछी ते वातनी मामीने खबर पडवाथी तेणीए गुप्तरीते पोताना ते यारने वार लाडुउ आप्या, अने ते लाडुउ तेणे काखमा कचुक नीचे सताडी राख्या पछी जोजन कर्यावाद सर्व स्त्रीउ ज्यारे पोतपोताने घेर जवा लागी, त्यारे जाणेजे तेणीउने कह्युं के, तमो सर्वे मारा मामाना मारुवाने व-धावती जाउ? ते सांजली सघली स्त्रीउ पोताना हाथो उंचा क-रीने एक पछी एक वधावती चाली. अनुक्रमे ते स्त्रीवेषधारी यारनो पण वारो आव्यो, अने तेथी तेणे पोताना हाथो उंचा नहीं करता एमने एमज मंरूपने वधाव्यो. ते जोइ जाणेजे कह्युं के, एम वंधहाथे न वधावाय, एम कही वलात्कारे ज्यारे तेना हस्तो लावा कर्या, के तुरत पेला चोरेला लाडुउ नीचे जइ पड्या. पछी ते शेठाणीनुं सघलु दुष्ट वृत्तात लोकोमा जाहेर थयुं छे-वटे ते जाणेजरूप देव शेठने प्रतिबोधीने पोताने स्थानके गयो. शेठे पण दीक्षा लेइ तप तपीने पोतानु आत्मकार्य साध्यु.

श्रीमज्जिनेंद्रपदपंकजपूजनेन
ज्ञानक्रियाकलितसद्गुरुसेवनेन ॥
स्वाध्यायसंयमतपोविनयादिना च
कस्यापि पुण्यपुरुषस्य दिनानि यांति ॥ १ ॥

अर्थ— श्रीमान् जिनेश्वर प्रजुना चरणकमलोने पूजवाथी, ज्ञान क्रियावाला उत्तम गुरुने सेववाथी तथा सज्झायध्यान, संयम, तप, अने विनयादिकथी कोइ पुण्यशाली पुरुषनाज दिवसो जाय छे.

कोइक पंडित माणसज जिनेश्वर प्रजुने नमीने पोतानां मस्तकने, तेमना गुणो सांजलीने पोताना कर्णोने, तेमनी मूर्ति जोइने पोतानां नेत्रोने, तेमनुं स्तवन करीने पोतानी जिह्वाने, तेमनुं पूजन करीने पोताना हस्तोने, तेमने मंदिरे जइ पोताना चरणोने, तथा तेमनुं स्मरण करीने पोताना मनने पवित्र करे छे. जिनपूजन कर्या विनानी सर्व क्रिआउं निष्फल छे. कह्युं छे के, हे, नाथ! जेणे तमोने वांद्या नथी, पूज्या नथी, जक्तिथी स्तव्या नथी, तथा उत्तम ध्यानथी तमोने ध्याव्या नथी, तेणे वनमां रहेली मालतीनी पेठे पोतानो जन्म निरर्थक गुमाव्यो छे. माटे तेज माणसने धन्य जाणवो के, जेनुं द्रव्य जिनपूजा माटे वपराय छे. कह्युं छे के, जिनपूजा, जिनमंदिर, जिनबिंब, तथा जिनयात्रा आदिकमां विधिपूर्वक जे द्रव्य खरचाय छे, तेज सफल छे, बाकीनुं द्रव्य तो निष्फल छे. हवे तेपर दृष्टांत कहेछे.

गजपुर नामना नगरमां श्रीधर नामे एक वणिक् रहेतो हतो. तेणे एक दहाडो साधुउंना मुखथी जिनपूजानुं फल सांजल्युं. अने तेथी ते हमेशां त्रिकाल जिनपूजा करवा लाग्यो. एक दहाडो धूपपजा करतां थकां तेणे एवो अजिग्रह लीधो के, ज्यारे आ धूप थइ रहेशे त्यारे हुं अहींथी जइश. एटलामां त्यां एक

सर्प आवी चड्यो, तेने जोइने पण ते निर्जय थइने त्यां स्थिर रह्यो पछी क्रोधथी सर्प जेटलामा तेने डंखवा आव्यो के, तुरत शासन देवताए ते सर्पने उपाडीने दूर फेंकी दीधो, अने लक्ष्मीनी वृद्धि करनारु एक रत्न ते श्रीधर शेठने आप्यु ते रत्नना प्रजावथी ते कोटीध्वज थयो एक दहाडो तेणे लोकोना मुखथी सान्नळ्युं के, कामरूप नामना यक्षनी पूजा करवाथी सर्व वांछित फळे छे ते सान्नळी लोन्नने वश थइ तेणे ते यक्षनी पूजा करी, तथा लोकोना वचनथी तेणे चंडी, गणेश विगेरेनी पण पूजा करवा मांडी एम करता थका एक दहाडो चोरोनी धाडे आवीने तेनु सर्व ऊव्य लुटी लीधु अने तेथी तेनी आजीविका पण बहु डुःखथी चालवा लागी ते जोइ तेणे त्रण उपवास करीने गोत्रदेवीनी आराधना करी त्यारे तेणीए प्रत्यक्ष थइ कह्यु के, तें मने तजीने यक्ष, चंडी विगेरेनी आराधना करी छे, माटे ते तने ऊव्य आपशे, एम कही ते तो गुस्सामाज अंतर्ध्यान थइ गइ पछी तेणे शासन देवीनु आराधन कर्यु, तो तेणीए प्रत्यक्ष थइ तेने फरीने जैनधर्ममा दृढ कर्यो, तथा क्रोडोगमे सोनामोहोरो आपी त्यारबाद ते श्रीधर शेठ त्रिकाल जिनपूजा करतो थको छेवटे मृत्यु पामीने देवलोकमा देवपणे उत्पन्न थयो

वरपूजया जिनानां, धर्मश्रवणेन सुगुरुसेवनया ॥
शासनज्ञासनयोगैः, सृजंति सफलं निजं जन्म ॥१॥

अर्थ– (माणसो) जिनेश्वर प्रज्जुनी उत्तम पूजाथी, धर्म श्रवणथी, गुरुसेवाथी, तथा शासनोद्योतना योगथी पोतानो जन्म सफल करे छे

जिनपूजनविना राज्यादिक पण निष्फलज छे कह्युं छे के, जे माणस वीतरागप्रज्जुनु मंदिर के तेमनु बिंब, के तेमनी पूजा करतो नथी, तेनु राज्य, तेनु धन, तेनु शरीर, तेना आन्नूषणो, तेनी

पंडिताइ, तथा तेनुं उत्तम कुल पण शा उपयोगनुं छे ? क्रोध, राग, द्वेप तथा मानथी रहित थइने एकाग्रमनथी जिनपूजा करवी. धर्मने सांजलवाथी, जोवाथी, करवाथी, करावववाथी, तथा अनुमोदवाथी, पण ते छेक सात पेहेडीउं सुधि पवित्र करे छे. ते धर्मनुं श्रवण गुरुसेवाथी थाय छे. केमके, विचक्षण माणस पण गुरुनी सहायताविना धर्मने जाणी शकतो नथी. कारण के, उत्तम लोचनवालो माणस पण अंधकारमां रहेली वस्तुने दीपकनी सहायता विना जोइ शकतो नथी. ते पर दृष्टांत कहेछे.

गोपगिरिमां एक दहाडो केटलाक मातंग नाटककारो आव्या; तेउमां एक नटी घणीज स्वरूपवान हती. तेणीने जोइ त्यांनो आम राजा मोहित थयो, अने तेणीनी साथे जोगविलास करवानी तेनी इछा थइ. ते वावतनी तेना माननीक गुरु श्री बप्पजट्टीजीने खवर पडवाथी तेमणे राजाने प्रतिवोधवा माटे तेना मेहेलना द्वारपर अन्योक्तिनुं नीचे प्रमाणे काव्य खडीथी लख्युं.

शैत्यं नाम गुणस्तवैव जवतः स्वाजाविकी स्वछता
किं ब्रूमः शुचितां व्रजंत्यशुचयः संगेन यस्यापरे ॥
किं चातः परमस्ति ते स्तुतिपदं त्वं जीवितं देहिनां
त्वं चेन्नीचपथेन गछसि पयः कस्त्वां निरोद्धुं क्षमः ॥१॥

अर्थ- हे पाणी ! तारो गुण शीतल छे, तेम तारी स्वछता पण स्वाजाविक छे, वली तारां पवित्रपणानां अमो शुं वखाण करीयें ? केमके तारा संगथी वीजा अशुचि पदार्थों पण पवित्र थाय छे, वली तारा समान वीजी कइ पवित्र वस्तु छे ? तुं प्राणीउने जीवित आपनार छे; एवुं पण तुं जो नीच मार्गमां जशे, तो पछी तने अटकाववाने कोण समर्थ थशे?

इत्यादिक काव्योथी प्रतिवोधिने आचार्यजीए तेने ते अकार्यथी अटकाव्यो. आम राजाए पण तेथी जीवित पर्यंत परस्त्री-

गमननी बाधा लीधी, अने ते पापना प्रायश्चित्त माटे तेणे जिनमंदिर बंधाव्युं इत्यादि तेनो विशेष वृत्तांत वप्पभट्टीप्रबंधथी जाणी लेवो तथा हेमचंद्राचार्य अने कुमारपाल राजा आदिकना पण गुरुमहात्म्यना प्रबंधो जाणी लेवा

अज्ञानतिमिरांधाना, ज्ञानांजनशलाकया ॥
नेत्रमुन्मीलितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ १ ॥

अर्थ– अज्ञानरूपी अंधकारथी अंध थएला माणसोना नेत्रने जे गुरुमहाराजे ज्ञानरूपी अजनशलाकाथी खुल्ला कर्यां छे, एवा श्री गुरुमहाराजप्रते नमस्कार थाओ ॥

जिनबिंबार्चनं सेवा, गुरूणा प्राणिनां दया ॥
शमो दानं तपः शील-मेष धर्मो जिनोदितः ॥ १ ॥

अर्थ– जिनबिंबनी पूजा, गुरुनी सेवा, प्राणीउंपरनी दया, समता, दान, तप, अने शील, ए रूप धर्म श्री जिनेश्वरोए कह्यो छे

माणसोए एवी रीतनो धर्म आराधीने पोताना जन्मने सफल करवो कह्यु छे के, जिनपूजा, गुरुसेवा, जीवदया, सुपात्रदान, गुणोनो अनुराग, तथा आगमश्रवण एटला आ मनुष्य जन्मरूपी वृक्षना फलो छे तेमा पण जिनपूजा छे ते, अत्यंत मंगलकारी, पापोने नाश करनारी, तथा मनोरथोने पूरनारी छे ते पूजाना ध्यानथी पण अत्यंत लाभ थाय छे

तेपर दृष्टांत कहेछे

काकंदी नामनी नगरीमा ज्यारे जितारि नामे राजा राज्य करतो हतो, त्यारे त्या एक महा दलिद्री डोशी वसती हती. एक दहाडो त्या श्री वीर प्रभु आवीने समोसर्या. तेमने वादवा माटे जितारि राजा प्रजा सहित तेमनी पासे आव्यो ते अवसरे ते वृद्धडोशी त्याथी लाकडानो भारो लेइने चाली जती हती ए-

टलामां राजादिकथी पूजाता श्री वीर प्रभुने तेणीए पण जोया. तेमने जोइ अत्यंत हर्षथी विस्मित थइने ते विचारवा लागी के, अहो आ जगतमां एक आज खरेखर देव छे, केमके, तेमने सुर असुर विगेरे आवीने सेवे छे. में पूर्व भवमां खरेखर आवा वीतराग प्रभुने पूज्या नथी, अने तेथी आ भवमां हुं आवुं कष्ट सहन करुं छुं. माटे हवे आ समये तो ते श्री वीर प्रभुने पूजुं, के जेथी आवता भवमां मने कष्ट सहन करवुं पडे नहीं. एम विचारिने ते डोशी तो त्यां काष्ठनो भारो छोडीने, तथा केटलांक त्यांथी पुष्पो लेइने प्रभुने पूजवामांटे तुरत आवी, पण घरूपणने लीधे तेनी आंखो नबली होवाथी ते मार्गमां पत्थरनी ठेस लागवाथी पडी गइ, अने त्यां रहेलो एक खीलो तेना मस्तकमां खुंची जवाथी ते त्यांज मृत्यु पामीने, पूजाना ध्याननना प्रभावथी देव रूपे थइ. त्यां अवधिज्ञानथी पोताना पूर्वभवनो वृत्तांत जाणीने ते देव श्री वीर प्रभुने वांदवा माटे आव्यो. एटलामां त्यां जितारि राजा पण आवी पहोंच्यो, तथा ते देवने जोइ तेणे प्रभुने पूछ्युं के, हे भगवन्! आ देव अत्यंत कांतिवालो केम छे? ते सांभली प्रभुए कह्युं के, हे राजन्! तें मार्गमां जे डोशीने मृत्यु पामेली जोइ छे, तेनोज जीव अमारी पूजाना ध्यानथी आ देवरूपे थयो छे, अने ते हलुकर्मी होवाथी थोडीज मुदतमां मोक्षे जशे.

जिनभवनं जिनबिंबं, जिनपूजां जिनमतं च यः कुर्यात्॥
तस्य नरामरशिवसुख-फलानि करपल्लवस्थानि ॥ १ ॥

अर्थ– जिनमंदिर, जिनबिंब, जिनपूजा, तथा जिनमतने जे करेछे, तेने मनुष्य, देव, तथा मोक्षसुखनां फलो हथेलीमां आवे छे. कह्युं छे के, काष्ठ आदिकनां जिनमंदिरमां जेटलां परमाणुओ छे, तेटलां लाख वर्षोसुधि तेनो कर्ता स्वर्ग भोगवनारो थाय छे.

अहीं ३६ हजार जिनप्रासाद बंधावनार संप्रति राजा, चौदसो चम्मालीस जिनप्रासाद बंधावनार कुमारपाल राजा, पांचहजार जिनप्रासाद बंधावनार वस्तुपाल मंत्री, शत्रुंजय, तथा भृगुकच्छादिकनो उद्धार करनार वाहरू मंत्री, चोर्यासी जिनप्रासाद बंधावनार पेथरुशाह, तथा साजन कोटवाल आदिकना दृष्टांतो जाणी लेवा

जिनबिंब करावनारने, कुगति, दलिद्रता के दुर्भाग्यपणु पण आवतु नथी अहीं सवाक्रोड जिनबिंबो जरावनार संप्रति राजा, सवालाख बिंबो जरावनार वस्तुपालमंत्री, जावरुशाह आदिकना दृष्टांतो जाणी लेवा

वली जे माणस जिनपूजा करे छे, तेने चक्रवर्तीपणु, वासुदेवपणु, तीर्थंकरपणु, तथा इंद्रपणु विगेरे उत्तम पदवीउं प्राप्त थाय छे, अने छेवटे मोक्षसुख पण मले छे

पूजा, पच्चरकाण, पडिकमणुं, पोसह तथा परोपकार ए पांचे पकारो आ जगतमां दुर्लज छे जिनपूजा प्रजावतीनी पेठे करवी पच्चखाण कपर्दी यक्षनी पेठे करवु पडिकमणु पण पदसंपदा सहित मौनमुद्राथी एक चित्तथी करवुं तेपर दृष्टांत कहे छे

दील्हीमां साजणसिंह नामे एक श्रावक वसतो हतो ते हमेशा बन्ने वखत पडिकमणु करतो हतो अने तेने एवु नियम हतु के, पडिकमणाविना मारे जोजन करवु नहीं एक दहाडो पीरोजशाह बादशाहे तेने केदखाने नाख्यो त्यां रही तेणे चोकीदारोने पचास सोनामोहोरो आपीने पचास पडिकमणां कर्यां. एटलामां बादशाहे तेनापर तुष्टमान थइने तेने पेहेरामणी आपी छोडी मेल्यो, अने तेथी ते वाजित्रादिकना मोटा उत्सवपूर्वक पोताने घेर गयो ते जोइ जय पामेला ते चोकीदारो जेटनो मिष करीने तेने ते पचास सोनामोहोरो पाछी देवा आव्या. ते वखते शेठे तेउने कह्युं के, ते समये जो तमोए पचास तो शु? पण प-

चास हजार सोनामोहोरो मागी होते तो हुं तमोने ते आपीने पण मारुं प्रतिक्रमण करवानो हतो. एम कही तेणे वहुमानपूर्वक ते सोनामोहोरो तेउने आपी दीधी.

पर्वतिथिने दिवसे पौषध करवो.

पांचमा परोपकारनुं वर्णन ग्रंथकार अरधा श्लोकथी कहेछे.

परोपकारः पुण्याय, पापाय परपीडनम् ।

अर्थ–परोपकार छे ते पुण्य माटे थाय छे, तथा परने जे दुःख देवुं ते पापने अर्थे थाय छे.

अहीं श्रीकृष्ण, तीर्थंकर प्रभुउ, मुनिसुव्रतस्वामी विगेरेनां दृष्टांतो पोतानी मेलेज जावी लेवां.

श्रीकृष्णे संतुष्ट थएला देवे दीधेली जेरी वगाडीने द्वारिका नगरीमां वारंवार छ मासने अंते मरकीना उपद्रवने शांत कर्यो हतो. तीर्थंकरोए सांवत्सरिक दान देइने जगतने अनृणी करेलुं छे. मुनिसुव्रतस्वामिजी पण प्रतिष्ठानपुरथी एक रात्रिमां साठ योजन विहार करीने अश्वने प्रतिवोधवा माटे तथा तेनी रक्षा माटे भृगुकच्छमां आवेला हता. इत्यादि परोपकारनां घणां दृष्टांतो शास्त्रोमां प्रसिद्ध छे.

उपसर्गाः क्षयं यांति, छिद्यंते विघ्नवल्लयः ॥
मनः प्रसन्नतामेति, पूज्यमाने जिनेश्वरे ॥ १ ॥

अर्थ– श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजा करवाथी उपसर्गोनो नाश थाय छे, विघ्ननी वल्लीउ छेदाइ जाय छे, तथा मनने आनंद थायछे.

जेम पूर्वभवमां क्रोध पामेला द्वैपायन असुरे द्वारिका नगरीनो भंग करवाने इच्छयुं हतुं, पण नगरना लोकोए जिनपूजा, स्नात्रपूजा, तथा आंबेल आदिक तपो कर्यां, अने ते पुण्यथी वार वर्षोसुधिमां त्यां कंइ पण उपद्रव थयो नहीं. अने पछी लोकोनां पुण्य शिथिल थवाथी ते उपसर्ग त्यां थयो. श्री शांति-

नाथ प्रभु पण ज्यारे गर्भमा हता, त्यारे तेमनी अचिरा माताजीना स्नानोदकथी मरकीनो उपद्रव शांत थयो हतो हालमा पण अष्टोत्तरी पूजाथी भूत, प्रेत, पिशाच आदिकथी थता उपद्रवो शांत पामेछे

पूजाकोटिसमं स्तोत्रं, स्तोत्रकोटिसमो जपः ॥
जपकोटिसमं ध्यानं, ध्यानकोटिसमो लयः ॥ १ ॥

अर्थ– क्रोडो जिनपूजा करवाथी जे पुण्य थायछे, ते पुण्य एक जिनगुणोना स्तवनथी थाय छे, अने क्रोमोगमे तेवा जिनस्तवनोथी जे पुण्य थाय छे, ते पुण्य नमस्काररूप जिनेश्वर प्रभुना जपथी थाय छे, तेम क्रोमोगमे तेवा जपथी जे पुण्य थायछे, ते पुण्य प्रभुना निरक्षर ध्यानथी थायछे, अने जे पुण्य तेवा क्रोमो गमे ध्यानोथी थायछे, ते पुण्य मोह, मान, मद विगेरेथी रहित थइने एकाग्रताथी तेमा लीन थवाथी थाय छे. पण ते सर्वमा उत्तम भाव होवो जोइए कह्यु छे के,

मंत्रे देवे गुरौ तीर्थे, दैवज्ञे स्वप्नभेषजे ॥
यादृशी भावना यस्य, सिद्धिर्भवति तादृशी ॥ १ ॥

अर्थ– मंत्रमा, देवमा, गुरुमा, तीर्थमा, निमित्तिआमा, स्वप्नमा, तथा औषधमा जेवी जेनी भावना तेवी सिद्धि थायछे हवे तेपर दृष्टांत कहेछे

कुसुमपुर नामना नगरमा धनसार नामे एक शेठ हतो, ते हमेशा त्रिकाल जिनपूजा करतो हतो एक दहाडो तेणे पोताना न्यायोपार्जित द्रव्यथी एक जिनमंदिर बधाव्युं पण ते कार्य तेना पुत्रोने रुच्यु नहीं कर्मवशे अनुक्रमे ते शेठ निर्धन थयो, त्यारे तेना पुत्रो तेने कहेवा लाग्या के, तमोए पुण्य कर्यु, तेथी सर्व धन नष्ट थयु एवी रीते सांभलता छता पण शेठ तो श्रद्धा राखीने हमेशा थोमु थोमु पण पुण्य करवा लाग्यो एक दहामो

गुरुए तेने पूछयुं के, हालमां तमोने सुख तो छेनी ! त्यारे तेणे कह्युं के, संतोषरूपी सुख छे, पण लोकोमां धर्मनी अपभ्राजना थाय छे. ते सांभली गुरुए तेने पार्श्वमंत्र नामनो महामंत्र आप्यो. पछी ते शेठे पोताना जिनमंदिरमां रहेली प्रतिमापासे कमल आदिकनी पूजापूर्वक ते मंत्रनो जाप कर्यो. तेथी संतुष्ट थएला धरणेंद्रे प्रगट थइ तेने कह्युं के, तुं इच्छित वस्तु मागी ले ? त्यारे शेठे कह्युं के, आ कमलनी पूजाथी मने जेटलुं पुण्य मल्युं छे, तेटलुं द्रव्य आपो ? ते सांभली धरणेंद्रे कह्युं के, तेटलां पुण्यनुं फल आपवाने तो चोसठे इंद्रो पण समर्थ नथी, अने ते पुण्यनुं वर्णन करवाने केवलीओ पण समर्थ नथी. कह्युं छे के, सागरोपमनुं आयुष्य होय, तेम ते आयुष्य व्याधि आदिकथी रहित होय, सर्व वस्तुओ संबंधि पंडितपणुं होय, अने क्रोडोगमे जीह्वाओ होय तोपण श्री जिनपूजाना फलनुं वर्णन करवाने ते शक्तिवान नथी. त्यारे शेठे कह्युं के, एक पुष्पनुं फल आपो ? तेटलुं आपवाने पण ज्यारे ते असमर्थ थयो त्यारे तेणे एक पांखडीनुं फल माग्युं, पछी तेटलुं पण ज्यारे ते आपवाने असमर्थ थयो त्यारे शेठे तेने कह्युं के, त्यारे तो आप आपने स्थानके पधारो ? पछी धरणेंद्रे कह्युं के, देवदर्शन वृथा होय नहीं, माटे में तारा घरना चारे खुणाओमां रत्नोथी भरेला कुंभो राख्या छे, एम कही ते अदृश्य थयो. पछी शेठे पुत्रोने पुण्यनुं फल देखाडीने तेमने धर्ममां स्थिर कर्या. अने ते धनथी ते जीवितपर्यंत जिनपूजामां तत्पर रहीने सुखी थयो.

संसारांभोधिवेडा शिवपुरपदवी दुर्गदारिद्र्यभूभृद्
भंगे दंभोलिभूता सुरनरविभवप्राप्तिकल्पद्रुकल्पा ॥
दुःखाग्नेरंबुधारा सकलसुकरी रूपसौभाग्यभर्त्री
पूजा तीर्थेश्वराणां भवतु भवभृतां सर्वकल्याणकर्त्री ॥ १ ॥

अर्थ– संसाररूपी समुद्रमांथी तरवाने नाव सरखी, मोक्षपदनी पदवी सरखी, भयकर दरिद्रतारूपी पर्वतने भेदवामा वज्रसरखी, सुर, नर विगेरेना सुखोनी प्राप्ति कराववामा कल्पवृक्ष सरखी, दु खरूपी अग्निने ठारवामा जलधारा सरखी, सकल सुखोने करनारी, तथा रूप अने सौभाग्य वधावनारी, एवी जिनपूजा प्राणीओने सर्व कल्याणोनी करनारी थाओ ?

श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजा भोगो अने मुक्ति देनारी छे, माटे ते पूजा हमेशा करवी आ लोक अने परलोकना सुखोनी इच्छा करनार एवा जे माणसे जिनेश्वर प्रभुनी पूजा करी नथी, ते माणस दु.खीज थाय छे अने जिनपूजा करनार हमेशा सुखी थाय छे ते पर दृष्टांत कहेछे

दशपुर नामना नगरमा वज्रकर्ण नामे राजा हतो तेने शिकार करवानुं व्यसन पड्युं हतुं एक दहाडो वनमा कोइक जैनमुनिए तेने उपदेश कर्यो के, हे राजन् ! जीवहिंसा करवाथी आ भव अने परभव, बन्नेमा दु ख भोगववा पडे छे ते सांभळी राजाए तेमने कह्युं के, हे भगवन् ! त्यारे हवे मारा कर्मो शी रीते नष्ट थाय ? त्यारे मुनिए कह्यु के, शुद्ध एवा श्री वीतराग प्रभुनी पूजा करवाथी कर्मोनो क्षय थाय छे ते सांभळी राजाए एवो अभिग्रह लीधो के, आजथी हवे मारे श्री जिनेश्वर प्रभु शिवाय बीजा कोइने पण नमस्कार करवो नहीं एक दहाडो तेणे पोताना स्वामी सिंहोदर राजाने नमता थका तात्विक रीते तो मुद्रिकामा रहेली जिनप्रतिमानेज तेणे नमस्कार कर्यो ते जोइ क्रोध पामेला सिंहोदरे मोटा लश्करथी तेनी नगरीने घेरो घाल्यो ते समये रामचन्द्रजी तथा लक्ष्मणजीए पोताना साधर्मिक एवा वज्रकर्ण राजाने मदद करीने सिंहोदरने बांध्यो तथा पछी तेने वज्रकर्ण साथे मित्राइ करावी आपी शास्त्रमा पण कह्यु छे के

अहो सात्विकमूर्धन्यो, वज्रकर्णो महीपतिः ॥
सर्वनाशेऽपि योऽन्यस्मै, न ननाम जिनंविना ॥ १ ॥

अर्थ– अहो ! वज्रकर्ण राजा खरेखर महासात्विकशिरोमणि हतो, केमके सर्वस्वनो नाश थया छतां पण तेणे श्री जिनेश्वर प्रभु शिवाय बीजाने नमस्कार कर्यो नहीं. (आ वज्रकर्ण राजानी सविस्तर कथा रामायणथी वांची लेवी.)

ये देवं स्नपयंति शाम्यतितमां तेषां रजः कर्मणां
ये नाथं परिपूजयंति जगतः पूज्या भवंत्येव ते ॥
मंगल्यानि जिनस्य ये विदधते तद्विघ्ननाशो भवेत्
पादाब्जे प्रणमंति ये भगवतस्ते वंदनीयाः सताम् ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणसो श्री जिनेश्वर प्रभुने स्नान करावे छे, तेउनी कर्मोरूपी रज शांत थाय छे, वली जेउ प्रभुने पूजे छे, तेउ जगतने पण पूजनिक थाय छे, तेम जे माणसो श्री जिनेश्वर प्रभुपासे मंगल धरे छे, तेउनां विघ्नोनो नाश थाय छे, तथा जेउ ते प्रभुनां चरणकमलने नमे छे, ते विद्वानोने पण वंदनीक थाय छे.

वली घणी वाटोवाली आरति प्रभुपासे करवाथी क्रोडो कल्पोसुधि माणसो देवलोकमां वसे छे, तथा तेमां कर्पूर मेलवाथी छेवटे तेने मोक्ष पण मले छे. वली कह्युं छे के, धूप पापोने वाले छे, दीपक मृत्युने नाश करनारो छे, नैवेद्य पूजाथी विस्तीर्ण राज्य मले छे, तथा प्रभुने प्रदक्षिणा करवाथी मोक्ष मले छे, वली जिनपूजा वखते यथाशक्ति दान पण आपवुं, केमके, आम्रदेवे भृगुपुरमां श्री मुनिसुव्रतस्वामीजीनी पूजा करीने याचकोने बत्रीस लाख सोनामोहोरो आपी हती.

गंधैश्चारुविलेपनैः सुकुसुमैर्धूपैरखंडाक्षतै-
र्दीपैर्भोज्यवरैर्विभूषणगणैर्वस्त्रैर्विचित्रैः फलैः ॥
नानावर्णसुवर्णपूर्णकलशैः स्तोत्रैश्च गीतादिभिः
पूजा पूज्यपदस्य केऽपि कृतिनः कुर्वंति सौख्यावहाम् ॥

अर्थ– सुगंधिर्उथी, मनोहर विलेपनोथी, उत्तम पुष्पोथी, धूपोथी, अखंड अक्षतोथी, दीपकोथी, उत्तम नैवेद्योथी, आभूषणोना समूहोथी, वस्त्रोथी, विचित्र फलोथी, नाना प्रकारना सुवर्ण कलशोथी, स्तोत्रोथी, तथा गीतादिकोथी, कोइक कृतार्थ माणसोज सुखो आपनारी श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजा करे छे
इत्यादि बहु भेदोनी रचनापूर्वक जेर्उ देवपूजा करे छे, तेर्उ स्वर्गादिकना सुखो भोगवे छे वधारे शु कहेवु? कोइपण प्रकारे करेली जिनपूजा निष्फल थतीज नथी कह्यु छे के,

असर्वभावेन यदृच्छया वा, परानुवृत्त्या विचिकित्सया वा॥
ये त्वा नमस्यंति जिनेंद्रचंद्र, तेऽप्यामरीं संपदमाप्नुवंति

अहीं मणिकार श्रेष्ठि तथा सेडक विप्रादिकथी कथा थाची लेवी पुण्यवान माणसोए वली पर्वने दिवसे तो जिनपूजा, तप, दान, शील आदिक पुण्यना कार्यो विशेष प्रकारे करवा जेम जगतमा दीवाली आदिकने दिवसे लोको लापु आदिकना उत्तम भोजनो जमे छे, सारा सारा वस्त्रो पहेरे छे, तेम पर्युषणादिक पर्वमा विशेष प्रकारे पुण्य करवु कह्यु छे के, मंत्रोमा जेम परमेष्ठि मन्त्र, तीर्थोमा जेम शत्रुंजय, दानोमा जेम अभयदान, गुणोमा जेम विनय, व्रतोमा जेम ब्रह्मचर्य, नियमोमा जेम संतोष, तथा तपोमा जेम समता छे, तेम सर्व पर्वोमा पर्युषणापर्व श्रेष्ठ छे वली तेवीज रीते असाड चोमासु, कातिक चोमासु, फागण चोमासु, अने चैत्र तथा आश्विन मासनी अ-

गाइ पण उत्तम पर्वो छे. इत्यादि पर्वतिथिउमां प्रतिक्रमण आदिक कर्याथी शुभकर्मो बंधाय छे. कह्युं छे के अष्टमीनी तिथि आठे कर्मोनो नाश करनारी छे, चतुर्दशी मोक्ष आपनारी छे, अने पंचमी केवल ज्ञान आपनारी छे.

अष्टाह्निकादिमहिमां जिनपुंगवानां
कुर्वंति ये सुकृतिनः कृतिनः सुभक्त्या ॥
कर्माष्टकं जगति ते हि भवाष्टकस्य
मध्ये विधूय शिवदं शिवधाम यांति ॥ १ ॥

अर्थ– जे पुण्यशाली जीवो उत्तम भक्तिथी श्री जिनेश्वर प्रभुउनो अठाइ महोत्सव करे छे, तेउ आ जगतमां खरेखर आठ भवनी अंदर आठे कर्मोनो नाश करीने सुख देनारां मोक्षप्रते जाय छे.

सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध, जिनपूजा, स्नात्रपूजा, विलेपनपूजा, ब्रह्मचर्य, दान, दया प्रमुख क्रिआउ चतुर्मासनां आभूपणो छे. वली ते चतुर्मासमां श्रावकोए व्याख्यानश्रवण, जिनदर्शन, गुरुवंदन, प्रत्याख्यान, आगमश्रवण, तथा शक्तिमुजब तप विगेरे पण कार्यो करवां. वली सांवत्सरिक पर्वने पण उपली क्रीयाउनी साथे आलोचना तथा क्षमायाचन पूर्वक सफल करवुं.

जिणाणं पूअजत्ताए, साहूणं पजुवासणे ॥
आवस्सयंमि सज्झाए, उजमेह दिणे दिणे ॥ १ ॥

अर्थ– जिनेश्वरोनी पूजामां, साधुउनी पर्युपासनामां, आवश्यकमां, तथा सज्झाय ध्यानमां दनदनप्रते उद्यम करवो.

एक दहाडो श्री हेमचंद्राचार्ये कुमारपाल राजाने उपदेश दीधाथी ते त्रिकाल जिनपूजामां तत्पर थया, हमेशां अढारसो

कोटीध्वज शाहुकारोसहित पोताना बनावेला तिहुअणविहार नामना जिनमंदिरमा ते स्नात्रपूजा करवा लाग्या, चतुर्दशीने दिवसे पौषधव्रत लेवा लाग्या, साधर्मीओना वात्सल्य करवापूर्वक भोजन करवा लाग्या, दरेक वरसे गरीब श्रावकोने क्रोडोगमे सोनामोहोरो देवा लाग्या, पोताना अगीयार लाख घोडाओने हमेशा वस्त्रथी गालेलु पाणी पावानो तेमणे माणसोने हुकम कर्यो हतो, साते व्यसनोनु निवारण कर्यु, एवी रीते अनेक पुण्यना कार्यो ते राजाए करेला छे

देवपूजा दया दानं, दाक्षिण्यं दमदक्षते ॥
यस्यैते षट् दकाराः स्युः, स देवांशी नरः स्मृतः ॥१॥

अर्थ– देवपूजा, दया, दान, दाक्षिणता, दमता, तथा दक्षता (डहापण) ए छ " दकारो " जेनी पासे छे, तेने देवांशी पुरुष जाणवो

जेम श्री विक्रमादित्य राजाए, सिद्धसेनदिवाकरे प्रगट करेली पार्श्व प्रभुनी प्रतिमा जोइने अत्यंत भावपूर्वक तेनी पूजा करी हती वली एक दहाडो तेज राजाए नीचे पडेला अक्षतना कणने, हाथी उपरथी पोते उतरीने पोताना मस्तकपर चडाव्या, ते जोइ धान्यनी अधिष्ठाता देवीए खुशी थइने तेने वरदान मागवानु कह्युं, त्यारे विक्रम राजाए कह्यु के, मारा मालवदेशमा कोइपण दिवसे दुकाल न पडे तेवु वरदान आपो ? ते सांभली देवीए तेवु वरदान आप्युं, अने तेथी आजदनसुधि पण मालवामा दुकाल पडतो नथी वली तेज राजाए सुवर्णपुरुषनी सिद्धिथी छेक जीवितपर्यंत सघली पृथ्वीने करजरहित करी हती, अने तेथी आजे पण तेनो संवत्सर चाले छे

पूज्यपूजा दया दानं, तीर्थयात्रा जपस्तपः ॥
श्रुतं परोपकारश्च, मर्त्यजन्मफलाष्टकम् ॥ १ ॥

अर्थ– जिनपूजा, दया, दान, तीर्थयात्रा, जप, तप, ज्ञान, अने परोपकार ए आठे मनुष्य जन्मनां फलो छे. कह्युं छे के,

त्रिकाल देवपूजा करवी, यशने एकठो करवो, लक्ष्मीने सुपात्रे आपवी, न्यायमार्गपर मनने दोडाववुं, काम, क्रोध आदिक शत्रुउने मारवा, प्राणीउ प्रते दया करवी, जिनेश्वर प्रभुए कहेला सिद्धांतो सांभलवां, अने तेम करीने वेगथी मुक्तिरूपी स्त्रीने वरवी. जिनपूजा करवाथी भय थतो नथी, दरिद्रता नाश पामे छे, तथा कुगति पण मलती नथी.

देवपूजा गुरूपास्तिः, स्वाध्यायः संयमस्तपः ॥
दानं चेति गृहस्थानां, षट् कर्माणि दिने दिने ॥ १ ॥

अर्थ– देवपूजा, गुरुसेवा, सज्झायध्यान, संयम, तप, अने दान ए छ कार्यो गृहस्थोए हमेशां करवां.

श्रावकोनां गृहकार्य, दुकाननुं कार्य, व्यापार, धनोपार्जन आदिक कार्यो तो आ लोकने साधनारां छे, पण उपर जणावेलां छ कार्यो परलोक साधनारां छे, माटे श्रावकोए ते कार्यो हमेशां करवां. शास्त्रमां कह्युं छे के, त्रिकाल जिनपूजा करवी, हमेशां संघनुं सन्मान करवुं, सज्झायध्यान करवुं, गुरुसेवा करवी, विधिपूर्वक दान देवुं, प्रतिक्रमण करवुं, शक्तिप्रमाणे व्रत पालवुं, ज्ञाननो पाठ करवो, इत्यादि धर्मकार्यो श्रावकोए करवां. मंडपदुर्गमां कुंवरपाल नामना श्रावक हमेशां दरेक पहोरे सीता महासतीए करावेली श्री सुपार्श्वनाथ प्रभुनी प्रतिमानी पूजा करता जेम श्रेणिक राजाए विविध प्रकारनां पुष्पादिकोथी जिनपूजा करेली छे, तेम जिनपूजा करवी, श्रीकृष्णे जेम नेमीश्वर प्रभु प्रमुख अढार हजार साधुउने वांद्या हता तेम गुरुमहाराजने वंदन करवुं. श्रेयांसकुमारनी पेठे दान देवुं, सुदर्शन शेठनी पेठे शील पालवुं.

आदीश्वर प्रभुनी पेठे तप करवो भरत चक्रीनी पेठे भावना भाववी वधारे शु कहेवुं ? कामदेव श्रावकनी पेठे धर्ममा दृढता राखवी

एक दहाडो श्रेणिक राजा तथा अभय कुमारे नगरनी बहार श्वेत अने श्याम रगना बे मेहेलो बधाव्या पछी धर्मी अने पापी-ओनी परीक्षामाटे तेओए नगरमा एवो पटह वगडाव्यो के, जेओ धर्मी होय तेओए श्वेत मेहेलमा जवु, अने जेओ पापी होय ते-ओए श्याम मेहेलमा जवु ते साभली सघला व्यापारीओ तथा कालकसूकर आदिक पापीओ श्वेत प्रासादमा दाखल थया, अने आनंद श्रावक तथा कामदेव श्रावक बन्ने जण श्याम प्रासादमा दाखल थया ते जोइ श्रेणिक राजाए तेओने पूछ्युं के, तमो अहीं केम आव्या ? त्यारे ते बन्ने महान् श्रावकोए कह्यु के, अमो तो गृहस्थीओ छीए माटे महा आरंभ विगेरे पापोमा फसेला छीए ते साभली राजाए तेओने नमस्कार करी तेओनु पूजन कर्युं

जिनपूजा, विवेक, सत्य, पवित्रता, सुपात्रदान विगेरे श्राव-कोना आभूषणो छे, पण मुकुट, कंकण, हार, मुद्रिका विगेरे ख-रेखरा कइ आभूषणो नथी. कह्यु छे के, गुरुनी आज्ञा, ते तिलक-रूप छे, आगमोना वचनोनु श्रवण कुंडलरूप छे, ज्ञान हाररूप छे, दान कंकणरूप छे, महान् तीर्थोनी यात्रा करवी ते चरणोनु भूषण छे, एवी रीतना दिव्य आभूषणो उत्तम श्रावकोए अं-गीकार करवा

एक दहाडो द्वारिका नगरीमा श्री नेमिनाथ प्रभु सध्या समये आवीने समोसर्या त्यारे श्रीकृष्णे पोतानी सभामा कह्यु के, प्रभातमा श्री नेमिनाथ प्रभुने जे माणस प्रथम जइने नमस्कार करशे तेने हुं मारो पाटवी घोडो आपीश. ते साभली घोडानी लालचथी अश्वपाल रात्रिएज प्रभुने जइ वादी आव्यो' शाबकु-मारे पोताना घरमाज रहीने प्रभुनी दिशासन्मुख सात आठ प-

गलां चालीने तथा उत्तरासंग करीने, एकसो आठ काव्योनी स्तुतिपूर्वक प्रभुने वंदन कर्युं. प्रभाते प्रभुना मुखथी ते वस्त्रनो वृत्तांत जाणीने श्रीकृष्णे शांबकुमारने ते पाटवी घोडो आप्यो, अने अश्वपालने अभव्य जाणीने नगरमांथी कहाडी मेल्यो.

किंकरंति सुरास्तस्य, तस्य मित्रंति शत्रवः ॥
येन जन्मांतरोपात्ता, पूजा पुण्यमहौषधी ॥ १ ॥

अर्थ- जे माणसे जन्मांतरमां पुण्यरूपी महान् औषधिरूप जिनपूजा मेलवेली छे, तेनी पासे देवो तो चाकररूप थइने रहेछे, तथा शत्रुउपण तेना मित्रो थाय छे.

परोपकारः सुकृतैकमूलं, परोपकारः कमलाउकूलम् ॥
परोपकारः प्रभुताविधाता, परापकारः शिवसौख्यदाता

अर्थ- परोपकार छे, ते पुण्यनुं मूल छे, लक्ष्मीनी साडी छे, मोटाइ करनारो छे, तथा मोक्ष सुखने आपनारो छे. (तेपर दृष्टांत कहेछे.)

एक दहाडो सौधर्मेंद्रे पोतानी सभामां कह्युं के, हे देवो ! श्रीकृष्ण वासुदेव कोइनो पण अवगुण बोलता नथी. ते सांभली कोइक देवे तेनी परीक्षामाटे श्रीकृष्णने जवाना मार्गमां एक कुतरानुं मुडदुं मेल्युं, अने तेमांथी अत्यंत दुर्गंध फेलावा लागी. ते जोइ श्रीकृष्णे तेना सर्व अवगुणो दूर करीने कह्युं के, नीलमना थालमां जेम मोतीउ, तथा आकशमां जेम ताराउ तेम आ कुतराना श्याम शरीरमां तेना दांतोनी श्रेणि शोभे छे. ते जोइ तुष्टमान थएला देवे प्रत्यक्ष थइ तेमने वरदान मागवानुं कह्युं. त्यारे श्रीकृष्णे कह्युं के, जो तुं मारापर तुष्टमान थयो होय तो तुं तेम कर के, जेथी सर्व लोकोने रोगनो उपद्रव न थाय. केमके, आ मारुं अने आ परनुं एवी गणना तो क्षुद्र माणसोनी

होय छे, उदार माणसोने तो आ सर्व पृथ्वी कुटुंबरूपज छे ते साजळी ते देवे तेमने एक चदननी जेरी आपी, अने कह्युं के, आ जेरी वगाडवाथी छ माससुधिमा रोगनो उपद्रव नहीं थाय, एम कही ते देव अंतर्ध्यान थयो पछी केटलेक काळे ते जेरी साचवनार माणसे लोजथी तेना टुकडा करी वेची नाख्या पछी रोगनी शाति माटे श्रीकृष्णे धन्वंतरि अने वैतरणी नामे वे वैद्यो वनाव्या एम विचारि सर्व लोकोए परोपकार करवो

पूजामाचरतां जगत्रयपतेः संघार्चनं कुर्वताम्
तीर्थानामभिवदनं विदधतां जैनं वचः शृण्वताम् ॥
सद्दानं ददतां तपश्च चरता सत्वानुकंपाकृतां
येषां यांति दिनानि जन्मसफलं तेषां सपुण्यात्मनाम् ॥

अर्थ– त्रणे जगतना स्वामिनी पूजा करता थका, संघनी जक्ति करता थका, तीर्थोनी यात्रा करता थका, जैनवचन सांजळता थका, सुपात्रे दान आपता थकां, तप तपता थका, तथा प्राणीउपर दया करता थका जे पुण्यशाळीउंना दिवसो निर्गमन थाय छे, तेउंनोज जन्म सफल छे

वळी देवनी पूजा करता थका, सत्य वचन वोलता, थका, सज्जनोनो संग करता थका, तथा दान देता थका जेना दिवसो जाय छे, तेनाज गोत्रने जन्मने अने जीवितने अमो उत्तम मानीए छीए. निद्रा लीधावाद पंचपरमेष्टीनु ध्यान धरवुं, दिवसे जिनपूजा कर्यावाद व्यापार आदिक कार्य करवु, साधुउंने वंदन करवु, प्रमादनो त्याग करवो, सिद्धातो साजळवा, सर्वपर उपकार करवो, सुपात्रे दान आपवुं, विगेरे उत्तम कार्यो करवा

इने तेपर दृष्टात कहेछे.

चंपा नामनी नगरीमा जिनदास नामे एक श्रावक वसतो हतो ते त्रिकाल जिनपूजन करतो हतो, वन्ने वखत प्रतिक्रमण करतो

हतो, तथा प्रत्याख्यान आदिक करीने गुरुसेवामां पण तत्पर रहेतो हतो. एक दहाडो ते आठमने दिवसे पौषधव्रत लेइने रात्रिए एक शून्य घरमां कायोत्सर्ग ध्यानमां रह्यो हतो. एटलामां परपुरुषमां आसक्त थएली तेनी स्त्री पोताना यारसहित तेज घरमां एक खाटलो लेइने आवी. ते खाटलाना पायामां एक अणीवालो खीलो हतो. अंधारामां ते खाटलो तेणीए त्यां नाख्यो, अने तेथी ते खीलो जिनदासना पगमां खुंची गयो. तेथी तेने घणुं कष्ट थयुं, मेरुनी पेठे निष्कंप रही कायोत्सर्ग ध्यानमांज ते मृत्यु पामीने देवलोकमां देवपणे उत्पन्न थयो. तथा त्यांथी आवीने तेणे पोतानी स्त्रीने प्रतिबोध आप्यो.

वंद्यास्तीर्थकृतः सुरेंद्रमहिताः पूजां विधायामलां
सेव्याः सन्मुनयश्च पूज्यचरणाः श्रव्यं च जैनं वचः ॥
सच्छीलं परिपालनीयमतुलं कार्यं तपो निर्मलं
ध्येया पंचनमस्कृतिश्च सततं भाव्या च सद्भावना ॥१॥

अर्थ- इंद्रोथी पूजाएला एवा तीर्थंकरोनी निर्मल पूजा करीने तेमने वांदवा, पूज्यपाद एवा उत्तम मुनिओने सेववा, जिनवचन सांभलवुं, निर्मल तप तपवो, हमेशां पंचपरमेष्ठीनुं ध्यान धरवुं तथा शुभ भावना भाववी.

कर्तव्यं जिनवंदनं विधिपरैर्हर्षोल्लसन्मानसैः
सच्चारित्रविभूषिताः प्रतिदिनं सेव्याः सदा साधवः ॥
श्रोतव्यं च दिने दिने जिनवचो मिथ्यात्वनिर्नाशनं
दानादौ व्रतपालने च सततं कार्या रतिः श्रावकैः ॥२॥

अर्थ- हर्षथी उल्लसायमान मनवाला थइने हमेशां विधिपूर्वक जिनवंदन करवुं, उत्तम चारित्रथी भूषित थएला मुनिओने हमेशां सेववा, दन दनप्रते मिथ्यात्वनो नाश करनारुं एवुं जिन-

वचन साभलवुं तथा व्रत पालवामां अने दानादिकमां पण ह-
मेशा श्रावकोए प्रीती करवी

अहीं कुमारपाल राजानुं, चिलातिपुत्रनुं, वंकचूलनुं, मासतुसमुनिनुं, चंदनबालानुं, मूलदेवनुं, तथा शालिभद्रनुं अनडपरिव्राजकनुं विगेरे दृष्टांतो जिनपूजनादिक उपरे जाणी लेवा

दया दीनेषु वैराग्यं, विधिवज्जिनपूजनं ॥
विशुद्धा न्यायवृत्तिश्च, पुण्यं पुण्यानुबंध्यदः ॥ १ ॥

अर्थ– गरीबो प्रते दया, वैराग्य, विधिपूर्वक जिनपूजा, अने शुद्ध न्यायवृत्ति, ए पुण्यानुबंधि पुण्य छे

इति तपगच्छेश श्रीसोमसुंदरसूरि श्री रत्नशेखरसूरि प० नंदिरत्नगणि शिष्य प० रत्नमंदिरगणि गुंफितायां श्री उपदेशतरंगिण्यां पूजापंचाशक नामा तृतीयस्तरंग समाप्त ॥ श्रीरस्तु ॥

चतुर्थस्तरंगः प्रारभ्यते

हवे तीर्थयात्राना उपदेशरूप चोथो तरंग कहे छे.

वपुः पवित्रीकुरु तीर्थयात्रया, चित्तं पवित्रीकुरु धर्मवांछया।
वित्तं पवित्रीकुरु पात्रदानतः, कुलं पवित्रीकुरु सच्चरित्रैः

अर्थ– हे भव्य माणस! तुं तीर्थयात्राथी शरीरने पवित्र कर? धर्मनी इच्छाथी मनने पवित्र कर? सुपात्र दानथी धनने पवित्र कर? तथा उत्तम आचरणोथी कुलने पवित्र कर?

श्रीसिद्धसेन दिवाकरजीना प्रतिबोधथी विक्रमराजाए चौद मुकुटबद्ध राजाओ, सीत्तेर लाख श्रावको, सिद्धसेनदिवाकर प्रमुख पांच हजार आचार्यो, एकसो छंगणोतेर सुवर्णना जिनमंदिरो, एक क्रोड दश लाख अने पांच हजार गाडाओ, अढार

लाख घोडाउं, छत्रीससो हाथीउं, तथा वीजी पण केटलीक सामग्रीउं सहित श्रीशत्रुंजय तीर्थनी यात्रा करी हती.

प्रन्नावना श्रीजिनराजचैत्यं,
जिनप्रतिष्ठा जिनतीर्थयात्रा ॥
अमारिरेतानि महावृषाणि,
पंचापि पंचांगरमाकराणि ॥ १ ॥

अर्थ– प्रन्नावना, जिनमंदिर, जिनविंबनी प्रतिष्ठा, जिनतीर्थोनी यात्रा, तथा अमारिपटह ए पांचे महाधर्मनां कार्यो, पंचांगी लक्ष्मीना हाथोरूप छे.

हवे तेपर दृष्टांत कहेछे.

एक दहाडो अढारसो कोटिध्वज व्यापारिउंनी साथे कुमारपाल राजाए पौषध ग्रहण करेलो हतो, ते वखते कुमारपाल राजा श्री हेमचंद्र महाराजने वांदिने तेमनी पासे बेठा हता. ते वखते हेमचंद्रजी महाराजे तेमने तीर्थयात्रानो उपदेश आप्यो के, आरंन्नोनी निवृत्ति, द्रव्यनी सफलता, संघनुं वात्सल्य, जीर्ण चैत्योनो उद्धार, ए सघलां तीर्थयात्रानां फलो छे, अने तेथी तीर्थंकर गोत्र बंधाइने छेवटे मोक्ष मले छे. ते सांन्नली कुमारपाल राजाए तेमने पूछ्युं के, हे न्नगवन्! यात्रा केटला प्रकारनी छे? त्यारे आचार्य महाराजे कह्युं के, अष्टाहिका, रथयात्रा, तथा तीर्थयात्रा एम यात्रा त्रण प्रकारोनी छे. ते सांन्नली कुमारपाल राजाए बहोतेर राणा तथा अढारसो कोटिध्वज शाहुकारो अने लाखो गमे बीजा श्रावकोना संघसहित श्री विमलाचल, गिरनार विगेरे तीर्थोनी घणाज आडंबरथी यात्रा करी. तेमां दरेक स्थानके स्नात्रमहोत्सव, ध्वजारोपण, संघवात्सल्य, आदिक कार्यो तेमणे कर्यां, तेनो विशेष वृत्तांत जिनमंडन वाचकना रचेला कुमारपाल प्रबंधथी जाणी लेवो.

हवे ते तीर्थयात्रा नीचेप्रमाणे विधिपूर्वक करवी

एकाहारी भूमिसंस्तारकारी,
पद्भ्यां चारी शुद्धसम्यक्त्वधारी ॥
यात्राकाले सर्वसच्चित्तहारी,
पुण्यात्मा स्याद् ब्रह्मचारी विवेकी ॥ १ ॥

अर्थ– विवेकी एवो पुण्यशाली माणस यात्रा समये एक वखतज भोजन करनारो होय, पृथ्वीपर सथारो करनारो होय, पगे चालनारो होय, शुद्ध सम्यक्त्वने धरनारो होय, सर्व प्रकारना सचित्तोने परिहरनारो होय, तथा ब्रह्मचारी होय

आबुजी पासे रहेला उवर नामना गाममा रहेनार पारसशाहना पुत्र देशलशाहे चौद क्रोड सोनामोहोरो खरचीने शत्रुजय आदिक सात तीर्थोनी यात्रा करी छे कह्यु छे के,

श्रीदेशलः सुकृतपेशलवित्तकोटी-
श्चंचच्चतुर्दशजगज्जनितावदातः ॥
शत्रुंजयप्रमुखविश्रुतसप्ततीर्थ-
यात्राश्चतुर्दश चकार महामहेन ॥ १ ॥

वली तेज देशलशाहना वशमा थएला लल्लशाह तथा वीजडशाहे विक्रम सवत १३७१नी सालमा विमलवसतिनो उद्धार कर्योछे

सदा शुभध्यानमसारलक्ष्म्याः,
फलं चतुर्धा सुकृताप्तिरुच्चैः ॥
तीर्थोन्नतिस्तीर्थकृता पदाप्ति-
र्गुणा हि यात्राप्रभवाः स्युरेते ॥ १ ॥

अर्थ– हमेशा शुभध्यान, असार एवी लक्ष्मीनु फल, उच्चे प्रकारे पुण्यनी प्राप्ति, तीर्थनी उन्नति, तथा तीर्थकरपदनी प्राप्ति एटला तीर्थयात्राथी थता फलो जाणवा

तीर्थयात्रामां मार्गमां देवपूजा, दरेक गामनां चैत्योनी परिपाटी, संघवात्सल्य आदिक कार्यो करवाथी शुभ ध्यानज रहेछे, पण धान्य, घृत, चर्म, वस्त्र आदिकना व्यापारीनी पेठे ते समये, "दुकाल आदिक थाय तो ठीक" एवी रीतनुं दुर्ध्यान कंइ थतुं नथी. वली ते समये चंचल एवी लक्ष्मीने साते क्षेत्रोमां जोडवाथी तेनी सफलता पण थाय छे. वली छरी पालवाथी दान, शील, तप तथा भावनारूप पुण्योनी प्राप्ति थाय छे; वली ते समये जगो जगोए महोत्सव करवाथी तीर्थनी उन्नति पण थाय छे, अने परभवमां तेथी तीर्थंकरगोत्र थाय छे.

जेम थारापद्र नामना नगरना रहेवासी श्रीमाल ज्ञातिना शेठे मोटा आडंबरथी श्री शत्रुंजय तीर्थनी यात्रा करी हती. ते समये तेनी साथे सातसो तो देवालय हतां; तेमां एक हजार पांचसोने दश जिनबिंबो हतां. चार हजार गामां हतां. पांच हजार घोडाओ हता. बावीसो उंटो हता; नेवु पालखीओ हती. सात पाणीनी परबो हती. बेंतालीस जल वहन करनारा बलदो हता. त्रीस जलवहन करनारा पाडाओ हता. एकसो रसोइ करवानां मोटां कडायां हतां. छत्रीस आचार्यो हता. एकसो कंदोइ हता. एकसो बीजा रसोइआ हता. बसो मालीओ हता. एकसो तंबोली हता. एकसो छत्रीस दुकानो हती. चौद लुहारो हता. सोल सुतारो हता. अने ते तीर्थयात्रामां तेणे बारक्रोड सोनामोहोरो खरची हती. एक क्रोड सोनामोहोरो खरचीने तेणे ज्ञानभंडार कराव्यो, अने ते ज्ञानभंडारमां छलाख अने ओगणचालीस हजार पुस्तको तेणे लखाव्यां. ते दरेक पुस्तकनी अकेकी प्रति तेणे सुवर्णनी साहीथी लखावी, अने बाकी सघलीओ मषीनी साहीथी लखावी. वली त्रणसो आठ श्रावकोने तेणे पोताना सरखाज धनाढ्य कर्या. वली तेणे बे एवी तो उत्तम कोरणीनां जिनमंदिरो बंधाव्यां के, एकेक जिनमंदिरनी किम्मतथी साधा-

रण कोरणीना तेवा चोर्यासी चोर्यासी जिनमदिरो थाय वली पोताना मृत्यु समये तेणे साते क्षेत्रोमा सात क्रोड सोनामोहोरोनो व्यय कर्यो.

श्रीतीर्थपायरजसा विरजीन्नवति,
तीर्थेषु वभ्रमणतो न न्नवे न्नमंति ॥
उव्यव्ययादिह नराः स्थिरसंपदः स्युः,
पूज्या न्नवति जगदीशमयार्चयंतः ॥ १ ॥

अर्थ– श्री तीर्थमार्गनी रजथी प्राणीउ कर्मोरूपी रजथी मुक्त थाय छे, तीर्थोमा न्नमवाथी आ न्नवमा न्नमवुं पडतुं नथी, तीर्थमा द्रव्यनो व्यय करवाथी प्राणीउ स्थिर सपदावाला थाय छे, अने प्रनुने पूजवाथी तेउ पण पूजनीक थाय छे

जेम श्रीवस्तुपाले विक्रम सवत १२०५ मा पेहेली श्री शत्रुंजय तीर्थनी यात्रा करी हती ते समये तेमनी साथे चोवीस तो हाथीदातना जिनमदिरो हता, एकसो वीस काष्ठना जिनमदिरो हता, पस्तालीससो गाडा हता, सातसो पालखीउ हती पाचसो कारिगरो हता, सातसो आचार्यो हता, वे हजार श्वेतावर मुनिउ हता, अग्यारसो दिगबरो हता, उंगणीससो साधवीउ हती, चार हजार घोडाउ हता, वे हजार उटो हता, अने, सात लाख तो माणसो हता एवी रीते पेहेली यात्रा कर्या वाद तेथी पण अधिक अधिक आडंवरथी तेमणे वीजी यात्राउ करी हती

सुराष्ट देशमा आवेला गोमरूल नामना गामना रहेवासी धाराकशाह नामे शेठ हता तेने सात पुत्रो हता, सातमो सुन्नटो हता, तेरसो गाडा हता, अने तेर क्रोम सोनामोहोरो तेनी पासे हती तेटली सामग्रीसहित श्री शत्रुंजय तीर्थनी यात्रा करीने ते रैवताचलपर गया पण ते समये ते तीर्थने दिगबरोए स्वाधिन

कह्युं छे के, हजारो गमे पापो करीने, तथा संकडो गमे जीवोने मारीने पण आ तीर्थ मेळवीने तिर्यंचो पण मोक्षे गएला छे. आतीर्थनो सर्व महिमा शत्रुंजयमाहात्म्यथी जाणी लेवो. वळी अहीं बावन देवालयनी यात्रा करनारा सारंगशाह, चम्मालीस देवालयनी यात्रा करनार सोनपाळ शाह, चोविस देवालयनी यात्रा करनार सालिंगशाह,समराशाह विगेरेनां दृष्टांतो जाणी लेवां.

श्री बप्पजट्टीजी सूरिजी आकाशगामिनी नामनी विद्याना बळथी हमेशां पंचतीर्थोनी यात्रा करता हता.

इति श्री तपागछ नायक श्री सोमसुंदर सूरि श्री रत्नशेखर सूरि पं० नंदिरत्नगणि शिष्य पं० रत्नमंदिरगणि गुंफितायां श्री उपदेशतरंगिण्यां चतुर्थस्तीर्थयात्रोपदेशस्तरंगः ॥ श्रीरस्तु ॥

पंचमस्तरंगः प्रारभ्यते

हवे धर्मोपदे रूप पांचमो तरंग कहेछे.

यत्कल्याणकरोऽवतारसमयः स्वप्नानि जन्मोत्सवो
यद्रत्नादिकवृष्टिरिंद्रविहिता यद्रूपराज्यश्रियः ॥
यद्दानं व्रतसंपदुज्ज्वलतरा यत्केवलश्रीर्नवा
यद्रम्यातिशया जिने तदखिलं धर्मस्य विस्फुर्जितम्॥१॥

अर्थ– जिनेश्वर प्रभुना जन्मसमये जे कल्याणक थाय छे, तेमनी माताने जे उत्तम स्वप्नो आवे छे, तेमनो जे जन्मोत्सव थाय छे, इंद्र जे तेमनी पासे रत्नोनी वृष्टि करे छे, वळी तेमने जे रूप अने राज्यनी शोभा मळे छे, तेमनुं जे वरसीदान छे, उत्तम व्रत छे, तेम केवलज्ञाननी जे तेमने लक्ष्मी छे, तेम तेमने जे उत्तम अतिशयो छे, ते सघळुं धर्मनुं माहात्म्य छे.

वळी निराधार एवा पण कुमारपाळने जे अढार देशोना राज्यनी प्राप्ति थइ, श्रीपाळराजाना कुष्टनी शांति थइ, विक्रमराजाने

अग्निवेताल वश थयो, जरत राजाने चक्रीपणानी प्राप्ति थइ, बाहुबलीने अत्यत बल प्राप्त थयु, अजयकुमार तथा शालिज- द्रादिकोने अपूर्व ऋद्धि प्राप्त थइ, सुज्रूम चक्रीने माढार्उनो थाल चक्ररूप थयो, ते सघलु धर्मनुंज माहात्म्य जाणवु वली धर्मथी- ज समुद्र, मेघ, अग्निविगेरे वश थाय ठे इन्द्र, चक्री, वासुदेव विगेरे जे सपदार्उने जोगवे ठे, ते सघलु धर्मनुज महात्म्य ठे सौधर्मेन्द्रने बत्रीसलाख विमानो, चोर्यासी हजार सामानिक दे वो विगेरेनी ऋद्धि धर्मथीज मलेली ठे वली चक्रवर्तिने ठ खन्म- जरतक्षेत्र, बत्रीसहजार देशो, नव निधानो, चौद रत्नो, ठन्नु क्रोड गाम, ठन्नु क्रोड पाला, चोर्यासीलाख हाथी, तेटलाज घोमा, तथा तेटलाज रथो, चोसठहजार राणीउं, एकलाख अठाविस हजार वारांगनार्उ, सेवा करनारा बत्रीसहजार मुकुटबन्ध राजार्उ, विगेरे जे सपदार्उ मलेली ठे, ते पण धर्मना प्रजावथीज मलेली ठे. वासुदेवने तेथी अर्धि ऋद्धि मले ठे, तेम कोइने चिंतामणिरत्न, कामधेनु, दक्षिणावर्तशख, चित्रावेली, सुवर्णसिद्धि, कल्पवृक्ष विगेरे जे उत्तम पदार्थो मले ठे, ते पण धर्मनोज प्रजाव जाणवो

आरोग्यं सौजाग्यं, धनाढ्यता नायकत्वमानदः ॥
कृतपुण्यस्य स्यादिह, सदा जयो वाठितावाप्तिः ॥ १ ॥

अर्थ— पुण्यशाली पुरुपने आ जगतमा हमेशा आरोग्यता, सौजाग्य, धनाढ्यपणु, नायकपणु, आनद तथा इच्छित वस्तुनी प्राप्ति थाय ठे

धर्मथी श्री आदिनाथ प्रजुनी पेठे आरोग्यपणु मले ठे केमके, चोर्यासीलाख पूर्वना आयुष्यनी अदर कोइपण दिवसे तेमनु मस्तक पण डुःख्यु नथी, वली वरसीतपने पारणे जारी एवा सेलडीरसना पारणाथी पण तेमने कइ नुकशानी थइ नहीं वसुदेवनी पेठे धर्मथी सौजाग्य थाय ठे, केमके, सामान्यप-

णामां पण तेमनां बत्रीतेर हजार कन्याउ साथे लग्न थयां हतां. शालिनअादिकने धर्मथी धनाढ्यपणुं प्राप्त थयुं छे. कुमारपाला-दिकने धर्मथी राज्य मळ्युं छे. रोहिणी राणीने धर्मथीज शोकनो अन्नाव अने आनंद थयो छे. तेम बाहुबलि आदिकने धर्मथीज इच्छित वस्तुनि प्राप्ति थएली छे.

दिने दिने मंजुलमंगलावलिः,
सुसंपदः सौख्यपरंपरा च ॥
इष्टार्थसिद्धिर्बहुला च वुद्धिः,
सर्वत्र सिद्धिर्नवति हि धर्मात् ॥ १ ॥

अर्थ– दनदन प्रते मनोहर मंगलोनी श्रेणि, उत्तम संपदाउ, सुखोनी श्रेणिउ, वांछित पदार्थोनी सिद्धि, अत्यंत वृद्धि, अने सर्व जगोए सिद्धि धर्मथीज थाय छे.

मंगलो आ जगतमां द्रव्यथी अने नावथी एम बे प्रकारनां छे. दधि, दूर्वा, अक्षत, चंदन विगेरे द्रव्य मंगलरूप छे. पण तेथी पण अधिक धर्मरूप मंगल छे. वली दर्पण, नद्रासन, स्व-स्तिक, कलश, मत्स्य, पुष्पमाला, श्रीवत्स, तथा नंदावर्त नामना आठ मंगलोपण द्रव्य मंगलरूप छे. वली पुण्यशाली पुरुषोने घेर देवपूजा, गुरुसेवा, विवाह आदिक महोत्सव, बंदिउना जयजय शब्दो विगेरे मंगलो हमेशां थाय छे. वली घरना द्वार-पासे मदोन्मत्त हाथीउ फुले छे; सोनेरी साजथी नूषित थएला घोडाउ हेपारव करे छे; वीणा, मृदंग, शंख विगेरेना मंगलिक शब्दो थाय छे, ते सघलुं धर्मनुंज महात्म्य छे. अहीं श्री शांति-नाथ चक्री आदिकनां दृष्टांतो जाणी लेवां. वली धर्मथीज ध-म्मिल्ल आदिकनी पेठे उत्तम संपदाउ मले छे. विक्रमराजानी पेठे धर्मथीज सुवर्ण पुरुषनी प्राप्ति थाय छे. वली धर्मथीज अन्नय-

कुमार आदिकनी पेठे उत्पादिकी, वैनयिकी, कार्मकी, अने पारिणामिकी नामनी चार प्रकारनी बुद्धिउं प्राप्त थाय ठे

पुंसा शिरोमणीयंते, धर्मार्जनपरा नराः ।
आश्रियंते च संपद्भि-र्लताभिरिव पादपाः ॥ १ ॥

अर्थ– धर्म उपार्जन करवामा तत्पर एवा पुरुषो जगतमा शिरोमणिरूप थाय ठे, तेम लताउंथी जेम वृक्षो तेम संपदाउंथी तेउं आश्रित थाय ठे

अहीं सारंगशाह, समराशाह, जगसिशाह, पेथडशाह, वस्तुपाल, विमलशाह, जावडशाह, वाहडमंत्री, कुमारपाल राजा, आमराजा विगेरेना दृष्टांतो जाणी लेवा

वली नागिलाने तजनार जवदेवना जाइ जवदत्तनी पेठे लज्जाथी धर्म थाय ठे, मेतार्य मुनिने हणनार सोनीनी पेठे जयथी धर्म थाय ठे, वितर्कथी घडरुद्राचार्यना शिष्यनी पेठे धर्म थाय ठे, स्थूलजद्र पर मात्सर्य करनार सिंहगुफानिवासी साधुनी पेठे मात्सर्यथी धर्म थाय ठे, अर्हन्नक यति मातानी पेठे अथवा स्थूलजद्रना नाना जाइ श्रीयकनी पेठे स्नेहथी धर्म थाय ठे, सुहस्ति महाराजे प्रतिबोधेला द्रमकनी पेठे लोजथी धर्म थाय ठे, बाहुबलिनी पेठे रुषथी धर्म थाय ठे, दशार्णजद्र राजानी पेठे अजिमानथी धर्म थाय ठे, (अहंकारना संबंधमा गौतमस्वामी, सिद्धसेन दिवाकर, हरिजद्र सूरि विगेरेना संबंधो पण जाणी लेवा) नमि विनमिनी पेठे विनयथी धर्म थाय ठे, ब्रह्मदत्त चक्रीनी पेठे शृंगारथी धर्म थाय ठे, आजीर तथा आर्यरक्षित आचार्यनी पेठे कीर्तिथी धर्म थाय ठे, कार्तिक शेठनी पेठे दुःखथी धर्म थाय ठे, गौतम स्वामिए प्रतिबोधेला पदरसो त्रण तापसनी पेठे कौतुकथी धर्म थाय ठे, इलापुत्रनी पेठे विस्मयथी धर्म थाय ठे, अजयकुमार तथा आर्द्रकुमारनी पेठे व्य-

वहारथी धर्म थाय ठे, भरतचक्री तथा चंद्रावतंसनी पेठे भावथी धर्म थाय ठे, कीर्तिधर, सुकोशील, आदिकनी पेठे कुलाचारथी धर्म थाय ठे, जंबूस्वामी, धनगिरि, वज्रस्वामी, प्रसन्नचंद्र तथा चिलातिपुत्रादिकनी पेठे वैराग्यथी धर्म थाय ठे. क्षमाने विषे गजसुकुमाल, कुरगडुकमुनि, वीरप्रभु, पार्श्वप्रभु, खंधकमुनि आदिकनां दृष्टांतो जाणवां. शीलविषे सुदर्शन श्रेष्ठी, मल्ली प्रभु, नेमिनाथजी, स्थूलभद्रजी, सीता, द्रौपदी, राजीमती आदिकनां दृष्टांतो जाणवां. सम्यक्त्वविषे श्रेणिकराजा, नारायण, तथा विक्रमराजा आदिकनां दृष्टांतो जाणवां. प्रभाविकपणाविषे श्री हेमचंद्राचार्य, जीवदेवसूरि, कालिकाचार्य, जिनप्रभसूरि, विष्णुकुमार, यशोदेवसूरि, आर्यखपुटाचार्य, बप्पभट्टीसूरि, पादलिप्तसूरि, धर्मघोषसूरि, मानदेवसूरि, मानतुंगसूरि, हरिभद्रसूरि विगेरेनां दृष्टांतो जाणवां, वधारे शुं कहेवुं? सर्व प्रकारथी करेलो धर्म महालाभकारी थाय ठे. कह्युं ठे के,

धर्मः श्रुतोऽपि दृष्टोऽपि, कृतो वा कारितोऽपि च ॥
अनुमोदितोऽपि राजेंद्र, पुनात्यासप्तमं कुलम् ॥ १ ॥

अर्थ- हे राजेंद्र! सांभलेलो, दीठेलो, करेलो, करावेलो अने अनुमोदेलो एवो पण धर्म ठेक सात पेहेमीउं सुधि पवित्र करे ठे.

फलं च पुष्पं च सुतरुस्तनोति,
वित्तं च तेजश्च नृपप्रसादः ॥
ऋद्धिं प्रसिद्धिं ननुते सुपुत्रो,
भुक्तिं च मुक्तिं च जिनेंद्रधर्मः ॥ १ ॥

अर्थ- उत्तम वृक्ष फल अने पुष्पने विस्तारे ठे, राजानी कृपा धनने अने तेजने वधारे ठे, उत्तम पुत्र धन अने प्रशंसाने विस्तारे ठे, अने जिनधर्म भुक्ति अने मुक्तिने विस्तारे ठे.

आंबा, दाडिम आदिक उत्तम वृक्षो स्वादिष्ट तथा मनोहर

फळो आपे छे, तथा चपक आदिक उत्तम जातिना पुष्पवृक्षो सुगधि पुष्पोने आपे छे, राजानी मेहेरवानी होय तो उदयन, वाग्भट्ट आदिकोनी पेठे द्रव्यनी तथा तेजनी प्राप्ति थाय छे, उत्तम पुत्र पोताना कुलनी अने पूर्वजोनी प्रख्याति करे छे तेने माटे श्री आदिनाथ प्रभु, वीरप्रभु, रामचंद्रजी आदिकना दृष्टांतो जाणी लेवा. तेवीज रीते श्री जैनधर्म पाळ्यो तथा सगरचक्री आदिकनी पेठे आ लोकमा राजऋद्धि आदिकना जोगो तथा परलोकमा मोक्ष आपे छे

राजप्रसादो दिव्यास्त्रं, वाणिज्यं हस्तिरत्नयोः ॥
जैनधर्मस्तथैकोऽपि, महालाभाय जायते ॥ १ ॥

अर्थ- राजानी कृपा, दिव्य शस्त्र, तथा हाथी अने रत्नोनो व्यापार जेम, तेम एक पण जैनधर्म महालाभकारी थाय छे

राजानी कृपा जेम तीर्थोद्धार, यात्रा आदिकना महा लाभ माटे थाय छे, तेम जेम चक्र रत्न आदिक दिव्य शस्त्रोथी भरतचक्री, वासुदेव, बलदेव, चेडाराजा, कोणिकराजा, करकंडु, शिलादित्य आदिक राजाउंए राज्यसमृद्धिउं मेळवेली छे, वळी श्वेतहाथी विक्रम राजाने आपवाथी जावडना पिता भावडशाहे तेमना पासेथी मधुमती आदिक चोर्यासी गामो मेळव्या हता, वळी मेतार्य अने कृतपुण्ये श्रेणिक राजाने रत्न आपवाथी तेनी पुत्री साथे लग्न कर्या हता, तथा आभड श्रावके सिद्धराजने मणि आपीने पाचसो गामोनी मालेकी, तथा सवाक्रोड सोनामोहोरो मेळवी हती, तेम जैनधर्म पण मोक्ष आदिकनो महालाभ आपे छे कह्यु छे के,

द्युमणिस्पर्शपाषाण-दक्षिणावर्तशंखवत् ॥
कृष्णचित्रकवल्लिव-ल्लाभदं जिनशासनम् ॥ १ ॥

अर्थ- चिंतामणि रत्नना स्पर्शथी जेम पाषाण, तथा दक्षिणावर्त शख, अने चित्रावेलीनी पेठे जिनशासन लाभ देनारु छे

अतिनिर्मला विशाला, सकलजनानंदकारिणी प्रवरा॥
कीर्तिर्विद्या लक्ष्मी-र्धर्मेण विजृंभते लोके ॥ १ ॥

अर्थ– धर्मथी आ लोकमां अति निर्मल, विशाल, सघला लोकोने आनंद करनारी एवी कीर्ति, विद्या तथा लक्ष्मी फेलाय ले.

कीर्ति नाग्यथी मले ले, कह्युं ले के, जे माणसने राजाउं सज्जनो तथा गुरुउं वखाणे ले, तेने उत्तम पुरुष जाणवो. वली जे माणसने लुच्चाउं, चारणो, तथा वेश्याउं वखाणे ले, तेने अधम पुरुष जाणवो. निर्मल ब्रह्मचर्यव्रत पालनारा स्थूलनद्रजीनी, रामचंद्रजीना न्यायी राजनी, तेम श्री युगादि देवनी पण कीर्ति हजु विद्यमानज ले. विद्या पण पुण्यथीज मले ले. जेम श्रीवप्पनट्टीजी महाराज सातसो श्लोको हमेशां कंठे करता, वज्रस्वामीजीए पालणामां सुतां थकांज अग्यारे अंगोनो अन्यास कर्यो हतो, दुर्बलिका पुष्पमित्रमुनि हमेशां घृतादिक स्निग्ध पदार्थोनुं नोजन करता हता, लतां विद्याना अध्ययनना श्रमथी ते हमेशां दुर्बलज रहेता हता; श्री सोमप्रनसूरिजीने एक गाथाना एकसो अर्थो करवानी शक्ति हती; देवसूरिजी महाराजनी वादलब्धि जगतमां प्रसिद्धज ले; हेमचंद्राचार्यजीने व्याकरणादिक अनेक शास्त्रो रचवानी शक्ति हती. मलयगिरिजी तथा अनयदेवसूरिजी महाराजने अनेक सिद्धांतोपर टीकाउं करवानी शक्ति हती. ते सघलो धर्मनोज प्रनाव हतो. वली लक्ष्मीपण पुण्यने अनुसरनारीज ले. जेम मुहणसिंह शेठ जगतमां सत्यवादी प्रसिद्ध हता. एक दहाडो तेने जूठुं बोलाववा माटे बादशाहे सन्ना समक्ष पूछयुं के, तारा घरमां केटलुं द्रव्य ले? त्यारे मुहणसिंह शेठे पोतानी सर्व देशावरोनी पेहेमीउंनुं सरवायुं वांची कह्युं के, मारा स्वाधिनमां चोर्यासी लाख सोनामोहोरो ले. ते सांनली संतुष्ट थएला बादशाहे तेने बीजी सोल लाख सोनामोहोरो आपीने तेने कोटीध्वज कर्यो. तथा मोटा उत्सवपूर्वक तेना घरपर तेणे को-

टिध्वजनी पताका बंधावी आपी पछी ते लक्ष्मीने शेवे दान आपीने कृतार्थ करी

सुकुलजन्म विभूतिरनेकधा,
प्रियसमागमसौख्यपरंपरा ॥
नृपकुले गुरुता विमलं यशो,
भवति धर्मतरोः फलमीदृशम् ॥ १ ॥

अर्थ– उत्तम कुलमां जन्म, अनेक प्रकारनी विभूति, प्रिय सज्जनोनो समागम, सुखनी श्रेणिर्ड, राज्यकुलमा मोटाइ, तथा निर्मल यश ए सघला धर्मरूपी वृक्षना फलो छे.

ईक्ष्वाकु आदिक उत्तम कुलोमा धर्मना माहात्म्यथीज जन्म थाय छे, वली ते जन्मने शोभावनारी लक्ष्मी पण धर्मथीज थाय छे लक्ष्मी छे ते खरेखर मनुष्यनु भूषण छे केमके रामचन्द्रजी महाराज उत्तम कुलना हता, तोपण वनवास समये ज्यारे ते वशिष्ठ ऋषिना आश्रममा पधार्या, त्यारे ते समये ते निर्धन होवाथी ऋषिए तेमने कइ सन्मान आप्युं नहीं पछी रावणनो जय करीने, अने लंकानु अधिपतिपणु मेलवीने ज्यारे ते पाछा तेज आश्रममा आव्या त्यारे वशिष्ठ ऋषि उभा थइ तेनी सन्मुख गया, तथा तेमने आसन आदिक आपी तेमनी घणीज आगतस्वागत करी त्यारे रामचन्द्रजीए तेमने कह्युं के, तेज तमो छो, अने तेज हुं छुं, तथा तेज तमारो आश्रम छे, पण पूर्वे तो तमो मने कइं पण आदरमान आप्यु नहीं, अने हमणा आपो छो तेनु शु कारण छे? त्यारे वशिष्ठ ऋषिए कह्युं के, तेज तमो छो, तेज हु छु अने तेज अमारो आश्रम छे, पण पूर्वे ज्यारे तमो पधार्या हता, त्यारे तमो निर्धन हता, अने हमणा तो तमो सधन थया छो, अने तेने लेइने हु तमोने आदरमान आपु छु माटे

धनमर्जय काकुत्स, धनमूलमिदं जगत् ॥
अंतरं नैव पश्यामि, निर्धनस्य मृतस्य च ॥२॥

अर्थ– हे रामचंद्रजी ! तमो धन मेलवो ? केमके, आ जगत धन ले मूल जेनुं एवुंज ले; निर्धन माणस अने मुडदां वच्चे कंइपण हुं अंतर जोतो नथी.

धर्मो महामंगलमंगभाजां, धर्मः पिता पूरितसर्वकामः॥
धर्मो जनन्युद्दलिताखिलार्तिः, धर्मः सुहृर्द्धितनित्यहर्षः

अर्थ– प्राणीउने धर्म महामंगलरूप ले, तेम पितानी पेठे सर्व इच्छितोने आपनारो ले, वली मातानी पेठे सर्व पीडाउने दूर करनारो, तथा मित्रनी पेठे हर्ष वधारनारो ले.

बुद्धेः फलं तत्वविचारणं च,
देहस्य सारं व्रतधारणं च ॥
अर्थस्य सारं किल पात्रदानं,
वाचः फलं प्रीतिकरं नराणाम् ॥ १ ॥

अर्थ– बुद्धिनुं फल तत्वविचार ले, शरीरनुं सार्थक व्रतधारवारूप ले, धननुं फल सुपात्रदान ले, अने वाणीनुं फल लोकोने प्रेम उपजाववो, ते ले.

एवी रीते आ श्री उपदेशतरंगिणी नामना ग्रंथनुं गुजराती भावार्थवालुं भाषांतर जामनगर निवासि पंमित श्रावक हीरालाल वि. हंसराजे गुरुमाहाराज श्री चारित्रविजयजीनी कृपाथी करेलुं ले. तेमां जे भूल चुक थइ होय ते "मिछामिछुकडं"

इति तपगच्छेश श्री सोमसुंदर सूरि श्री रत्नशेखर सूरि. पं० नंदि रत्नगणि शिष्य श्री रत्नमंदिरगणि गुंफितायां. श्री उपदेश तरंगिण्यां धर्मोपदेश रूपः पंचम स्तरंगः समाप्तः ॥ श्रीरस्तु ॥

हीनपुण्या न पश्यंति, रागांधास्तत्वसंस्थितिम् ॥
लाभेऽलाभफलं चैव, लभंते ते नराधमाः ॥ १ ॥

समाप्तोऽयं ग्रंथः ॥ श्रीरस्तु ॥

॥ श्रीजिनाय नम ॥

श्रीहरिभद्रसूरिकृतान्यष्टकानि

मूल, तेनो अर्थ, अने टीकानो भावार्थ

संस्कृतपरथी गुजरातीमां

जामनगरनिवासि पंडित

श्रावक हीरालाल वि. हंसराज पासे

भाषांतर करावी

छपावी प्रसिद्ध करनार

श्रावक भीमसिंह माणेक

मुंबई

निर्णयसागर छापखानामां छाप्युं

संवत १९५६ सने १९००

प्रस्तावना

सर्वे जैनवधुर्उने मालुम थाय जे आ "अष्टक" नामनो ग्रंथ जैन धर्मना अति उत्तम ग्रंथ माहेलो एक ग्रंथ छे आ ग्रंथनी टीका पण अति विस्तारवाली तथा न्यायना विपयथी ज्ञरपूर छे आ मूल ग्रंथना कर्ता महान आचार्य श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज छे तेमणे आ ग्रथमा वत्रीश वावतोपर तेना वत्रीस जागो पाडीने अति उत्तम विवेचन कर्युं छे तथा ते दरेक वावतोना आठ आठ श्लोको रचीने आ ग्रंथना वत्रीस अष्टको बनावेला छे ते वत्रीसे अष्टकोमा शुं शुं विषय वर्णव्यो छे? ते आ ग्रथनी अनुक्रमणिकाथी तथा आ ग्रथ सपूर्ण वाचवाथी जणाशे हालना समयमा जैनधर्म संवंधी जे जे पुस्तको छपाइ वहार पडेला छे, तेर्उथी पण आ ग्रथ अति उत्तम तथा जैनधर्मनु रहस्य जाणवानी इच्छावालाने घणोज उपयोगी छे अने ते विपेनुं अत्रे वधारे वर्णन नहीं करता आ ग्रथ आद्यथी ते अतसुधि वाची जवानीज अमो सर्वने ज्ञलामण करीए छीए आ पुस्तकमा तेना मूलश्लोको, तेनो अर्थ तथा टीकानो जावार्थ पण विस्तारथी दाखल करेलो छे आ ग्रथ मूल सस्कृत जापामा होवाथी, हालना समयमा ते जापानु सर्वने जाणपणु नहीं होवाथी अमोए तेनुं गुजराती जापातर जामनगर निवासि पडित श्रावक हीरालाल वि हसराज पासे करावी उपावी प्रसिद्ध कर्युं छे आ मूल ग्रथना कर्ता श्रीमहान आचार्य हरिभद्रसूरीजी छे, तथा तेनी अति उत्तम अने न्यायगर्जित टीका श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराजे वनावेली छे, अने ते टीकाने श्री अभयदेवसूरीश्वरजीए शोधेली छे अने तेटलामाटे ते त्रणे आचार्योनो जे टुंक

इतिहास अमोने मलेलोछे, ते वाचक वर्गने विदित थवा माटे अत्रे प्रसंग होवाथी नीचे लखीए छीए.

श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज.

आ मूल ग्रंथना कर्ता श्री हरिभद्रसूरिजी महाजनो जन्म विक्रम संवतना पांचमा सैकामां संभवे छे. तेमणे सर्व मली चौदसोने चम्मालीस ग्रंथो बनाव्या कहेवाय छे. तेउ प्रथम ज्ञाते ब्राह्मण हता; अने महा विद्वान हता. छेवटे वेदादिकमां कहेली हिंसादिक जोइने, ते धर्म तजीने तेमणे श्री जैनधर्मनी दीक्षा लीधी. तेमणे बनावेला ग्रंथोमां अनेकांतजयपताका (टीका— श्री मुनिचंद्रसूरि), शिष्यहिता नामनी आवश्यक सूत्रनी टीका, उपदेशपद, सिद्धर्षि माटे बनावेली चैत्यवंदनवृत्ति (ललित विस्तरा), जंबुद्वीप संग्रहणी (टीका—श्री प्रज्ञानंदसूरि), ज्ञानपंचकविवरण, दर्शनसप्ततिका, दशवैकालिकनिर्युक्तिटीका, दशवैकालिकबृहद्वृत्ति, दीक्षाविधिपंचासक, धर्मबिंदु, ज्ञानचित्रिका, पंचासकवृत्ति, मुनिपतिचरित्र, लग्नकुंडलिका, वेदबाह्यतानिराकरण, श्रावकधर्मविधिपंचासक, समरादित्यचरित्र, योगबिंदुप्रकरणवृत्ति, पंचसूत्रवृत्ति, व्यवहारकल्प, योगदृष्टिसमुच्चय, षोडशक, तथा अष्टकजी विगेरे हाल दृष्टिए पडता मुख्य ग्रंथो छे. एवी रीते तेमणे बनावेला महान ग्रंथोज तेमनुं अपूर्व ज्ञान जणावी आपे छे. तेमना बनावेला दरेक ग्रंथोने छेडे "विरह" शब्द आवेछे. अने ते विरहांकथी श्री हरिभद्रसूरिजीनी कृतिनी साबिती थायछे. गच्छोत्पत्तिप्रकरणमां विक्रम संवत पांचसो पांत्रिसमां (५३५) तेमनुं देवलोक गमन कहेलुं छे.

श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराज.

आ "अष्टकजी" नामना ग्रंथनी टीका करनारा श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराज विक्रम संवत एक हजारना सैकामां विद्य-

मान हता, एम संजवे ने ते श्री वर्धमानसूरिश्वरजी महाराजना शिष्य हता, अने श्री अभयदेवसूरि, जिनचंद्रसूरि, तथा जिनभद्रसूरिजीना गुरु हता तेओ संसारीपणामा सोम नामना ब्राह्मणना पुत्र हता, तथा तेमनु नाम शिवेश्वर हतुं, तथा मालवाना रहेवासी हता तेओ गुजरातना राजा दुर्लभसेनना समयमा चैत्यवासीओ साथे धर्मवाद करवाने पोताना नाइ बुद्धिसागरनी साथे गुजरातमा अव्या हता, तथा त्या दुर्लभसेनराजानी सन्नामा, सरस्वतीन्नाडागारमाथी मगावेलीदशवैकालिकनी टीकामाथी साध्वाचारप्रकरण वाचीने तेमणे चैत्यवासीओने हराव्या हता, अने एवी रीते सन्नाने जीतवाथी राजाए तेमने "खरतर" नामनुं बिरुद आप्यु हतु तेमणे आ अष्टकनी टीका विक्रम सवत १०८० मा जावालपुर नामना गाममा बनावी ने वली तेमणे पचलिंगीप्रकरण, वीरचरित्र, तथा सवत १०९२ मा आसापलीमा रहीने लीलावती कथा, तथा डींडी वालकमा रहीने कथानककोश विगेरे ग्रथो बनाव्या ने

श्री अभयदेवसूरिजीमहाराज.

आ ग्रथनी टीकाना शोधनार श्री अभयदेवसूरिमहाराज पण विक्रम सवत एक हजारना सैकामा विद्यमान हता, तेम कहेवुं निर्विवादज ने तेमनो जन्म धारा नगरीना व्यापारी धननी स्त्री धनदेवीनी कुक्षिए थयो हतो, तथा ससारीपणामा तेमनुं अभयकुमार नाम हतु ते श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराजना शिष्य हता. तेमने विक्रम संवत १०८८ मा सोल वर्षनी वयेज आचार्यपदवी मली हती अने तेथी तेमनो जन्म विक्रम सवत १०७२ मा होवानु मालित थायने वली विचारामृत नामना ग्रथमा कहेलु ने के, तेमणे विक्रम सवत ११२४ मा धोलकामा रहीने श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजना बनावेला पं-

चासक नामना ग्रंथपर टीका रची छे. तेम तेमणे त्रणथी मांडी-ने अग्यार सुधिना एटले नव अंगोनी टीकाओ, जयतिहु-अणस्तोत्र, जिनचंद्रगणिजीए बनावेला नवतत्वप्रकरणनी टी-का, निगोदपट्त्रिंशिका, पंचनिग्रंथविचारसंग्रहणी पुजलपट्त्रिंशि-का, संग्रहणी, जिनभद्रजीए बनावेला विशेषावश्यकज्ञाष्यपर टीका, हरिभद्रसूरिजीना बनावेला षोडशकनी टीका, देवें-द्र महाराजे बनावेला सतारिकप्रकरणनी टीका विगेरे अनेक ग्रं-थो बनावेला छे. एवीरीते ६७ वर्षोनुं आयुष्य संपूर्ण करीने, विक्रम संवत ११३ए मां कपडवंजमां तेमनुं देवलोकगमन थयुं.

एवी रीते ते त्रणे महान आचार्योनो संक्षेपथी इतिहास जाणवो.

प्रस्तावना रचनार
आ ग्रंथनुं गुजराती ज्ञाषांतर कर्ता
पंडित श्रावक हीरालाल वि. हंसराज.
जामनगरवाला.

ज्ञीमसिंह माणेक.

अनुक्रमणिका.

॥ श्री जिनाय नमः ॥

श्रीहरिभद्रसूरिकृतान्यष्टकानि

तथा

(मूलनी अने टीकानी गुर्जरजाषा.)

श्रीलीलायतनं वंदे, नीरजं नाजिजन्मिनम् ॥
संसारातपतप्तानां, दत्तानन्दकदम्बकम् ॥ १ ॥

टीकाकार श्रीजिनेश्वरसूरि मंगलाचरण करे छे

आविःकृताशेषपदार्थसार्थाः,
दोषानुषक्तं तिमिरं विधूय ॥
गावःप्रथन्तेऽस्खलितप्रचारा,
यस्येह तं वीररविं प्रणम्य ॥ १ ॥
गुणेषु रागाद्धरिभद्रसूरे-
स्तदुक्तमावर्त्तयितुं महार्थम् ॥
विवुद्धिरप्यष्टकवृत्तिमुच्चै-
र्विधातु मिच्छामि गतत्रपोऽहम् ॥ २ ॥ युग्मम् ॥

अर्थ- प्रगट करेल छे सघला पदार्थोना समूहो जेणे, एवी जेनी वाणीर्ज (पक्षे-सूर्यना किरणो) दोषरूपी अंधकारनो नाश करीने, (पक्षे-रात्रिसंबंधि अंधकारनो नाश करीने) अट-काव रहित थइ थकी विस्तार पामे छे, तेवा श्री वीर जगवान रूपी सूर्यने नमस्कार करीने, हरिजद्रसूरि महाराजना गुणोने विषे (मने) राग होवाथी, तेना महान अर्थवाला वचनने हृदयगो-चर करवा सारु, निर्बुद्धि, तथा लज्जा विनानो एवो हुं उंचे प्र-कारे अष्टकनी टीका करवाने इच्छु छु

हवे टीकाकार पोतानी लघुता दर्शावे छे.

सूर्यप्रकाश्यं क्व नु मण्डलं दिवः,
खद्योतकः क्वास्य विभासनोद्यमी ॥
क्व धीशगम्यं हरिभद्रसद्वचः,
क्वाधीरहं तस्य विभासनोद्यतः ॥ ३ ॥
तथापि यावद्गुरुपादभक्ते,
र्विनिश्चितं तावदहं ब्रवीमि ॥
यदस्ति मत्तोऽपि जनोऽतिमन्दो,
भवेदतस्तस्य महोपकारः ॥ ४ ॥

अर्थ– सूर्यथी प्रकाश थतुं एवुं आकाशमंडल क्यां !!! अने ते आकाशने प्रकाशित करवाने उद्यमवंत थतुं एवुं पतंगीउं क्यां !!! (तेमज) बुद्धिवानथी जाणी शकाय एवुं हरिभद्रसूरिजीनुं वचन क्यां !!! अने ते वचनने प्रकाशित करवाने उद्यमवंत थएलो एवो हुं क्यां !!! तो पण गुरुनां चरणनी सेवाथी जेटलुं में निश्चय करेलुं छे, तेटलुं हुं कहुं छुं; केम के, माराथी पण वधारे मंद माणस (आ दुनियामां) छे, अने तेटला माटे तेने तेथी मोटो उपकार थाय.

आ जगतमां सारी रीते ग्रहण थएलुं छे, नाम जेमनुं एवा श्री हरिभद्रसूरि, मिथ्यात्विर्डने मांहोमांहे विवाद करता, तथा नठारां कार्योथी पोते नाश पामेला, अने असत्य उपदेशथी बीजार्डने पण नाश करता जोइने, तेर्ड बन्नेने उपकार करवा माटे बत्रीश प्रकारनां शासनोवालुं शास्त्र बनाववानी इच्छा करता हवा. अने ते शास्त्रनां श्रेयपणाथी कदाच विघ्ननी प्राप्ति थाय, तो तेने दूर करवा माटे, असाधारण गुणोनां समूहरूपी मणिर्डना समूहने उत्पन्न करवामां समुद्रनी पेरें आचरण करता, एवा कोइ उत्तम पुरुषने नमस्कार करवा रूप " भावमंगल " आचार्य महाराज करे छे; (कारण के,) एवी रीते मंगलाचरण करवानी प्रवृ-

त्ति सघला पारलौकिक प्रयोजनोने विषे घणु करीने सिद्धातथीज जणावली छे अने ते मगलाचरण पण कोइ उत्तम पुरुषनीज स्तुतिरूप करेलु प्रमाण गणाय, अने एवा उत्तम पुरुषनो निर्णय करवामा कुशास्त्रोना अनुयायि लोको वादविवाद करे छे, माटे ते विवादनु निराकरण करवा माटे ते उत्तमोत्तम पुरुषनुं स्वरूप देखाडता थका (आचार्य महाराज) प्रथम " महादेवाष्टक " नामनुं पेहेलुं अष्टक कहे छे महादेवनु खरेखरु महत्त्व जगतना सघला मनुष्योने न मली शके, एवा कोइ अतिशय विशेषे करीने होय छे, अने ते अतिशयो अपायापगम, ज्ञान, वचन, सुख आदिको छे वली ते अतिशयोमा "अपायापगम" नामनो अतिशय बीजा सघला अतिशयो करता पेहेलो छे, माटे ते अतिशयनु स्वरूप बे श्लोकोएं करीने आचार्य महाराज प्रथम कहे छे

यस्य संक्लेशजननो, रागो नास्त्येव सर्वथा ॥
नच द्वेषोऽपि सत्त्वेषु, शमेन्धनदवानलः ॥ १ ॥
नच मोहोऽपि सज्ज्ञान–छादनोऽशुद्धवृत्तकृत् ॥
त्रिलोकख्यातमहिमा, महादेवःसउच्यते ॥२॥ युग्मम्

अर्थ–जेने क्लेशने उत्पन्न करनारो राग सर्वथा प्रकारे नथीज, तथा समतारूपी काष्ठने दावानल समान एवो प्राणीउने विषे द्वेष पण नथी, तेम सत्य ज्ञानने आच्छादन करनारो, अने अशुद्ध आचरण करनारो एवो मोह पण नथी, तथा जेनो, महिमा त्रणे लोकोमा प्रख्यात छे, तेवा देवने "महादेव" कहेवाय

टीकानो भावार्थ–जे कोइ देवविशेषने राग नथीज, ते महादेव कहेवाय, एवो आ श्लोकनो संबंध छे, अहीं जे कोइ (ससार समुद्रथी) पार पहोचेला एवा बुद्ध, विष्णु, शकर, ब्रह्मा

आदिक गमे ते देवनो सामान्य निर्देश करीने आचार्य महाराजे पोतानुं मध्यस्थपणुं देखाड्युं छे. केमके तेउ कहे छे के–

पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेषः कपिलादिषु ॥
युक्तिमद्वचनं यस्य, तस्य कार्यः परिग्रहः ॥ १ ॥

(अर्थ–मारे वीर प्रभुमां पक्षपात नथी, तेम कपिल आदिकमां द्वेष पण नथी; पण जेनुं वचन युक्तिवालुं छे, तेनुं ग्रहण करवुं.)

एवी रीते आचार्य महाराजे पोतानुं मध्यस्थपणुं देखाडीने पोतानां वचनमां सांभलनाराउने उपादेय बुद्धि उत्पन्न करी; केम के, आग्रह विनानां वक्ताथी तत्त्वनुं जाणपणुं थाय छे. कह्युं छे के,

आग्रहीबतनिनीषतियुक्तिं, यत्रतत्रमतिरस्यनिविष्टा ॥
पक्षपातरहितस्यतुयुक्ति-र्यत्रतत्रमतिरेति निवेशम् ॥१॥

अर्थ–आग्रही माणस ज्यां पोतानी बुद्धि पहोंचे छे, त्यां युक्तिने खेंची जाय छे, अने निष्पक्षपातीनी बुद्धि ज्यां युक्ति होय छे, त्यां पहोंचे छे.

हवे पूर्वापर विरोध न आवे, एवुं रागनुं स्वरूप प्रतिपादन करवामाटे कहे छे; समस्तपणायें करीने क्लेशने उत्पन्न करनारो, एटले आत्मानां स्वाभाविक शांतपणाने बाधा करनारो एवो जेने राग नथी, तेने "महादेव" कहीयें. त्यारे अहीं वादी शंका करे के, जेने क्लेशने उत्पन्न करनारो एवो राग नथी, तेने "महादेव" कहीएं; एवी रीते ज्यारे तमोए अंगीकार कर्युं; त्यारे शुं तमोए अंगीकार करेला महादेवने "अक्लेशने उत्पन्न करनारो" एवो राग छे? वली तमोए अंगीकार करेला महादेवने तो प्रकारांतरथी, एटले कोइ बीजा प्रकारथी पण राग छे, एम तमारी कहेवानी इच्छा नथी; माटे रागने "क्लेशने उत्पन्न करनारो" एवुं जे तमोए विशेषण आप्युं छे, ते फोकटनुं छे. (हवे ते वादीने प्रत्युत्तर दीये छे के) जे वस्तुनो स्वभाव जाणवामां आवतो नथी, तेनो स्व-

भाव प्रगट करवामाटे विशेषणनी खास जरूर छे, केमके, परमाणु शब्दनो अर्थ समजवामाटे "अप्रदेश" (जेना भागो थइ न शके तेवुं) एवुं विशेषण मुकवुं पडे छे, तेम अहीं पण रागनुं स्वरूप जाणवामाटे "संक्लेशजननो" एवु विशेषण सार्थकज छे एवी रीते आत्माना स्वरूपने उपरंजन करनारो राग जेने बिलकुल अंशमात्र पण नथी, तेने महादेव कहीए अहीं कोइ शंका करे के, उपशांतमोहावस्थामां अथवा उदयनी अपेक्षाए कदाचित रागनां कोइ पण भेदनी अपेक्षाए ते (राग) होय, तो तेने माटे ते वादीने कहे छे के, ते प्रस्तुत महादेवने तो "सर्वथा" एटले बंध, उदय अने सत्ताना लक्षणवाला विषयराग, स्नेहराग, तथा दृष्टिराग, द्रव्य, क्षेत्र, काल अने भावथी पण नथी वली ते महादेवने (उपर कहेलो) केवल रागज नथी, एटलुंज नहीं, पण तेमने प्राणीउपर द्वेष पण सर्वथा प्रकारे नथी अहीं प्राणी-उपर द्वेषनो अभाव कहेवानी मतलब ए के, क्रोध अने मानरूप एवो जे द्वेष, ते प्राणीउनाज विषयवालो छे, अर्थात ते द्वेष प्राणी-उपरज थाय छे केमके अजीव पदार्थोपर जे द्वेष करवो ते मोटी मूर्खाइ छे केमके, कह्यु छे के,

कि एत्तो कट्ठयरं, मूढो जं थाणुगंमि अप्फडिओ ॥
थाणुस्स तस्स रुस्सइ, न अप्पणो दुप्पउत्तस्स ॥ १ ॥

(अर्थ—आथी वधारे दुःखदायक (बीजुं) शुं छे? के कोइ मूढ माणस झाडना ठुंठसाथे अथडाइ पडीने, ते ठुंठपर गुस्से थाय छे, पण पोतानी गफलतीप्रते गुस्से थतो नथी।)

वली राग तो जीव अने अजीव बन्ने पदार्थोपर थाय छे, माटे ते महाविषयवालो होवाथी तेनु प्रथम ग्रहण करेलु छे

अहीं वली वादी शंका करे के, अप्रीतिना लक्षणवालो द्वेष स्पर्श आदिक विषयोमा अजीव पदार्थोपर पण थाय छे, जेम के, कांटा आदिकनो स्पर्श थवाथी तेनापर द्वेष थाय छे, अने

आ महादेवने तो सर्वथा प्रकारे द्वेष नथी, माटे "प्राणीउंपर तेने द्वेष नथी" एम कहेवुं अयुक्त छे.

त्यारे वादीने कहे छे के, एम नहीं; प्राणीउंपर द्वेष नथी, एटले वैरीरूप एवा अन्य दर्शनीउंपर पण आ महादेवने द्वेष नथी; केम के, आ वात तो लोकोमां पण प्रसिद्ध छे के, सरखेसरखाउंमां आपसआपस अदेखाइ होय छे; अने एवी रीते जेने ज्यारे शत्रु अथवा मित्रपर पण द्वेष नथी, त्यारे ते महादेवने अजीव पदार्थोपर द्वेष तो बिलकुल संभवेज नहीं. अर्थात ते महादेवने जेम जीवपर द्वेष नथी, तेम अजीवपर पण द्वेष नथी.

हवे ते केवो द्वेष नथी? ते कहे छे.

क्षमा आदिकना भावरूप जे काष्ठ, तेने बालवाने दावानल सरखो द्वेष नथी.

हवे ते महादेवने उपर कहेला रागद्वेषज नथी, एटलुंज नहीं, पण जेने सर्वथा प्रकारे मोह पण नथी; हवे ते मोह केवो, ते कहे छे.

यथार्थ पदार्थोने देखाडनारुं, अथवा उत्तम पदार्थोनुं जे ज्ञान तेने आच्छादन करवानो छे स्वभाव जेनो, तथा कलंकयुक्त चेष्टा करनारो, एवो मोह आ प्रस्तुत महादेवने नथी.

वली जेनो महिमा त्रणे लोकोमां प्रख्यात छे, तेने "महादेव" कहियें; केम के, सघला मनुष्योनां समूह, देव, इंद्र आदिकने कदर्थना करवामां समर्थ एवा रागादिक शत्रुउनां समूहने दूर करवामां जे समर्थ होय, तेनोज आ त्रण जगतमां महिमा गवाय छे, अने तेज उत्तम पुरुष माणसोनां समूहमां मुकुटसमान छे. कह्युं छे के,

रागद्वेषमहामोहैः, कदर्थितजगज्जनैः॥
नाभिभूतं मनो यस्य, महिम्ना तस्य कः क्षमः॥१॥

(अर्थ–दुःखी करेल छे जगतनां लोकोने जेणे, एवा राग,

द्वेष अने महामोहवडे करीने, जेनुं मन पराजय पामेलुं नथी, एवा पुरुषना महिमानी कोण बरोबरी करी शके तेम छे ?)

एवी रीते उत्तम गुणोना समूहरूप मणिउंने उत्पन्न करवामा समुद्र सरखा " महादेव " बुद्धिवानोने स्तुति करवा लायक छे, अने महादेवनु खरुं स्वरूप जाणवावाला माणसो तो तेनेज "महादेव" कहे छे, पण जेनुं पराक्रम राग आदिक शत्रुउंथी हणाएलुं छे, तेने " महादेव " कहेता नथी

वली अहीं वादी शका करे छे के, सघला प्राणीउंमा राग तो होय छेज, माटे (कोइने पण) सर्वथा तेनो अभाव सभवेज नही

त्यारे वादीने हवे प्रत्युत्तर आपे छे के, एम नही जो के, सघला प्राणीउंने रागद्वेषनो अभाव नथी थतो, तोपण अमुक प्राणीउंने तेनो अभाव थाय पण छे, माटे एवी रीते तारी शकामा व्यभिचार दोष आव्यो केम के, आपणने पोताने पण कोइ अप्रिय वस्तुमा ज्यारे रागनो अभाव मालुम पडे छे, तो ते दृष्टातथी अनुमान करी लेवु के, एवो पण कोइ माणस होवो जोइए के, जेने तमाम वस्तुउंपर बिलकुल रागनो अभावज होय, अने तेम कहेवामा कंइ विरोध आवतो नथी केम के, कह्यु छे के,

दृष्टो रागाद्यभावस्तु, क्वचिदर्थे यथात्मनः ॥
तथा सर्वत्र कस्यापि, तद्भावे नास्ति बाधकम् ॥१॥

(अर्थ—जेम कोइ कोइ कार्यमा आपणने पोताने पण (अनिष्ट वस्तु आदिकपर) रागनो अभाव देखाय छे, तेम कोइ माणसने सघली वस्तुउंपर पण रागनो अभाव होय, (एम मानवामा) कंइ बाधा नथी)

वली वरसादनी श्रेणि आदिकनी पेठे, पुद्गलिक भावो जेम थोडा, वधारे, अने तेथी पण वधारे नाश थता देखाय छे, तेम आ राग आदिको ज्यारे थोडा नाश थता देखाय छे, त्यारे तेउं-

नो सर्वथा क्षय थवो पण संभवितज छे. केम के, कह्युं छे के,

देशतो नाशिनो भावा, दृष्टा निखिलनश्वराः ॥
मेघपंक्त्यादयो यद्व–देवं रागादयो मताः ॥ ? ॥

(अर्थ–जेम थोडा नाश पामता एवा वरसादनी श्रेणि आदिक भावो, सर्वथा नाश पामता देखाएला छे, तेम राग आदिको पण थोडा अने सर्वथा पण नाश पामता मनाएला छे.)

वली अहीं वादी शंका करे के, कदाच (तमारा केहेवा प्रमाणे) कोइने ते राग आदिकोनो सर्वथा अभाव संभवी शके, पण ते चित्तवृत्तिरूप होवाथी जाणी शकाय तेम नथी, माटे ते रागद्वेषादिक विनानो "पुरुषविशेष" शीरीते जाणी शकाय?

तेने माटे वादीने प्रत्युत्तर आपे छे के, तेवा पुरुषनां स्वरूप अने चरित्रथी तेने जाणी शकाय छे. केमके, जेनुं स्वरूप स्त्रीरहित, हथियार रहित, अने रुद्रमाल रहित होय, तथा जेनुं चरित्र श्रृंगारादिक रस रहित, फक्त एकांत शांतरसमयज होय, अने अंतरंग वैरीने जीतनारुं होय, पण असमंजस न होय, तेने "वीतराग" जाणवा. कह्युं छे के,

रागोङ्गना संगमनानुमेयो, द्वेषो द्विषद्दारणहेतुगम्यः ॥
मोहः कुवृत्तागमदोषसाध्यो, नो यस्य देवः स स चैवमर्हन्

अर्थ– स्त्रीनां संगमथी रागनुं अनुमान थाय छे, वैरीने मारवाथी द्वेषनुं अनुमान थाय छे, दुष्ट आचरणोनां दोषथी मोहनुं अनुमान थाय छे; माटे ते त्रणे जेने नथी, एवा देव तो श्री अरिहंतप्रभुज छे. वली,

श्रृंगारादिरसांगारैः, न दूनं देहिनां हितम् ॥
एकांतशांततोपेत, मार्हतं वृत्तमद्भुतम् ॥ ? ॥

अर्थ– श्रृंगार आदिक रसरुपी अंगाराओये करीने जेथी प्राणीओनुं हित नष्ट थयुं नथी, तथा एकांत शांत रसमय, एवुं अरिहंत प्रभुनुं वृत्त आश्चर्यकारक छे.

अने बीजा देवोनु तो रागादिकपणु, अनुचित रूप, तथा अनुचित चरित्र तो (लोकोमा) प्रख्यातज छे ते कहे छे

ब्रह्मा लूनशिरा हरिर्दृशिसरुक् व्यालुप्तशिश्नो हरः
सूर्योप्युल्लिखितोऽनलोप्यखिलभुक्सोमःकलकांकितः
स्वर्नाथोऽपि विसंस्थुलःखलुवपुःसंस्थैरुपस्थैः कृतः
सन्मार्गस्खलनाद्भवन्तिविपदःप्रायःप्रभूणामपि ॥१॥

अर्थ–उत्तम मार्गथी भ्रष्ट थवाथी ब्रह्मा छेदाएला मस्तकवालो, विष्णु आंखमा रोगवालो, महादेव छेदाएला लिंगवालो, सूर्य उखडेली चांवडीवालो, अग्नि सर्व भक्षण करनारो, चन्द्र कलंकवालो, तथा इन्द्र हजार योनिओवालो थयो, माटे एवी रीते दुराचरणथी समर्थोने पण प्रायें करीने आपदाओ थाय छे वली,

यद्ब्रह्मा चतुराननः समभवद्देवो हरिर्वामनः
शक्रोगुह्यसहस्रसंकटतनुर्यच्च क्षयी चंद्रमाः
यज्जिह्वादलनामवापुरहयो राहुः शिरोमात्रता
तृष्णे देवि विडंबनेय मखिला लोकस्य रेत्वत्कृता ॥२॥

अर्थ–ब्रह्मा चार मुखवालो थयो, विष्णुदेव वामनरूप थयो, इन्द्र एक हजार योनिवाला शरीरवालो थयो, नागो चीराएली जीभवाला थया, राहुनुं फक्त माथुंज रह्यु, माटे हे तृष्णादेवी! आ सघली लोकोनी विडंबना तारी करेली छे

हवे ते ब्रह्मानु मस्तक शी रीते छेदाणु? ते कहे छे

एक समये तेत्रीस क्रोड देवताओ एकठा थया, तथा तेओ माहोमाहें (पोतपोताना) मावापोनु वर्णन करवा लाग्या, त्यारे तेओए कह्यु के, अहो!!! एक महादेवना मावापो जणाता नथी, ते सांभली एके कह्यु के, महादेवने मावाप छेज नही, ते वचन सांभलीने ब्रह्माए मत्सर लावीने पोताना पांचमा गर्दभ आकारवाला मुखथी कह्युं के, सघली वातोनो जाणनार हजु हुं जीवतो बेठो छु, छता एम कोण कही शके छे के, महादेवना

मायार जाणतां नथी ? हुं तेना मायापणे जाणुं छुं; एम कहीने ते तेनुं वर्णन करवा लाग्यो. पछी नहीं प्रकाशवा लायक एवी वातने प्रकाशित करवाना आरंभथी कोप पामीने महादेवे पोतानी टचली आंगळीना नखवाग्रथी सघळा देवोनी समक्ष ते ब्रह्मानुं गर्दभमुख कापी नाख्युं. एवी रीते ब्रह्मा तेदाडाथी चतुर्मुखवाळो थयो. वळी तेने माटे बीजाओ नीचेप्रमाणे पण कहे छे.

एक दहाडो ब्रह्मा अने विष्णुने पोतपोतानी मोटाइमाटे विवाद थयो; पछी तेओ (तेनो निर्णय करवामाटे) महादेवपासे गया. त्यारे महादेवे कह्युं के, तमारा विवादथी सर्युं. पण तमो बेमांथी जे कोइ मारा लिंगनो अंत लावशे तेने मोटा दरजानो. अने जे अंत नहीं लावे. तेने तेनाथी नीचा दरजानो जाणवो. (ते सांभळी) विष्णु ते लिंगनो अंत लेवामाटे पातालमां गयो. एवी रीते घणुं चाल्यो. पण त्यां रहेला वज्रसरखा अग्निथी ज्यारे शक्तिवान् न थवाथी तेना अंतने पाम्यो नहीं. अने एवी रीते संतापथी श्याम शरीरवाळो थइने पाछो वळीने ते महादेवपासे आव्यो. अने कह्युं के तमारा लिंगनो तो पार पण आवतो नथी. एवी रीते ब्रह्मा पण ऊंचे जवा लाग्यो. पण ते महादेवना लिंगनो अंत न पामवाथी खेद पामवा लाग्यो; पण एटलामां लिंगना मस्तकपरथी पडती केतकीनी माळा तेने मार्गमां मळी. त्यारे ब्रह्माए तेणीने पूछ्युं के, तुं क्यां हती? त्यारे तेणीए कह्युं के. महादेवनां लिंगना मथाळेथी हुं आवुं छुं. त्यारे फरीने ब्रह्माए तेणीने पूछ्युं के तने त्यांथी आवतां केटलाक वखत थयां ? त्यारे तेणीए कह्युं के, मने त्यांथी आवतां छ मासो थया. पछी ब्रह्माए कह्युं के, महादेवना लिंगनो अंत लेवावास्ते हुं जउं छुं; पण जे छ महीनानो मार्ग तें बताव्यो तेथी तो हुं हवे कंटाळीने पाछो वळीश; कारण के, ते बहु दूर छे; हवे तारे मारुं एक कार्य करवुं जोइशे; ते ए के, महादेव ज्यारे पूछे. त्यारे "हुं लिंगनो अंत पाम्यो छुं"

एवी रीतनी तारे मारी साक्षी पुरवी पछी ते वात केतकीए, पण अंगीकार करी पछी ब्रह्मा तो ते केतकीने साथे लेइने महादेवनी पासे आव्यो अने तेने कह्युं के, हु तारा लिंगनो अंत पाम्यो छु, अने वली तने खातरी थवा माटे हु आ केतकीनी माला पण त्यांथी लाव्यो छुं त्यारे महादेवे केतकीने पुछवाथी तेणीए पण एमज कह्यु. ते सांभली महादेवे विचार्यु के, मारुं लिंग तो अनंत छे, छता आ बन्ने तेनो अंत ठरावे छे, माटे आ बन्ने जूठा छे, एम विचारि क्रोध चडवाथी महादेवे पोतानी टचली आगलीरूपी कुहाडाथी ब्रह्मानुं गर्दभरूप मस्तक छेदी नाख्युं, तथा केतकीने पण त्यारथी श्राप आपीने दूर करी

विष्णुनी आंखोमा रोग थयो, तेने माटे नीचे प्रमाणे संबंधाय छे

एक दहाडो दुर्वासा नामना ऋषिने उर्वशी नामनी अप्सरा साथे भोगविलास करवानी इच्छा थइ त्यारे उर्वशीए तेने कह्यु के, तुं जो कोइ अपूर्व वाहनपर बेसीने आवे, तो हुं तने इच्छीश त्यारे ते वात दुर्वासाए कबुल करी पछी ते विष्णु पासे गयो त्यारे विष्णुए आदरमानथी आववानुं कारण पूछ्यु, त्यारे तेणे कह्युं के, हुं देवलोकमा जवाने इच्छुं छु माटे तारे तारी स्त्रीसहित बलदनु रूप करी रथमा मने बेसाडी त्या लेइ जवो, पण रस्ते चालता तमारे पाछु वालीने जोवु नहीं पछी विष्णुए भक्तिथी तथा (श्राप आदिकना) भयथी ते कबूल कर्यु, तथा तेने लेइने त्यांथी चाल्यो हवे लक्ष्मी तो स्त्रीजाति होवाथी पुरुषनी बरोबर चालवाने अशक्त थवाथी ऋषि तेने चाबुकथी वारवार मारतो थको हांकवा लाग्यो एटलामा विष्णुए स्नेहने लीधे पोतानी स्त्रीने पडतो मार सहन न थवाथी पाछुं फरीने जोयु एवी रीते विष्णुए प्रथम अंगीकार करेली वात नहीं पालवाथी, ते कोप पामेला ऋषिए तेनी आंखमा चाबुक मार्यो, अने

तेथी विष्णुनी आंखमां रोग थयो. बीजाउं वली ते विषे नीचे प्रमाणे कहे छे.

एक वखते विष्णु कोइ नदीने किनारे तप करता हता; त्यां कोइ तापसी स्नान करती हती. ते वखते ते तापसणीनुं अंग वस्त्र रहित होवाथी विष्णुए तेणीनापर कामविकारथी दृष्टि नांखी; तेम करतां तेने तापसणीए जोवाथी श्राप आपीने रोगिष्ट आंखवालो कर्यो.

महादेव छेदाएला लिंगवालो थयो,ते नीचे प्रमाणे.

दारुवन नामना तपोवनमां केटलाक तापसो रहेता हता. तेउंनी झुंपडीउंमां हमेशां महादेव पोताना अलंकारो सहित, तथा घंटाना नाद अने तुंवरुनां झणकारथी सघली दिशाउंने गजावतो थको भिक्षामाटे आवतो हतो; तथा त्यां पोताना रूपथी कामविकारने प्राप्त थएली एवी तापसणीउं साथे भोगविलास करवा लाग्यो. पछी एक दहाडो तेना आ दुराचरणनी ऋषिउंने मालुम पडवाथी तेउंए गुस्से थइने श्राप आपी तेना लिंगनो छेद कर्यो. अने तेम करवाथी सघला माणसोने संताननी उत्पत्ति थवी बंध पडी गइ. आ जोइने देवताउंए विचार्युं के, आवी रीते एकीवेलाए आ दुनिआनो संहार न थाय तो सारुं; एम विचारि तेउंए तापसोने समजावी शांत पाड्या. त्यारे तेउंए पाछुं महादेवनुं लिंग जेवुं हतुं तेवुं कर्युं; पण तेनी साथे एवुं कह्युं के, पूर्वकाले ते लिंग जे हमेशां स्तब्ध हतुं, ते हवे भोगनी वांछा होते छतेज स्तब्ध थशे; पछी त्यारथी माणसो पण पाछा लिंगयुक्त थया; अने प्रजानी उत्पत्ति थवा लागी.

सूर्य पण उखडेली चांवडीवालो थयो, ते नीचे प्रमाणे.

सूर्यने रन्नादेवी नामे एक स्त्री हती; तेणीने यम नामे एक पुत्र हतो; हवे ते स्त्री सूर्यनां तापने सहन नहीं करवाथी पोताना स्थानके पोताना सरखुं कृत्रिम रूप मूकीने, पोते घोडीनुं रूप करी

समुद्रने किनारे रहेवा लागी. पछी ते कृत्रिम स्त्रीए शनैश्चर तथा जड नामना संतानोने जन्म आप्यो एक दहाडो ते यमे बहारथी आवीने तेणीनी पासे जोजन माग्युं, पण तेणीए तेने आप्यु नही त्यारे यमने क्रोध चडवाथी तेणीने तेणे लात मारी, तेथी तेणीए शाप आपीने तेना पगनो नाश कर्यो, पछी यमे ते वात पोताना पिताने कही सजळावी, त्यारे सूर्य विचारवा लाग्यो के, सगी माता आम केम करे ? माटे खरेखर आ आनी माता नथी, एम विचारता तेणे तेनी (यमनी) माताने घोडीरूपे जोड पछी सूर्ये त्या जइ तेणीनी इच्छाविरूद्ध बलात्कारथी तेनी साथे जोग जोगव्यो, अने त्या अश्विन नामना वे देवोनी उत्पत्ति थइ, वली तेणीए क्रोधथी लाल थएली आखोथी तेना तरफ (सूर्य तरफ) जोवाथी ते कुष्टी थयो, पछी सूर्य ते रोगथी मुक्त थवामाटे धन्वंतरीपासे गयो, त्यारे धन्वतरीए कह्युं के, तारा शरीरनी चावडी उखेड्या विना तु निरोगी थइ शके तेम नथी, पछी सूर्ये चावडी उखेडवा माटे धन्वतरीने प्रार्थना करी, त्यारे ते वैद्यराजे कह्यु के, तारे ते सहन करवु पडशे, नहींतर तने तजी देइश, त्यारे सूर्ये कह्युं के, हुं ते सहन करीश, पछी ज्यारे माथाथी माडीने घूटणसुधि चावडी उखेडाणी त्यारे घणी पीडा थवाथी सूर्ये सीत्कार शब्द कर्यो, त्यारे धन्वंतरी पण चावडी उखेडतो अटकी पड्यो, एवी रीते इच्छाविनानी स्त्रीने जोगववाथी, तथा उत्तम पुरुषना मार्गथी स्खलित थवाथी तेने दुःख सहन करवु पड्युं

वीजाउ वली ते माटे नीचे प्रमाणे कहे छे

घोडीना रूपवाली पोतानी स्त्रीसाथे जोग जोगवीने, तेणीना वापने ते सूर्य ठपको देवा लाग्यो के, तारी आ पुत्री मने तजीने वीजी जगोए जइ रहे छे त्यारे तेणे सूर्यने कह्युं के, तारा शरीरना तापने ते सहन करी शकती नथी, तेथी ते विचारी शु करे ? माटे जो तारे तेणीनु प्रयोजन होय, तो तु तारु शरीर छोलाव ? पछी

सूर्य (शरीर ढोळाववामाटे) धन्वंतरी पासे गयो; अने वाकीनुं वृत्तांत आगळनी वात मुजवज जाणी लेवुं.

अग्नि पण सर्वभक्षी नीचे मुजव कहेवाय छे.

कोइ एक ऋषि पोतानी झुंपडीमां रहेला अग्निने अत्यंत भक्तिपूर्वक आहुतीउंवडे करीने पूजतो हतो. ते ऋषिए एक दहाडो ते अग्निने कह्युं के, तारे आ मारी स्त्रीनुं रक्षण करवुं; एम कही ते कंइ कार्यमाटे वहार गयो. एटलामां कोइक ऋषिए त्यां आवीने ते अग्निनी समक्षज ते स्त्रीसाथे भोगविलास कर्यो; पछी क्षणवारमांज पेलो ऋषि पण त्यां आव्यो; तथा पोतानी हुशियारीथी तेणे जाण्युं के, आ स्त्रीने कोइ परपुरुषे भोगवी छे; एम विचारि तेणे अग्नि तथा स्त्रीने पूछ्युं के, अहीं कोण आव्युं हतुं ? ते सांभळी तेउए कंइ पण उत्तर आप्यो नहीं. त्यारे ते ऋषिए ज्ञानना उपयोगथी ते वृत्तांत जाणी लीधो; तथा रक्षण करवा आपेली वस्तुनुं रक्षण नहीं करवाथी, अने पूछयाथी प्रत्युत्तर पण नहीं आपवाथी, ते ऋषिए अग्निपर कोपायमान थइने श्राप आप्यो के, तुं सर्वभक्षी थजे; अने त्यारथी ते अग्नि अशुचि पदार्थ विगेरेनो भक्षण करनारो थयो; अने एवी रीते, ते जे कंइ खाय, ते सघळुं देवताउने मळे; केमके ते देवोनुं मुख छे. पछी देवोने अशुचि पदार्थोनो स्वाद आववाथी उद्वेग पामीने तथा ज्ञानथी आपनो वृत्तांत जाणीने, ते ऋषिपासे आवी तेने शांत करवा लाग्या; पण ते ऋषि शांत थयो नहीं; तो पण देवताउना आग्रहथी तेणे ते अग्निनी सात जीभो करी; अने त्यारथी ते अग्नि "सप्तार्चि" कहेवावा लाग्यो. पछी ते साते जीभोमांथी वे जीभोए करीने आहुतीउंनेज भक्षण करवा लाग्यो; अने पांच जीभोथी तेने सर्वभक्षी तरीके स्थाप्यो.

वळी चंद्र कलंकित थयो, तेनुं वृत्तांत नीचे प्रमाणे जाणवुं.

एक वखते चंद्र बृहस्पतिपासे भणवामाटे गयो; केमके बृह-

स्पति देवोनो आचार्य छे, त्या चंद्र तेने घेर जणतां थकां ते बृहस्पतिनी स्त्रीसाथे भोगविलास करवा माड्यो ते वातनी बृहस्पतिने जाण थइ, त्यारे तेने तेणे श्राप आप्यो के, रे! गुरुनी स्त्री भोगवनार ! तु कलंकी थजे एवी रीते चंद्र कलंकी थयो

वली इन्द्र पण हजार योनियोथी भरेला शरीरवालो नीचे प्रमाणे थयो

गौतम ऋपिने अहिल्या नामनी स्त्री हती. तेना रूपथी मोहित थएलो इन्द्र तेनी झुपडीमा जइने तेणीनी साथे भोग भोगवना लाग्यो, एटलामा त्या ते ऋपि आवी चड्यो, त्यारे इन्द्र पण तेना भयथी विलाडानु रूप करीने तेना घरमाथी निकलीने स्वर्गमा गयो, त्यारे मुनिए विचार्यु के, आ स्वाभाविक विलाडो होवो न जोइए, एम विचारता तेणे इन्द्रने ओलखी कहाड्यो, तेथी क्रोधथी तेणे इन्द्रना शरीरमा श्रापथी हजार योनिओ करी, तथा पोताना शिष्योने तेने भोगववामाटे मोकल्या, पण मुनि गयो नहीं, पछी देवोए ते ऋपिने शात पाडी खुशी करवाथी तेणे ते योनिओने बदले नेत्रो कर्या

हवे ब्रह्मा पण चार मुखवालो नीचे प्रमाणे थयो

एक वखते ब्रह्मा मोटा उद्यानमा तपस्या करवा लाग्यो, ते वखते तेने चलायमान करवामाटे सघली अप्सराओनु तलतल जेटलु रूप लेइने इन्द्रे तिलोत्तमा नामनी अप्सरा बनावी, तथा तेणीने अने बीजी अप्सराओने पण ब्रह्मापासे तेनी समाधिनो भंग करवामाटे मोकली तेओ पण त्या जइने पूर्वदिशासन्मुख बेठेला ते ब्रह्मानी समीपे गायन, नाच विगेरे करवा लागी त्या ब्रह्माने पोतानी सन्मुख लोचनवालो तथा मनवालो जोइने तेओए दक्षिण दिशामा जइ नृत्यादिक करवा माड्यु एवी रीते नष्ट थएली छे समाधि जेनी एवो ते ब्रह्मा लज्जाथी सन्मुख जोवाने अशक्त होवाथी तेओ प्रते पोतानु बीजु मुख करतो हवो एवी

रीते पश्चिम दिशाए अप्सराउं जवाथी ते दिशातरफ त्रीजुं, तथा उत्तर दिशाए जवाथी ते तरफ चोथुं, तथा आकाशमां उपर जवाथी पांचमुं मुख कर्युं. एवी रीते ब्रह्मा पांच मुखोवालो थयो. अने पाछलथी शंकरे ज्यारे तेनुं गर्दभमुख कापी नाख्युं, त्यारथी ते चार मुखवालो थयो.

विष्णु वामनरूपे थया, ते पण नीचे प्रमाणे.

एक वखते वलि नामना दानवने बांधवामाटे विष्णुए वामनरूप थइने झुंपडीमाटे तेनी पासेथी त्रण पगलां जमीन मागी; पछी ज्यारे वलिराजाए कबुल कर्युं, त्यारे तेणे त्रणे पगलांथी त्रणे लोकने रोकी लीधाथी स्थानविनाना ते वलिने पातालमां दाबी दीधो.

हवे चंद्र क्षयरोगवालो केम थयो? तेने माटे कहे छे.

दक्षने सत्तावीस दीकरीउं हती; तेउने चंद्र परण्यो; ते सघलीउंमां रोहिणी उपरज तेनुं मन आसक्त थयुं; तेथी वीजी अणमानीतीउंए ते वात पोताना पिताने कही; त्यारे तेणे तेने क्रोधथी श्राप आपीने क्षयवालो कर्यो; पण पाछलथी देवोए तेने शांत पाड्याथी, तेणे तेने एक पक्षमां वृद्धिवालो कर्यो.

नागो पण नीचे प्रमाणे वे जीभोवाला थया.

एक वखते देवताउंए क्षीरसमुद्रने मथीने अंदरथी अमृत मेलव्युं; ते अमृतना कूंडां भरीने तेउपर घास आच्छादित कर्युं; तथा तेनी रक्षामाटे नागोने वेसाड्या; पछी एकांत जोइने तेउंए ते अमृत पीवा मांड्युं; त्यारे तेमां रहेला डाभोथी तेउंनी जीभो चीराइ गइ.

वीजाउं वली ते माटे नीचे प्रमाणे कहे छे.

ज्यारे तेउंए अमृत पीवा मांड्युं, त्यारे इंद्रे वज्र मारवाथी तेउंनी जीभ चीराइ गइ.

राहुनुं फक्त माथुंज रह्यु, ते नीचे प्रमाणे

देवोए अमृतना कुंडा भर्या, अने तेनी रक्षामाटे तेओए विष्णुने बेसाड्यो पछी विष्णु ज्यारे कइक कार्यमा गुंथाया, त्यारे राहु ते पीवा लाग्यो विष्णुए तेने तेम करतो जोइने तेना पर चक्र फेंकी तेनु मस्तक छेदी नाख्यु, पण अमृत पीधेलुं होवाथी तेनु मस्तक अजरामर थयु

एवी रीते "ब्रह्मानु मस्तक केम छेदायुं" इत्यादि विस्तारथी विवेचन कर्यु वली

स एप भुवनत्रयप्रथितसंयमः शंकरो
बिभर्ति वपुषाधुना विरहकातरः कामिनीम्
अनेन किल निर्जिता वयमिति प्रियायाः करम्
करेण परिताडयन् जयति जातहासः स्मरः ॥ १ ॥

अर्थ–कामदेव पोतानी स्त्रीसाथे हाथमा ताली देइने महादेवनी हासी करे छे के, त्रण जगतमा जेनु संयम प्रख्यात छे, एवो महादेव स्त्रीनो विरह नहीं सहन करवाथी पोताना शरीरनीसाथे तेणीने राखे छे, अने ते महादेवे मने जीतेलो (कहेवाय छे,) ए केवी आश्चर्यकारक वात छे !।' वली,

दिग्वासा यदि तत्किमस्य धनुषा सास्त्रस्य
किं भस्मना । भस्माथास्य किमंगना यदि
च सा काम परिद्वेष्टि किं ॥ इत्यन्योन्यविरु-
द्धचेष्टितमिदं पश्यन्निजस्वामिनो भृंगी सा-
न्द्रशिरावनद्धपरुपं धत्तेस्थिशेपं वपुः ॥ १ ॥

अर्थ–ज्यारे महादेव दिशारूपीज वस्त्रवालो छे, त्यारे तेने धनुषनी शी जरूर छे ? तथा ज्यारे धनुष राखे छे, त्यारे भस्मनी शी जरूर छे ? तथा ज्यारे भस्म चोले छे, त्यारे स्त्रीनी शी जरूर छे ? तथा ज्यारे स्त्री राखे छे, त्यारे ते कामदेवनो शामाटे द्वेष करे छे ? एवी रीते पोताना स्वामिनुं परस्पर विरोधवालु चेष्टित

जोइने, भृंगी केतां महादेवनो पार्षदगण मात्र नसो अने हाड-कांथीज बनेलुं पोतानुं खेदयुक्त शरीर धारण करे छे.

एवी रीते अपायापगम नामनां अतिशयनां द्वारें करीने महादेवपणुं वर्णव्युं.

हवे गुणातिशयना प्रतिपादनथी तेज महादेवनुं स्वरूप कहे छे.

यो वीतरागः सर्वज्ञो, यः शाश्वतसुखेश्वरः॥
क्लिष्टकर्मकलातीतः, सर्वथा निष्कलस्तथा ॥३॥
यः पूज्यः सर्वदेवानां, यो ध्येयः सर्वयोगिनाम् ॥
यःस्रष्टासर्वनीतीनां, महादेवःसउच्यते॥४॥ युग्मम्

अर्थ—जे रागविनाना, सघलुं जाणनारा, शाश्वतसुखना मालिक, दुष्ट कर्मोना अंशथी रहित, सर्वथा प्रकारे शरीरना अवयव विनाना, सर्वदेवोने पूजवालायक, सर्व योगीउने ध्यान धरवालायक, तथा सर्व प्रकारनी नीतिने बनावनारा होय, ते महादेव कहेवाय.

टीकानो भावार्थ—अहीं जे वीतराग होय, इत्यादि सर्व पदोनी साथे "ते महादेव कहेवाय" एवी क्रिया जोडी लेवी. विशेषें करीने जेनो राग गयो छे, तेवो गमे ते कोइ देव ते वीतराग कहेवाय; वली द्वेषनो क्षय थवाथीज रागनो पण क्षय थाय छे, माटे जेने राग नथी, तेने द्वेष पण नथी, एम समजी लेवुं. सघली द्रव्य अने पर्यायरूप वस्तुउने जे जाणे, एटले विशेषे करीने सघलां आवरणो खसी जवाथी उत्पन्न थएला केवलज्ञाने करीने जे (सघली बीनाने) जाणे ते सर्वज्ञ कहेवाय; तेम "सर्वदर्शी" (सघलुं जोनारा) प्रते सर्वज्ञपणानो व्यभिचार आवतो नहीं होवाथी जेम ते सघलुं जाणनारा छे, तेम ते सघलुं जोनारा पण छे, एम पण जाणी लेवुं.

अहीं वादी शंका करे के, (प्रस्तुत महादेवने) राग, द्वेष, अने

मोहनो अभाव तो प्रथम कही गएला छे, अने तेम कर्याथी तेमने (महादेवने) वीतरागपणुं तथा सर्वज्ञपणुं तो खुल्लु जणाइ आवे छे, (केम के, वीतरागपणानुं तथा सर्वज्ञपणानु ते स्वरूप छे,) तो वली फरीने वीतरागपणु अने सर्वज्ञपणु अंगीकार करवानी शी जरूर हती ?

हवे ते वादिने कहे छे के, जेम ते महादेवने रागादिक नथी, तेथीज ते " वीतराग " तथा " सर्वज्ञ " पण छे, एवी रीते हेतुफलना भावें करीने, जेम " मेलनो नाश थवाथी पीला रंगना प्रकर्षवालु सोनु " इत्यादि न्यायें करीने प्रस्तुत महादेवनो गुणातिशय कहेलो छे, माटे तेमा (पुनरुक्तिनो) दोष नथी, केम के, मोटा पुरुषो वाक्योमा एवी रीतना न्यायनो आश्रय करता देखाएला छे अथवा केटलाको (अन्य दर्शनीओ) वैराग्य तथा ज्ञान आदिकने प्रकृतिना भावो माने छे, अने ते भावो कैवल्यअवस्थामा प्रकृतिनो नाश थवाथी, दूर थाय छे, माटे तेओना मतने दूषित करवामाटे (उडाववा माटे) पण ते (सर्वज्ञ आदिक) विशेषणो निर्दोष छे ते कहे छे के, ज्ञान अने वैराग्य आदिक चैतन्यना स्वभावो छे, अने चैतन्य तो आत्मानु स्वरूप छे, केम के " चैतन्य पुरुषस्य स्वरूप " (चैतन्य छे ते आत्मानु स्वरूप छे) एम कहेलु छे, माटे एवी रीते चैतन्य ज्यारे आत्मानु स्वरूप थयु, त्यारे ते ज्ञान अने वैराग्य आदिक (कैवल्य अवस्थामा पण) शी रीते नाश थाय ?

वली बीजा आचार्यो उपरना (मूल श्लोको माटे) नीचे प्रमाणे पण कहे छे

" यस्य सङ्क्लेशजननो " इत्यादि मूलना प्रथमना बन्ने श्लोको अरिहंत प्रभुनी छद्मस्थ अवस्थाने आश्रीने कहेला छे, एम तेनुं व्याख्यान करे छे, केम के, " क्लेशने उत्पन्न नहीं करनारो " इत्यादि जे राग आदिकना विशेषणो कहेला छे, तेओ तेज अव-

स्थामां (छद्मस्थ अवस्थामां) व्यवच्छेदफलरूप थइ शके छे; एटले जेने संक्लेशने उत्पन्न करनारोज राग नथी, तथा समता-रूपी लाकडांने बालनारोज द्वेष नथी, अने सत्य ज्ञानने ढांकनारो, तथा अशुद्धवृत्तने करनारोज मोह नथी; ते महादेव कहेवाय; "पण जेने सत्तामां रहेला ते ते कर्मोनां दलियां रूपे पण राग, द्वेष विगेरे नथी, तेज महादेव कहेवाय; "एवुं कहेवानी अत्रे मतलब नथी;" (उपरनो मत, "पेहेला बन्ने श्लोको अरिहंत प्रभुनी छद्मस्थ अवस्थाने आश्रयी छे," एम माननारा महान आचार्योनो छे, अने ते पण सत्यज छे.)

(वली पण तेमनोज मत दर्शावे छे.)

"यो वीतराग" इत्यादिक जे बीजा बे मूलना श्लोको छे ते संसारमां रहेला केवलीउने आश्रीने कहेला छे.

अहीं वादी शंका करे के, छद्मस्थ अवस्थामां महत्वपणुं मानवुं अनुचित छे, केम के, तेथी "महत्तर" एवी बीजी अवस्थानो सद्भाव छे. त्यारे वादीने कहे छे के, एम नहीं. एम मानवाथी तो सिद्धपणुं छे लक्षण जेनुं एवी महत्तम नामनी जे बीजी अवस्था, तेनो सद्भाव होवाथी केवलीने पण अमहत्वनो प्रसंग आवे; अथवा कोइ बीजी रीते अपुनरुक्तपणुं भावी लेवुं.

हवे अहीं (प्रस्तुत महादेवने) वीतरागनुं विशेषण लगाडवाथी रागवालाउना महादेवपणानो प्रतिषेध कह्यो. अने तेने विषे पेहेलांज भावना देखाडेली छे.

हवे अहीं "सर्वज्ञ" एवुं विशेषण देवाथी कपिलना महादेवपणाने दूर कर्युं; केम के, तेनुं सर्वज्ञपणुं तो तेना पोतानांज मतथी घटी शकतुं नथी; ते नीचे प्रमाणे जाणवुं.

तेउ (कपिल मत माननाराउ) एम माने छे के, बुद्धिमां अवस्थित अर्थने आत्मा चिंतवे छे; अने प्रकृतिनां विकारपणाथी कैवल्य अवस्थामां ज्यारे प्रकृतिनो नाश थाय छे, त्यारे बुद्धिनो

पण नाश थाय छे, अने तेथी ते अवस्थामा कोइ पण पदार्थनु जाणपणु रहेतुं नथी, त्यारे सर्वज्ञपणानी तो वातज शी करवी!!! माटे ते कपिलनो पक्ष महादेवपणामाटे उंची पायरीपर आवी शकतो नथी, केम के, ज्यारे तेउ बुद्धिमय ज्ञान माने छे, अने ते बुद्धि प्रकृतिने आधारे छे, तो ते आधारमय एवी प्रकृति ज्यारे कैवल्य अवस्थामां नाश पामे छे, तो पछी तेमा ज्ञानशक्ति तो रहेज शानी ? केम के, आत्माने ज्ञानमय मानवाथी तो, ज्ञानने अटकावनारी प्रकृतिनो ज्यारे नाश थाय, त्यारेज आत्माने सर्वज्ञपणु घटी शके छे

वळी तेज "सर्वज्ञ" एवा विशेषणथी बुद्धनुं महादेवपणु पण दूर कर्युं, केम के, ते किंचित् किंचित् जाणनार छे, कारण के तेना (बुद्धना) अनुयायिउ कहे छे के,

सर्वं पश्यतु वामावा, ईष्टमर्थं तु पश्यतु ॥
कीटसरयापरिज्ञान, तस्य नःक्वोपयुज्यते ॥ १ ॥

अर्थ–सघलु जुउ अथवा न जुउ, पण फक्त तत्वनेज जुउ, कारण के, कीडाउनी सख्यानु जे ज्ञान, तेनी अमारे शी जरूर छे?

एवी रीते किंचित् किंचित् जाणपणुं पण तेने (बुद्धने) घटी शकतु नथी, केम के तेने सर्वज्ञपणु नही होवाथी सघला स्वपरपार्यायें करीने विशिष्ट थयेला एवा एक अर्थने जाणवाने पण ते अशक्त छे कह्यु छे के,

एको भावः सर्वथायेनदृष्टः, सर्वे भावाःसर्वथातेन दृष्टाः
सर्वेभावाःसर्वथायेनदृष्टा, एकोभावःसर्वथातेनदृष्टः ॥१

अर्थ–जेणे सर्वथा प्रकारे एक भाव जोएलो छे, तेणे सर्व भावो पण सर्वथा प्रकारे जोएला छे, अने सर्वे भावो जेणे सर्वथा प्रकारे जोएला छे, तेणे एक भाव पण सर्वथा प्रकारे जोएलो छे

वळी अहीं वादी शंका करे के, सर्वज्ञ संभवी शकतोज नथी, केम के, शशलाना शिंगडांनी पेठे सत्तासाधक प्रमाणथी ते वात ग्राह्य थइ शकती नथी; केम के आ "सर्वज्ञ" छे, एवुं ते कालना (सर्वज्ञ जे वखते विचरता हता ते वखतना) विद्वानो पण ते सर्वज्ञने जाणी शकाय, एवा ज्ञानना अभावथी तेउने जाणवाने शक्तिवान थता नथी.

हवे ते वादीने कहे छे के, एम नहीं; केम के, सर्वज्ञपणुं सिद्ध करवाने सत्तासाधक प्रमाणनुं जे तें अग्राह्यपणुं कह्युं, ते वात असिद्ध छे; अर्थात सर्वज्ञपणुं सिद्ध करवामाटे घणां प्रमाणो छे. ते नीचे प्रमाणे.

जे पदार्थो थोडाथोडा नाशवंत होय, तेउनो समूलगो नाश थवानो पण संभव छे; केम के, जेम सामग्री विशेषथी वस्त्र रत्ननां मेल आदिक पदार्थो अपचय (क्षय) धर्मवाला छे, तेम ज्ञानावरणादिक पण अपचय धर्मवाला छे; माटे तेउनो सर्वथा क्षय थवो पण संभवे छे; एवी रीते ज्यारे तेउनो सर्वथा क्षय थाय छे, त्यारे सर्वज्ञपणादिकभावो पण प्रगटी निकले छे; अने ते ज्ञानावरणादिकोने अपचयधर्मपणुं कंइ असिद्ध नथी; केम के पोताना संतानमां पण ज्ञान आदिकनुं थोडाघणापणुं देखायज छे. कह्युं छे के,

दोषावरणयोर्हानि, र्निःशेषास्त्यतिशायनात् ॥
क्वचिद्यथास्वहेतुभ्यो, बहिरंतर्मलक्षयः ॥ १ ॥

अर्थ—जेम पोतानां हेतुउथी (उपायोथी) बहारनो अने अंतरनो मेल नाश पामे छे, तेम अतिशयपणाथी दोष अने आवरणनी हानि सघली पण संभवे छे.

वळी इंद्रियोने गोचर न थइ शके एवा बंध, मोक्ष अने परलोक आदिक भावो कोइने प्रत्यक्ष पण होय छे, केम के, अग्नि आदिकनी पेठे ते वात अनुमानथी सिद्ध थाय छे. कह्युं छे के,

सूक्ष्मांतरितदूरार्थाः, प्रत्यक्षाः कस्यचिद्यथा ॥
अनुमेयत्वतोऽग्न्यादि, रिति सर्वज्ञसंस्थितिः॥१॥

अर्थ–जेम सूक्ष्म, आंतरावाला, तथा दूर रहेला पदार्थो कोइने प्रत्यक्ष छे, तथा अग्नि आदिक जेम अनुमानथी सिद्ध थाय छे, तेम सर्वज्ञनी स्थिति पण जाणवी

एवी रीते ते सर्वज्ञने जाणवाना ज्ञानथी शून्य एवा माणसो पण अनुमान प्रमाणथी "आ सर्वज्ञ छे के, नहीं" ते जाणी शके छे

(एवी रीते वीतराग पणानुं अने सर्वज्ञपणानुं विस्तारथी वर्णन कर्यु-) हवे वली जे शाश्वत सुखना मालिक होय, तेने "महादेव" कहेवाय अहीं मूल श्लोकमा फरीने पण जे "य" शब्द मुकेलो छे, ते वीजी (प्रस्तुत महादेवनी) अवस्थाने सूचवनारो छे, एटले के, राग आदिकना क्षयथी प्रगट थएलु वीतरागपणुं अने सर्वज्ञपणु जगमा रहेला केवली आदिकनी अवस्थामा महत्वने सूचवनार छे, आ "शाश्वता सुखना मालिकपणादिक" त्रण विशेषणो मोक्ष अवस्थामा महत्वने सूचवनारा छे हमेशा जे सुख रहे, तेने शाश्वतु सुख कहीयें, अने तेवु सुख मोक्ष थकी उत्पन्न थता आनंदरूप छे केम के, ते शिवाय ते शाश्वतु सुख उपलब्ध थइ शकतु नथी, अने तेवा शाश्वता सुखना जे स्वामी तेने "शाश्वतसुखेश्वर" कहीयें

वली अहीं वादी शका करे के, सघली वस्तुओने क्षणिकपणु होवाथी सुखने शाश्वतपणु शी रीते घटी शके?

ते शकामाटे ते वादीने कहे छे के, वस्तुने सर्वथा प्रकारे तो क्षणिकपणु घटी शकेज नहीं, केम के, तेनो स्वभाव तो उत्पाद (उत्पन्न थवु ते) व्यय, (नाश) अने ध्रौव्य (अचलपणु) रूप छे वली अर्ही तेनु ते माटे घणु बोलवा जेवु छे, पण ते पटरमा अष्टकथी जाणी लेवु, माटे एवी रीते तेवा प्रकारना शाश्वत सु-

खनो असंभवज जाणवो नहीं; केम के, सुखनुं आवरण ज्यारे अपचयधर्मवाळुं छे, त्यारे ते आवरण तमाम नाशवाळुं पण संभवे छे; केम के, तेना अपचयनो संभव छे; अने तेने माटे पेहेलां वर्णन करेलुंज छे; वळी आ विशेषणथी क्षणक्षणमते क्षय थती वस्तुओने माननाराओए (बौद्धोए) मानेला देवना महत्वपणाने दूर कर्युं; केम के, तेमना एवी रीतना मतथी तेमने तेवा प्रकारना (शाश्वता) सुखनो असंभव छे; अने ज्यारे एवी रीतनुं शाश्वतुं सुख तेमना महादेवने मळतुं नथी, त्यारे तेमनुं महत्वपणुं तो फक्त कल्पनारूपज छे.

वळी ते प्रस्तुत महादेव "क्लिष्टकर्मकलातीतः" केतां भवनां हेतुपणाथी क्लेशरूप एवा जे ज्ञानावरणादिक आठ प्रकारना कर्मोना अंशो, तेनाथी मुकाएला छे; आ विशेषणथी जेओ एम माने छे के, "ज्ञानी एवा धर्मतीर्थना करनाराओ मोक्षमां गया पछी पण फरीने पोताना तीर्थनी पडती जोइने, पाछा संसारमां आवे छे;" तेओए मानेला देवोना महत्वनो व्युदास (नाश) कर्यो. केम के, जो क्लीष्ट कर्मोना अंशोनो अभाव थएलो होय, तो भवमां पाछो अवतार थवो असंभवित छे. कह्युं छे के,

अज्ञानपांशुपिहितं, पुरातनं कर्मबीजमविनाशि ॥
तृष्णाजलाभिषिक्तं, मुंचति जन्मांतरं जंतोः ॥ १ ॥

अर्थ—अज्ञानरूपी धूळिथी आच्छादित थएलुं, अने पुराणुं, तथा नाश न पामे एवुं कर्मरूपी बीज, तृष्णारूपी पाणीथी सिंचावाथी प्राणीने जन्मांतरमां लावी मुके छे.

(वामन, नरसिंह) आदिक नगारां रूपो धरी भवने विषे अवतार लेनारा, अने पोतानां शासननुं अपमान नहीं सहन करनारा, एवा ते देवोनुं महत्वपणुं केवुं?!

तथा जे सर्व प्रकारे शरीरना सघला अवयवरहित होय, तेज "महादेव" केहेवाय; कारण के, ज्यारे ते अवयवोनो अभाव थाय,

त्यारेज सुखनो पण संभव थाय छे कह्युं छे के, ज्यारे शरीर अने मननो अभाव थाय, त्यारेज दु खनो पण अभाव थाय, कारण के दु:खना संभवरूप शरीरपणामा ते महत्वपणु शी रीते संभवे?

वली आ विशेषणथी ("सर्वथा निष्कल") एवा विशेषणथी) शरीरें करीने जे महत्वपणाने अगीकार करे छे, तेना मतनो तिरस्कार कर्यो, केम के, तेओ समस्त जगत्ने महादेवना चक्षु, मुख, हाथ, तथा पगथी भरेलु माने छे, अने तेम थवु तो सभवतुंज नथी, तेथी एवी रीतना पुरुषमा महादेवपणुं पण असभवितज छे, केम के, समस्त जगत ज्यारे तेना चक्षुमयज थयु, त्यारे बीजा अवयवोने रहेवाने तो जगतमा कंइ पण स्थान रह्यु नहीं, माटे तेवा प्रसगथी तेनु महादेवपणु घटी शकतु नथी, अने ते शिवाय जो कोइ बीजी रीतथी (पोतानुं) महादेवपणु कहेवा मागे, तो तेमना पोतानाज मतने विरोध आवे छे, केम के, तेमनाज शास्त्रमा कह्युं छे के,

अपाणिपादो जवनो ग्रहीता,
पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः ॥
स वेत्ति विश्व नच तस्य वेत्ता,
तमाहुरग्र्यं पुरुष महान्तम् ॥ १ ॥

अर्थ–जे हाथ पगवीना चाली शके छे, तथा ग्रहण करी शके छे, तथा चक्षुविना जुए छे, अने कानविना साभले छे, वली ते जगतने जाणे छे, पण तेने कोइ जाणतुं नथी, एवा पुरुषने अग्रेसर महानपुरुष (महादेव) कहे छे

वली बीजा आचार्यो आ विशेषणोने माटे नीचे प्रमाणे कहे छे "क्लिष्टकर्मकलातीत" केता नाश करेल छे, घाति कर्मो जेणे एवा भवमा रहेला केवली जाणवा, तथा "सर्वथानिष्कल" एटले क्षय थएला छे भवोपग्राही कर्मो जेना एवा सिद्धकेवली जाणवा

हवे "यः पूज्यः सर्वदेवानां" केतां जे प्रस्तुत महादेव, सर्व भवनपति आदिक देवोने पूजनीक छे, केम के, जे "वीतराग" आदिक गुणोयें करीने युक्त होय, तेज देवोथी पूजाय छे; अने तेउना पूजनिकपणाथी तेउनी प्रतिमाउनुं पण पूजनीकपणुं सिद्ध थाय छे.

अथवा सघला हरिहरादिक देवो के जेउ, जेउने (तेना मतवालाउने) पूजनिक छे, (तेउना समूहनी अपेक्षाथी) एवा बौद्धादिकोने पण प्रस्तुत महादेवज पूजनीक छे; केम के तेउ पोतपोताना देवोने पूजता थका पण तत्वथी तो प्रस्तुत महादेवनेज पूजे छे; अथवा तेना उपदेशथी स्वर्ग अने मोक्षनो संग थशे, एम मानता थका तेने पूजे छे; अने उपदेश पण ग्रहण करवा लायक मोक्षनां विसंवादरहित ज्ञानथी, तथा वीतरागपर अद्वेषपणुं होते छतेज थाय छे; बीजी रीते थतो नथी. माटे एवी रीते पोताना देवमां पण सर्वज्ञपणा आदिक गुणोनुं आरोपण करीने तेने पूजे छे, अने तेथी परमार्थथी तो ते प्रस्तुत महादेवज तेमनाथी पूजाय छे; माटे प्रस्तुत महादेव "सर्व देवोने (सर्व देवो छे, पूजनिक जेउने एवा बौद्धादिकोने) पूजनीक छे" एम कहेवुं दूषणरहित छे. तथा वली, "यो ध्येयः सर्वयोगिनां" केतां जे आ प्रस्तुत महादेव सर्व अध्यात्मचिंतकोने ध्यान धरवालायक छे; केम के तेवा योगीउ पण, एवा वीतराग आदिक महान् गुणोवालानुंज ध्यान धरे छे; अने तेवा तो उपर कहेली रीते करीने अरिहंत प्रभुज छे. वली "यः स्रष्टा सर्वनीतीनां" केतां जे सघला नैगम आदिक नयोना, अथवा साम आदिक नीतिउना प्रकाश करवाएं करीने उत्पन्न करनारा छे;

आ विशेषणथी केवल एमज नहीं जाणवुं के, ऋषभदेव प्रभुएज लोकोना व्यवहार माटे सामादिक नीति बनावी छे, अने तेथी तेज "महादेव" कहेवाय; अने बीजा अजितनाथ आदिक त्रेवीस

तीर्थंकरो महादेव न कहेवाय, केम के, चौदे पूर्वोमा रहेली सघली वाणी सर्व तीर्थंकरोए देखाडेली होवाथी, तेओ पण नीतिने वनावनाराज छे

एवी रीतना उपर कहेला गुणोए करीने जे युक्त होय, ते महादेव कहेवाय

अही वादी शका करे के, पेहेला बे श्लोकने छेडे कहेलु छे के, तेवा तेवा गुणोवाला होय, ते महादेव कहेवाय, अने वली फरीने पण पाछुं "ते महादेव कहेवाय" एम अत्रे शामाटे कह्यु? तेने माटे तेने उत्तर आपे छे के, सघला जावोनु वे प्रकारनु स्वरूप होय छे, एक व्यावहारिक अने वीजुं पारमार्थिक, तेमाथी पारमार्थिक महादेवपणु जणाववा माटे आ वचन कहेलु छे

हवे प्रस्तुत महादेवने वीजा लक्षणथी लक्ष्यगोचर करवा माटे कहे छे

एवं सद्वृत्तयुक्तेन, येन शास्त्रमुदाहृतम् ॥
शिववर्त्म परं ज्योति, स्त्रिकोटीदोषवर्जितम् ॥५॥

अर्थ–एवी रीते उत्तम आचरणोएं करीने युक्त एवा, जे देवे मोक्षना मार्गरूप, तथा उत्कृष्ट ज्योतिवालु, अने त्रिकोटि दोषोएं करीने रहित एवु शास्त्र वनावेलुं छे, ते "महादेव" कहेवाय

टीकानो भावार्थ–एवी रीते उपर वर्णवेला रागद्वेषना क्षय करवारूप तथा जगमा रहेला केवलीने लायकनु अनिंदित आचरण (वृत्त) अही जाणवु, पण शाश्वता सुखना मालिकपणा आदिक सिद्ध अवस्थाने उचित आचरण जाणवु नही, केम के, सिद्ध अवस्थामा शास्त्रोना उपदेशनो अभाव छे माटे एवा आचरणें करीने जे युक्त होय, ते "सद्वृत्तयुक्त" कहेवाय, एवा सद्वृत्तवाला जे कोइ देवे शास्त्र वनाव्युं होय, ते "महादेव" कहेवाय हवे ते शास्त्र पण केवु होवु जोइयें? ते कहे छे "शिववर्त्म"

केतां जेमां मोक्षनो मार्ग जणावेलो छे एवुं, अथवा मोक्षनां मार्ग-रूप, तथा “ परंज्योतिः ” केतां महामोहरूपी अंधकारना समूहने दूर करनार एवा असाधारण प्रदीप समान शास्त्र जेणे रचेलुं छे, ते “महादेव” कहेवाय; वली ते शास्त्र केवुं तो के, “ त्रिकोटीदोषवर्जितं” केतां शास्त्रोनां आदि, मध्य अने अंतना नागमां आवता जे पूर्वापर विरोध आदिक दोषो, तेणे करीने रहित एवुं; अथवा शास्त्ररूपी सोनानी कष, छेद अने तापरूप जे परीक्षा, तेमां आवता दोषोयें करीने रहित, एवुं शास्त्र जेणे रचेलुं छे, ते “ महादेव” कहेवाय.

अहीं “ सद्वृत्तें करीने युक्त ” एवुं जे महादेवनुं विशेषण आप्युं छे, तेथी कामीपणां आदिक अनुचित अनुष्ठानवाला देवोना महादेवपणानो निषेध कह्यो; केम के, राग आदिकथी उत्पन्न थाय,एवी असमंजस चेष्टाउ जेउनी होय, तेउने पण महादेवपणामां जो लेखीए, तो तेवुं महादेवपणुं तो सर्व प्राणीउमां प्राप्त थइ शके !!! कह्युं छे के,

कामानुषक्तस्य रिपुप्रहारिणः,
प्रपंचिनोऽनुग्रहशापकारिणः ॥
सामान्यपुंवर्गसमानधर्मिणो,
महत्वक्लृप्तौ सकलस्य तद्भवेत् ॥ १ ॥

अर्थ–काममां आसक्त, शत्रुने मारनार, प्रपंच करनार, प्रीति राखनार, तथा श्राप आपनार, एवा सामान्य माणस सरखा गुणोवालानी पण जो महादेवपणामां कल्पना करीएं, तो तेवुं महादेवपणुं तो सघलाने प्राप्त थाय.

वली “ शास्त्रमुदाहृतं ” (शास्त्रकहेलुं छे) एम कहीने जेउ शास्त्रने मनुष्यनी कृतिविनानुं माने छे, तेउनां मत खंडन कर्युं छे.

शास्त्रने मनुष्यनी कृतिविना थएलु जेओ माने छे, तेओ कहे छे के,

तस्मिन् ध्यानसमापन्ने, चिंतारत्नवदास्थिते ॥
निःसरति यथाकामं, कुड्यादिभ्योऽपि देशनाः १

अर्थ–ते ध्यान प्राप्त थये छते, तथा तेमा चिंतामणि रत्ननी पेठे आस्था राखवाथी, इच्छा प्रमाणे भींत आदिकमाथी पण उपदेशो निकले छे

एवी रीतना उपदेशने माननाराओना मतनु खंडन एवी रीते थाय छे के, एवी रीते भींत आदिकमाथी निकलेलो उपदेश आप्त पुरुषे कहेलो मनाय नहीं, अने तेथी तेमा (लोकोनो) विश्वास पण न थाय, केम के, ते उपदेश कोणे बनाव्यो ? (ते नक्की थइ शकतु नथी)

जोके ते अन्य दर्शनीओना देवने अचित्य पुण्यना समूहे करीने घणा अतिशयो छे, तो पण (मुखथी) बोलवापणामा कइ विरोध आवतो नथी, तो बोलवापणानो व्याघात करनारी एवी भींत आदिकनी देशना कल्पवानी शी जरुर हती ? माटे जे शास्त्र आप्त पुरुषे कहेलु होय, तेज शास्त्र मोक्षना मार्गरुप छे, अने एम कहेवाथी जे शास्त्रनो करनार, कोइ पुरुष न होय, ते शास्त्र अप्रमाण कहेवाय, केम के एवा अपौरुषेय शास्त्रो बनवा पण असंभवित छे, तेनो असंभव नीचे प्रमाणे जाणवो

जे जे वचननी रचना छे, ते ते "कुमारसंभव" आदिकनी पेठे (कालिदासादि) पुरुषनी बनावेली देखाय छे, एवी रीते वेद पण वचनोनी रचनावालो छे, माटे तेने पण कोइ पुरुषेज बनावेलो कही शकाय, अने तेथी तालु आदिकना व्यापारवाला पुरुषना वचन रुप एवा वेदने " अपौरुषेय " एटले पुरुषे नहीं बनावेला कहेवा, ए अयुक्त छे कह्युं छे के,

तात्वादिजन्मा ननु वर्णवर्गो,
वर्णात्मको वेद इति स्फुटं च ॥
पुंसश्च तात्वादिरतः कथं स्या,
दपौरुषेयोऽयमिति प्रतीतिः॥ १ ॥

अर्थ—अक्षरोनो समूह तालु आदिक स्थानोथी उत्पन्न थाय छे, अने वेद तो अक्षरमय छे, ए वात प्रसिद्धज छे; अने ते तालु आदिक स्थानो तो पुरुषने होय छे, माटे आ वेद "अपौरुपेय" छे, एवी खातरी शी रीते थाय ?

" शास्त्रं शिववर्त्म " (ते शास्त्र मोक्षमार्गरूप छे,) एम कह्याथी जेउ शास्त्रने अप्रमाणरुप माने छे, तेमनां मतनुं खंडन कर्यु. तेउ (शास्त्रने अप्रमाण माननाराउ) एम माने छे के, प्रत्यक्ष-प्रमाणथी गोचर एवा अर्थोमां शास्त्रना वचनोनो व्यभिचार आवे छे, माटे शास्त्र अमारे प्रमाण नथी. पण तेम मानवुं युक्त नथी; केम के, निश्चित एवा आप्त पुरुषे रचेलांज वचनने प्रमाणपणुं प्राप्त थाय छे; अने तेथी वीजाउना (आप्तशिवायना) वचननुं व्यभिचारपणुं जोइने, सघलाउना वचनोनुं अप्रमाणपणुं स्थापवुं युक्त नथी; अने जो एम नहीं मानीए तो झांझवानां पाणी प्रत्यक्ष देखाय छे, छतां असत्य छे, अने तेथी " सघला प्रत्यक्ष देखाता पदार्थो पण असत्य छे " एम मानवाजेवुं थाय; अने एवी रीते प्रत्यक्ष प्रमाणने ज्यारे अप्रमाणरुप मान्युं, त्यारे अनुमान प्रमाण पण प्रमाणरूप नहीं थाय, केम के, अनुमान प्रमाणथी प्रत्यक्ष प्रमाण पेहेलुं छे; अने वली तेथी " प्रत्यक्ष अने अनुमान एवां वे प्रमाणो छे " एवी रीतनुं महान पुरुषोनुं वचन पण नाशने पामे छे; वली आगमवादीउए कह्युं छे के, इंद्रियोने गोचर नहीं एवी स्वर्ग आदिक गतिमां शास्त्रज प्रमाणरुप छे, केम के वीजा प्रमाणना विपयरूप ते नथी; अने वली साधनना जाणकारो आगममां कहेला अर्थनेज पुष्टी आपे छे.

हवे " त्रिकोटीदोषवर्जित " एटले जे शास्त्र परीक्षामां समर्थ नथी, अर्थात् परस्पर विरोध आवे एवा लखाणवालुं छे, ते शास्त्र मोक्षमार्गरूप नथी, केम के, परीक्षामा टकी नहीं शके, एवुं शास्त्र पण केटलाकोए (अन्यदर्शनीओए) अंगीकार करेलु छे, ते कहे छे

पुराणं मानवो धर्मः, सांगो वेदश्चिकित्सितं ॥
आज्ञासिद्धानि चत्वारि, न हतव्यानि हेतुभिः १

अर्थ–पुराण, मानवधर्मशास्त्र (मनुस्मृति) अंगोपांग सहित वेद, अने चिकित्साशास्त्र (वैद्यकशास्त्र) ए चारे आज्ञाथकीज सिद्ध थएला शास्त्रो छे, माटे तेओमा कदाच पूर्वापर विरोध आवे, तो पण तेओने हेतुओथी दूषित करवा नहीं, आने माटे बीजा आचार्यो कहे छे के, ते अन्यदर्शनीओना आ लखाणमा आपणे तेने पकडवा जेवु छे, माटे ते तेओथी निवारी शकाय तेम नथी

हवे जो सोनुं दोष रहित होय, तो तेनी परीक्षाथी शामाटे डरवु जोइए ? अने तेने माटे श्रीवीरप्रभु पण कहे छे के,

निकषच्छेदतापेभ्य, सुवर्णमिव पण्डितैः ॥
परीक्ष्य भिक्षवो ग्राह्य, मद्वचो नतु गौरवात्॥१॥

अर्थ– पंडितो (सोनाना परीक्षको) जेम कष, छेद, अने तापथी परीक्षा करीने सोनाने ग्रहण करे छे, तेम हे साधुओ ! तमारे पण तेवीज रीतथी परीक्षा करीने मारं वचन ग्रहण करवु, पण फक्त मारा मानदाखल तमारे ग्रहण करवु नहीं

हवे शास्त्रनी कष, छेद, अने तापनी परीक्षानु स्वरूप नीचे प्रमाणे जाणवु

विधिमार्ग तथा प्रतिषेध मार्ग ते कष जाणवो, अर्थात् प्राणातिपातादिक पापस्थानोनो जे प्रतिषेध, ते "प्रतिषेधमार्ग" अने ध्यान, अध्ययन आदिक जे विधि ते "विधिमार्ग," अने तेओने धर्मकष जाणवो

विधिमार्ग अने प्रतिपेध मार्गने जेम वाधा न पहोंचे, तेवी रीते सम्यक्प्रकारे तेउने पालवाना उपायभूत एवी क्रियानो जे उपदेश, तेनुं नाम "छेद" जाणवुं. कह्युं छे के, जे बाह्य अनुष्ठानें करीने तप अने नियमोनो भंग थतो नथी, अने शुद्धता थाय छे, तेने "धर्मछेद" जाणवो.

वंध अने मोक्षादिकना सद्भावना कारणरुप जे आत्मादिक भाव, तेने कहेवारुप "ताप" जाणवो. कह्युं छे के, जीवनां वंध आदिक भावथी शुद्ध थइने जे आत्मभाव मेलववो, तेने "धर्मताप" कहीएं.

एवी रीते कप आदिक शुद्धिनुं स्वरूप जाणवुं.

हवे जे शास्त्रमां मन, वचन, अने कायाथी, जीवितपर्यंत, सूक्ष्म अने वादर जीवोनी हिंसानो, करवा, करावबा, अने अनुमोदवायें करीने, अर्थ अनर्थना आश्रयथी निपेध होय, तेने कपशुद्ध शास्त्र कहीएं. कह्युं छे के, सावद्य क्रियानी अंदर जे सूक्ष्ममात्र पण प्रतिपेध ज्यां कह्यो छे, तथा जे राग आदिकनो नाश करे छे, एवुं जेमां होय, तेने "कपशुद्ध शास्त्र" जाणवुं, अने जे शास्त्रमां एवी रीतनो विधि के प्रतिषेध न होय, ते शास्त्र कपशुद्ध न कहेवाय. जेमके, प्राणी, प्राणी संवंधि ज्ञान, घात करनारुं चित्त, ते संवंधि चेष्टा, अने प्राणीनी हिंसा, एवी रीतें पांच प्रकारे हिंसा थाय छे; तथा हाडकां विनानां जंतुउनां गाडाने गाडाउ भरीने जे हिंसा करवी, ते मात्र एकज हिंसा छे; एवी रीतनो जे शास्त्रमां विसंवाद आवे, ते शास्त्रने असत्य जाणवुं; वली आ पापनो प्रतिपेध कंइ आत्यंतिक नथी. तथा,

अष्टवर्गांतिकं वीजं, कवर्गस्य च पूर्वकम् ॥
वह्निनोपरिसंयुक्तं, गगनेन विभूषितम् ॥ १ ॥
एतदेव परं तत्वं, योऽभिजानाति तत्वतः ॥
संसारवंधनं छित्वा, सगच्छेत्परमां गतिम् ॥२॥

अर्थ–आठ वर्गने अंते रहेला, तथा कवर्गनी पेहेलाना, उपर रेफवाला, तथा अनुस्वारथी विभूषित थएला, एवा "अर्हं" नामना उत्कृष्ट बीजतत्वने, जे खरी रीते जाणे छे, ते माणस ससारना बधननो छेद करीने परम गतिमा (मोक्षमा) जाय छे

इत्यादि स्वरूपवालो जे ध्याननिधि, ते नरादिकना विकुट्टनने सहन करनारो छे, केमके, घणा कालसुधि ते ध्यानने धरता थका पण उत्तर कालमा ते रागादिको एमना एमज रहे छे, पण "रागादिको आ लोक अने परलोकमा पण दुःखदायक छे," एवु चितवनारने उत्तर कालमा तेउ सूक्ष्म थया थका सर्वथा प्रकारे पण नाश पामे छे, माटे राग आदिकोने दूर करवानु जे ध्यान, ते श्रेष्ट निधि छे, अने तेथीज उत्तम (योगीउ) बीजा ध्यानोने तजीने, ते प्रकारनी (रागादिकनो नाशकरनारी) ध्याननिविधि आचरे छे कह्यु छे के, सघली क्रियाउमा जेटला जेटला राग द्वेष वर्ते छे, तेटला तेटला आ लोक अने परलोकमा अहित करनारा छे

हवे जेमा उपर कहेला विधि अने प्रतिषेधना उपायभूत एवी समिति अने गुप्तिउ सबधि क्रिया देखाडाय छे, ते शास्त्रने "छेद शुद्ध" शास्त्र जाणवु, कह्यु छे के,

"आ अमुक क्रियाथी ते समिति अने गुप्तिने बाध आवतो नथी, अने तेउ नियमपूर्वक पाली शकाय छे" एवी रीतना वचनथी जे शास्त्र शुद्ध होय, तेने "छेदशुद्ध" शास्त्र जाणवु

अने जे शास्त्रमा दिगबरीउना शास्त्रनी पेठे प्राणीउनी रक्षामा, शुभ ध्यान करवामा, तथा शुद्ध पिड ग्रहण करवामा साधनरूप एवा वस्त्र अने पात्र आदिक उपकरणो (राखवानो) प्रतिषेध करेलो होय, ते शास्त्रने अशुद्ध शास्त्र जाणवु, अथवा देवना आराधनमाटे साधूउने गायन करवा आदिकनो जे शास्त्रमा उपदेश करेलो होय, तेने पण अशुद्ध शास्त्र जाणवु कह्यु छे के,

जह देवाणं संगीय, याथिकज्जंमि उज्जमो ॥
जइणो कंदप्पाइ, करणं असज्जवयणाभिहाणंच ॥१॥

अर्थ–साधुर्जनो देवो प्रते गायन आदिक कार्योमां जे उद्यम थवो, ते कामविकार आदिकने करनारो, तथा असभ्य वचनने उत्पन्न करनारो छे.

हवे तापशुद्ध शास्त्रनुं स्वरूप नीचे प्रमाणे जाणवुं.

"आत्मा परिणामी छे, अने ते विचित्र कर्मोथी बंधाएलो छे, तथा ते कर्मोना वियोगथी ते मुक्तरूप थाय छे, अने हिंसा तथा अहिंसादिक तेर्जनां (कर्मोनां) हेतुरूप छे;" इत्यादि नाव जेमां सारी रीते देखाडेलो छे, ते शास्त्रने "तापशुद्ध" शास्त्र जाणवुं.

एवी रीते आत्मादिक वस्तु प्रगट थये छते उपर कहेलुं विधि प्रतिषेधादिक सघलुं उत्पन्न थाय छे, पण बीजी रीते थतुं नथी; अने तेथी उलटी रीते वस्तुर्जनां स्वरूपने प्रगट करनारुं शास्त्र, तापपरीक्षामां अशुद्ध गणाय छे.

माटे एवी रीते उपर कहेला गुणोवालुं शास्त्र जेणे कहेलुं छे, ते "महादेव" कहेवाय छे.

हवे अहीं वादी शंका करे के, जे वीतराग छे, तेनुं स्तुति आदिकथी तो आराधन थइ शके नहीं, केम के तेथी तो सरागपणानो प्रसंग आवे; तेम निंदादिकथी पण तेनुं आराधन थइ शके नहीं, केम के तेथी स्तवनादिकनुं फोकटपणुं थाय; तेम उपेक्षाथी आराधन करवामां पण तेज दोष आवे छे.

हवे ते वादीने उत्तर आपे छे के,

यस्य चाराधनोपायः, सदाज्ञाभ्यास एव हि ॥
यथाशक्तिविधानेन, नियमात्स फलप्रदः ॥ ५ ॥

अर्थ–वली जे आ माहादेवनां आराधननो उपाय, हमेशां तेनी आज्ञानो अभ्यास करवो तेज छे; अने ते आज्ञानो अ-

भ्यास यथाशक्ति विधिपूर्वक करवाथी निश्चयें करीने फलदायक थाय छे.

टीकानो भावार्थ—केवलमात्र जेणे शास्त्र कहेलु तेज "महादेव" कहेवाय, एटलुज नहीं, पण जे देवविशेषनी आराधनानो उपाय तेनी आज्ञानो अभ्यास छे, ते "महादेव" कहेवाय, आराधन करवुं एटले, ते देवनु प्रसाधन करवुं, ते शा माटे के, तेनु फल मेलववा माटे, पण रागनोज प्रसग लावीने कइ आराधन करवानु नथी कह्यु छे के, अचिंत्यचिंतामणि सरखा महा भाग्यवंत एवा तीर्थंकर प्रते जे वत्सलस्वभाव राखवो, अने तेनु जे स्तवन करवुं, तेथी वांछित अर्थ पमाय छे

एवी रीतनी आराधनाना उपायमा दुखमादि कालमा पण अभ्यास करवो अने एवुं कहेवाथी "उत्तम कालमाज आज्ञा पालवानु शक्य छे, माटे ते कालमाज तेनी आज्ञानो अभ्यास, अने तेना आराधननो उपाय करवो, अने दुखम कालमा तो अनागमिक (आगम रहित) वृत्ति छे, माटे ते कालमा तो ते आज्ञानो अभ्यास थवो अशक्य छे," एवी जेनी मति थाय, तेना मतनो निषेध कर्यो

मर्यादा अथवा विधियें करीने जेनाथी अर्थो जणाय छे, तेने "आज्ञा" अर्थात् "आगम" कहीयें, अने तेने ग्रहण करवानी पारतन्त्र्य लक्षणवाली जे भावना तेने "अभ्यास" कहीयें, पण फक्त तेनी भक्तिथीज कंइ तेनी आज्ञानो अभ्यास थइ जतो नथी, अर्थात् तेथी कइं तेनी आज्ञासहित वृत्ति थती नथी, वली पूजा आदिक पण द्रव्यस्तवरूप होवाथी ते तेनी आज्ञानो अभ्यासज छे

अहीं वादी शका करे के, उपर कहेली आज्ञानो अभ्यास अति दुष्कर होवाथी, काल अने संघयणना (शरीर संबंधीना) दोषवालाउने तो ते आज्ञानु आराधन करवामा मुश्केली थशे !!! तेने माटे वादीने हवे कहे छे के, ते आज्ञानो अभ्यास यथा-

शक्ति करवो, पण शक्तिने उलंगीने करवो नहीं; अने तेमा शक्तिने गोपववी पण नहीं; अने एवी रीते करवाथी वीर्याचार पण पाल्यो कहेवाय. कह्युं छे के,

अणिगूहियबलविरिओ, परिक्कमइजोजहुत्तमाउत्तो॥
जुंजइय जहाथामं, नायव्वो विरयायारो.॥ १ ॥

अर्थ—बल अने वीर्यने नहीं गोपवीने जे माणस यथोक्त रीते सावधान थयो थको, उद्यम करे छे, अने यथाशक्ति प्रमाणे जोडे छे, तेने "वीर्याचार" जाणवो.

वली द्रव्य, क्षेत्र, काल अने भावनां अनुवर्तनवाला आगमिक न्यायें करीने आज्ञानो अभ्यास करवो; कह्युं छे के, प्रवचनमां तो सर्वनी अनुज्ञा तेम सर्वनो निषेध पण नथी; माटे वाणीआनी पेठे आवकजावकनो हिसाब करीने लाभ लेवो.

अहीं वादी शंका करे के, आज्ञाभ्यासथी आराधन करेला आ "महादेव" ज्यारे फलनां देवावाला थाय छे, त्यारे तेनी आराधना न करवाथी तो ते फलदायक थता नथी ने? अने एवी रीते तो ते विषमवृत्तिवाला थाय.

तेने माटे तेने कहे छे के, जेनी आज्ञानो अभ्यास अवश्यें करीने वांछित फल देनारो थाय, ते "महादेव" कहेवाय; अने तेथी ते महादेवनुं कंइ फलदायकपणुं नथी, पण तेनी आज्ञानां अभ्यासनुंज फलदायकपणुं होवाथी, तेने (महादेवने) विषमवृत्ति शी रीते लागु पडी शके?

हवे तेज बाबतने दृष्टांते करीने पुष्ट करता थका कहे छे.

सुवैद्यवचनाद्यद्वद्, व्याधेर्भवति संक्षयः ॥
तद्वदेव हि तद्वाक्याद्, ध्रुवः संसारसंक्षयः ॥७॥

अर्थ—जेम उत्तम वैद्यनां वचनथी (अर्थात् तेना कहेवा प्रमाणे करेलां औषधोथी) जेम व्याधिनो नाश थाय छे, तेमज ते प्रस्तुत महादेवनी वाणीथी निश्चल एवो संसारनो क्षय थाय छे.

टीकानो भावार्थ—उत्तम वैद्यना उपदेशथी जेम कुष्टादिक रोगनो सर्वथा प्रकारे नाश थाय छे, तेवीज रीते ते प्रस्तुत महादेवना उपदेशथी अवश्यें करीने ससारनो क्षय थाय छे, अहीं "संसार" एवा शब्दें करीने एक भवथी बीजा भवमा संचरवापणु कह्युं, अने तेथी परलोकनुं छतापणु देखाड्युं, अने तेने माटे नीचे प्रमाणे प्रमाण जाणवु

कार्यं कार्यांतराज्जातं, कार्यत्वादन्यकार्यवत् ॥
जन्मेदमपि कार्यत्वं, न व्यतिक्रम्य वर्तते ॥ १ ॥

अर्थ—कार्य होवाथी अन्य कार्यनी पेठे बीजा कार्यथी कार्य थाय छे, अने (तेज न्यायें करीने) आ जन्म पण कार्यपणाने उलघीने वर्ततो नथी

वली जन्म, ज्ञानना सतानविशेषरूप छे, अने तेथी तेना उपादान कारणभूत तद्रूप एवो जन्मातर अनुमित थाय छे, पण ते जन्मना उपादान कारणमा पिता आदिकने नहीं जाणवा,

हवे प्रकरणना अर्थने उपसहरता थका, जेना गुणोनु विवेचन करेलुं छे, एवा ते प्रस्तुत महादेवने नमस्कार करवामाटे कहे छे

एवंभूताय शांताय, कृतकृत्याय धीमते ॥
महादेवाय सततं, सम्यग्भक्त्या नमोनम ॥ ८ ॥

अर्थ—एवी रीतना गुणवाला, शात, करेलां छे कार्यो जेमणे एवा, तथा बुद्धिवान एवा ते महादेवप्रते हमेशा उत्तम भक्तिथी नमस्कार थाओ

टीकानो भावार्थ—एवी रीतनी उपर वर्णवेली गुणसपदाने प्राप्त थएला, पण अन्य दर्शनीओए मानेला एवा नहीं, तथा शात एटले राग द्वेष विनाना, (आ विशेषण अनुवादरूप छे, माटे तेमा पुनरुक्ति दोष जाणवो नहीं) तथा केवलज्ञानरूप छे बुद्धि जेने एवा, अथवा (बीजा आचार्योना मत प्रमाणे)

"धीमते" एटले सत्वयुक्त एवा, उपर वर्णवेला महादेवप्रते हमेशां उत्तम भक्तिएं करीने नमस्कार थाओ; अहीं "नमो-नमः" शब्द कहीने जे बे वार नमस्कार कर्यो, ते भक्तिथी थता संभ्रमने सूचवे छे.

एवी रीते पेहेला अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

द्वितीयाष्टकं प्रारभ्यते

उपर कहेला क्रमथी निश्चित थएला महादेवनी पूजा आदिक करवी जोइएं, अने ते पूजा स्नानपूर्वक थाय छे, माटे ते स्नानना निरूपणमाटे हवे कहे छे.

द्रव्यतो भावतश्चैव, द्विधा स्नानमुदाहृतम् ॥
बाह्यमाध्यात्मिकं चेति, तदन्यैः परिकीर्त्यते॥ १ ॥

अर्थ–द्रव्यथी अने भावथी, एम बे प्रकारनुं स्नान कहेलुं छे; अने तेज स्नान बीजाओथी "बाह्य" अने "आध्यात्मिक" एवा नामोनुं कहेवाय छे.

टीकानो भावार्थ–ते ते पर्यायो प्रते जे प्राप्त थाय, तेने "द्रव्य-स्नान" कहीएं; तेथी एटले तेना कारणभूत एवा जलथी, मेलना नाशथी शरीरने शुद्ध करवारूप जे स्नान करवुं, तेने "द्रव्यस्नान" कहीएं; अथवा अपरमार्थथी जे स्नान करवुं, ते पण "द्रव्यस्नान" कहेवाय, केम के, द्रव्य शब्दनो अर्थ अप्रधानपणुं पण थाय छे; अथवा द्रव्यथी एटले भावस्नाननां कारणपणाथी, केम के, द्रव्यनो "कारण" अर्थ पण थाय छे.

तथा "भावतः" केतां परिणामथी स्नान करवुं ते; तेमां शुभध्यान कारणभूत छे; तथा तेथी उपयोगभावरूप आत्मा शुद्ध करवानो छे; अथवा भावने आश्रयीने जो अर्थ करीएं, तो उदय थता भावोनां कारणभूत जे कार्यो, ते रूपी मेलने दूर करनार जे स्नान, तेने पण "भावस्नान" कहीएं; अथवा भावथी

एटले परमार्थथी जे स्नान करवुं, तेने पण "जावस्नान" कहीएं. एवी रीते द्रव्यथी अने जावथी, एम बे जेदे स्नान जाणवु, नामादिकनां जेदोथी चार प्रकारनु पण थाय, पण अहीं केवल ते चार प्रकारपणुं स्नाननुं आश्रित कर्यु नथी, केम के नाम अने स्थापनानुं तो फक्त प्ररूपणामात्रमा उपयोगीपणुं ठे, अने तेथी जिनना नाम अने स्थापना, जेम प्रमोदना हेतुपणाथी, तथा पूजागोचरपणाथी उपयोगी ठे, तेम स्नानमा नाम अने स्थापनानुं उपयोगीपणुं नथी वली मूल श्लोकमां जे "एवकार" मुकेलो ठे, तेने "द्विधानी" साथे जोडवाथी उपर कहेलु बेज प्रकारनुं स्नान जाणवुं, पण अन्य दर्शनीउं जे सात प्रकारनु स्नान कहे ठे, ते जाणवु नहीं ते अन्य दर्शनीउं नीचे प्रमाणे सात प्रकारनु स्नान कहे ठे

सप्त स्नानानि प्रोक्तानि, स्वयमेव स्वयंभुवा ॥
द्रव्यभावविशुद्ध्यर्थं, मृषीणां ब्रह्मचारिणाम् ॥ १ ॥
आग्नेयं वारुणं ब्राह्म्यं, वायव्यं दिव्यमेव च ॥
पार्थिव मानसं चैव, स्नानं सप्तविधं स्मृतम् ॥ २ ॥
आग्नेय भस्मना स्नान, मवगाह्यं तु वारुणम् ॥
आपोतृष्णामयं ब्राह्म्यं, वायव्य तु गवां रजः ॥ ३ ॥
सूर्यदृष्ट तु यद्दृष्टं, तद्दिव्यमृषयो विदुः ॥
पार्थिव तु मृदा स्नानं, मनःशुद्धिस्तु मानसम् ॥ ४ ॥

अर्थ—ब्रह्मचारी ऋषिउंनी द्रव्यशुद्धि अने जावशुद्धिमाटे ब्रह्माए पोतेज (नीचे प्रमाणे) सात प्रकारना स्नानो कहेला ठे, आग्नेय, वारुण, ब्राह्म्य, वायव्य, दिव्य, पार्थिव, अने मानस एवी रीते सात प्रकारना स्नानो जाणवा, तेमा जे जस्मथी स्नान करवु, ते "आग्नेय" स्नान कहेवाय, पाणीथी नाहावु ते "वारुण" स्नान कहेवाय, तृष्णा न राखवी, ते "ब्राह्म्य" स्नान कहेवाय, धूलीथी स्नान करवु, ते "वायव्य" स्नान कहेवाय,

सूर्यनी जे आतापना लेवी, तेने ऋषिउए "दिव्य" स्नान जाणेलुं छे, माटीथी स्नान करवुं, ते "पार्थिव" स्नान कहेवाय, तथा मननी शुद्धिरूप ते "मानस" स्नान जाणवुं. एवी रीते अन्य दर्शनीउ सात प्रकारनां जे स्नानो माने छे, ते निरर्थक छे; केम के, जे स्नान बाह्य मेलने प्रक्षालन करवामां समर्थ छे, ते तो द्रव्यस्नानज छे, अने जे अंतरंग मेलने नाश करवामां समर्थ छे, ते भावस्नान छे; अने ते शिवाय बीजी रीते करेलुं स्नान तो अस्नानज छे; केम के, धूलि अथवा मंत्रथी कंइ मेल दूर थतो नथी; माटे द्रव्यथी अने भावथी, एम बे प्रकारनुंज स्नान कहेवुं युक्त छे. अने तेथीज तत्वना जाणनाराउए ते बे प्रकारनुं स्नान कहेलुं छे; अथवा प्रधान अने अप्रधानना भेदथी, द्रव्यथी बे प्रकारनुं, अने भावथी पण बे प्रकारनुं जाणवुं. अने ते आगल देखाडशे.

हवे आ मतमां अन्य दर्शनीउनी पण अविप्रतिप्रति (नहीं जुदापणुं) देखाडता थका कहे छे के, तेउ अन्यदर्शनीउ पण तेज द्रव्य तथा भावस्नानने "बाह्य" केतां शरीरसंबंधि, तथा "आध्यात्मिक" केतां मनसंबंधि स्नान कहे छे.

हवे द्रव्यस्नाननां प्रतिपादनमाटे कहे छे.

जलेन देहदेशस्य, क्षणं यच्छुद्धिकारणम् ॥
प्रयोऽन्यानुपरोधेन, द्रव्यस्नानं तदुच्यते ॥ २ ॥

अर्थ—पाणीयें करीने देहना भागनुं, बीजा मेलने अटकाव्या विनां क्षणवार सुधि जे शुद्धपणुं करवुं, ते "द्रव्यस्नान" कहेवाय छे.

टीकानो भावार्थ—पाणीथी "द्रव्यस्नान" थाय छे, पण भस्म आदिकथी ते स्नान पण थतुं नथी; कारण के, ते भस्म आदिको मेलने दूर करवाने समर्थ नथी; वली गंध अने लेपनो नाश थवाथी जे पवित्रता थाय, तेने स्नान कहीयें; एवी रीते जलथी स्नान करीने शरीरना भागोने शुद्ध करवा, अने तेम कहेवाथी

जेओ "सचेलस्नानें करीने देवार्चन करवुं" एम माने छे, तेओना मतनुं खंडन कर्युं, केम के पाणीथी भींजाएला वस्त्रोवालाना स्नानपणानी अप्रतीति छे वली आहीं "देश" शब्दथी जेओ एम माने छे के, "बुद्धिमानोए माटीयें करीने लींगनी एकवार, गुदास्थाननी त्रणवार, एकला हाथनी दशवार, अने बन्ने हाथोनी सातवार शुद्धि करवी, वली तेवा प्रकारनी शुद्धि ग्रहस्थोए बेवडी, ब्रह्मचारीओए त्रेवडी, तथा वानप्रस्थाश्रममा रहेला यतिओए चोवडी करवी," एवुं माननाराओनी हासी थइ, केम के, एवी रीते शुद्धता करवामा यत्न करनाराओ पण लिंग अने गुदाना अंदरना भागने शुद्ध करवाने तो असमर्थज छे अने वली तेथी फक्त चावडीनीज शुद्धि थाय छे, पण तेवीज रीते तेओ कान, नाक आदिकनी शुद्धि तो करता नथी; वली ते कर्ण नाशिकादिको पण अशुद्ध नथी थता, तेम नथी वली ते शुद्धि पण प्रायें करीने क्षणमात्रज रहे छे, पण लावो वखत रहेती नथी, "प्रायें करीने" कहेवानी मतलब ए के, रोगी माणसने तो तेवी रीतनी शुद्धि क्षणमात्र पण रहेती नथी तेवी शुद्धि क्षणमात्रज केम रहे छे ? तेने माटे कहे छे के, एक मेलने दूर करवाथी बीजा मेलनो उपरोध कइ थइ शकतो नथी, केम के शरीरनो तो मलाश्रयनो स्वभावज छे, माटे बीजा मेलने रोकी शकातो नथी माटे एवी रीतनुं जलादिकना आश्रयवालुं स्नान, ते "द्रव्यस्नान" कहेवाय, अने तेथी स्नानना जाणनाराओए तेने "द्रव्य स्नान" कहेलुं छे. वली बीजा आचार्यो "प्रायोऽन्यानुपरोधेन" ए वाक्यनो अर्थ एवी रीते करे छे के, प्रायें करीने ते स्नानमा जलना जतुओ शिवाय बीजा प्राणीओने उपरोध थतो नथी, तेथी तेने "द्रव्यस्नान" कहीयें

हवे तेज स्नाननुं कर्ताद्वाराए करीने प्रधान अप्रधानपणुं कहे छे.

कृत्वेदं विधानेन, देवतातिथिपूजनम् ॥

करोति मलिनारंभी, तस्यैतदपिशोभनम् ॥३॥

अर्थ–एवी रीते विधिपूर्वक स्नान करीने, सावद्य व्यापारवालो ग्रहस्थ देव तथा साधुनुं (अतिथिनुं) पूजन करे छे, केम के, तेने तेम करवुं पण शोभनिक छे.

टीकानो भावार्थ–उपर कहेलुं द्रव्यस्नान, तेना अधिकारी धार्मिक माणसे पोताने उचित एवी भूमिपोंजवारूप तथा पाणी गालवारूप जतना पूर्वक स्नानविधियें करीने उपर वर्णवेला माहादेव तथा अतिथिनुं पूजन करवुं; हमेशां अप्रतिबद्ध विहारपणायें करीने जे गमन करे, ते "अतिथि" कहेवाय; अथवा तिथिरूप लक्षणवाला उत्सवादिक जेने नथी, ते पण "अतिथि" कहेवाय; अर्थात् उत्तम मार्गमां रक्त एवो साधु जाणवो. कह्युं छे के,

तिथिपर्वोत्सवाः सर्वे, त्यक्ता येन महात्मना ॥

अतिथिं तं विजानीया, छेषमभ्यागतं विदुः ॥ १ ॥

अर्थ–जे महात्माए सर्वे तिथि, पर्व, तथा उत्सवो तजेला छे. तेने "अतिथि" जाणवो, अने बाकीनाउने तो आभ्यागत (परोणा) जाणेला छे.

एवा ते देव तथा अतिथिनुं पूजन एटले उचित सत्कार करे छे; हवे तेवी रीतनुं द्रव्यस्नान करीने देव, तथा अतिथिनुं पूजन कोण करे? ते कहे छे.

पाप सहित छे व्यापार जेनो, अर्थात् सावद्य योगथी निवृत्त नहीं थएलो एवो ग्रहस्थी ते करे. आ विशेषण कुतीर्थिउने शिखामण देवानां अभिप्रायवालुं छे. ते एवी रीते के, हे कुतीर्थिउ! ज्यारे तमो मलीनारंभी छो, त्यारे तमारे तो आ "द्रव्यस्नान" करवुं उचित छे; पण बीजी रीते स्नान करवुं उचित नथी.

वली आ द्रव्यस्नान शुद्धभावना हेतुरूप छे, माटे तेनुं प्रशं-

मलीकपणुं छे, अने निर्मलाचारीउने तो ते शुद्धभाव हमेशाज होय छे, तेथी तेउने द्रव्यस्नाननी शी जरूर छे? माटे एवी रीते देव तथा अतिथिनुं पूजन करनार एवा मलीनारंभी ग्रहस्थने तो ते "द्रव्य स्नान" पण शोभनिक छे, पण जेनुं आगल स्वरूप कहेवामा आवशे, एवुं "भावस्नान" करवु, तेने उचित नथी, वली ते "द्रव्यस्नान" जोके, सावद्य तथा प्रायें मद अने दर्पादिकना हेतुरूप छे, तो पण शुभभावना हेतुरूप होवाथी ते शोभनिक पण छे

हवे "ते द्रव्यस्नान करीने मलीनारंभीने देव तथा साधुनु पूजन करवुं ते शोभनिक छे, ' एम जे कह्युं, तेने समर्थन करता थका कहे छे

भावशुद्धिनिमित्तत्वात्, तथानुभवसिद्धितः ॥
कथंचिद्दोषभावेऽपि, तदन्यगुणभावतः ॥ ४ ॥

अर्थ-(ते द्रव्य स्नान) भावशुद्धिना निमित्तपणाथी अने तेवा प्रकारना अनुभवनी सिद्धिथी, जो के तेमां कइक पण दोषनो सद्भाव छे तो पण, तेथी थता अन्य गुणना लाभथी ते शोभनिक छे

टीकानो भावार्थ-ते "द्रव्यस्नान" अध्यवसायना कारणरूप होवाथी शोभनिक छे, केम के, ते द्रव्यस्नाननुं भावशुद्धिनु हेतुपणु कइ असिद्ध नथी, कारण के, तेवी रीतनो जे अनुभव, तेथी ते सिद्ध थाय छे

अहीं वादी शंका करे के, जो के ते "द्रव्यस्नान" भावशुद्धिना निमित्तरूपे छे, तो पण (तेथी थती) अप्काय आदिक जीवोनी हिंसारूपी दोषपणाथी ते अशोभनिक छे. तेने माटे हवे ते वादीने कहे छे के, कोइ पण प्रकारे अप्कायआदिकनी विराधनारूप दोष जोके तेमा छे, अर्थात् जोके ते केवल निर्दोष नथी, तो पण तेथी थतो जे सम्यग्दर्शनरूपी अन्य गुणनो लाभ, ते थवाथी ते "द्रव्यस्नान" शोभनिकज छे कह्यु छे के,

पूयाए कायवहो, पडिकुट्ठो साउ किंतु जिणपूया ॥
सम्मत्तसुद्धिहेउत्ति, भावणियाउ निरवज्जा ॥ १ ॥

अर्थ–पूजामां जोके, छकाय जीवोनी हिंसा तथा कुट्टन थाय छे, तो पण जिनपूजा सम्यक्त्वशुद्धिनां हेतुरूप होवाथी, तेने निरवद्य जाणवी

अने पूजा माटे जे स्नान करवुं, ते पूजानुं एक अंग होवाथी शोभनिक छे; केम के, जे जे क्रिया भावशुद्धिनां निमित्तवाळी छे, ते ते शोभनिकज छे.

अहीं वादी शंका करे के, ते वात तो असिद्ध छे; तो तेने माटे कहे छे के, जेम सुख आदिकनुं ज्ञान अनुभवाय छे, तेम जे जेम अनुभवाय, तेम ते अंगीकार करवुं, अने तेवी रीते भावशुद्धिनां निमित्तपणाथी "द्रव्यस्नान" अनुभवाय छे, माटे ते "द्रव्यस्नान" भावशुद्धिना निमित्तरूप छे.

वळी अहीं वादी शंका करे के, ते द्रव्यस्नानमां ज्यारे कइंक पण दोषपणुं छे, त्यारे तेनुं शोभनपणुं शीरीते कहेवाय? तेने माटे कहे छे के, जे कार्य बीजा उत्तम गुणोने उत्पन्न करवामां हेतुरूप छे, ते कदाच दोषवाळुं होय तो पण ते शोभनिक छे; केम के, कुवानुं खोदवुं जो के, श्रम अने कादव आदिकना दोषवाळुं छे, तो पण ते तृषाना नाश आदिक उत्तम गुणोना हेतुरूप छे. अने तेवीज रीते उत्तम सम्यग्दर्शननी शुद्धि आदिक गुणोना हेतुरूप "द्रव्यस्नान" पण छे.

वळी अहीं वादी शंका करे के,

एवी रीते भावशुद्धिना निमित्तरूप "द्रव्यस्नान" ज्यारे शोभनिक छे, त्यारे ते मलीनारंभीज करे, एम शामाटे कह्युं? निर्मलारंभीने पण ते तेवीज रीते शोभनिक होवुं जोइएं, माटे ते स्नान तेओ पण शामाटे न करे? तेने माटे हवे वादीने कहे छे के,

अधिकारीवशाच्छास्त्रे, धर्मसाधनसंस्थितिः ॥
व्याधिप्रतिक्रियातुल्या, विज्ञेया गुणदोषयो:॥५॥

अर्थ-शास्त्रमा धर्मसाधननी स्थिति अधिकारीनी अपेक्षाये (कहेली छे) अने ते गुण अने दोषना संबंधमा रोगना उपायनी क्रिया तुल्य जाणवी

टीकानो भावार्थ-अधिकारी एटले योग्य अनुष्टानवालो, तेनी अपेक्षाथी, (पण कइ मरजी मुजब नहीं,) आसना आगममा धर्मसाधनरूप द्रव्यस्नान अने भावस्नाननी स्थिति कहेली छे, हवे ते स्थिति केवी? तो के, रोगना उपाय सरखी एवी ते स्थिति, अर्थात्तए सद्गुरुना उपदेशथी जाणी लेवी, हवे ते स्थिति कया विषयमा जाणवी? ते कहे छे के गुण अने दोषने आश्रयीने जाणवी, अर्थात् रोगीनी अपेक्षाएं तेना रोगनो उपाय जे गुण अने दोषवालो छे, तेम मलीनारंभी अने निर्मलारंभीने ते "द्रव्यस्नान" तथा "भावस्नान" गुणदोषने करनारा छे, अर्थात् "द्रव्यस्नान" मलीनारंभीनेज गुणकारक छे, पण निर्मलारंभीने गुणकारक नथी, एवो भावार्थ जाणवो, केम के, मलीनारंभीज देवने उद्देशीने स्नानादिकमा अधिकारी छे, पण निर्मलारंभी तेम नथी

अहीं कोइक वादी वली एम कहे के, मलीनारंभी पण ते द्रव्यस्नाननो अधिकारी नथी, तो तेने वास्ते आज ग्रंथकार हवे कहेशे

धर्मार्थं यस्य वित्तेहा, तस्यानिहा गरीयसी ॥
प्रक्षालनाद्धि पंकस्य, दूरादस्पर्शनं वरम् ॥

अर्थ-धर्मने माटे जेनी धननी इच्छा छे, तेनी (ते धर्ममाटे) धननी नहीं इच्छाज (इच्छा नही करवी तेज) श्रेष्ट छे, केम के, कादवने धोवा करता तेने स्पर्श नहीं करवो तेज श्रेष्ट छे

अहीं कोइ वादी शका करे के, आथी करीने धर्मने माटे सावद्यप्रवृत्तिनो निषेध कर्यो, तथा "शुद्धागमैर्यथालाभ" एवी

रीतनुं वाक्य आगल कहेशे, तेथी फूल तोडवानो अज्ञाव कह्यो, अने देवसंबंधि वगीचो राखवानो पण अज्ञाव कह्यो. तेने माटे तेने कहे छे के, तेम कहेवुं युक्त नथी; केम के, स्नान तो देवपूजा माटे विधेयपणाथी कहेलुंज छे.

वली अहीं वादी शंका करे के, ते उपदेश तो प्रासंगिक स्नाननी अपेक्षावालो छे, पण देवने उद्देशीने नथी; तेने माटे तेने कहे छे के, तेम कहेवुं पण युक्त नथी; केम के, एम जो मानीएं, तो "ज्यारे कोइक दिवसे स्नान करेलुं होय, त्यारेज देवपूजन करवुं;" एवो उपदेश थइ जाय; पण हमेशना कार्यतरीके न थाय; अने देवपूजन तो नित्य करवानुं छे. कह्युं छे के,

"वंदंति चेइआइं तिकालं पूइउणविहिणाउ" ॥

अर्थ–त्रणेकाल पूजवायोग्य विधिएं करीनें चैत्योने वंदन करे छे.

वली धर्मने माटे सावद्य प्रवृत्तिनो जे निषेध कर्यो छे, ते केवल सर्वविरतीनी अपेक्षाएं छे; केम के, आ श्लोक तेनां अधिकार माटे कहेलो छे; अने गृहस्थीनी अपेक्षाएं तो सावद्य प्रवृत्तिनी अनुज्ञा आपेलीज छे; सिद्धांतमां पण कह्युं छे के, द्रव्यस्नान करवामां तो सावद्य प्रवृत्ति आवेज. वली तेंवीज रीते "शंकाश" श्रावकनी पेठे (जिनपूजा अथवा जिनमंदिरमाटे) व्यापार आदिक सावद्य प्रवृत्ति पण दुष्ट गणी नथी; केम के, तेमां धार्मिक कार्योनुं पक्षपातपणुं होवाथी (छेवटे) पापोनो क्षय थइ उत्तम गुणरूपी बीजनी प्राप्ति थाय छे. ते "शंकाश" श्रावकनुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे जाणवुं.

शंकाश नामना श्रावके प्रमादमां रही देवद्रव्यनुं जक्षण कर्युं; अने तेथी तेणे लाज्ञांतराय नामनुं निबिड कर्म बांध्युं. अने तेथी ते घणो काल संसारमां रखड्यो; पछी अनंते काले केटलेक कष्टे मनुष्य जव पामीने पण ते दरिद्री थयो; पण एटलामां कोइ महाज्ञानी जैन गुरु तेने मली जवाथी तेनी पासेथी तेणे पोताना

पूर्वजवनुं वृत्तात साजळ्युं, पछी गुरुना उपदेशथी दुर्गति आपनारा कर्मोनो नाश करवामाटे तेणे एवी रीतनो अजिग्रह लीधो के, हवेथी जेटलु द्रव्य हुं कमाउं, तेमाथी मारा खावापिवाना तथा पेहेरवा ओढवाना खरचशिवाय वाकी जे कइ द्रव्य वधे, ते सघलु हुं जिनमंदिर आदिकमा वापरीश, एवी रीते पोतानो अजिग्रह पालीने अंते ते मोक्षे गयो

अहीं वादी शंका करे के, तेना पोताना कर्मोना जयनी उपपत्तिथी सकाशने तो, ते तेम करवु युक्त ठे, पण तेवी रीते वीजाए करवु युक्त नथी

त्यारे ते वादीने कहे ठे के, एम नहीं, केम के, सर्वथा प्रकारेज अशुज स्वरूपवाला व्यापारने, उत्तम निर्जराना कारणपणानो अयोग ठे, अर्थात् जे व्यापारमा फक्त पापकार्यनीज धारणा होय, ते व्यापार कर्मनी निर्जरा करी शकतो नथी, पण धर्मबुद्धिथी कराएलो ते व्यापार पण लाजकारकज ठे

वली "शुद्धागमैर्यथालाज" इत्यादि जे आगल कहेवामा आवशे, तेनी मतलव कइं एवी नथी के, पोते जाते जइ (पूजा माटे) पुष्पो तोडवा नहीं, पण तेनी मतलव तो ए ठे के, "पूजा आदिक अवसरे आवेला माली पासेथी (पुष्पो लेवामा) शासननी प्रजावना माटे वणिक्कला वापरवी नहीं, अर्थात् कपटथी के कोइ वीजी कलाथी थोडा पैसा आपी वधारे पुष्पो लेवा नहीं, एवा अर्थने ते वाक्य तो प्रगट करनार ठे सिद्धातमा पण कह्यु ठे के, दुग्गइ नामनी स्त्री पुष्पोए करीने जिनपूजा करवाथी उत्तम गतिमा गइ, अने तेणीए "यथालाजे" करीने नहीं, पण न्यायोपार्जित धनें करीने ते पुष्पो लीधेला हता

तथा जिनमदिरमाटे (सिद्धातोमा) गाम आदिकना अगीकारपणाथी आराम (वगीचा) आदिकनो अजाव कहेलो नथी

माटे एवी रीते मलीनारंभीए धर्मने माटे स्नानादिक करवुं, ते विरुद्ध नथी.

अहीं वादी शंका करे के, द्रव्यस्नानमां साधु शामाटे अधिकारी न थाय? केम के, कर्मरूपी व्याधि तो तेओ बन्नेने (साधु अने गृहस्थने) तुल्यज छे, अने तेथी तेनी चिकित्सारूप पूजा पण तेओने तुल्यज होवी जोइए, अने तेथी ते द्रव्यपूजामां एकनो ज्यारे अधिकार कह्यो, त्यारे बीजानो तेमां शामाटे अधिकार न होय? तेने मांटे तेने कहे छे के, कह्युं छे के,

स्नानमुद्वर्तनाभ्यंगं, नखकेशादिसंस्क्रियाम् ॥
गंधं माल्यं च धूपं च, त्यजंति ब्रह्मचारिणः ॥ १ ॥

अर्थ—ब्रह्मचारीओ स्नान, उद्वर्तन, अभ्यंग (तैलादिकनुं मर्दन) नख, केश आदिकनो संस्कार, सुगंधि, पुष्प, तथा धूपने तजे छे.

एवी रीतना वचनथी मुनिओने द्रव्यस्नान तथा द्रव्यपूजा करवानो अधिकार नथी; वली ते ते कार्योनो मुनिओने कंइं शणगारमाटेज निषेध कर्यो छे, एम नहीं; पण ते मुनि सावद्यथी निवृत्त थएला छे, माटे तेना ते अधिकारी नथी.

वली अहीं वादी शंका करे के, जो के यति पापकार्योथी निवृत्त थएलो छे, तो पण स्नान करीने देवार्चन करे, तेमां तेने शुं दोष आवे? त्यारे तेने कहे छे के ज्यारे साधु स्नानपूर्वक देवपूजनमां सावद्य योगवालो थाय, त्यारे तो ते गृहस्थनी पण तुल्यज थइ जाय; अने तेथी तेने (ग्रयस्थने) पण ते नहीं करवालायक थाय; वली गृहस्थी तो कुटुंब आदिकने माटे पण सावद्य कार्योमां प्रवृत्त थएलो छे, अने तेथी ते द्रव्यस्नान आदिकमां पण प्रवर्ते; पण यति तो ते सावद्य कार्यमां प्रवृत्त थयो नथी, तो ते द्रव्यस्नानादिकमां शी रीते प्रवर्ते?

वली अहीं वादी शंका करे के, जोके कुटुंब आदिकमाटे गृ-

हस्थी सावद्य कार्योमा वर्त्ते छे, तो पण धर्मने माटे तेमां प्रवर्त्तवु, ते तेने लायक कहेवाय नहीं, केम के एक पाप आचर्यु, तेथी बीजु पाप पण आचरवु, ए व्याजवी कहेवाय नहीं

तेने माटे तेने कहे छे के, कुवाना उदाहरणथी पूजादिकथी उत्पन्न थएला आरंजना दोपने शोधीने गृहस्थी (सम्यक्त्व आदिक) बीजा (उत्तम) गुणोने मेलवे छे, माटे ते गृहस्थीने ऊव्यस्नान तथा पूजादिक करवा युक्तज छे

वली वादी शका करे के, जेम कुवाना उदाहरणथी गृहस्थीने स्नानादिक करवा युक्त छे, एवी रीते यतिने पण युक्त छे, माटे तेने स्नानादिकमा शा माटे अधिकारी न कहेवाय? तेने माटे तेने कहे छे के, यतिउ तो सर्वथा प्रकारे सावद्य व्यापारथी निवृत्त थएला छे, माटे कुवाना उदाहरणथी पण तेमां जो तेउ प्रवर्ते, तो पण तेउने तो चित्तमा पापज स्फुरायमान थाय, पण धर्म स्फुरायमान थाय नहीं, केम के, तेउनु तो हमेशा शुज ध्यानादिकें करीनेज प्रवर्तवापणुं छे, अने गृहस्थीउ तो सावद्य कार्यमा स्वजावथी हमेशाज प्रवर्तता रह्या छे, पण जिनार्चनादिक द्वारें करीने स्वपरना उपकाररूप धर्ममा प्रवर्तता नथी, माटे तेथी ज्यारे तेउ तेमा प्रवर्ते छे, त्यारे तेउना चित्तमा ते धर्मज लागेलु होय छे, पण पाप लागेलु होतु नथी, माटे एवी रीते कर्ताना परिणामना वशथी अधिकार अनधिकार मानवा, अर्थात ऊव्यस्नानादिकमा गृहस्थीउज अधिकारी छे, पण यति अधिकारी नथी, अने आगममा पण एमज कह्यु छे, अने तेवीज रीते सामायिकमा रहेलो श्रावक पण ऊव्यस्तव माटे अधिकारी नथी, केम के, ते वखते ते सावद्यथी निवृत्त थइने, जावस्तवमा आरूढ थएलो छे, माटे ते साधुतुल्यज छे अने तेथीज स्वजावथीज पृथ्वीकाय आदिकनी विराधनाथी डरवावाला, यतनावाला, तथा सावद्य कार्यमा थोडी रुचिवाला, अने यतिनी क्रियामा अनुरागवाला एवा गृहस्थीने

धर्मने माटे सावद्य आरंभनी प्रवृत्ति युक्त नथी; वली ते सावद्य आरंभमां प्रवर्तेलो नथी, तेथी तेने तजीने द्रव्य स्नानादिक जे सावद्य आरंभ, तेमां ते प्रवृत्ति करे, ते केम युक्त कहेवाय? माटे एवी रीते नक्की थयुं के, सघला माणसो सघलां कार्यना अधिकारी होइ शकता नथी; पण जे एक कार्यमां अधिकारी छे, ते बीजा कार्यमां अधिकारी नथी.

हवे भावस्नानना प्रतिपादनमाटे कहे छे.

ध्यानांभसा तु जीवस्य, सदा यच्छुद्धिकारणम् ॥
मलं कर्म समाश्रित्य, भावस्नानं तदुच्यते ॥ ६ ॥

अर्थ—कर्मरूपी मेलने आश्रीने ध्यानरूपी पाणीथी जीवनुं हमेशां जे शुद्धि करवापणुं, ते "भावस्नान" कहेवाय छे.

टीकानो भावार्थ—शुभ चित्तनी एकाग्रतारूप जे धर्मध्यानादिक, ते रूपी पाणीयें करीने, आत्माने हमेशां जे शुद्ध करवो, ते "भावस्नान" कहेवाय; ते पाणीथी ज्ञानावरणादिक कर्मोरूप मेलने धोवो; अने एवी रीतनां स्नानने तेनुं स्वरूप जाणनाराउ "भावस्नान" कहे छे.

हवे ते भावस्नान करनारना भेदे करीने, तेनुं उत्तमपणुं तथा अनुत्तमपणुं कहे छे.

ऋषीणामुत्तमं ह्येतत्, निर्दिष्टं परमर्षिभिः ॥
हिंसादोषनिवृत्तानां, वृत्तशीलविवर्धनम् ॥ ७ ॥

अर्थ—हिंसारूपी दोषथी निवृत्त थएला ऋषीउने वृत्त अने शीलने वृद्धि करनारुं, ते भावस्नान करवुं, ते परम मुनिउए (सर्वज्ञोए) उत्तम कहेलुं छे.

टीकानो भावार्थ—यथास्थित वस्तुउने जे जाणे ते ऋषिउ कहेवाय. तेवा ऋषिउए भावस्नान करवुं ते उत्तम छे, एम सर्वज्ञोए कहेलुं छे; अने तेथी बीजाउए ते स्नान करवुं, ते अनुत्तम छे;

एम सिद्ध थयु, केम के, तेओने विशिष्ट धर्मध्याननो अभाव छे, अने ऋषिओने तो ते भावस्नानज करवु उत्तम छे, पण देवार्चनने माटे द्रव्यस्नान करवु, ते तेमने उत्तम नथी हवे ते ऋषिओ केवा ? ते कहे छे प्रमादथी थती प्राणीओनी जे हिंसा, तेरूपी दोषणथी निवृत्त थएला,

अहीं वादी शका करे के, ऋषिओ एवाज होय छे, एम कहेवुं अनर्थक छे त्यारे ते वादीने कहे छे के, एम नहीं, आ विशेषण हेतुपणाथी उपन्यास करवु, माटे एवो अर्थ करवो के, ऋषिओ हिंसारूपी दोषथी निवृत्त थएला छे, माटे तेमने तो द्रव्यस्नान न करवु ते उत्तम छे हवे ते स्नान केवु ? ते कहे छे व्रत कहेता (पाच) महाव्रतो, अने शील केता समाधि, अथवा व्रत एटले मूलगुणो, अने शील एटले उत्तर गुणो, तेओने विशेषे करीने वृद्धि करनार अर्थात् धर्मध्यान अने शुक्लध्यानरूप ते "भावस्नान" जाणवु

हवे आ स्नानाष्टकने उपसहरता थका कहे छे

स्नात्वानेन यथायोग, निःशेषमलवर्जितः ॥

भूयो न लिप्यते तेन, स्नातक परमार्थतः ॥ ८ ॥

अर्थ–एवी रीते ते द्रव्यथी तथा भावथी अधिकार प्रमाणे स्नान करीने, (माणस) सघला (कर्मोरूपी) मेलथी रहित थयो थको, फरीने तेनाथी लेपातो नथी, अने एवी रीते परमार्थथी स्नातक (स्नान करेलो) थाय छे

टीकानो भावार्थ–आ भावना हेतुरूप एवा द्रव्यस्नानथी, अने भावस्नानथी अनुक्रमे मलीनारभी तथा निर्मलारभी स्नान करीने, अनुक्रमे साक्षात् सघला कर्मरूपी मेलथी रहित थाय छे, अने तेवी रीते स्नान करवाथी फरीने कर्मरूप मेलथी लेपातो नथी अने एवी रीते परमार्थथी ते स्नान करेलो थाय छे, अने बीजी रीतथी स्नान करेलो माणस परमार्थथी स्नान करेलो थतो

नथी; केम के, तेथी कर्मरूपी मेलनो नाश थतो नथी; अने फरीने पाछो मेल लागे छे. माटे हे कुतीर्थिओ, जो तमो परमार्थथी स्नातक थवाने इच्छता हो तो, भावस्नानथीज स्नान करो? पण द्रव्यस्नान करो नहीं; केम के, ते द्रव्यस्नान तो फक्त मलीनारंभीओ माटेज कहेलुं छे.

अथवा आ श्लोकनी व्याख्या नीचेप्रमाणे करवी.

उपर कहेला भावस्नानथी युक्तिपूर्वक सघला (कर्मरूपी) मेलथी वर्जित थयो थको फरीने तेनाथी लेपातो नथी. कोण नथी लेपातो, तो के परमार्थथी स्नान करेलो. अहीं "क्वा" प्रत्यय रूढीना वशथी छे.

एवी रीते बीजा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

तृतीयाष्टकं प्रारभ्यते

स्नान कर्या पछी देवनुं पूजन करवुं जोइएं; तेथी पूजानुं स्वरूप कहेवा माटे हवे कहे छे.

तथा जेओ एम माने छे के, " श्वेतांबर मुनिओ देवनी पासे जइने पण तेने पूजता नथी, माटे तेमनुं (देवसमीपे) जवुं अनर्थक छे, " तेओना मतनुं खंडन करवामाटे पूजाष्टक कहे छे.

अष्टपुष्पी समाख्याता, स्वर्गमोक्षप्रसाधनी ॥
अशुद्धेतरभेदेन, द्विधा तत्वार्थदर्शिभिः ॥ १ ॥

अर्थ—स्वर्ग अने मोक्षने आपनारी, एवी अष्टपुष्पी नामनी पूजा, तत्वोना अर्थने जाणनाराओए अशुद्ध अने शुद्ध भेदें करीने बे प्रकारनी कहेली छे.

टीकानो भावार्थ—पूजापणाए करीने जेमां आठ पुष्पो एकठां करेलां छे, तेने " अष्टपुष्पी " कहीएं. अहीं आठ पुष्पो जघन्यपदने आश्रीने कहेलां छे; पण तेथी एम नहीं धारवुं के, आठज पुष्पो चडाववां; केम के, आगल कहेशे के, " थोडां अथवा

घणा पुष्पोथी पूजन करवु " वली ते देवपूजनमां आठ पुष्पो देवानु कारण पण कहेशे वली ते अष्टपुष्पी पूजा, जीवादिक तत्वोने परमार्थ वृत्तिथी जाणनाराउंए बे प्रकारनी कहेली छे ते बे प्रकारनी कई? तो के, एक सावद्य तथा बीजी निरवद्य अहीं " इतर " शब्दने जे पुंवद्भाव छे ते " वृत्तिमात्रे सर्वादीना पुंवद्भाव " एवी रीतना व्याकरणना वचनथी थएलो छे हवे ते पूजानुं फल देखाडे छे पेहेली (सावद्य) पूजा स्वर्गने देनारी छे, तथा बीजी (निरवद्य) पूजा मोक्षने देनारी छे

हवे बे श्लोकोथी अशुद्ध पूजानु स्वरूप कहे छे

शुद्धागमैर्यथालाभं, प्रत्यग्रैः शुचिभाजनैः ॥
स्तोकैर्वा बहुभिर्वापि, पुष्पैर्जात्यादिसंभवैः॥ २ ॥
अष्टापायविनिर्मुक्त, स्तदुत्थगुणभूतये ॥
दीयते देवदेवाय, या सा शुद्धेत्युदाहृता ॥ ३ ॥

अर्थ–आठ कर्मोरूपी अपायथी मुक्त थएला, अने तेथी उत्पन्न थइ छे गुणोनी संपदा जेने, एवा देवाधिदेवप्रते, जेम लाभ थाय, तेवी रीते शुद्ध छे प्राप्ति जेउंनी, तथा नहीं कमलाएला, अने पवित्र भाजनमा रहेला, एवा मालती आदिक उत्तम जातिना थोडा अथवा घणा पुष्पोए करीने जे पूजा कराय छे, ते पूजाने "सावद्य पूजा" कहेली छे

टीकानो भावार्थ–शुद्ध केता निर्दोष छे, मेलववानो उपाय जेनो एवा पुष्पो, अर्थात् न्यायोपार्जित धनथी, अने चोरीविना ग्रहण करेला, एवा पुष्पोए करीने जे पूजा देवप्रते देवाय (कराय) तेने अशुद्ध पूजा कहेली छे, हवे ते पूजा केम करवी? ते कहे छे जेमा लाभनु उल्लघन न थाय, एवी रीते शासननी प्रभावना माटे,उदार भावथी मालीपासेथी देशकालनी अपेक्षाए उत्तम, मध्यम, तथा जघन्य जातिउंमाथी जे पुष्पो मले,

ते पुष्पोथी पूजा करवी. हवे ते पुष्पो केवां? ते कहे छे के, नहीं करमाएलां, तथा पवित्र थाल आदिकमां रहेलां; केम के जो ते पुष्पो एवां न होय, तो स्नानादिकनी पवित्रता पण मननी निवृत्तिने उत्पन्न करी शकती नथी. वली ते पुष्पो थोडां एटले दरेक (ज्ञानावरणादिक) आठ अपायोने दूर करवामाटे आठ, अथवा घणा एवां मालती विचकील आदिकथी उत्पन्न थतां पुष्पोएं करीने पूजा करवी. अहीं मूलश्लोकमां जे "वा" शब्द मूकेलो छे, ते थोडां अथवा घणां पुष्पोवाली पूजानुं सरखुं फल देखाडवामाटे छे.

अहीं कोइ वादी शंका करे के, उत्तम जातिनां जे पुष्पो कह्यां, ते सुवर्ण आदिकनां पुष्पोना निषेधमाटे छे; केम के उत्तम जातिनां पुष्पो तो एकजवार चडावी शकाय छे, तथा पछी तेमने निर्माल्य करीने वारंवारं ते चडावातां नथी; अने सोना आदिकनां पुष्पो तो वारंवार चडावाय छे; अने तेथी निर्माल्यारोपणनो दोष आवे छे. हवे ते वादीने तेनो उत्तर आपे छे के, ते अयुक्त छे. केम के सिद्धांतमां कह्युं छे के, "कंचणमोतियरयणाइदामएहिंचविविहेहिं" (विविध प्रकारनी कंचन, मोती, तथा रत्न आदिकनी मालाउथी जिनपूजन करवुं.) वली ज्यारे ते पुष्प आदिक पाछां न उताराय, त्यारे तो "निर्माल्यपणानो" दोष न आवे, पण ते मालती आदिकनां पुष्पो तो थोडा काल पछी सुगंधिरहित थाय छे, माटे ते अवश्य उतारवां जोइएं, अने सुवर्ण आदिकना पुष्पो तो तेम निर्गंध थतां नथी, माटे ते अवश्य उतारवा लायक थतां नथी; अने तेथी तेउने फरीने चडाववामां पण ते दोष आवी शकतो नथी. वली केटलाको एम कहे छे के, वीतरागने अलंकार पहेरावषा अयुक्त छे; केम के तेथी वीतरागरूप आकारनी अप्राप्ति थाय छे; ते कहेवुं पण युक्त नथी, केम के, जो एम मानीएं, तो पुष्प आरोपण करवामां

पण तेज (निषेधपणानो) प्रसंग आवे, केम के, वीतरागने ज्यारे आभूषणो न पहेरावववा, त्यारे पुष्पो पण न चडाववा जोइए, केम के, तेर्ज वन्ने रागने गोचर छे

हवे अष्टपुष्पी पूजानु कारण कहे छे

अनर्थना हेतुभूत एवा ज्ञानावरणादिक जे आठ अपायो, अथवा प्रकारांतरथी दग्धरज्जुनी कल्पना करवाथी भवोपग्राही एवा चार कर्मोथी मुकाएला, अने तेवी रीते कर्मोए करीने मूकायाथी उत्पन्न थती जे अनंत ज्ञानदर्शन आदिकनी लक्ष्मी, ते छे जेने एवा जिनेश्वरप्रते पूजा करवी ते जिनेश्वर केवा तो के, स्तुति करवालायकने पण स्तुति करवालायक, एवा देवप्रते जे अष्टपुष्पी पूजा करवी,ते पूजा सर्वज्ञोए अशुद्ध(सावद्य)कहेली छे

अहीं वादी शंका करे के, " अष्टापायविनिर्मुक्तागुणभूतिर्यस्य " एवी रीतना वाक्यथीज अष्टपुष्पीनुं कारण तो जणाइ आवे छे, छता " तत् " शब्द ग्रहण करवानी शी जरूर हती? त्यारे तेने कहे छे के, एम नहीं, " अष्टापायविनिर्मुक्तायदीयते " एम कहेवाथी अष्टपुष्पीनु कारण कह्यु, अने " तदुत्थगुणभूतये " एम कहेवाथी चतु पुष्पीनुं कारण कह्यु, केम के, ते अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख, तथा अनंतवीर्यरूप छे

त्यारे वली अहीं वादी शंका करे के, " अष्टापायविनिर्मुक्ताय " एवु कहेवाथीज तेथी उत्पन्न थता अनंतज्ञानादिक गुणो तो जणाइ आवे छेज (त्यारे फरीने ते ग्रहण करवानी शी जरूर हती?) त्यारे तेने कहे छे के, एम पण नहीं

केम के, केटलाको (अन्य दर्शनीर्ज पोताना) सिद्धोने प्रकृतिना वियोगथी ज्ञाननो अभाव, शरीर अने मनना वियोगथी वीर्यनो अभाव, तथा विषयना वियोगथी सुखनो अभाव कहे छे, तेना मतनु खडन करवा माटे एवी रीते मुकवु पड्यु छे

त्यारे वली अहीं वादी शका करे के, ज्यारे एम छे त्यारे,

ज्ञानावरणादिकनो क्षय थवाथी केवलीने पांचे ज्ञाननो प्रसंग नहीं आवे; केम के, " नछंमिउछाउमच्छिए नाणे " एवुं सिद्धांतनुं वचन छे.

त्यारे ते वादीने कहे छे के, एम नहीं केवलज्ञानथीज वाकीना ज्ञानथी ज्ञेय पदार्थनुं प्रकाशितपणुं होवाथी, अने ते वाकीना ज्ञानोनुं अनर्थकपणुं होवाथी, तेउनुं नष्टपणुं कह्युं छे.

वली अहीं वादी शंका करे के, श्लोकना आ पूर्वार्धथी तो, जेउ एम माने छे के, जिनबिंबनी प्रतिष्ठामां त्रण अवस्था कल्पाय छे, अने तेथी वाल्य अवस्थाने आश्रीने स्नान, दीक्षामाटे निकलती वेलाने आश्रीने रथारोपण, तथा पुष्पपूजा आदिक, अने कैवल्य अवस्थाने आश्रीने वंदन कराय छे; एवी रीतना मतनुं खंडन थयुं; केमके अष्टापायविनिर्मुक्तिनी अपेक्षाए कराती पूजा कंइ गृहस्थावस्थाने विषयरूप करती नथी; पण ते तो केवल कैवल्य अवस्थानेज विषयरूप करे छे; अने एम पण नहीं विचारवुं के, अष्टापायविनिर्मुक्तिने आलंवीने कैवल्य अवस्थामां पूजा करवी; केम के, चारित्रिउने स्नानादिक घटतां नथी, अने तेनी पेठे साधूउने पण तेनी प्रसक्तिथी ते चरित्र अनावलंवनीय नथी; जो एम न होत तो जेनो स्पर्श फरी जइ जे अचित थइ गएल छे, एवा पण अप्काय आदिकनो त्याग ते आचारना निषेध माटे केम थात? केम के (सिद्धांतोमां) एम कहेलुं संभलाय छे के, एक वखते स्वभावथीज अचित थएला, एवा तलावना मध्यभागमां रहेला पाणीने, तलना ढगलाने, अने स्थंडिल प्रदेशने, जोइने पण भगवान महावीर स्वामीए, तेना प्रयोजनवाला साधुउने पण ते ग्रहण करवा माटे निषेध कर्यो छे; केम के, भगवाने एम विचार्युं के, अमारा आ आचरणनुं आलंवन लेइने, आचार्यो वीजाउने तेवा काममां प्रवर्तावे नहीं; अने साधुउ पण तेवी रीते प्रवर्ते नहीं तो सारुं.

त्यारे हवे ते वादीने कहे छे के, ते सघलु सत्य छे, पण विकल्प तो जूदी तरेहनो मनाय छे, अर्थात् जेम भावअर्हत्प्रते वर्तवु, तेवीज रीते स्थापनाअर्हत्प्रते पण वर्तवु, अने तेथी करीनेज गौतमादिक साधुओ भगवाननी समीपे रहे छे, अने तेथी बिंबनी समीप रहेवामा तेमने निषेध कह्यो छे, अने वली तेथीज साधवीओ दंडस्थापनारूप आचार्यने स्थापे छे, जो एम न होत, तो जेम भाव आचार्य समीपे आवश्यक करती नथी, तेम तेओ स्थापनाचार्य पासे पण नही करत वली तेओ प्रवर्तिनीने स्थापे छे, एम पण नहीं कहेवु, केम के, प्रतिक्रमण वखतेज चैत्यवंदन करती वेलाए महावीरादिकना अवश्य कल्पवापणायें करीने, ते दोपनु समानपणु आवे वली भगवान तो वीतराग हता, तो पण रात्रिए चंदनवाला आदिक आर्याओ भगवाननी समीपे रहेती नहीं

वली अहीं वादी शंका करे के, प्रतिक्रमण वखते अरिहंत प्रभुनी स्थापना करीने चैत्यवंदन करवाथी आशातना दोषनो प्रसंग आवे त्यारे ते वादीने कहे छे के, एम नहीं, केम के, जिनालयमा पण चैत्यवंदन करवानी सिद्धातमा अनुज्ञा आपेली छे

एवी रीते स्वरूपथी अशुद्ध (सावद्य) एवी अष्टपुष्पीनु वर्णन कर्यु अने तेज स्वर्गने देनारी छे, एवु जे कह्यु, ते हवे देखाडता थका कहे छे

संकीर्णैषा स्वरूपेण, द्रव्याद्भावप्रसक्तितः ॥
पुण्यबंधनिमित्तत्वाद्, विज्ञेया स्वर्गसाधनी॥ ४ ॥

अर्थ–सावद्यें करीने मिश्र एवी उपर कहेली द्रव्यपूजा पुष्पादिकना प्रसंगथी भावने उत्पन्न करनारी होवाथी, तथा पुण्यबंधनना निमित्तरूप होवाथी स्वर्गने देनारी जाणवी

टीकानो भावार्थ–संकीर्ण एटले अवद्य करीने मिश्रित थएली एवी उपर कहेली अष्टपुष्पी पूजा स्वभावें करीने पुष्पादिकना प्रसंगथी, भगवानने विषे चित्तना आल्हादपणाने उत्पन्न

करनारी होवाथी, स्वर्गने देनारी छे; अर्थात् पुष्पादिक द्रव्यना उपयोगथी अवद्य अने शुभभाव बन्ने थाय छे; एवी रीतनुं आ (द्रव्यपूजानुं) मिश्रपणुं कर्मने नाश करवामां कंइ निमित्तरूप नथी; पण पुण्यबंधनना निमित्तरूपज छे; ते, कहे छे; एवी रीते ते पूजा पुण्यबंधनना निमित्तरूप होवाथी स्वर्गने देनारी छे, अने उपलक्षणथी ते उत्तम एवा मनुष्यपणाने, तथा अनुक्रमे भावपूजाना कारणपणाने पामीने मोक्षने साधनारी छे.

हवे निरवद्य एवी अष्टपुष्पीनुं स्वरूप कहेवामाटे कहे छे.

या पुनर्भावजैः पुष्पैः, शास्त्रोक्तिगुणसंगतैः ॥
परिपूर्णत्वतोऽम्लानै, रत एव सुगंधिभिः ॥ ५ ॥

अर्थ—शास्त्रनी आज्ञारूपी दोराथी गुंथेलां, अने संपूर्णपणाथी नहीं करमाएलां, अने तेथीज सुगंधिवालां एवां भावरूपी पुष्पोयें करीने जे पूजा करवी (तेने निरवद्य केहेतां उत्तम पूजा कहेली छे,)

टीकानो भावार्थ—जे अष्टपुष्पी पूजा, आत्मानी परिणतिथी उत्पन्न थएलां, तथा आगमनी आज्ञारूपी गुणनी साथे जोडाएलां, अर्थात् कपादिक परीक्षाथी शुद्ध थएलां, आगमोना पारतंत्र्यपणानुं अनुगमन करतां, अथवा शास्त्रना वचनरूपी जे गुण केतां दोरो, तेमां परोवेलां; अर्थात् मालारूप करेलां पुष्पोथी करवी, ते शुद्ध केतां निरवद्य पूजा कहेवाय; वली आथी करीने एम पण देखाड्युं के, ज्यारे द्रव्यपुष्पो पण मालारूप करीने आरोपण करवां, त्यारे पण आठ अपायापगमोनुं स्मरण करीने आरोपवां. वली ते पुष्पो केवां? ते कहे छे. परिपूर्णतायें करीने, अथवा सघला जीवना मृषावादादिक विषयपणायें करीने निरतिचारपणाथी म्लानिने नहीं प्राप्त थएलां, अने तेथी करीनेज सुगंधिवालां एवां पुष्पोथी जे पूजा करवी; ते निरवद्य पूजा कहेवाय छे.

हवे ते जावरूप आठ पुष्पोना नामो कहे छे

अहिंसा सत्यमस्तेय, ब्रह्मचर्यमसंगता ॥
गुरुजक्तिस्तपो ज्ञानं, सत्पुष्पाणि वचक्षते ॥ ६ ॥

अर्थ–अहिंसा, सत्य, चोरी न करवी ते, ब्रह्मचर्य, असगीपणु, गुरुनी जक्ति, तप, तथा ज्ञान, एटला आठ जातिना उत्तम पुष्पो कहेवाय छे

टीकानो जावार्थ–प्रमादना योगथी (कोइना पण) प्राणनो जे नाश करवो, ते हिंसा, अने तेनो अजाव जे अहिंसा, ते एक पुष्प जाणवु, तथा जूठपणानो जे अजाव, अर्थात् सत्य, ते बीजु पुष्प जाणवु, तथा चोरीनो जे अजाव ते त्रीजुं पुष्प जाणवु, तथा मन, वचन, अने कायाथी काम सेवनना वर्जवारूप जे ब्रह्मचर्य, ते चोथुं पुष्प जाणवुं तथा धर्मना उपकरणो शिवायना परिग्रहनो जे त्याग, ते पाचमुं पुष्प जाणवु, (धर्मना उपकरणोने वीरप्रजुए सिद्धातोमा अपरिग्रहपणु कहेलुं छे जो एम कह्यु न होत, तो शरीर, आहार विगेरे पण परिग्रहरूप थात) तथा गुरुनु जे बहुमान करवु, ते छठु पुष्प जाणवु, शास्त्रोना अर्थने जे जाणे ते गुरु कहेवाय कह्यु छे के,

धर्मज्ञो धर्मकर्ता च, सदा धर्मपरायणः ॥
सत्वेभ्यो धर्मशास्त्रार्थ, देशको गुरुरुच्यते ॥ १ ॥

अर्थ–धर्मने जाणनार, धर्मने करनार, हमेशा धर्ममा तत्पर, तथा प्राणीउं प्रते धर्मशास्त्रना अर्थनो उपदेश देनार, ते "गुरु" कहेवाय छे

तथा जेनाथी रुधिर, मास, चरवी, हाडका, मज्जा, अने वीर्य तपे छे, तथा अशुज कर्मो पण जेनाथी तपे छे, ते "तप" रूपी सातमु पुष्प जाणवु, तथा जेनाथी अर्थो जणाय, ते ज्ञान, अर्थात् सम्यक् प्रवृत्तिनो हेतुजूत एवो जे बोध, ते रूपी आठमु पुष्प जाणवु, एवी रीते ते आठे जावपुष्पो, ते ऽव्यपुष्पोनी अपे-

थायें उत्तम जाणवां; अने ते पुष्पोने शुद्ध एवी अष्टपुष्पीना स्वरूपने जाणनाराउं (भावपूजामाटे) अंगीकार करे छे.

हवे ते कहेलाज अर्थने वाक्यांतरें करीने कहे छे.

एभिर्देवाधिदेवाय, बहुमानपुरस्सरा ॥
दीयते पालनाद्यातु, सा वै शुद्धेत्युदाहृता ॥ ७ ॥

अर्थ—एवी रीतना पुष्पोथी, बहुमानपूर्वक, ते पुष्पोना रक्षणथी, देवाधिदेवप्रते जे पूजा कराय छे, तेने शुद्ध (निरवद्य) पूजा कहेली छे.

टीकानो भावार्थ—उपर कहेलां भावपुष्पोएं करीने, इंद्रथकी पण अधिक एवा आगल वर्णवेला महादेवप्रते अत्यंत प्रीतिपूर्वक जे पूजा कराय छे, ते शुद्ध पूजा जाणवी. केवी रीते? ते कहे छे. अहिंसा आदिक जे, पुष्पो तेना रक्षणद्वारें करीने; केम के, ते पालवाथी देवनी आज्ञा पालेली कहेवाय छे; केम के, आज्ञाने विराधीने, आज्ञेश्वर महाराजनी पेठे जोके सघली पूजामां उद्यमवंत थाय, तो पण ते आराधित थतो नथी. एवी रीतनी पूजाने तत्वना जाणनाराउंए निरवद्य कहेली छे.

हवे ते शुद्ध पूजानुं मोक्षसाधनपणुं देखाडता थका, तथा तेमां उत्तम पुरुषोनुं संमतपणुं देखाडता थका कहे छे.

प्रशस्तो ह्यनया भाव, स्ततः कर्मक्षयो ध्रुवः ॥
कर्मक्षयाच्चनिर्वाण, मत एषा सतां मता ॥ ८ ॥

अर्थ—ते भावपूजाएं करीने शुद्धभाव थाय छे, तथा ते शुद्धभावथी निश्चल अथवा अवश्य थनारो एवो कर्मोनो क्षय थाय छे, अने ते कर्मक्षयथी मोक्ष थाय छे, अने ते कारणोथी ते भावपूजा उत्तम पुरुषोने माननीक छे.

टीकानो भावार्थ—उपर कहेली शुद्ध अष्टपुष्पीरूपी पूजाथी आत्माना परिणाम शुद्ध थाय छे; पण द्रव्यरूप एवी अष्टपुष्पीथी

तेम थतु नथी, केम के ते जीवहिंसाथी मिश्रित थएली छे, अने ते उत्तम भावथी ज्ञानावरणादिकनो क्षय अवश्यें करीने थाय छे, अने एवी रीतना कर्मक्षयथी मोक्ष थाय छे, अनें तेथी शुद्ध एवी ते अष्टपुष्पी पूजा यतिओने विधेयपणाथी इष्ट छे, पण तेओने द्रव्य अष्टपुष्पी इष्ट नथी

माटे हे कुतीर्थिको, जो तमो यतिओ हो, तो तो ते भावपूजाज करो ?

एवी रीते त्रीजा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं

चतुर्थाष्टकं प्रारभ्यते

पूजा कर्या पछी लोको अग्निकारिका करे छे, माटे तेनु निरूपण करवामाटे हवे कहे छे

कर्मेंधनं समाश्रित्य, दृढा सद्भावनाहुतिः ॥
धर्मध्यानाग्निना कार्या, दीक्षितेनाग्निकारिका॥१॥

अर्थ–कर्मोरूपी बलतणनो आश्रय करीने, धर्मध्यानरूपी अग्निए करीने, दीक्षिते, सद्भावनारूपी आहुतीवाली दृढ एवी अग्निकारिका करवी

टीकानो भावार्थ–कर्म एटले मूल प्रकृतिनी अपेक्षाएं ज्ञानावरणादिक आठ प्रकारना कर्मो, तेओने बालवानी (दूर करवानी) अपेक्षाथी ते रूपी जे काष्ट (इधन) तेने आश्रीने अग्निकारिका करवी ते अग्निकारिका केवी ? तो के, दृढ केता कर्मरूपी लाकडाओने बालवामा समर्थ, तथा वली जीवनी जे शुभ वासना, ते रूपी छे आहुति जेमा एवी, हवे ते कर्मरूपी काष्ठो शानेथी बालवा ? ते कहे छे धर्मध्यान अने उपलक्षणथी शुक्लध्यानरूपी जे अग्नि, तेणे करीने ते कर्मोरूपी काष्ठोने बालवारूप अग्निकारिका करवी हवे तेवी रीतनी अग्निकारिका कोणे करवी ? ते कहे छे दीक्षित केता जेणे प्रव्रजा लीधेली होय, तेणे तेवी री-

तनी अग्निकारिका करवी; पण तेणे द्रव्यअग्निकारिका करवी नहीं, केम के, तेमां प्राणीउनी हिंसा थाय छे; अने तेवो दीक्षित तो तेवी हिंसाथी निवृत्त थएलो छे; तेथी तेमां (द्रव्यअग्निकारिकामां) ते अधिकारी नथी; केम के, "अधिकारिवशाच्चधर्मसाधनसंस्थितिः" (अधिकारिनी अपेक्षाएं धर्मसाधननी स्थिति छे;) एम अगाउ कहेलुं छे; अने गृहस्थ तो सर्वथा प्रकारे जीवहिंसाथी निवृत्त थएलो नथी, तेथी ते द्रव्यअग्निकारिका करवाने अधिकारी होवाथी ते करे छे; अने तेथीज जैन गृहस्थो धूप, दीप आदिकना प्रकारथी द्रव्य अग्निकारिका करे छे.

आ श्लोकें करीने एम कहेलुं थाय छे के, हे कुतीर्थिउ, ज्यारे तमो दीक्षित थएला छो, त्यारे कर्मोरूपी काष्टोने एकठां करी, तथा तेमां धर्मध्यानरूपी अग्नि प्रदीप्त करीने, सद्भावनारूपी आहुतीथी अग्निकारिका करो? पण बीजी अग्निकारिका करो नहीं; केम के, ते दीक्षितने अनुचित छे; पण जो तमो गृहस्थो हो, अथवा तेउनी तुल्य हो, तो द्रव्यअग्निकारिका करो?

हवे, "दीक्षिते तो ध्यानरूपीज अग्निकारिका करवी," एम अन्यदर्शनीउनाज सिद्धांते करीने साधता थका कहे छे.

दीक्षा मोक्षार्थमाख्याता, ज्ञानध्यानफलं स च॥
शास्त्रउक्तो यतः सूत्रं, शिवधर्मोत्तरे ह्यदः ॥ २ ॥

अर्थ—दीक्षा मोक्षनेमाटे कहेली छे; अने ते मोक्ष ज्ञानध्यानना फलरूप छे; एम शास्त्रमां कहेलुं छे; केम के, तेवी रीतनुं सूत्र (अन्यदर्शनीउना) "शिवधर्मोत्तर" नामना शास्त्रमां कहेलुं छे.

टीकानो भावार्थ—दीक्षाने तेना जाणनाराउए सकल कर्मोथी मुक्त थवाना निमित्तरूपे कहेली छे; माटे ते दीक्षाने प्राप्त थएलाए तो मोक्षने साधनारीज क्रीया करवी जोइएं; पण तेणे द्रव्यअग्निकारिका करवी नहीं; एवो भावार्थ जाणवो.

अहीं कोइ वादी शंका करे के, द्रव्यअग्निकारिकाज मोक्षनुं साधन छे, तेने माटे ते कहे छे के, ते मोक्ष, ज्ञान अने शुक्ल एवी एकाग्रतानुं साध्य छे, पण द्रव्य अग्निकारिकानुं साध्य नथी

वली अहीं वादी शंका करे के, ते शी रीते जणाय? केम के, ते प्रत्यक्ष आदिक प्रमाणने अगोचर छे तेने माटे कहे छे के, ते आगमने विषे ज्ञानध्यानना फलपणाए करीने कहेलो छे, माटे जोके, ते प्रत्यक्ष अने अनुमान प्रमाणने अगोचर छे, तो पण आगममां कहेलुं होवाथी ज्ञान अने ध्यानना फलपणाएं करीने ते मोक्ष अंगीकार करवो, अने सघला मोक्षवादीओए आगमने प्रमाणपणाए करीने मानेलुज छे वली जोके, बौद्ध लोको तेम नथी मानता, तो पण संशय निशेषना कारणें करीने प्रवृत्तिनी निवृत्तिना हेतुपणाथी तेओए कोइ पण रीते ते मानेलोज छे

वली अहीं वादी शंका करे के, ते शी रीते नक्की थाय? के, ते मोक्ष, शास्त्रमां फलपणाए करीने कहेलो छे तेने माटे तेने कहे छे के, ते अन्यदर्शनीओना शिवधर्मोत्तर नामना शास्त्रमां मोक्षने ज्ञानादिकना फलपणाएं करीने कहेलो छे, माटे हे कुतीर्थिओ! तमोएज अंगीकार करेला शास्त्रमां ज्यारे तेम कहेलुं छे, त्यारे मोक्षना अर्थि तथा दीक्षित एवा तमोए ते द्रव्य अग्निकारिका नहीं करवी जोइए, एवो भावार्थ छे

हवे तेज सूत्र देखाडता थका कहे छे

पूजया विपुलं राज्य, मग्निकार्येण संपदः॥

तपः पापविशुद्ध्यर्थं, ज्ञानं ध्यानं च मुक्तिदम्॥३॥

अर्थ-पूजाथी उत्कृष्ट राज्य, तथा अग्निकारिकाथी संपदा मले छे, तथा तप पापोनी शुद्धिमाटे छे, अने ज्ञान, तथा ध्यान मोक्षने देनारा कह्या छे

टीकानो भावार्थ-पूजाथी एटले देवनुं पुष्प आदिकथी अर्चन करवाथी, (पण भावपूजाथी नहीं, केम के, ते तो तप अने

ज्ञानरूप होवाथी, पापशुद्धि अने मोक्षने संपादन करनारी छे;) तेना करनारने विस्तीर्ण एवुं राज्य मळे छे, अने अग्निकारिकाथी समृद्धिओ मळे छे, (अहीं पण द्रव्य अग्निकारिकाज जाणवी; पण भाव अग्निकारिका जाणवी नहीं; केम के, ते तो ध्यानरूप होवाथी मोक्षने साधनारी छे.) तथा अनशनादिक तप अशुभ कर्मोना क्षयमाटे थाय छे; तथा ज्ञान, अने शुभचित्तनी एकाग्रतारूप जे ध्यान, ते मोक्षने देनारां छे; (एवी रीते ते शिवधर्मोत्तर नामना ग्रंथना सूत्रनो अर्थ छे.) एवी रीते अन्यदर्शनीओना दीक्षितने, तेओज मानेला शास्त्रथी अग्निकरिकानुं करवुं, ते दूषण भरेलुं छे.

हवे फरीने पण तेनी पूजा, अने अग्निकारिकानुं प्रकारांतरथी दूषण देखाडता थका कहे छे.

पापं च राज्यसंपत्सु, संभवत्यनघं ततः ॥
न तद्धेतोरूपादान,मिति सम्यग् विचिंत्यताम् ॥४॥

अर्थ–राज्यसंपदामां पाप थाय छे, अने तेथी तेना हेतुभूत एवी द्रव्यपूजा तथा अग्निकारिकानुं उपादान निर्वद्य थइ शकतुं नथी; माटे (हे कुतीर्थिओ;) ते बाबत तमो सारी रीते विचारो ?

टीकानो भावार्थ–केवळ मुमुक्षुने अग्निकारिकानुं करवुं निरर्थक नथी; पण ते द्रव्यपूजा अने अग्निकारिका करवा पछी फलरूप थती एवी जे राज्यनीसंपदा, तेमां अशुभ कर्मो उत्पन्न थाय छे; अने तेथी ते राज्य संपदाना कारणभूत एवी ते द्रव्यपूजा अने अग्निकारिकानुं जे ग्रहण करवुं, ते निर्वद्य थइ शकतुं नथी; माटे हे कुतीर्थिओ, एवी रीते द्रव्यपूजा अने द्रव्य अग्निकारिकाना ग्रहण करवामां उपर कहेलुं सावद्यपणुं तमारा पोतानाज सिद्धांतनां अविरोधथी विचारो. केम के, सारी रीते विचार पूर्वक कार्य करनाराओज मुमुक्षु थइ शके छे.

वली अहीं वादी शंका करे के, राज्यसंपदामां जले पाप थाय, पण दान आदिकथी तेनी शुद्धि थशे, तेने माटे हवे तेने कहे छे

विशुद्धिश्चास्य तपसा, न तु दानादिनैव यत् ॥
तदियं नान्यथा युक्ता, तथा चोक्तं महात्मना॥५॥

अर्थ-(राज्य आदिकथी थता पापनी) शुद्धि तपथी थाय छे, पण दान आदिकथीज थती नथी, माटे ते ऋव्यअग्निकारिका युक्त नथी, पण तेथी उलटा प्रकारनी युक्त छे, अने महात्मा (व्यासे) पण तेमज कहेलु छे

टीकानो जावार्थ-राज्य आदिकथी उत्पन्न थएला पापनी शुद्धि अनशनादिक तपथी थाय छे, (केम के तप छे ते, पापनी शुद्धिमाटे छे) पण होमादिक दानथी थती नथी, (केम के, दानथी जोगो मले छे) माटे दीक्षितने ते ऋव्यपूजा, तथा ऋव्यअग्निकारिका केम युक्त कहेवाय ? अहीं मुख्य दूषण तो ऋव्यअग्निकारिकानुं देखाड्युं छे, अने ऋव्यपूजानुं दूषण तो प्रासंगिक छे, माटे हवे अग्निकारिकानुं निगमन कहे छे ते ऋव्यअग्निकारिका पापना साधनजूत एवी संपदाना हेतुजूत छे, माटे ते मुमुक्षुने युक्त नथी, अने धर्मध्यानरूप अग्निकारिकाना प्रकारांतरने प्राप्त थएली एवी ते ऋव्य अग्निकारिका युक्त छे शुद्ध करवा लायक एवा जे पाप, तेने उत्पन्न करनारी जे संपदा, तेना निमित्तपणाथी, ऋव्यअग्निकारिकानु न करवापणु, व्यासे पण न्यायथी अंगीकार करेलु छे, एम देखाडता थका हवे कहे छे के, जेरी रीते अमोए कहेलुं छे, तेवीज रीते महात्मा व्यासे पण कहेलु छे, अहीं हरिजऋसूरि महाराजे मिथ्यादृष्टि एवा व्यासने पण जे महात्मा कहीने बोलाव्या छे, ते अन्यदर्शनीर्उना मतना अजिप्रायथी तथा पोताना मध्यस्थपणाने प्रकट करवामाटे छे, माटे तेम कहेलु विरुद्ध नथी वली अन्यदर्शनीर्उए व्यासने

महात्मा तरिके मानेला छे, अने तेथी पोताना पक्षमां अन्यदर्शनीउनी प्रीति थवामाटे तेनुं वचन अत्रे मुकेलुं छे.

वली पण तेज कहे छे.

धर्मार्थं यस्य वित्तेहा, तस्यानीहा गरीयसी ॥

प्रक्षालनाद्धि पंकस्य, दूरादस्पर्शनं वरम् ॥ १ ॥

अर्थ–धर्मने माटे जेनी धननी चेष्टा छे; तेनी (धर्ममाटे धननी) नहीं चेष्टाज श्रेष्ट छे; केम के, कादवने धोवा करतां, तेने स्पर्श नहीं करवो, तेज वधारे श्रेष्ट छे.

टीकानो भावार्थ–धर्मने माटे जे कोइ पुरुषनी खेती, वेपार आदिकथी द्रव्य उपार्जन करवानी जे चेष्टा छे; ते पुरुषनी ते धर्मने माटे तेवी अचेष्टाज (द्रव्य उपार्जन न करवुं, तेज) वधारे श्रेष्ट छे; अर्थात् धनने माटे व्यापार आदिक करवामां अवश्य पाप थाय छे, अने ते पापने उपार्जन करेलां एवां द्रव्यना दानथी अवश्य शोधवुं पडे छे; माटे तेथी धनने माटे खेती आदिकनी चेष्टा नहीं करवी तेज श्रेष्ट छे; केम के तेम करवाथी धनना दानथी शुद्ध करवुं पडे एवुं पाप लागतुंज नथी; वली ते अचेष्टामां परिग्रह अने आरंभनुं वर्जवापणुं छे; तेथी ते धर्मरूप छे. हवे आ बाबतमाटे दृष्टांत कहे छे के, अशुचिरूप एवा कादवने धोवा करतां, तेने प्रकर्षे करीने स्पर्श नहीं करवो, तेज वधारे श्रेष्ट छे; अर्थात् कादवमां हाथ पग आदिक अवयवोने नांखीने पण पछी ते धोवा पडे छे, तेना करतां ते कादवने स्पर्श न करवो, ते श्रेष्ट छे; तेवीज रीते द्रव्यअग्निकारिका करीने संपदा उपार्जने करवी, अने तेथी उत्पन्न थता पापने पाछुं दान आपीने शोधवुं, तेना करतां अहींज ते द्रव्यअग्निकारिका नहीं करवी ते श्रेष्ट छे. आनो मतलब ए जाणवो के, मुमुक्षुउए द्रव्यअग्निकारिका करवी नहीं; केम के, तेथी उत्पन्न थता कर्मरूपी कादवने कीचडमां नाखेला पग आदिकनी पेठे फरीने धोवो पडे छे.

अहीं वादी शंका करे के, ज्यारे एम छे, त्यारे तो गृहस्थे पण पूजादिक नहीं करवा जोइएं

त्यारे तेने कहे छे के, एम नही, केम के, जैन गृहस्थो कइं राज्यादिक मेलववामाटे पूजा करता नथी, तेम " राज्य आदिकथी उत्पन्न थता पापोने अमो दान आदिकथी शोधशु, " एम पण मानता नथी पण फक्त मोक्षने माटेज तेउनी पूजादिकमा प्रवृत्ति छे वली मोक्षना अर्थी एवा आगमानुसारीने वीतरागनी पूजा आदिकथी मोक्षरूपज मुख्य फल मले छे, अने राज्य आदिक तो प्रसगेप्रसंगे मलतु फल छे, माटे गृहस्थीने पूजा आदिक अविधेय (नहीं करवा लायक) नथी, एवी रीते दीक्षित अने वगरदीक्षितने तेउनी क्रियानु अनुक्रमे तुरत अने परंपराथी मोक्षरूप फल मले छे

अहीं वादी शका करे के, दीक्षितने पण जो सपदा मेलववानी इच्छा होय, तो तेने पण द्रव्यअग्निकारिका करवी युक्त छे तेने माटे हवे ते वादीने कहे छे

मोक्षाध्वसेवया चैता., प्रायः शुभतरा भुवि ॥
जायते ह्यनपायिन्य, इयं सच्छास्त्रसंस्थितिः ॥ ७ ॥

अर्थ-मोक्ष मार्गनी सेवाथी ते संपदाउ प्रायें करीने पृथ्वीमा वधारे शुभ, तथा पापरहित थाय छे, अने एवी रीतनी स्थिति आगममा कहेली छे

टीकानो भावार्थ-सम्यग् ज्ञान, सम्यग् दर्शन अने सम्यग् चारित्ररूप जे मोक्षमार्ग, तेनी सेवायें करीने, ते सपदाउ वधारे शुभ छे, पण ते द्रव्य अग्निकारिकानी कार्यभूत एवी ते सपदाउ, पापहेतुयें करीने अशुभ छे, अने तेथी मोक्ष मार्गनी सेवायें करीने अग्निकारिका करनाथी, उपर कहेली अग्निकारिकाना फलभूत एवी सपदाउ प्रायें करीने, तेना करनाराउ प्रते आ पृथ्वीमां वधारे शुभरूप थाय छे, अहीं "प्रायें" कहेवानी मतलब ए के,

कोइने मोक्षमार्गनी सेवावाला ज्ञवमांज (थनारा) मोक्षजावथी तेउ(इव्यरूपे)शुजतर नथी पण थती; वली तेवी रीते मोक्षमार्गनी सेवाथी ते संपदाउ पापवर्जित थाय छे; माटे आ अग्निकारिका मोक्षमार्गनी सेवा शिवाय बीजी रीते करवी युक्त नथी.

अहीं वादी शंका करे के, मोक्षमार्गनी सेवाथी तेउ वधारे शुज थाय छे, एम शी रीते जाणवुं? तेने माटे तेने कहे छे के, तेवी रीतनी उपर कहेली स्थिति आगममां कहेली छे; कह्युं छे के,

न मानमागमादन्यद्, मुमुक्षूणां हि विद्यते ॥
मोक्षमार्गे ततस्तत्र, यतितव्यं मनीषिभिः ॥ १ ॥

अर्थ—मुमुक्षुउने आगम शिवाय बीजुं प्रमाण नथी; तेथी बुद्धिवानोए ते मोक्षमार्गमां यत्न करवो.

हवे अन्यदर्शनीउना शास्त्रने आधारेज इव्यअग्निकारिकानुं करवापणुं दूर करता थका कहे छे.

ईष्टापूर्तं न मोक्षांगं, सकामस्योपवर्णितम् ॥
अकामस्य पुनर्योक्ता, सैव न्याय्याग्निकारिका ॥८॥

अर्थ—(हे कुतीर्थीउ) "ईष्टापूर्त" ने मोक्षनुं अंग (तमारांज शास्त्रमां) कह्युं नथी, पण ते (स्वर्गादिकनी) अजिलाषावालाने माटे कहेलुं छे; पण जेने ते स्वर्गादिकनी अजिलाषा नथी, तेने माटे तो, ते (उपर वर्णवेली) जाव अग्निकारिकाज करवी, न्यायवाली छे.

टीकानो जावार्थ—

अंतर्वेद्यांतु यद्दत्तं, ब्राह्मणानां समक्षतः ॥
ऋत्विग्भिर्मंत्रसंस्कारै, रिष्टं तदभिधीयते ॥ १ ॥

अर्थ—वेदीनी अंदर, ब्राह्मणोनी समक्ष, मंत्रसंस्कारोथी पुरोहितोयें करीने जे देवाय, ते "ईष्ट" कहेवाय. अने,

वापीकूपतडागादि, देवतायतनानि च ॥
अन्नप्रदानमारामाः, पूर्त्तं तदभिधीयते ॥ २ ॥

अर्थ–वाव, कूवा, तलाव आदिक, तथा देवालयो, अन्नदान, अने वगीचा, ते "पूर्त" केहवाय छे

एवी रीतना उपर कहेला स्वरूपनालु "इष्टापूर्त" मोक्षनु कारण नथीज, अने तेनी रीते द्रव्यअग्निकारिका इष्टकर्मरूप होवाथी मोक्षनुं अंग नथी, केम के वेदीमा आहूतीनी प्रधानताथी कर्मो कराय छे

हवे ते मोक्षनुं अग शामाटे नथी? ते कहे छे हे कुतीर्थीउ! सकाम केता अभ्युदयना अभिलाषिने माटेज तमाराज शास्त्रमा ते वर्णवेलु छे केम के तमाराज शास्त्रमा कह्युं छे के, "स्वर्गकामो यजेत्" (स्वर्गनी इच्छावालाए यज्ञ करवो) एवु श्रुतिनु वचन छ, एवी रीते तेने उत्तम मानता थका, तथा बीजाने श्रेय नही मानता थका, जे मूढ पुरुषो "इष्टापूर्तने" वखाणे छे, तेउ पुण्यबधनथी देवलोकमां जइ, पाछा आ लोकमा अथवा तेथी पण हीन एवी गतिमा उपजे छे, हवे त्यारे अकामने एटले निरिछु माणसने शुं करवु? ते कहे छे स्वर्ग अने पुत्रादिकनी इच्छा नहीं करता एवा मुमुक्षुने तो "कर्मेंधन" इत्यादि उपर कहेली भावअग्निकारिकाज करवी न्यायवाली छे, अर्थात् श्रेष्ठ छे एवी रीते चोथा अष्टकनुं विवरण सपूर्ण थयुं

पचमाष्टकं प्रारभ्यते

एवी रीते, तात्विक महादेवने भावस्नानपूर्वक भावपूजाथी पूजता, तथा धर्मध्यानरूप अग्निकारिका करवामा तत्पर एवा मुमुक्षुने अनारम्भिपणु होवाथी तथा निष्परिग्रहपणुं होवाथी, धर्मना आधारभूत एवी जे (पोताना) शरीरनी स्थिति, ते भिक्षाथीज थइ शके छे, माटे तेनु (भिक्षानु) स्वरूप निरूपण करवा माटे हवे कहे छे

सर्वसंपत्करी चैका, पौरुषघ्नी तथा परा ॥
वृत्तिभिक्षा च तत्वज्ञै,रिति भिक्षा त्रिधोदिता॥१॥

अर्थ—पेहेली "सर्वसंपत्करी" बीजी "पौरुषघ्नी" तथा त्रीजी "वृत्तिभिक्षा" एवी रीते तत्वना जाणनाराउंए त्रण प्रकारनी भिक्षा कहेली छे.

टीकानो भावार्थ—आ लोकसंबंधी, परलोकसंबंधी, तथा छेक मोक्षसुधिनी संपदा करवानो छे स्वभाव जेनो, तेने "सर्वसंपत्करी" नामनी पेहेली एटले उत्तर भिक्षा जाणवी. तथा पुरुषाकारने निष्फल करवायें करीने जे नाश करे, तेने "पौरुषघ्नी" नामनी बीजी एटले जघन्य भिक्षा जाणवी. तथा आजीविकामाटेनी जे भिक्षा, तेने त्रीजी सामान्य भिक्षा जाणवी, एवी रीते परमार्थना जाणनाराउंए त्रण प्रकारनी भिक्षा कहेली छे.

तेउंमांथी पेहेली भिक्षानुं स्वरूप हवे कहे छे.

यतिर्ध्यानादियुक्तो यो, गुर्वाज्ञायां व्यवस्थितः ॥
सदानारंभिणस्तस्य, सर्वसंपत्करी मता ॥ २ ॥

अर्थ—जे मुनि ध्यानादिकमां जोडाएलो छे, तथा जे गुरुनी आज्ञामां रहेलो छे, तथा हमेशां आरंभ विनाना एवा ते यतिने "सर्वसंपत्करी" नामनी पेहेली भिक्षा मानेली छे.

टीकानो भावार्थ—जे साधु थएलो होय, तेने "सर्वसंपत्करी" नामनी पेहेली भिक्षा कहेली छे; आ वचनथी गृहस्थीने जुदो पाड्यो. वली "यति" शब्द कहेवाथी तो द्रव्ययति पण आवी जाय, माटे तेने जुदो पाडवा माटे कहे छे के, जे यति ध्यानादिकमां जोडाएलो होय, ते यतिने ते पेहेली भिक्षा कहेली छे, ध्यान एटले सेंकडो भवमां उपार्जन करेलां कर्मोंरूपी वनने बालवामां समर्थ एवा अंतरंग तपनी क्रियारूप धर्मध्यान अने शुक्लध्यान जाणवुं, अने आदि शब्दथी सघली परलोकसंबंधी

क्रियाउने प्रकाश करवामा दीपक सरखा एवा ज्ञानने पण ग्रहण करवु, अर्थात् तेवा प्रकारना ध्यान अने ज्ञाने करीने युक्त एवो यति, ते पेहेली जिक्षाने लायक छे वली आ विशेषपणथी केवल क्रिया करनारने, तथा क्रिया विनाना केवल ज्ञान धरावनारने पण, तेवा यतिथी जुदा पाड्या कह्युं छे के,

हयं नाणं क्रियाहिणं, हया अन्नाणउ किया ॥
पासन्तो पंगुलो दट्ठो, धावमाणोय अंधउ ॥ १ ॥

अर्थ-क्रियाविनानु ज्ञान नष्ट छे, अने ज्ञानविनानी क्रिया नष्ट छे, केम के, पांगलो माणस आसपास जोतोज वेशी रहे छे, अने आंधलो माणस तेवीज रीते दोड्या करे छे, (अर्थात्) तेउ बन्ने पोताना इच्छित स्थानके पहोंचता नथी माटे एवी रीते ज्यारे क्रिया अने ज्ञान बन्ने साथे मले छे, त्यारेज कार्यसिद्धि थाय छे, माटे ते बन्नेनु उपादेयपणु कह्युं कह्युं छे के,

संजोगसिद्धियफल वयति, नहु एगचक्केण रहो पयाइ
अंधोयपंगुयवणे समिच्चा, ते संपउत्ता नयरं पविट्ठा॥१॥

अर्थ-संयोगथी इच्छित फल थाय छे, केमके, एक चक्रथी कइ रथ चालतो नथी, वली वनमा रहेलो आंधलो अने पांगलो, बन्ने ज्यारे एकठा थया, त्यारे तेउ नगरमा पहोंच्या एवी रीतनो ध्यान अने ज्ञानमा जोडायेलो गमे ते कोइ यति(अहीं)जाणवो

हवे एवी रीतना विशेषपणथी, उपर वर्णवेलां उत्तम ज्ञान विनाना एवा जे "मापतुषादिकचारित्रिउ" तेउने "सर्वसंपत्करी" भिक्षानो प्रतिषेध न थावे, तेने माटे कहे छे के, जे मुनि गुणोवाला एवा आचार्यनी आज्ञामा रहेलो छे, तेने पण "सर्वसंपत्करी" भिक्षा जाणवी, केमके, ते गुरुना ज्ञानथीज ज्ञानवान छे, केमके ज्ञानना फलनी तेने सिद्धि थाय छे कह्युं छे के,

योनिरनुबंधदोषात्, श्राद्धोनाभोगवान् वृजिनभीरुः ॥
गुरुभक्तो गृहरहितः, सोऽपि ज्ञातैव तत्फलतः ॥ १ ॥

अर्थ—स्पष्ट छे.

अथवा आ विशेषणथी गुरुकुलमां वसतां थकां, बहुसाधुपणाथी जरा अनेषणीय (न कल्पे एवा) भोजन आदिकना ग्रहण करवाथी उत्पन्न थता दोषना प्रगट थवाथी, जे गुरुनी अपेक्षा राखतो नथी, तेवा साधुने जुदो पाड्यो; वली सद्गुरुना उपदेशनी अपेक्षा नहीं राखनारा शास्त्रने निंदे छे. वली "व्यवस्थित" शब्दे करीने जे मुनि कोइ वखते गुरुनी आज्ञामां रहेतो होय, अने कोइ वखते तेथी उलटो वर्ततो होय, तेने पण जुदो पाड्यो.

हवे अहीं वादी शंका करे के, जिनकल्पिउ, तथा प्रतिमाकल्पिउ आदिक, के जेउ गच्छथी निकली गएला छे, एवा गुरुनी आज्ञाविनाना मुनिउने ते "सर्वसंपत्करीभिक्षापणुं" शी रीते घटी शके? तेने माटे हवे कहे छे के, ते कल्पज गुरुनी आज्ञारूप छे.

एवा तथा सर्वदा पृथ्वीकाय आदिकनी हिंसाने तजनारा एवा यतिने ते "सर्वसंपत्करी" नामनी पेहेली भिक्षा उचित छे. आ विशेषणथी पृथ्वीकाय आदिकनी दया नहीं पालनार यतिने जुदो पाड्यो; केमके तेना ध्यानादिक योगनुं पण निष्फलपणुं छे; केमके, सिद्धांतमां पण कह्युं छे के, "जोके सम्यग्दृष्टिवालो होय, पण जो अविरति होय, तो तेने तप महागुणवालो थतो नथी." वली अहीं "सदा" शब्द ग्रहण करवाथी, करेली एवी सामायिक तथा पौषधपणाथी कोइ वखते आरंभविनानो, एवो जे देशयति, तेने जुदो पाड्यो; केमके तेवा देशयतिने आगममां भिक्षुक तरीके गण्यो नथी.

अहीं वादी शंका करे के, अगीयारमी प्रतिमाने प्राप्त थएलो एवो जे श्रमणोपासक (जैनगृहस्थ) तेने तेनां अनारंभिपणामाटे ते प्रतिमाना समयनी अवधि होवाथी, तेने पहेली भिक्षा तो

संजवे नही, तेम ते शिवायनी बीजी भिक्षा पण तेने संजवे नहीं, केम के तेवी रीतनी भिक्षाना अधिकारपणानो तेने अयोग छे, माटे तेनी भिक्षा ते कइ कहेवी? तेने माटे ते वादीने हवे कहे छे के, तेवा प्रतिमाधर श्रावकने श्रमणरूप (साधु सरखो) कहेलो होवाथी, अने तेनी भिक्षाने पण साधुनी भिक्षानु तुल्यपणु होवाथी अने ते अवस्थामा तेवी भिक्षा सर्वज्ञ प्रजुए कहेली होवाथी, तेनी भिक्षाने पण सर्वसपत्करीनु तुल्यपणु जाणवु, केमके यथार्थ कहेनारा एवा आप्त पुरुषो, पोताना आप्तपणाने थती हानीना प्रसंगथी सर्वसपत्तिने नहीं करनार, अथवा तेना कारणरूप नही, एवी वस्तुनो विधेयपणाथी उपदेश देता नथी, अहीं "ध्यानादियुक्त" कहेवाथी "आदि" शब्दथी "सदाअनारंभिपणु" पण अदरज आवी जतु हतु, तोपण भेदें करीने तेनु उपादान हेतुपणामाटे छे, अने तेथी, ते सदाअनारंभिपणाथी, उपर कहेली "सर्वसंपत्करी" भिक्षा, तत्वना जाणनाराउने माननीक छे वली सदा अनारंभी एवा साधुनी वृत्ति भिक्षाथीज थाय छे, अने ते शिवायनी आजीविकाथी तो आरंभीपणानो ते साधुने प्रसग आवे, अने तेथी अनारंभीपणाथी "सर्वसपत्करी" भिक्षा अति वखाणवा लायक छे कह्युं छे के,

अहो जिणेहि सावज्जा, विति साहु ण देसिया
मोख्खसाहणहेउस्स, साहुदेहस्स धारणा ॥ १ ॥

अर्थ–अहो! जिनेश्वर प्रजुए, सारु कर्यु छे के, साधुउ माटे, मोक्षसाधनना हेतुजूत एवा तेउना शरीरना आधारमाटे, सावद्य भिक्षा कहेली नथी

वली ते यति केवो? ते कहे छे

वृद्धाद्यर्थमसंगस्य, भ्रमरोपमयाटतः ॥
गृहिदेहोपकाराय, विहितेति शुभाशयात् ॥ ३ ॥

अर्थ–शुभ आशयथी, वृद्ध आदिक माटे, भमरानी पेठे भ-

मता, तथा (इंद्रिउना) विषयोनो संग नहीं करनारा, एवा मुनिनी (सर्वसंपत्करी नामनी) भिक्षा, गृहस्थीना तथा तेना शरीरना उपकार माटे कहेली छे.

टीकानो भावार्थ—भमता एवा यतिनी "सर्वसंपत्करी" भिक्षा छे. हवे ते यति शामाटे भमतो? ते कहे छे. वृद्ध केतां वयथी, चारित्रथी, ज्ञानथी स्थविर; (तथा आदि शब्दथी बालक, रोगी, शिष्य, परोणा आदिकनुं पण ग्रहण करवुं;) तेने माटे; आथी करीने पोतानुंज पेट भरवामां तत्पर अंतःकरणवाला क्षपणक आदिकनो व्यवछेद कह्यो; वली वृद्ध आदिकनुं वैयावच्च, सघला कल्याणरूपी वेलडीउना मूल सरखुं छे. कह्युं छे के,

वेयावच्चं कारह, संजमगुणेधरंताणं ॥
सव्वंकिरि पडिवाई, वेयावच्चं अपडिवाई ॥१॥

अर्थ-संयम गुणने धरनाराउनी वेयावच्च करो? सघली क्रियाउ (कदाच) निरर्थक जाय छे, पण वैयावच्च निरर्थक जती नथी. माटे ते वैयावच्चनी अपेक्षा नहीं राखनार साधुने, "सर्वसंपत्करी" भिक्षानुं भागीपणुं शी रीते आवी शके?

वली ते यति केवो? तोके, असंग केतां शब्दादिक (इंद्रिउना) विषयोनो संग नहीं करनारो;अथवा वृद्ध अथवा रोगी माटे भमतां थकां, तेउना उद्देशथी मलेलां मनोहर दाल, भात, कूर, आदिक भोजनमां "असंग" केतां लालसा नहीं राखनारो; अने तेथी उलटी रीते चालनार साधुने उपर वर्णवेला अलुब्ध साधुथी जुदो पाड्यो.

वली ते यति केवो? तोके, भमराना दृष्टांतथी भमतो; अर्थात् जेम भमरो केटलाक मकरंदना कणोने लेइने, तथा तेथी पुष्पने पण पीडा नहीं उपजावीने, पोताना आत्माने प्रसन्न करे छे, तेम मुनिरूपी भमराउ पण थोडां थोडां अन्नरूपी मकरंदने ग्रहण करता थका, तथा तेथी गृहस्थीरूपी पुष्पने पीडा नहीं उप-

जावीने, पोताना आत्मानुं रक्षण करे छे, एवी रीतनो यति जाणवो, आथी करीने एकज घेर जइ, जे भोजन करे छे, तेवा साधुने दूर कर्यो, (यति, एकज घरे भोजन करवामा कोइक रीते थता दोषने त्याग करवामा कदाच समर्थ होय, तोपण " पुर:कर्म, पश्चात्कर्म " रूपी असंयतिनी चेष्टाथी थता दोषनो तेने प्रसग आवे) एवी रीते भमरानी पेठे भिक्षा लेवालायक कुलोमा भमतो मुनि जाणवो "भमतो" एम कहेवाथी जे यति भिक्षा माटे भमतो नथी, तेने दूर कर्यो, केमके, भम्याविना भिक्षा ग्रहण करवाथी " अभ्याहृत " नामनो दोष यतिने लागे छे

अहीं वादी शंका करे के, जे गृहस्थो ज्यारे साधुउने वदना करवा आवे छे, तेउ ते वखते तेउने माटे (साधुउने माटे) भोजननी वस्तुउ जो लावे, तो ते " अभ्याहृत " दोष न लागे, केमके, वदना माटे आववामा गृहस्थोने प्रयोजनपणु छे, अने साधुउ माटे ते वखते भोजन लाववु, ते तो प्रासगीक छे हवे तेने माटे ते वादीने कहे छे के, एम नहीं, केमके, जोके, तेमा " अभ्याहृत " दोष आवतो नथी, तो पण " मालापहृत, निक्षिप्त, पिहित, " आदिक अनेक प्रकारना दोषोनो प्रसग आवे त्यारे वली वादी शंका करे के, ते लावनार गृहस्थना वचनना प्रमाणिकपणाथी तेने पूछवाथी ते दोषनो परिहार थशे, (माटे ते गृहस्थे लावेलुं भोजन साधु ले, तो तेमा शु हरकत छे ?) त्यारे वली ते वादीने कहे छे के, ते सघलुं सत्य छे, पण " गृहस्थहस्तस्थापित " आदिक दोष तेथी पण टली शके तेम नथी, (माटे गृहस्थे त्या लावेलु भोजन साधुने लेवु लायक नथी) हवे ते यति केवा अभिप्रायथी भमे ? ते कहे छे गृहस्थोना उपकार माटे, तथा पोताना शरीरना उपकार माटे ते यति भमे (आरम्भ अने परिग्रहना आग्रहथी ग्रहित थयल छे, आत्मा जेउनो, तथा दुर्गतिमा जवाना कारणरूप एवा कर्मोनो छे, बध जेउने, एवा ग्र-

हस्थीउने, धर्मने साधनार एवी जे पोतानी (मुनिनी) काया, तेना उपकारने करनार एवो जे आहार, तेना ग्रहण करवायें करीने, अक्षयसुखनां फलरूप जे मोक्षरूपी वृक्ष, तेना बीज समान, एवी पुण्यनी प्राप्तीथी, ते यति उपकार करे छे,) अने, आहारविना शुद्ध धर्मरूपी मेहेलना शिखरपर बेसवाने असमर्थ, एवा पोताना देहने आहाररूपी आलंबन देवाथी, तेनो (पोताना देहनो) पण उपकार करे छे. आम कहेवाथी गृहस्थीउने अप्रीति उपजावीने आहारनी लोलताथी, धर्मने नुकशानकारक आहार ग्रहण करीने, जे यति, धर्मना कार्यनो उलटो अपकार करे छे, तेना (यतिपणानो) निषेध कर्यो. तथा धनवानना पुत्रादिकपणाथी जे मुनि दीनताथी शरमातो थको भिक्षा माटे भमे छे, तेना निषेधने माटे हवे कहे छे. " विहिता " केतां यतिनी अवस्थाने उचित एवी आ भिक्षा, तीर्थंकरोए पण आचरेली तथा उपदेशेली छे; एवी रीतनी भिक्षा उत्तम अध्यवसायथी भमता एवा यतिने थाय छे, अथवा " विहिता " एटले गृहस्थी अने देहना उपकार माटे जिनेश्वर प्रभुए कहेली छे.

उपर कहेली रीतथी उलटी रीते करेली भिक्षा, "पौरुषघ्नी" थाय छे; तेनुं स्वरूप प्रतिपादन करवा माटे हवे कहे छे.

प्रव्रज्यां प्रतिपन्नो य, स्तद्विरोधेन वर्तते ॥

असदारंभिणस्तस्य, पौरुषघ्नीति कीर्तिता ॥ ४ ॥

अर्थ—जे मुनि दीक्षा लेइने पण, तेथी विरुद्ध रीतें करीने वर्ते छे, एवा असदारंभी मुनिनी भिक्षाने " पौरुषघ्नी " कहेली छे.

टीकानो भावार्थ—सर्व वीरतिरूप एवी दीक्षा लेइने पण जे यति, तेनाथी विरुद्ध रीते, एटले मूलगुण अने उत्तरगुणने विराधीने, अथवा पूर्वे कहेला ध्यान, ज्ञान, अने गुरुनी आज्ञानी अपेक्षा नहीं राखीने, वर्ते छे, तथा असदारंभी एटले (पृथ्वी-

कायादिक) प्राणीउंनी हिंसादिकमा प्रवर्ते ठे, तेनी जिक्षाने "पौरुषघ्नी" जिक्षा कहेली ठे

अहीं वादी शका करे के, प्रव्रजाना विराधकपणाथीज " असदारंजिपणुं " तो जणाएलु हतु, तो ते यतिनुं " असदारंजिपणु " जुदुं करीने शामाटे कह्युं ? तेने माटे तेने कहे ठे के, ते सत्य ठे, पण ते जिक्षाना हेतुपणाथी ते कहेलु ठे, माटे निर्दोष ठे, अर्थात् जेथी ते " असदारंजी " ठे, तेथीज तेनी जिक्षाने " पौरुषघ्नी " कहेली ठे, एवो वाक्यनो अर्थ थाय, अथवा प्रव्रज्याथी विरुद्ध रीते वर्तनार, एवा ते यतिनी, अशोजन आरंजना ग्रहण करवाथी, जे जिक्षा, ते " पौरुषघ्नी " ठे, एवो पण अर्थ करवो, अथवा " असदा " एटले हमेशा आरंज नहीं करतो अर्थात् अष्टमी आदिक तिथिने दिवसे आरंज नही करतो एवो ते यति, एवो पण अर्थ करवो

प्रव्रज्याथी विरुद्ध रीते वर्तनार, सामान्य प्राणीप्रते पौरुषघ्नी जिक्षाथी हवे अन्वयघटना कहे ठे

धर्मलाघवकृन्मूढो, जिक्षयोदरपूरणम् ॥
करोति दैन्यात्पीनांगः, पौरुषं हंति केवलम् ॥५॥

अर्थ–धर्मनी लघुता करनार मूढ (यति) दीनताथी जिक्षाए करीने उदरपूरण करे ठे, अने तेथी केवल ते पोताना पुरुषातनने हणे ठे.

टीकानो जावार्थ–श्रुत, तथा चारित्ररूप धर्मनी लघुता करवानो ठे स्वजाव जेनो एवो मूढ यति, उपर कहेला वृद्धादिक माटेना जे अटनविशेषणो, तेउने, (पोते) कुशास्त्रनी श्रद्धाथी वासित थएलो होवाथी आश्रय करतो नथी; एवो ते यति जिक्षाए करीने दीन वृत्तिथी उदरपूरण करे ठे, (जो के तेवो यति मनथी उद्धत ठे, तो पण अनुचित जिक्षाथी परमार्थथी तो ते दीनज ठे, केम के, ते जिक्षानोने अप्रशसनीक ठे) वली ते

यति केवो तो के, "पीनांगः" केतां रोग आदिकनी पीडा नहीं होवाथी पुष्ट शरीरवालो; (आथी करीने एम कह्युं छे के, रोग आदिकथी पीडित छे शरीर जेनुं, एवो कोइ यति (तेवी रीतनी) भिक्षाथी शरीरनुं पोषण करतो थको पण पौरुषनो नाश करतो नथी; केम के, तेनुं पौरुष तो रोगादिकथीज हणाएलुं हतुं.) एवो ते यति तेम करवाथी केवल पोताना पुरुषार्थनो नाश करे छे, पण तेथी पोताना कंइ पण पुरुषार्थने पुष्ट करतो नथी; केम के, ते असदारंभी होवाथी तेने धर्मपुरुषार्थ; के मोक्षपुरुषार्थ होता नथी; तेम ते (तेवी रीतनो) भिक्षाभोजी होवाथी, तेने अर्थपुरुषार्थ, के कामपुरुषार्थ पण होता नथी; (कारण के, भिक्षुकने (कदाच) अर्थ काम मले, तो पण ते उत्तम माणसोने प्रशंसवा लायक नथी.) माटे एवी रीतनी भिक्षाथी जे मुनि पोताना पुरुषार्थनो नाश करे छे, तेनी भिक्षा "पौरुषघ्नी" कहेवाय छे.

हवे त्रीजी भिक्षानुं स्वरुप कहे छे.

निःस्वांधपंगवो ये तु, न शक्ता वै क्रियांतरे ॥
भिक्षामटंतिवृत्त्यर्थं, वृत्तिभिक्षेयमुच्यते ॥ ६ ॥

अर्थ—निर्धन, आंधला, तथा पांगला, के जेउ बीजी क्रिया करवाने असमर्थ छे, तेउ आजीविकामाटे, भिक्षा सारुं जे भमे छे, तेउनी ते भिक्षा "वृत्तिभिक्षा" कहेवाय छे.

टीकानो भावार्थ—निर्धन, आंधला, तथा चालवानी शक्तिविनाना एवा पांगला माणसो, के जेउ भिक्षाशिवाय, खेती वेपार आदिकनी क्रिया करवाने असमर्थ छे, तेउ जे भीक्षामाटे भमे छे, तेउनी ते भिक्षाने "वृत्तिभिक्षा" कहेली छे. (अने जेउ बीजी क्रिया करवाने समर्थ छे. तेउनी तो "पौरुषघ्नी" नामनी भिक्षा छे.) हवे तेउ तेवी भिक्षामाटे शामाटे भमे छे? ते कहे छे. तेउ पोतानी आजीविकामाटे भमे छे; अने तेवी भिक्षा "वृत्तिभिक्षा" कहेवाय छे.

हवे तेवी भिक्षा उचित छे के, अनुचित छे? तेवी आशंकामाटे कहे छे

नाति दुष्टापि चामीषा, मेषा स्यान्न ह्यमी तथा॥
अनुकंपानिमित्तत्वाद्, धर्मलाघवकारिणः ॥ ७ ॥

अर्थ-तेवी रीतनी वृत्तिभिक्षा, तेवा निर्धनादिकोने माटे दुष्ट पण नथी, केम के, तेमा अनुकपानु निमित होवाथी, तेउ "पौरुषघ्नी भिक्षावालानी" पेठे धर्मनी लघुता करनारा नथी

टीकानो भावार्थ-आ भिक्षा, तेवा भिक्षुको माटे "पौरुषघ्नीनी" पेठे अत्यत दोषवाली नथी, तेम "सर्वसंपत्करीनी" पेठे अति प्रशसनालायक पण नथी, अने तेवी भिक्षा निर्धन, आधला आदिकोने होय, "पौरुषघ्नी" भिक्षा करनाराउ धर्मनी लघुता करनाराउ छे, तेम ते निर्धनादिको धर्मनी लघुता करनारा नथी ते शी रीते? ते कहे छे के, तेउ पोतामाटे लोकोनी करुणाना कारणरूप थइ पडे छे, अने तेथी धर्मनी लघुताना हेतुरूप तेउ थइ पडता नथी, माटे धर्मनी लघुता करनारा साधुउनी भिक्षामा जेवो दोष छे, तेवो तेउनी भिक्षामा दोष नथी, वली आवी रीतना हेतुदृष्टातथी ते निर्धनादिकोने "सर्वसंपत्करी" भिक्षा प्राप्त थाय छे, एम पण नहीं कहेवुं, केम के, ते भिक्षा तो शुद्ध यतिनेज प्राप्त थाय छे

अहीं भिक्षुकोनी भिक्षानु फल यथार्थ एवा तेउना नामोए करीने कह्यु; हवे ते भिक्षा देनारना फलना निरूपणमाटे कहे छे

दातृणामपि चैताभ्यः, फलं क्षेत्रानुसारत.॥
विज्ञेयमाशयाद्वापि, स विशुद्ध फलप्रदः ॥ ८ ॥

अर्थ-उपर कहेली भिक्षाउथी, तेना देनारोने पण पात्र अपात्रनी अपेक्षाथी, अथवा आशयनी अपेक्षाथी फल जाणवुं, केम के शुद्ध आशय (स्वर्गादिक) फलने देनारो छे

टीकानो भावार्थ-केवल भिक्षा लेनारनेज सर्वसपत्करणादिक

फल मलेछे, तेम नहीं, पण ते भिक्षा देनारने पण शुभकर्मबंधादिक फल थाय छे. ते फल केवी रीते थाय छे? ते कहे छे. धान्यादिकथी ववाएली भूमीनी पेठे तेनुं फल थाय छे; अर्थात् पात्रापात्रनी अपेक्षाए फल थाय छे. कह्युं छे के, "गुणवते पात्राय दीयमानं महाफलं" केतां गुणवान पात्रमते देवाती वस्तु महाफलरूप थाय छे. वली कह्युं छे के,

(गौतमस्वामीए भगवानने पूछ्युं के, हे भगवन्! जे साधुए पापकर्मोनो नाश कर्यो छे, अथवा तेनां पच्चखाण कर्यां छे तेवा साधुने प्रासुक अने एषणीय आहार आप्याथी शुं फल थाय? त्यारे भगवाने कह्युं के, हे गौतम! तेथी एकांत निर्जरा थाय; अने तेथी अल्प पण कर्मबंध पडे नहीं.)

तथा अल्पगुणवालाने देवाथी मातुं फल थाय छे. कह्युं छे के,

गौतमस्वामीए भगवानने पुछ्युं के हे भगवन्! जे साधुए पापकर्मोने तज्यां नथी, अथवा पचख्यां नथी, तेवा साधुने प्रासुक अने एषणीय आहार आपवाथी शुं फल थाय? त्यारे भगवाने कह्युं के, हे गौतम! तेथी एकांते पापकर्म बांधे, अल्प पण निर्जरा थाय नहीं.)

अने अंध आदिकने जे दान आपवुं, ते तो अनुकंपारूप उत्तम भावपूर्वक होवाथी, (तेओ जोके निर्गुणी छे, तो पण) तेथी किंचित् शुभ फल मले छे, एम आगममां कहेलुं छे.

अथवा क्षेत्रानुसारथी दानफलनी व्यवस्था व्यवहार नयनी अपेक्षाए कहेली छे; हवे निश्चय नयनी अपेक्षाथी कहे छे, आशयथी एटले अध्यवसायथी ते शुभ विगेरे फलवाली छे; केमके, अध्यवसाय छे ते, शुभाशुभ फलोनुं मुख्य कारण छे. कह्युं छे के, एकज प्राणीनी हिंसाना फलमां अध्यवसायना वशथी मोटुं अंतर कहेलुं छे; अने तेवीज रीते अध्यवसायना वशथी निर्जरानुं फल पण घणा प्रकारनुं कहेलुं छे.

एवी रीते गर्व, मत्सर आदिकना परिणामथी, गुणवान पात्रने

आपे, तोपण तेने तेथी शुभ फल मलतुं नथी, अने दया, तथा शासननी निंदाना रक्षण आदिक परिणामथी कदाच अवगुणीने दान आप्युं होय, तो पण ते शुभ फलने देनारु छे

एवी रीतनो शुभ आशय, अर्थात् नियाणा आदिक सघला कलके करीने रहित एवो आशय स्वर्गादिक फलने साधनारो थाय छे, केमके ते स्वर्गादिक साधवामा "अतरंगपरिणाम" कारण रूप छे

अही वादी शंका करे के, आगममा, दीक्षाने तजेला सिद्धपुत्रसरखा लक्षणवाला भिक्षुओ संभलाय छे, अने ते वात व्यवहारचूर्णिमा कहेली छे माटे तेवा भिक्षुओने कइ भिक्षा कहेवी? केमके, तेओने अयतिपणु होवाथी "सर्वसपत्करी" भिक्षा तो घटी शके नहीं, वली तेओए दीक्षा तजेली होवाथी तेओने प्रव्रज्याथी विरुद्ध वर्तवापणानो अभाव होवाथी, "पौरुषघ्नी" भिक्षा पण घटी शके नहीं, तेम तेओ वीजी क्रिया करवाने समर्थ होवाथी तेओने "वृत्तिभिक्षा" पण घटे नही, अने ते त्रण शिवाय वीजी भिक्षा तो कहेली नथी

हवे तेने माटे ते वादीने कहे छे के, तेओने "वृत्तिभिक्षा" घटी शके, एवु अमो धारीयें छीयें, केमके, तेओ निर्धन होय छे, तथा क्रियातर करवाने पण असमर्थ होय छे, केमके, जेणे दीक्षा लेइने तजी दीधी छे, ते वीजी क्रिया करवाने असमर्थ छे अथवा तेओने "पौरपघ्नी" भिक्षा पण घटी शके, केमके ते भिक्षा प्रव्रज्यावालानेज होय, तेम नथी, पण वीजी क्रिया करवाने समर्थ एवा असदारभिने पण ते घटी शके छे, केमके तेओनी क्रिया पुरुषातनने हणवाना लक्षणवाली छे, अथवा अत्यत पापथी वीता, अने सवेगना अतिशयवाला, तथा फरीने दीक्षाप्रते लागेलु छे मन जेओनु, एवा तेओने "सर्वसपत्करी" भिक्षाना वीजसरखी

भीक्षा पण घटी शके, एवुं लागे छे: पछी तेमां खरेखरुं शुं छे? ते तो केवली महाराज जाणे.

एवी रीते पांचमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

षष्टाष्टकं प्रारभ्यते

एवी रीते उपर, अधिकारीनी अपेक्षाए भिक्षाउनुं निरूपण कर्युं; हवे तेउमां "सर्वसंपत्करी" भिक्षा श्रेष्ट छे, माटे हवे तेनुं स्वरूप कहे छे.

अकृतोऽकारितश्चान्यै, रसंकल्पित एव च ॥
यतेःपिंडःसमाख्यातो, विशुद्धः शुद्धिकारकः ॥१॥

अर्थ—नहीं करेलो, बीजापासे नहीं करावेलो, तथा संकल्प-विनानोज, शुद्ध पिंड मुनिने शुद्धि करनारो कह्यो छे.

टीकानो भावार्थ—"अकृत" एटले पोते नहीं खरीदेलो, नहीं हणेलो, तथा नहीं पकावेलो, तथा तेवीज रीते पोते नहीं करावेलो; तथा वेचाथी लेवा आदिके करीने चाकर आदिकोथी "हुं आ साधुप्रते देइश" एवी रीते नहीं संकल्पाएलो, एवोज आहार साधुने कल्पे. कह्युं छे के,

पिंडंअसोहयंतो, अचरित्तीएत्थ संसउ नत्थी ॥
चरित्तंमि असंते, सव्वा दिख्खानिरत्थिया ॥ १ ॥

अर्थ—पिंडशुद्धि नहीं करतो एवो यति, अचारित्रीउज छे; ते वातमां संशय नथी; अने एवी रीते ज्यारे चारित्र गयुं, त्यारे सघली दीक्षा निरर्थकज छे.

"अकृतादि" पदोयें करीने करवुं, कराववुं, अने कर्ताप्रते अनुमोदवुं, ते; तथा हणवुं, हणावतुं, अने हणताप्रते अनुमोदवुं ते; तथा पकाववुं, पकावाववुं अने पकावताप्रते अनुमोदना करवी; एवी रीतनी नवकोटीयें करीने पिंडनी शुद्धता कही.

एवी रीतनो भात आदिकनो पिंड (अने उपलक्षणथी श-

र्या अने वीजा उपकरणो) गएला एवा जे रागादिक दोपो, तेथी उत्पन्न थएला, सघली वस्तुउना समूहने प्रकाश करनारा ज्ञाने करीने, तीर्थकरोए, मोक्षनगरप्रते जवाने अति उत्तम मार्गरूप चरण-करणनी शुद्धिना हेतुपणायें करीने, पृथ्वीकायादिकनी रक्षामा तत्पर एवा मुनि माटे ठीक कहेलो ठे, तेमां तेउने अंतराय दोप नथी

हवे ते पिंड केवो ? ते कहे ठे के, "विशुद्ध" केता सघला दोपोयें करीने रहित, तथा तेथी करीने ते पिंड "विशुद्धिकारक" केता कर्मरूपी मेलना कलंकने दूर करनारो ठे अथवा ते "अकृतादिक" दोप विनानो पिंड साधुने शामाटे कह्यो ठे ? ते कहे ठे के, "विशुद्ध" केता "कृतादि" दोपविनानोज जे पिंड ठे, तेज शुद्धि करनारो ठे, बीजो पिंड तेम नथी

पिंडने माटे "असकल्पित" एवु जे विशेपण कह्यु, तेनो परमतें करीने असंभव देखाडता थका हवे कहे ठे

(अहींथी सघलु वादीनुं कहेवु ठे)

यो न संकल्पितः पूर्वं, देयबुद्ध्या कथं नुतम् ॥
ददाति कश्चिदेवं च, स विशुद्धो वृथोदितम् ॥२॥

अर्थ–जे पिंड पेहेलेथीज "मारे आ मुनिप्रते देवो ठे" एवी बुद्धिथी संकल्पित थएलो नथी, तेवा पिंडने कोइ पण दातार शी रीते आपी शके? (अर्थात् आपी शके नहीं) माटे तेवा "असंकल्पित" पिंडने जे शुद्ध कह्यो, ते वृथा कहेलुं ठे"

टीकानो भावार्थ– जे पिंड, दानना वखत पेहेला "मारे आ भिक्षुकप्रते आपवो ठे" एवी बुद्धिथी संकल्पाएलो नथी, तेवी जातना पिंडने शुं कोइ पण दातार दइ शके ठे? अर्थात् दइ शकतो नथी, केमके दानने माटे नहीं संकल्पित करेलो पिंड देवामा अशक्यपणु ठे, अने एवी रीते असंकल्पित पिंड देवानोज

ज्यारे असंभव थयो, त्यारे ते असंकल्पित पिंड शुद्ध छे, एम जे पेहेलां कह्युं ते व्यर्थ छे;

वली तेवा असंकल्पित पिंड माटे वीजुं दूषण कहे छे.

न चैवं सद्गृहस्थानां, भिक्षा ग्राह्या गृहेषु यत् ॥
स्वपरार्थं तु ते यत्नं, कुर्वते नान्यथा क्वचित् ॥३॥

अर्थ– वली एवीज रीते सद्गृहस्थोने (पैसादारोने) घेरथी (मुनिए) भिक्षा ग्रहण करवी नहीं; केमके, तेओ पोताने माटे तथा परने माटे (भिक्षुकादिकोने माटे) पण यत्न करे छे, वीजी कोइ रीते, कोइ पण वखते (यत्न) करता नथी.

टीकानो भावार्थ– केवल "असंकल्पित" पिंडना असंभव-थीज तेनो अंगीकार नहीं करवो तेटलुंज नहीं; पण पैसादारोने घेरेथी (मुनिए) भिक्षा पण लेवी घटे नहीं; एवो वाक्यार्थ छे; केमके, तेवा पैसादार गृहस्थो पोताने अने परने माटे पण रसोइ निपजावे छे; केमके ते जो फक्त पोताने माटे भोजन तैयार करावे, तो पोताना गृहस्थपणाने लांछन लागे. कह्युं छे के, देव, पितृ, अतिथि, तथा चाकर आदिकनुं पोषण कर्याबाद भोजन करवुं; एवो गृहस्थनो धर्म छे. अने मुनि पण अतिथिमां आवी जाय छे केमके, ते भोजन वखते भिक्षा माटे आवे छे.

हजु पण वादीज आचार्यना मतमां शंका करतो थको कहे छे.

संकल्पनं विशेषेण, यत्रासौ दुष्ट इत्यपि ॥
परिहारो न सम्यक् स्या, द्यावदर्थिकवादिनः ॥४॥

अर्थ–जेमां विशेषें करीने संकल्प होय, ते दुष्ट पिंड कहे-वाय, अने तेथी "यावदर्थिक पिंडना" वादिनो परिहार सारी रीते थइ शकतो नथी.

टीकानो भावार्थ–"मारे आ अमुक साधु प्रते देवुं छे" एवी रीतनो विशेषें करीने असाधारण प्रकारनो जेमां संकल्प होय, ते

पिंड दूषणवालो कहेवाय, पण बीजो दूषणवालो कहेवाय नहीं वली आ उपर कहेलो पण केवल असंकल्पित पिंडनो अभ्युपगम उत्तम नथी, एवो "अपि" शब्दनो अर्थ छे वली तेथी "यावदर्थिक" पिंडना परिहारना वादी एवा जे तमो, तेउनो तमोए (पोतेज) कहेला दूषणनो परिहार (त्याग) सारी रीते थइ शकतो नथी (यावदर्थिक पिंड एटले, अमुक परिमाणवाला जे भिक्षुउ, तेउ छे प्रयोजनरूप जे पिंड बनाववामा, तेवा पिंडने "यावदर्थिक पिंड" कहीए) कह्यु छे के, "अशन, पान, खादिम, अने स्वादिम, ए चार प्रकारमानुं जे कंइ दानने अर्थे निपजावेलु छे, एवुं जो कइ जाणवामा के, सांजलवामा आवे, तेवा जातपाणी आदिक सयमधारीने कल्पे नहीं, अने कदाच लेवाइ जाय, तो पण "आ मने कल्पे नहीं," एम जाणीने परठवी देवा" हजु पण पूर्वपक्षनो वादीज कहे छे

विपयो वास्य वक्तव्यः, पुण्यार्थप्रकृतस्य च ॥
असंजवाजिधानात्स्या, दातस्यानाप्ततान्यथा॥५॥

अर्थ-(वादी कहे छे के,) यावदर्थिक पिंडनो, तथा पुण्यमाटे करेला पिंडनो विषय कहेवो पडशे, अने जो एम नहीं कहो तो असंजवित वात कहेवाथी आप्तने अनाप्तता प्राप्त थशे

टीकानो जावार्थ–यावदर्थिक पिंडना परिहारने कहेवावाला, एवा तमोए, आगल कहेला पिंडना परिहारनु खोटापणु अंगीकार करवु पडशे, अने जो एम अंगीकार नहीं करो तो "यावदर्थिक पिंडनो" विषय कहेवो पडशे कोइ अमुक भिक्षुकने आश्रिने आ बनावेलो छे, माटे ते परिहरवालायक छे, एवी रीतना विषयांतरनी कल्पनाथीज ते परिहरवाने शक्य छे, पण बीजी रीते नथी, एवो जावार्थ छे वली केवल यावदर्थिकपिंडनो विषय कहेवो पडशे, एटलुंज नहीं, पण पुण्य अर्थे बनावेला पिंडनो पण विषय कहेवो पडशे, केम के पुण्यने माटे ते-

चार करेला एवा ते पिंडनो त्याग तमोए मानेलो छे; केम के, कह्युं छे के, "अशन, पान, खादिम, अने स्वादिम, पुण्यने अर्थे जो बनाव्या होय, अने तेवुं जो जाणवामां, के सांभलवामां आवे, तो ते त्याग करवा"

माटे एवी रीतनो परिहार पण असंभवित छे, माटे तेनो पण विषय कहेवो पडशे; एवो भावार्थ छे.

विषयांतर कहेवानी शी जरूर छे? एवी रीतना आचार्यना मतने आशंकीने कहे छे.

जो एम नहीं तो, यावदर्थिकपिंड, अने पुण्यने माटे करेला पिंडनो विषयविशेष नहीं ग्रहण करवामां, क्षीण थएला एवा राग, द्वेष, अने मोहनां दूषणपणांथी अप्रतिहत वचनपणाएं करीने एकांत हितकारी तेवा शास्त्र बनावनारने अनाप्तपणुं थशे, तथा अक्षीण दोषपणाएं करीने अहितपणुं पण थशे; तेम शा माटे? ते कहे छे के, असंभवित एवा यावदर्थिकपिंडना कहेवाथी; अने ते असंभव "स्वपरार्थं तु ये यत्नं, कुर्वते नान्यथा क्वचित्," एवी रीतना आगल कहेलां वाक्यथी देखाडेलोज छे.

एवी रीते वादीनो पूर्वपक्ष कह्यो.

हवे तेनो उत्तरपक्ष कहे छे.

विभिन्नं देयमाश्रित्य, स्वभोग्याद्यत्र वस्तुनि ॥
संकल्पनं क्रियाकाले, तद्दुष्टं विषयोऽनयोः ॥ ६ ॥

अर्थ–पोताना उपभोग शिवाय, जुदा भात आदिकने आश्रीने, जे वस्तुमां रसोइ वखते संकल्प कराय, ते दूषणवालुं छे, अने तेवी रीतनो संकल्प, यावदर्थिक पिंड, अने पुण्यार्थे बनावेला पिंडनो विषय छे.

टीकानो भावार्थ–पोताने माटे बनाववाना भात आदिकथी रसोइ वखते जुदुं जे बनावाय, एटले "आटलुं तो कुटुंबने माटे अने आटलुं भिक्षुकने माटे, तथा पुण्यने माटे," एवी रीतनो

संकल्प जे वस्तुमा कराय, ते पिंडने (दोषवालो) अशुद्ध पिंड जाणजो, अने एवी रीतनो जे संकल्प, ते यावदर्थिक पिंडनो अने पुण्यने माटे बनावेला पिंडनो विषयरूप छे

उपरना संकल्प शिवाय बीजा प्रकारनो संकल्प दोषवालो नथी, तेने माटे हवे कहे छे

स्वोचिते तु यदारम्भे, तथा संकल्पनं क्वचित् ॥
न दुष्टं शुभभावत्वात्, तच्छुद्धापरयोगवत् ॥ ७ ॥

अर्थ–पोताने उचित एवा आरंभमा तेवा प्रकारनो कदाच संकल्प कराय, तो पण ते शुद्ध एवी बीजी क्रियानी पेठे शुभभावपणुं होवाथी दुष्ट नथी

टीकानो भावार्थ–पोताना शरीर तथा कुटुंबादिकने योग्य एवी रसोइमा, पोताने योग्यथी जुदा प्रकारना पाकनी शून्यताये करीने जे संकल्प करवो, ते दुष्ट नथी, अर्थात् "मुनिर्जप्रते उचित दानें करीने हु मारा आत्माने पापरहित करीश," एवी रीतनो कोइक आरंभमा जे विचार, ते दुष्ट नथी, (पण साधुने अनुचित एवी रसोइमा तेनो विचार नहीं करवो) हवे एवी रीतनो संकल्प शामाटे दुष्ट नथी? ते कहे छे के, तेमा मननी शुद्धिमात्रपणुं होवाथी, केमके, तेवी रीतनो संकल्प साधुआदिक माटेज पृथ्वीकायादिक जीवनी हिंसाना निमित्तरूप नथी, पण तेमा तो देनारनो फक्त शुभभावज जणाय छे कोनी पेठे ते कहे छे के, शुद्ध एवा संकल्प शिवायना मुनिवंदनादिकनी पेठे कह्यु छे के, जेम मुनिप्रते नमन स्तवन आदिक क्रिया निर्दोष छे, तेम एवी रीतना संकल्पवालो पिंड पण दूषणनुं कारण नथी

हवे वादीए असंभवित एवा संकल्पितना कहेवाथी आप्तनी जे अनाप्तता कहेली छे, तेनुं खंडन करता थका कहे छे

दृष्टोऽसंकल्पितस्यापि, लाभ एवमसंभव.
नाक्त इत्याप्ततासिद्धि, र्यतिधर्मोऽतिदुष्कर. ॥८॥

अर्थ–असंकल्पित पिंडनी प्राप्ति पण देखाएली छे, तेथी, (आप्ते) तेनो असंभव कहेलो नथी; माटे आप्तने आप्तपणानी सिद्धि थाय छे; वली यतिधर्म अत्यंत दुष्कर छे.

टीकानो भावार्थ–केवल संकल्पितज आहार मले छे; एम नहीं, पण यतिआदिकने माटे असंकल्पित आहार पण मले छे; एवो "अपि" शब्दनो अर्थ छे; केमके, गृहस्थो कोइने देवानी इच्छा विना पण सूतकमां तथा वनआदिकमां, तथा भिक्षुउनो अभाव होते छते पण, तेम भिक्षाना अनवसरे एटले रात्रिआदिकमां पण रसोइ करे छे; अने एवी रीते कथंचित् दीए पण छे; अने तेवी रीतनुं लखाण शास्त्रमां देखाय छे; अने एवी रीते "यो न संकल्पितःपूर्वं" तथा "नचैवं सद्गृस्थानां" इत्यादिक शंकानुं निराकरण थयुं. कह्युं छे के, "धर्मशास्त्रमां कुशल बुद्धिवालो एवो कोइ पण श्रावक संकल्पित आदिक आहारथी साधुने विटंबना करे नहीं."

हवे एवी रीते "असंकल्पित" पिंडनी ज्यारे प्राप्ति सिद्ध थइ, त्यारे तेथी शुं? ते कहे छे के, तेथी एम सिद्ध थयुं के, आप्ते असंकल्पित पिंडनो असंभव कहेलो नथी; अने तेथी ते आप्तने आप्तपणानी सिद्धि थइ.

अहीं वादी शंका करे के, असंकल्पित पिंडनो जे संभव कह्यो, ते ठीक छे, पण तेवी रीतनी वृत्ति दुष्कर होवाथी तेना उपदेशकने तो अनाप्तपणुंज छे.

तेने माटे हवे तेने कहे छे के, मूलगुण तथा उत्तरगुणना समुदायरूप "यतिधर्म" अति दुष्कर छे; अने ते वात प्रसिद्धज छे; अने तेथी आप्तने अनाप्तपणुं आवी शकतुं नथी; केम के, मोक्षनो ते शिवाय बीजो कोइ उपाय नथी; शास्त्रमां पण तेमज कह्युं छे.

माटे हे कुतीर्थिउ! जो तमो पोताना यतिपणाए करीने "स-

र्वसंपत्करी " भिक्षाने मानता हो, तो " अकृतादिक " गुणोवाला पिंडने ग्रहण करो ? एवी रीतनो आ प्रकरणनो भावार्थ छे
एवी रीते छठ्ठा अष्टकनु विवरण सपूर्ण थयुं

सप्तमाष्टकं प्रारभ्यते

अकृतादिक गुणनी संपदावालो पिंड, शुद्ध, अने शुद्धि करनारो छे, एम कह्यु, हवे ते पिड प्रछन्न भोजन करवाथी शुद्धि करनारो छे, माटे यतिए प्रछन्न रीते भोजन करवु, एवो उपदेश देता थका कहे छे

सर्वारंभनिवृत्तस्य, मुमुक्षोर्भावितात्मन. ॥
पुण्यादिपरिहाराय, मतं प्रछन्नभोजनम् ॥ १ ॥

अर्थ-सघला आरंभथी निवृत्त थएला, तथा (स्वपरोपकारथी) वासित छे, आत्मा जेनो, एवा मुमुक्षु साधुने, पुण्यादिकना परिहारमाटे (त्याग माटे) गुप्त भोजन मानेलु छे

टीकानो भावार्थ–मोक्षनी इच्छा राखनार साधुए गुप्त भोजन करवुं, हवे ते साधु केवो ? ते कहे छे मन, वचन, अने कायाथी करवा, कराववा, अने अनुमोदवारूप जे आरंभो, अर्थात् पृथ्वीकायादिक जीवोनी जे हिंसा, ते थकी निवृत्त थएलो, एवो यति जो प्रगट रीतें भोजन करे, तो याचक आदिक तेनी पासे भोजन मागे, अने तेने आपवाथी तेनु पोषण थाय, अने तेथी ते यतिने आरंभमा प्रवृत्ति थवाथी, तेनी " सर्वारंभनिवृत्तिनो " नाश थाय, माटे तेणे गुप्त रीतेज भोजन करवु, अने एवो उपदेश देवा माटे "सर्वारंभनिवृत्तस्य" एवु पद कह्युं आयी करीने, सर्वारंभथी निवृत्त नहीं थएला यतिने जुदो पाड्यो, अने तेवो यति प्रगट भोजन करे, तो पण तेनी सर्वारंभनी निवृत्तिनो नाश थतो नथी, केमके, ते सर्वारंभनिवृत्तिज तेने नथी

हवे एवो यति ते कोण ? ते कहे छे के, कर्मरूपी बंधनथी जे

पोताना आत्माने मुकाववानी इच्छा करे छे, एवो दीक्षित यति; आथी करीने मोक्षनी इच्छा नहीं राखनार एवा यतिने जुदो पाड्यो; केमके, तेवा अमुमुक्षु यतिने पुण्यबंधन थाय छे. वली ते केवो? तोके, "भावितात्मा" केतां पोताना अने परना उपकारने करनारी एवी धर्मभावनायें करीने, अथवा जिननी आज्ञायें करीने वासित करेलुं छे, अंतःकरण जेणे एवो. आथी करीने साधुनी सामाचारीमां रही प्रगट भोजन करवाथी थता शासनना उपघातने, त्यागवो, एम कह्युं; केमके, शासननो ते उपघात, पोताना अने परना अनर्थना कारणरूप, शांतताने नहीं धारण करनारो, तथा जिनाज्ञाना भंगरूप छे. कह्युं छे के, "छकायजीवनी दया पालनारो साधु जो आहार, निहारादिक प्रगटपणे करे, तो ते दुर्लभबोधी थाय छे."

हवे तेवो यति शामाटे प्रगट भोजन न करे? ते कहे छे के, पुण्यादिकना परिहार माटे; अहीं "आदि" शब्दथी याचकनी अप्रीति आदिकना दोषरूपी पाप, तथा असंयतिना पोषणथी थतुं आरंभनुं प्रवर्तन, अने शासननो उपघात; एटलाने त्याग करवा माटे ते प्रगट रीते भोजन करे नहीं. अने एवी रीतनुं गुप्त भोजन (साधुउने माटे) विद्वानोए मानेलुं छे.

हवे ते प्रगट भोजन करवामां शी रीते पुण्यबंधन थाय छे? ते कहे छे.

भुंजानं वीक्ष्य दीनादिं, यांचते क्षुत्प्रपीडितः॥
तस्यानुकंपया दाने, पुण्यबंधः प्रकीर्तितः ॥ २ ॥

अर्थ– (साधुने) प्रगट भोजनकरतो जोइने, क्षुधाथी पीडित थएला दीनादिक (भोजनमाटे) याचना करे छे; अने (ते वखते) दयाथी तेने देवाथी ते साधुने पुण्यबंध कहेलो छे.

टीकानो भावार्थ– (प्रगट रीते भोजन करता) एवा मुमुक्षुने जोइने, गरीब, अनाथ, मागण विगेरे याचना करे छे; ते दीना-

दिक केवो? तोके, क्षुधाथी पीडित थएलो, (केमके, क्षुधाथी नही पीडाएलाने देवा माटे तेवी रीतनी दया थती नथी) एवा दीनादिकने करुणाथी ज्ञोजन आपवामा ते मुमुक्षुने पुण्यनो वध आगममा कहेलो छे कह्युं छे के, जीवदयाथी, क्षमाथी, दानथी, तथा गुरुज्ञक्तिथी (प्राणी) सातावेदनीय कर्म बाधे छे,अने तेथी विपरीतपणे वर्तवाथी असातावेदनीय बाधे छे

माटे मुमुक्षु शामाटे प्रगट रीते ज्ञोजन करे?

त्यारे अहीं वादी शंका करे के, ज्ञले पुण्यबंध थाय? तेम हानि शुं छे? तेनेमाटे हवे तेने कहे छे

ज्ञवहेतुत्वतश्चायं, नेष्यते मुक्तिवादिनाम् ॥
पुण्यापुण्यक्षयान्मुक्ति, रिति शास्त्रव्यवस्थितेः ३

अर्थ-ते पुण्यवध ज्ञवनो हेतु होवाथी, मोक्षवादीउने ते आश्रयरूप करवो कहेलो नथी केमके पुण्यना अने पापना (वन्नेना) क्षयथी मोक्ष थाय छे, एवी शास्त्रनी स्थिति छे

टीकानो ज्ञावार्थ– उपर कहेलो पुण्यनो वध, ससारनुं कारण होवाथी, सिद्धातोना प्ररूपनाराउए (मोक्षना अर्थिउने) आश्रय करवारूप कहेलो नथी हवे ते वात शी रीते जाणी? तो के, "शुज्ञाशुज्ञ कर्मना आत्यंतिक क्षयथी मोक्ष केता जीवनुं स्वाज्ञाविकरूप प्रगट थाय छे," एवी रीतनी आप्ते बनावेला शास्त्रनी स्थिति छे, अने ते स्थितिथी, पुण्यनो बंध ज्ञवना हेतु रूप छे, एम प्रगट रीते जणाय छे

याचना करता एवा दीनादिकने पण जो न आपे, तो पुण्यनो वध शानो थाय? एवी आशंका करीने हवे कहे छे

प्रायो नचानुकंपावां, स्तस्यादत्वा कदाचन ॥
तथाविधस्वज्ञावत्वा, छक्नोति सुखमासितुम्॥४॥

अर्थ-प्रायें करीने अनुकंपावालो माणस, ते दीनादिकने दान

दीधा विना कोइ पण वखते, सुखेथी बेसवाने शक्तिवान थतो नथी, कारण के, तेनो तेवो स्वज्ञाव छे.

टीकानो ज्ञावार्थ–जो (दीनादिकने) न आपे, तो तो पुण्यबंध नथी थतो, पण करुणायुक्त अंतःकरणवालो माणस प्रायें करीने, दीनादिकने दान दीधा विना सुखें रही शकतो नथी. शामाटे ते तेम रही शकतो नथी ? ते कहे छे के, याचना करता एवा दीनादिकने दान देवामां कारणज्रूत एवो तेनो स्वज्ञाव छे, तेथी. वली जे वस्तुनो जे कार्य करवानो स्वज्ञाव छे, ते कर्याविना ते रही शकती नथी. जेम मद्यपान नाचवा आदिक विकारने उत्पन्न करे छे, तेम दयालु माणस (दीनादिकने) दान दीधा विना रही शकतो नथी.

हवे पुण्यना बंधनी बीकथी दृढ चित्त राखीने, जो न आपे, तो तेने शी रीते पुण्यबंध थाय ? एवी आशंका करीने कहे छे; वली "पुण्यादिपरिहारार्थं" एमां जे आदि शब्दथी धारण करेला याचकनी अप्रीति आदिक दोषना प्रतिपादन माटे पण कहे छे.

अदानेऽपि च दीनादे, रप्रीतिर्जायते ध्रुवम् ॥
ततोऽपि शासनद्वेष, स्ततः कुगतिसंततिः॥ ५ ॥

अर्थ–दीनादिकने जो (ज्ञोजनादिक) न दीए, तो खरेखर तेनी अप्रीति थाय; अने तेथी पण तेने शासनपर द्वेष थाय; अने तेथी माठी गतिनी परंपरा बंधाय.

टीकानो ज्ञावार्थ–ज्ञात आदिकनुं दान देवाथी पुण्यबंध थाय छे; अने ते न देवाथी ते दीनादिकने अप्रीति केतां उद्वेग थाय छे; अने ते अप्रीतिथी आप्तना वचन प्रते तेने मत्सर आवे छे; अने तेथी ते दीनादिकने नरक, तिर्यंच आदिक कुगतिनी श्रेणि थाय छे.

हवे, मिथ्यात्वथी हणाएली छे, बुद्धि जेनी, एवा ते दीनादिकने, तेना पोताना दोषथी (कदाच) अप्रीति आदिक थाय,

तो पण तेमां क्लेश रहित मनवाळा एवा आपणने शुं? एवी आशका करीने कहे छे, अथवा "पुण्यादिपरिहारार्थं" एमा रहेला आदि शब्दथी धारण करेला पापबधने देखाडता थका कहे छे

निमित्तज्ञावतस्तस्य, सत्युपाये प्रमादत. ॥

शास्त्रार्थबाधनेनेह, पापबंध उदाहृत ॥ ६ ॥

अर्थ–तेना निमित्तज्ञावथी, छते उपाये पण प्रमादथी, अने शास्त्राना अर्थने बाधा करवाथी अहीं पापबंध कहेलो छे

टीकानो ज्ञावार्थ–शास्त्रना अर्थने बाधा आववाथी ते यतिने पापनो बध कहेलो छे हवे ते शास्त्रार्थनो बाधज शी रीते? ते कहे छे के, निमित्तज्ञावथी केता दीनादिकनी अप्रीतिथी तेने थता शासनना द्वेपथी अने कुगतिनी परपराना कारणपणाथी, शास्त्रार्थने बाधा आवे छे (अन्यनी अप्रीति आदिकनो जे त्याग, ते शास्त्रनो अर्थ छे,)

अहीं वादी शका करे के, एम कहेवाथी तो महामुनिर्उने पण पापना बधनो प्रसग आवशे, केम के, तेर्उ पण महा मिथ्यात्वीर्उनी अप्रीतिना कारणरूप थाय छे, तेने माटे कहे छे के, दीनादिकने थती अप्रीतिनी उत्पत्तिने दूर करवामा गुप्त ज्ञोजनरूप उपाय विद्यमान छे, अने महा मुनिर्उने, जो के, (कदाच) मिथ्यात्विर्उने थती अप्रीति दूर करवाना उपायनो अज्ञाव छे, तोपण तेने दूर करवाने तेर्उ प्रयत्नवाळा छे, अने एवी रीते तेर्उना परिणामनी शुद्धि होवाथी, तेर्उने पापबधनो अज्ञाव छे वळी अहीं वादी शका करे के, ज्ञोजन करता एवा साधुने हठथी जोवाथी दीनादिकने उपर कहेला अप्रीति आदिक दोषनो प्रसग आवशे तेने माटे हवे कहे छे के, "प्रमादत" केता आळसपणाथी ते दोषनो प्रसग आवे, पण अप्रमादी एवा यतिने अप्रीति आदिकनो (कदाच) हेतु आवे, तो पण (प्रमादरहित) हिंसकने नहीं थता पाप बंधनी पेठे, तेनाथी शास्त्रार्थने

बाधा न आवे. शास्त्रना अर्थने एटले आप्ते बनावेला आगमना अर्थने बाधा करवाये करीने, पापबंध थाय छे, केम के, शास्त्रना अर्थने जे बाधा पहोंचाडवी, ते महा अनर्थनुं कारण छे. कह्युं छे के,

य: शास्त्रविधिमुत्सृज्य, वर्तते कामचारत: ॥
न स सिद्धिमवाप्नोति, न सुखं न परां गतिम् ॥ १ ॥

अर्थ–जे माणस शास्त्रनी विधिने तजीने, पोतानी इच्छा प्रमाणे वर्ते छे, ते माणस मोक्ष, सुख के उत्कृष्टी गति पामतो नथी.

वळी शास्त्र तो परनी अप्रीतिना नाशनो प्रयत्न अंगीकार करवामांज तत्पर रहेलुं छे.

माटे एवा हेतुथी मुमुक्षुने प्रगट भोजन करवामां तत्वना जाणनाराउंए पापबंध केतां अशुभ कर्मनी उत्पत्ति कहेली छे.

अहीं वादी कहे के, भले शास्त्रार्थने बाधा थाय; तो तेने कहे छे के, तेम नहीं; तेने माटे हवे कहे छे.

शास्त्रार्थश्च प्रयत्नेन, यथाशक्ति मुमुक्षुणा ॥
अन्यव्यापारशून्येन, कर्तव्य: सर्वदैव हि ॥ ७ ॥

अर्थ–अन्य व्यापारने नहीं करता एवा मुमुक्षुए, पोतानी शक्तिमुजब प्रयत्ने करी हमेशां शास्त्रार्थ करवो.

टीकानो भावार्थ–दृष्ट अने इष्टथी आगमना अर्थनुं जे कहेवुं, तेने "आगमार्थ" कहीयें; एवो आगमार्थज करवो; ते केवी रीते करवो? तो के, प्रयत्नथी केहेतां आदरथी करवो; केम के अनादर करवाथी खेडुतोने जेम, तेम विवक्षित फळनी सिद्धि थती नथी.

अहीं वादी शंका करे के, संघयण आदिकथी हीन एवा मुमुक्षुने समग्र शास्त्रार्थ करवो मुश्केल छे; माटे आ उपदेश तो न बनी शके, एवी क्रियावालो छे. तेने माटे तेने कहे छे के, "यथाशक्ति" केतां पोताना शरीरनी शक्तिप्रमाणे शास्त्रार्थ करवो. कह्युं छे के, "वीर्यने नहीं गोपवतो थको चारित्रने विराधतो नथी;

माटे तप, संयम आदिकमा वीर्यने गोपववु नहीं, तेम उलंघवु पण नहीं " हवे ते शास्त्रार्थ कोणे करवो ? ते कहे छे के, मोक्षने इच्छता एवा माणसे करवो हवे ते माणस केवो ? तोके "अन्यव्यापारशून्य" केता शास्त्रार्थना करवा शिवायना लोकयात्रादिक कार्यथी रहीत एवो, केमके तेवा बीजा व्यापार करवाथी शास्त्रार्थने बाधा आवे छे, वली ते शास्त्रार्थ कइ अमुक वखतेज करवो, एम नहीं, पण हमेशा करवो, अने जेथी ते शास्त्रार्थ करवानो छे, तेथीज गुप्त भोजन पण तेणे करवु, एवो संबंध जाणी लेवो.

हवे आ प्रकरणने उपसंहरता थका कहे छे

एवं ह्युभयथाप्येतत्, दुष्टं प्रकटभोजनम् ॥
यस्मान्निदर्शितं शास्त्रे, ततस्त्यागोऽस्य युक्तिमान् ८

अर्थ- एवी रीते बन्ने प्रकारथी प्रगट भोजन करवुं, ते (मुनिने माटे) शास्त्रमा दुष्ट कहेलुं छे, माटे तेवा भोजननो (मुनिए) त्याग करवो, तेज युक्तिमान छे

टीकानो भावार्थ–एवी रीते उपर कहेला प्रकारथी, अर्थात् दीनादिकने दान देवाथी अने न देवाथी पण (साधुने माटे) प्रगट भोजन दुष्ट छे, अने वली तेवी रीतना प्रगट भोजनने आगममा निषेध्यु छे, माटे (साधुउए) तेनो त्याग करवो ते युक्तज छे माटे हे कुतीर्थिउ, ज्यारे तमो मोक्षनी इच्छा राखो छो, त्यारे तमारे पण गुप्तनी भोजन करवुं युक्त छे, एवो भावार्थ छे

एवी रीते सातमा अष्टकनु विवरण संपूर्ण थयु

अष्टमाष्टकं प्रारभ्यते

अणगार पण व्रतविना रहेवु नही, तेथी भोजननुं वर्णन कर्याबाद हवे पच्चखाणनुं निरूपण करता थका कहे छे

द्रव्यतो भावतश्चैव, प्रत्याख्यानं द्विधा मतम् ॥
अपेक्षादिकृत ह्याद्य, मतोऽन्यच्चरमं मतम् ॥ १ ॥

अर्थ–एक द्रव्यथी, अने बीजुं जावथी, एम बे प्रकारनुं पच्चखाण मानेलुं छे; अपेक्षादिकथी करेलुं, ते पेहेलुं अने तेथी उलटा प्रकारनुं ते बीजुं प्रत्याख्यान जाणवुं.

टीकानो जावार्थ–जो के, "द्रव्य" शब्द प्रत्याख्यान करवा लायक एवा सचित्त जोजन आदिकमां, अथवा प्रत्याख्यानना सूत्रना उच्चारना हेतुरूप एवा तालु, कंठ आदिकमां पण वपराय छे, तो पण अहीं ते "द्रव्य" शब्दने "अप्रधान" अर्थवालो जाणवो; केमके, ते शब्दनो तेज अर्थमां शास्त्रोने विषे घणो प्रयोग आवे छे. माटे एवी रीते अप्रधानजावने आश्रीने जे पच्चखाण कराय; ते "द्रव्यपच्चखाण" कहेवाय. (ते द्रव्यपच्चखाण, विवक्षित पच्चखाणना फलने साधनारुं नहीं होवाथी, तेने अप्रधानपणुं कह्युं.) तेथी द्रव्यथी एटले जावप्रत्याख्याननी योग्यताने आश्रीने, अथवा द्रव्यथी एटले विवक्षित उपयोगनी शून्यताने आश्रीने, अथवा द्रव्यथी एटले आहार अने वस्त्रादिक द्रव्यने आश्रीने जे पच्चखाण करवुं, ते "द्रव्य पच्चखाण" कहेवाय. वली "जाव" शब्द जोके प्रत्याख्यान करवा लायक एवा क्रोधादिक जावोमां पण अहीं जोडाइ शके तेम छे, तो पण उपयोगना अर्थवालो जाणवो; केमके, आगममां तेमज कहेलुं छे; अने तेथी "जावथी" एटले विवक्षित एवा उपयोगने आश्रीने, अथवा जावथी एटले परमार्थथी अर्थात विवक्षित फलना साधनजूत एवा जावथी, जे पच्चखाण करवुं, ते "जावपच्चखाण" कहेवाय. एवी रीते बे प्रकारनुं पच्चखाण जाणवुं; अने प्रकारांतरथी तो, नाम, स्थापना, आदिकथी छ प्रकारनुं छे. प्रवृत्तिना प्रतिकुलपणायें करीने मर्यादावडे जे कथन करवुं, तेने "प्रत्याख्यान" कहीयें; एवी रीते द्रव्यथी, तथा जावथी, अथवा विधि तथा प्रतिषेधथी, एम बे प्रकारनुं प्रत्याख्यान तेनां जाणनाराउंये मानेलुं छे. हवे ते बन्ने प्रत्याख्यानोनुं स्वरूप कहे छे के, अपेक्षादिक अविद्याउंथी जे

प्रत्याख्यान कराएलु होय तेने पेहेलु एटले "द्रव्यपच्चखाण" जाणवुं, अने ते अपेक्षादिक विना जे पच्चखाण करेलुं होय, तेने बीजुं एटले "भावपच्चखाण" जाणवुं

हवे ते बन्नेमाथी पहेला पच्चखाणनुं स्वरूप कहे छे

अपेक्षा या विधिश्चैवा, परिणामस्तथैव च ॥
प्रत्याख्यानस्य विघ्नास्तु, वीर्याभावस्तथापरः॥२॥

अर्थ– अपेक्षा, अविधि, तथा अपरिणाम, अने वली वीर्यनो अभाव, ए चारे (भाव) प्रत्याख्यानना विघ्नरूपज छे

टीकानो भावार्थ– "अपेक्षा" एटले आ लोक अने परलोकसंबधी अर्थनी इच्छा, अने "अविधि" एटले विधिथी उलटी रीते करवुं ते, ("विधि" एटले पोते जाणनार थयो छतो पण गीतार्थ पासेथी उचित काले वखतो वखत विनयपूर्वक, समतासहित ग्रहण करवा लायक वस्तुने ग्रहण करे ते) तथा तेवीज रीते "अपरिणाम" एटले प्रत्याख्याननी प्रतिपत्तिमा पोतानी श्रद्धारूप परिणामनो अभाव, ते द्रव्यप्रत्याख्यानना हेतुभूत एवा अपेक्षादिक त्रणे, भावप्रत्याख्यानना विघ्नरूपज छे, तथा "वीर्य" एटले वीर्यातरायना क्षयोपशमादिकथी उत्पन्न थएलो जे जीवनो परिणाम, तेनो अभाव, एटले "वीर्याभाव" ते पण अपेक्षादिकनी पेठे चोथो भाव प्रत्याख्यानना विघ्नरूप छे. आ "वीर्याभाव" छे ते, परिणाम छता पण, प्रत्याख्यानने नहीं पालवानो हेतुरूप होवाथी विघ्नभूत छे

अपेक्षाथी करेलु पच्चखाण निष्फलपणाये करीने अप्रधान होवाथी, ते "द्रव्यपच्चखाण" छे, एवी रीतना अर्थने प्रतिपादन करवा माटे अपेक्षाने निंदता थका हवे कहे छे

लब्ध्याद्यपेक्षयाह्येत, दभव्यानामपि क्वचित् ॥
श्रूयते न च तत्किंचि, दित्यपेक्षात्र निंदिता॥३॥

अर्थ- (भोजन आदिकना) लाभनी अपेक्षाथी ते द्रव्य-पच्चखाण तो कोइक वखते अभव्योने पण होय छे, एवुं (आगममां) संभलाय छे; माटे ते पच्चखाण कंइ कामनुं नथी; अने तेथी अपेक्षाने अहीं निंदेली छे.

टीकानो भावार्थ-"लब्धि" एटले भोजन, यश, पूजा आदिकना लाभनी अपेक्षाथी ते द्रव्यपच्चखाण तो सिद्धिमां जवाने अयोग्य, अर्थात् अभव्यने पण होय छे; (एटले भव्यने तेवुं पच्चखाण तो एक बाजु रह्युं; पण अभव्यने पण ते द्रव्यपच्चखाण तो होय.) एवुं द्रव्यपच्चखाण "क्वचित्" एटले यथाप्रवृत्तिकरणे करीने, ग्रंथिप्रदेशसुधि आवेला एवा अभव्योने होय छे; एम आगममां कहेलुं संभलाय छे.

गौतमस्वामीए भगवानने पूछ्युं के हे भगवन्! असंयत भविक द्रव्य देवो जो देवलोकमां जाय, तो कया देवलोकमां जाय? त्यारे भगवाने कह्युं के; हे गौतम! जघन्यथी भुवनपतिमां तथा उत्कृष्टथी उपरिम ग्रैवेयकमां जाय. (गाथाना आ अर्थमां असंयत भविक द्रव्य देवो, के जेउ अभव्य थया थका देवपणाथी उत्पन्न थनारा छे, तेउनुं वर्णन कर्युं छे.) वली गौतमस्वामिए भगवानने पूछ्युं के, हे भगवन्, एवो एक मनुष्य ग्रैवेयक देवतापणे केटली द्रव्यइन्द्रिउ करे ? अर्थात् केटलां शरीर करे ? त्यारे भगवाने कह्युं के हे गौतम! ते अनंती द्रव्येंद्रिउ करे ? अर्थात् अनंतीवार त्यां उत्पन्न थाय. हवे एवी रीते अभवि मनुष्य ग्रैवेयकमां साधुना लिंगथीज जइ शके छे, अने ते साधुलिंगमां पच्चखाण तो होय छेज; (माटे एवी रीते ते द्रव्यपच्चखाण तो अभविने पण होय छे.) हवे तेवी रीतनुं अपेक्षा आदिकथी करेलुं द्रव्यपच्चखाण कंइ पण हिसाबमां नथी; केमके मुमुक्षुने तेथी मोक्षरूप स्वफल मली शकतुं नथी; कारण के जे वस्तु पोताना फलने साधे छे, तेनेज वस्तुपणुं प्राप्त थाय छे, पण वंध्यापुत्रनी पेठे जे वस्तु पोताना

फलने साधती नथी, तेने वस्तुपणु घटी शके नहीं, अर्थात् प्रत्याख्याननु फल तो मोक्ष छे, अने ते अपेक्षावालु द्रव्यप्रत्याख्यान तो ते फल आपतु नथी, माटे तेने प्रत्याख्यानपणु पण घटी शकतुं नथी अने एवी रीते अपेक्षाथी करेलु पच्चखाण ज्यारे निष्फल छे, तेथी भावपच्चखाणने विघ्न करनारी एवी ते अपेक्षाने जिनशासनने विषे निंदनिक कहेली छे

हवे अविधिनुं भावप्रत्याख्यानप्रते विघ्नपणुं कहे छे

यथैवाविधिना लोके, न विद्याग्रहणादि यत् ॥
विपर्ययफलत्वेन, तथेदमपि भाव्यताम् ॥ ४ ॥

अर्थ–जेम अविधिएं करीने लोकमा विद्याग्रहणादिक नथी थतुं, तेम उलटा फलवडें करीने, अविधिथी करेलुं पच्चखाण पण जाणवुं

टीकानो भावार्थ–जेम अविधिए करीने लोकमा विद्या, तथा मंत्र आदिकनुं ग्रहण थइ शकतुज नथी, पण उलटुं तेथी मृत्यु आदिक थाय छे, तेम वांछित फलना विपर्यासपणाएं करीने, अर्थात् अविधिएं करेलु एवु प्रत्याख्यान पण अप्रत्याख्यानज छे, एम जाणवु

हवे परिणामरहित प्रत्याख्याननु द्रव्यप्रत्याख्यानपणु कहे छे

अक्षयोपशमात्त्याग, परिणामे तथा सति ॥
जिनाज्ञाभक्तिसंवेग, वैकल्यादेतदप्यसत् ॥५॥

अर्थ–क्षयोपशमविना त्याग परिणाम होते छते, तथा विधिपूर्वक त्यागपरिणाम न होते छते, अने जिनवचननी भक्ति, अने संवेगना अभावथी, ते अपरिणामी पच्चखाण पण असोभनिक छे

टीकानो भावार्थ–" क्षय " एटले विरतिने रोकनारा उदीर्ण कर्मोनो नाश, अने तेनी साथे जे उपशम, केता उदीर्ण नहीं एवा

ते कर्मने विपाकोदयनी अपेक्षाथी, जे अटकावी राखवुं ते; अने ते बन्ने क्षयोपशम कहेवाय; तेवा क्षयोपशमविना त्याग परिणाम होते छते, एटले देशविरति, सर्वविरति अने नोकारसी आदिकनुं पच्चखाण होते छते पण ते असत् छे. (आथी करीने देशविरति तथा सर्वविरति पच्चखाणने, तेना हेतुरूप एवा गृहस्थी अने साधुने, नवकारसी सहितादिक उत्तरगुणप्रत्याख्याननुं द्रव्यपणुं कह्युं.) अथवा विधिपूर्वक क्षयोपशम होते छते त्यागपरिणाम थाय छे, पण तेवी रीतनो त्यागपरिणाम न होते छते, (आथी करीने अविरति सम्यग्दृष्टिवाला वासुदेवादिकोना, तथा अभव्यादिकना पच्चखाणने द्रव्यपणुं कह्युं) आ अपरिणामी पच्चखाण पण उत्तम नथी.

अहीं वादी शंका करे के, प्रत्याख्यान करवालायक एवी वस्तुमां अभव्यादिकोने थोडो पण त्यागपरिणाम तो होय छे, तो तेने द्रव्यप्रत्याख्यानपणुं केम कहेवाय? तेने माटे तेने कहे छे के, तेउने जिनाज्ञानी भक्तिनुं, अने मोक्षना अभिलाषनुं विकलपणुं होवाथी, अथवा जिनाज्ञानी भक्तिथी थता संवेगनुं विकलपणुं (रहितपणुं) होवाथी, अपरिणामपणाए करीने तेउना पच्चखाणने द्रव्यपणुं छे. माटे एवी रीतनुं अपरिणामी पच्चखाण पण अशोभनीक छे.

हवे वीर्यना अभावने द्रव्यप्रत्याख्याननुं हेतुपणुं कहे छे.

उदग्रवीर्यविरहात्, क्लिष्टकर्मोदयेन यत्॥
बाध्यते तदपि द्रव्य–प्रत्याख्यानं प्रकीर्तितम्॥६॥

अर्थ–उत्कृष्ट वीर्यना अभावथी, तथा क्लिष्ट कर्मोना उदयथी जेने बाधा आवे छे, ते प्रत्याख्यानने पण "द्रव्यप्रत्याख्यान" कहेलुं छे.

टीकानो भावार्थ–उत्कट एवुं जे "वीर्य" केतां वीर्यांतरायना क्षयोपशमथी उत्पन्न थएलो जे आत्मानो परिणाम, तेना विरहथी,

अने अत्यत तीव्र एवा वीर्यांतरायादि कर्मना विपाकथी, अंगीकार करेला एवा पण जे प्रत्याख्यानने बाधा आवे छे, ते प्रत्याख्यानने पण "द्रव्यप्रत्याख्यान" कहेलु छे (केम के, वीर्यना उल्लासथी जीव, क्लिष्ट कर्मोने शमावे छे, अने तेना अभावथी तेने कर्मोनो उदय थाय छे) अथवा क्लिष्टकर्मना उदयथी थतो जे वीर्यनो अभाव, तेथी जीवें करीने जे प्रत्याख्यानने बाधा कराय छे, तेने "द्रव्यप्रत्याख्यान" कहेलुं छे, एवो पण अर्थ थाय एवी रीतना वीर्याभावना प्रत्याख्यानने पण तत्वना जाणनाराउंए "द्रव्यप्रत्याख्यान" कहेलुं छे

वली केटलाक आचार्योए, कालांतरे "भावप्रत्याख्याननुं" ते कारण होवाथी, तेने " द्रव्यप्रत्याख्यान " कहेलु छे, केमके, एक वखते थएलो भाव, भावांतरने उत्पन्न करे छे कह्युं छे के,

" सइ सजाउं भावो, पाय भावांतर जउ कुणइ "

अर्थ– एकवार उत्पन्न थएलो भाव, प्रायें करीने भावांतरने (एवीज रीतना बीजा भावने) उत्पन्न करे छे

अहीं " द्रव्य " शब्दने योग्यतावाची जाणवो

एवी रीते द्रव्यपच्चखाणनु स्वरूप कह्यु, हवे भावपच्चखाणनु स्वरूप कहे छे

एतद्विपर्ययाद्भाव, प्रत्याख्यानं जिनोदितम् ॥
सम्यक्चारित्ररूपत्वान्, नियमान्मुक्तिसाधनम्॥७॥

अर्थ– (उपर कहेला द्रव्यपच्चखाणथी) उलटी रीते जिनेश्वरे "भावपच्चखाण" कहेलु छे, अने ते सम्यक् चारित्ररूप होवाथी, निश्चयें करीने मोक्षने साधनारु छे

टीकानो भावार्थ–अपेक्षादिकथी करेला पच्चखाण शिवाय, एटले अनपेक्षादिकथी करेलु जे पच्चखाण ते "भावपच्चखाण" कहेवाय, अने ते "भावपच्चखाण" जिनेश्वर प्रभुए कहेलु छे, केमके,

जे जेने विपर्ययभूत छे, तेना अभावे ते अवश्य थाय छे, केमके, ज्यारे छायानो अभाव होय त्यारे तडको होय; माटे द्रव्यप्रत्याख्यानथी उलटुं, ते "भावप्रत्याख्यान" छे; वली द्रव्यप्रत्याख्यान होते छते, भावप्रत्याख्यान अवश्य थाय छे; हवे ते भावप्रत्याख्याननुं शुं फल मले छे? ते कहे छे के, ते भावप्रत्याख्यान अवश्यें करीने साक्षात अथवा परंपराथी मोक्षने आपनारुं छे. शा माटे? ते कहे छे के, ध्यानादिकनी पेठे ते भावपच्चखाणनो शोभनचरणस्वभाव होवाथी, ते मोक्षने आपनारुं छे.

अहीं वादी शंका करे के, त्यारे द्रव्यपच्चखाण तो शुं अनर्थकज छे? तो तेने कहे छे के, एम नहीं. तेने माटे हवे कहे छे.

जिनोक्तमितिसद्भक्त्या, ग्रहणे द्रव्यतोऽप्यदः ॥
बाध्यमानं भवेद्भाव, प्रत्याख्यानस्य कारणम् ॥८॥

अर्थ– जिनेश्वरे कहेलुं छे, माटे, ते "द्रव्यपच्चखाण" पण उत्तम भक्तिथी ग्रहण करवाथी, बाध्यमान एवुं पण ते भावपच्चखाणनुं कारण छे.

टीकानो भावार्थ– अपेक्षादिकना योगथी ग्रहण करेलुं एवुं द्रव्यपच्चखाण पण भावपच्चखाणनुं कारण छे; हवे ते द्रव्यपच्चखाण केवुं छे? ते कहे छे, " जिनोक्तं " केतां आप्ते कहेलुं छे, माटे एवी जे उत्तम भक्ति, तेणे करीने ते ग्रहण करवुं; वली जो के ते द्रव्यपच्चखाण बाध्यमान छे, तोपण ते भावपच्चखाणनुं कारण छे; सद्भक्ति द्रव्यपच्चखाणना हेतुभूत एवा अपेक्षादिकोनी विरुद्ध छे, माटे ते अपेक्षादिक दूर थवाथी भावपच्चखाणवालो थाय छे.

एवी रीते आठमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

नवमाष्टकं प्रारभ्यते

हवे ते भावपच्चखाण ज्ञानविशेष होते छते थाय छे, माटे हवे ते ज्ञानविशेषने देखाडता थका कहे छे

विषयप्रतिभासं चा, त्मपरिणतिमत्तथा ॥
तत्वसंवेदनं चैव, ज्ञानमाहुर्महर्षयः ॥ १ ॥

अर्थ– महान ऋषिओए, विषयप्रतिभास, आत्मपरिणतिमत् तथा तत्वसंवेदन, एवी रीते त्रण प्रकारना ज्ञानो कहेला छे

टीकानो भावार्थ–विषय एटले कर्ण आदिक इंद्रिओना ज्ञानने गोचर एवा शब्दादिक, तेने जणावनारु जे ज्ञान, तेने "विषयप्रतिभास" नामनुं ज्ञान जाणवुं (पण तेओनी प्रवृत्तिमा तेथी उत्पन्न थतो जे आत्मानो अर्थ अनर्थनो सद्भाव, तेने जणावनारुं नही) अर्थात् आलोकसंबधी अने परलोकसंबंधी छद्मस्थज्ञानना विषयरूप एवा अर्थोमा, प्रवृत्तिने विषे, आत्माना तात्विक अर्थ अने अनर्थना प्रतिभासनथी जे शून्य, तेने "विषयप्रतिभास" ज्ञान जाणवुं, अने ते ज्ञान मिथ्यादृष्टिओने होय छे तथा आत्मानो क्रियाविशेषथी थइ शके, एवो जे परिणाम, ते जेमा जणाय छे, तेने "आत्मपरिणतिमत्" ज्ञान कहीयें, (पण तेने अनुरूप एवी प्रवृत्ति निवृत्ति तेमा न होय.) अने ते ज्ञान अविरति एवा सम्यग् दृष्टिओने होय छे तथा जेथी परमार्थ जणाय, अर्थात् हेय अने उपादेय पदार्थोथी निवृत्ति अने प्रवृत्ति संपादन करनारुं, तेने "तत्त्वसंवेदन" ज्ञान कहीयें अने ते ज्ञान शुद्ध चारित्रिओने होय, एवी रीतना त्रणे ज्ञानो महामुनिओए कहेला हे, अने ते त्रणे मत्यादिविशेषज छे

हवे पेहेला ज्ञाननु स्वरूप कहे छे

विषकंटकरत्नादौ, बालादिप्रतिभासवत् ॥
विषयप्रतिभासं स्यात्, तद्धेयत्वाद्यवेदकम् ॥ २ ॥

अर्थ– झेर, कांटा, अने रत्नादिकोने विषे वालकादिकनां जाणपणानी पेठे, हेयत्व आदिकने निश्चय नहीं करावनारुं "विषयप्रतिभास" ज्ञान होय.

टीकानो भावार्थ–"विष" एटले वछनाग आदिक, तथा "कंटक" एटले बावल आदिकना अवयवो, (कांटाउं) तथा "रत्न" एटले मरकत मणि आदिक, बीजी वस्तुउं तेने विषे वाल तथा अतिमुग्धोनुं जे ज्ञान, तेना सरखुं "विषयप्रतिभास" ज्ञान होय; हवे ते "विषयप्रतिभास" ज्ञान, वाल आदिकना ज्ञान सरखुं केम छे? ते कहे छे के, ते ज्ञान, ज्ञेयविषयोनुं तजवापणुं, ग्रहण करवापणुं, तथा उपेक्षवापणुं, जणावी शकतुं नथी; अर्थात् वाल आदिकनुं ज्ञान, जेम विष आदिक विषयना रूपआदिकनेज जाणे छे, पण तेना हेयत्व आदिक धर्मने जाणतुं नथी, तेम जे ज्ञान, ग्रंथीभेद जेउंने नथी थएलो, एवा बहुश्रुतोने पण, (तेउंना) मोहथी मलीन थएला मनपणायें करीने, अतत्वोनी हेयतानो, तथा तत्वोनी उपादेयतानो विचार कराववामां असमर्थ होय, अर्थात् तत्व अने अतत्वने तुल्य जणावनारुं, अथवा उलटी रीते जणावनारुं ते "विषयप्रतिभास" ज्ञान कहेवाय. कह्युं छे के,

> **विसयपडिभासमित्तं, वालस्सेवखुरयणविसयंमि ॥**
> **वयणाइएसु नाणं, सव्वधाणाणमोणेयं ॥ १ ॥**

हवे तेज ज्ञानने तेना चिन्ह आदिकथी देखाडता थका कहे छे.

> **निरपेक्षप्रवृत्त्यादि, लिंगमेतदुदाहृतम् ॥**
> **अज्ञानावरणापायं, महापायनिबंधनम् ॥ २ ॥**

अर्थ–(पाप संबंधी) शंकाविनानी प्रवृत्ति आदिक छे, चिन्ह जेनुं, तथा अज्ञानना आवरणने नाश करनारुं, अने महाअपायना कारणरूप, ते "विषयप्रतिभास" ज्ञान कहेलुं छे.

टीकानो भावार्थ–आ लोक अने परलोकसंबंधी अपायोनी

(छुष्ट कार्योनी) जे शका, ते जेमाथी गएली छे, एवु जे प्रवर्तनादिक, ते छे चिन्ह जेनु, तेने आशोए "विषयप्रतिभास" ज्ञान कहेलु छे ते ज्ञान केवु छे ? तो के, "अज्ञान" केता मिथ्यात्वना उदयथी दूषित एवा जे मति, श्रुत अने अवधि ज्ञान (विभंगज्ञान) तेना आवरणनो छे, क्षयोपशम जेमा एवु छे, (मिथ्याद्दष्टिनु जे मति, श्रुत, अने अवधिज्ञान (विभंगज्ञान) ते अज्ञानज छे.) कह्यु छे के,

अविसेसियामइ चिय, समदिट्ठिस्ससामइनाणं ॥
मइअन्नाणं मित्था, दिठिस्स सुयपिएव ॥ १ ॥

अर्थ–सूत्रमा पण एमज कह्यु छे के, सम्यग् द्दष्टिनी जे बुद्धि, ते " मतिज्ञान " छे, अने मिथ्याद्दष्टिनी जे बुद्धि, ते "मतिअज्ञान" छे. पण मतिमां कइ फेरफार नथी

हवे ते "विषयप्रतिभास" ज्ञान शुं फल आपे छे ? ते कहे छे के, ते पोताने अने परने आ लोक अने परलोकसंबंधी महाअपायोनु केता महा कष्टोनु कारणरुप थाय छे, केम के, तत्वथी ते अज्ञानज छे, अने अज्ञान छे ते, महाअपायनु कारण छे कह्युं छे के,

अज्ञान खलु कष्ट, क्रोधादिभ्योऽपि सर्वापायेभ्यः ॥
अर्थहितमहितंवा, नवेत्तियेनावृतो लोकः ॥ १ ॥

अर्थ–अज्ञान छे ते, खरेखर क्रोधादिक सर्व अपायोथी पण कष्टकारी छे, केम के, ते अज्ञानथी विटाएलो माणस हित अथवा अहित कार्यने जाणी शक्तो नथी

हवे बीजा " आत्मपरिणतिमत् " ज्ञाननु स्वरुप देखाडवा माटे कहे छे

पातादिपरतंत्रस्य, तद्दोषादावसंशयम् ॥
अनर्थाद्याप्तियुक्तं चा, त्मपरिणतिमन्मतम् ॥४॥

अर्थ–पतन आदिकनी परतत्र थएला प्राणीने, तेना दोषा-

दिकने विषे संशय विनानुं, तथा अनर्थ आदिकनी प्राप्तिवालुं; " आत्मपरिणतिमत् " ज्ञान मानेलुं छे.

टीकानो भावार्थ–"पातादिपरतंत्रस्य" केतां नीची अने उंची गति माटे, परतंत्र थएला एटले विषय, अने कषायादिकें वश करेला प्राणीने, ते कषाय आदिकथी थता कर्मबंध अने दुर्गति आदिक दोषमां, अने (आदिशब्दथी) अभ्युदय आदिक गुणमां, जे संशयरहितपणानुं ज्ञान थाय छे, तथा जे, कर्मबंधन अने दुर्गतिगमन रूपी अनर्थ, अने परंपराथी मलता मोक्षरूपी गुणनी प्राप्तिवालुं छे, तेने तत्वना जाणनाराउए "आत्मपरिणतिमत्" ज्ञान मानेलुं छे. अहीं दृष्टांत नीचेप्रमाणे जाणवुं.

अवली चालना घोडापर बेसवाथी परतंत्र थएला स्वारने, अंगभंग, तथा मरणादिक दोषमां, तथा रुना समूहना कोमल स्पर्शादिक गुणमां संशयरहितपणुं थाय छे; तथा ते अंगभंगादिक अनर्थ, अने सुखस्पर्शादिक गुणनी प्राप्तिवालुं छे; एम ते मानेछे.

हवे तेज आत्मपरिणतिमत् ज्ञाननुं लिंगादिकथी निरूपण करता थका कहे छे.

तथाविधप्रवृत्त्यादि, व्यंग्यं सदनुबंधि च ॥
ज्ञानावरणह्रासोत्थं, प्रायो वैराग्यकारणम् ॥५॥

अर्थ– तेवा प्रकारनी प्रवृत्ति आदिकथी प्रगट थनारुं, तथा शुभ अनुबंधवालुं, तथा ज्ञानावरणादिकना नाशथी उत्पन्न थएलुं, अने प्रायें करीने वैराग्यना कारण रूप, ते " आत्मपरिणतिमत्" ज्ञान जाणवुं.

टीकानो भावार्थ– तेवा प्रकारनी अहिंसादिकने विषे जे प्रवृत्ति आदिक, ते थकी प्रगट थवारूप छे, चिन्ह जेनुं, तथा परंपराथी मोक्षफलने देवारूप छे सदनुबंध जेनो, एवुं ते आत्मपरिणतिमत् ज्ञान छे; हवे ते ज्ञान शुं हेतुवालुं छे? ते कहे छे के, मति आदिक ज्ञाननुं जे आवरण, तेना क्षयोपशमथी उत्पन्न थ-

एवुं ते ज्ञान छे, वळी ते ज्ञान सदनुबंधी शी रीते छे? ते कहे छे के, ते ज्ञान प्रायें करीने वैराग्य केता उत्तम भावनानुं निमित्त छे कहुं छे के,

बालधूलिगृहक्रीडा, तुल्यास्यांभाति धीमताम् ॥
तमोग्रंथिविभेदेन, भवचेष्टाखिलैव हि ॥ १ ॥

अर्थ– अज्ञानरूपी ग्रंथीना भेदथी बुद्धिमानोने आ जवनी सघली चेष्टा, वैराग्य भावना होते छते, बालके करेला धूळीना घरनी रमत सरखी (विनश्वर) लागे छे

अहीं प्रायें करीने वैराग्यनुं जे कारण कह्युं, तेनी मतलब ए के, राज्यादिक मेळववामा तत्पर थएला एवा भरतादिकनी पेठे, कषायनो उदय विशेष होते छते ते ज्ञान वैराग्यनु कारण न पण थाय, ते जणाववा माटे कह्युं

हवे त्रीजु जे "तत्वसंवेदन" ज्ञान तेना प्रतिपादन माटे कहे छे.

स्वस्थवृत्ते प्रशांतस्य, तद्धेयत्वादिनिश्चयम् ॥
तत्वसंवेदनं सम्यक्, यथाशक्तिफलप्रदम् ॥ ६ ॥

अर्थ– स्वस्थ वृत्तिवाळा, तथा शांत एवा पुरुषने, वस्तुना हेयपणा आदिकमा निश्चयवाळु " तत्वसंवेदन " ज्ञान थाय छे अने ते सारी रीते यथाशक्ति फळने देनारु छे

टीकानो भावार्थ– आकुळता रहित छे, वचन अने, कायाना व्यापारनु वर्तवापणुं जेनुं, तथा रागद्वेष आदिना उपशमवाळा, एवा माणसने " तत्वसंवेदन " ज्ञान थाय छे हवे ते ज्ञान केवु? तो के, ज्ञेय वस्तुतत्वना हेयपणा, उपादेयपणा, अने उपेक्षणीयपणानो जे निश्चय जेमा एवु ते छे; एवु ते " तत्वसंवेदन " ज्ञान सम्यक् प्रकारे, पुरुषने, उद्यम आदिकना सामर्थ्यने अनुसारे, विरतिरूपी अनंतरफळ, तथा परंपरायें मोक्षफळने देनार छे

हवे ते ज्ञानना लिंगादिकने प्रतिपादन करता थका कहे छे.

न्याय्यादौ शुद्धवृत्त्यादि, गम्यमेतत्प्रकीर्तितम् ॥

सद्ज्ञानावरणापायं, महोदयनिबंधनम् ॥ ७ ॥

अर्थ–मोक्षमार्ग आदिकने विषे शुद्ध प्रवृत्तिआदिथी जे अनुमान कराय छे, तेने तत्वसंवेदन ज्ञान कहेलुं छे, तथा ते उत्तम ज्ञानना आवरणनो क्षयोपशम करनारुं, अने मोक्षना कारणरूप छे.

टीकानो भावार्थ– नीतिसहित एवो सम्यग् ज्ञान, दर्शन अने चारित्ररूप जे मोक्षमार्गादिक तेने विषे अतिचाररहित प्रवृत्ति आदिकें करीने, जे ज्ञान अनुमित थाय छे, तेने ज्ञाननुं स्वरूप जाणनाराउंए "तत्वसंवेदन" ज्ञान कहेलुं छे; हवे ते ज्ञान केवा हेतुवालुं छे? ते कहे छे के, उत्तम एवुं जे आभिनिबोधादिक ज्ञान, तेना आवरणने क्षयोपशम करनारुं, अने निर्वाणना कारणरूप फलने देनारुं छे.

हवे आ अष्टकने संपूर्ण करता थका उपदेश कहे छे.

एतस्मिन् सततं यत्नः, कुग्रहत्यागतो भृशम् ॥

मार्गश्रद्धादिभावेन, कार्य आगमतत्परैः ॥ ८ ॥

अर्थ–आगमना (वचनोमां) तत्पर एवा माणसोए कदाग्रह तजीने, उपर कहेला तत्वसंवेदन ज्ञानमां, मोक्षमार्गमां श्रद्धादिक भावें करीने हमेशां खूब यत्न करवो.

टीकानो भावार्थ–उपर कहेला तत्व संवेदन ज्ञानमां हमेशां आदर करवो; ते केवी रीते करवो? ते कहे छे के, जेथी शास्त्रने बाधा आवे, एवा कदाग्रहने तजीने यत्न करवो; शानेथी करवो? ते कहे छे के, मोक्षमार्गमां श्रद्धा, तेनुं ज्ञान, अने तेनी सेवनाथी यत्न करवो. हवे ते कोणे करवो? ते कहे छे के, आप्तनां वचनमां तत्पर थएला एवा माणसोए करवो.

एवी रीते नवमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

दशमाष्टकं प्रारभ्यते.

सम्यग् ज्ञानथी वैराग्य थाय छे, माटे ते वैराग्यनुं निरूपण करता थका हवे कहे छे

आर्तध्यानाख्यमेकंस्या, न्मोहगर्भं तथापरम् ॥
सद्ज्ञानसंगतं चेति; वैराग्यं त्रिविधं स्मृतम् ॥१॥

अर्थ-एक "आर्तध्यान" नामनो, बीजो "मोहगर्भित," तथा त्रीजो "सद्ज्ञानसंगत" एवी रीते त्रण प्रकारनो वैराग्य कहेलो छे

टीकानो भावार्थ-"ऋत" कहेता जे दु ख, तेमा उत्पन्न थएलु, अर्थात् इष्ट अने अनिष्ट वस्तुना वियोग अने संयोगना निमित्तवालु जे व्याकुल चित्त, तेने पेहेलु "आर्तध्यान" नामनु वैराग्य जाणवु, तथा "मोह" केता जे मिथ्यात्व अने अज्ञान, तेथी भरेलु ते "मोहगर्भित" वैराग्य जाणवुं, तथा सम्यग् ज्ञानें करीने जे युक्त होय, तेने "सद्ज्ञानसंगत" वैराग्य जाणवुं. राग रहितपणानो जे भाव ते "वैराग्य" कहेवाय एवी रीते त्रण प्रकारनु वैराग्य आप्तोए कहेलुं छे

हवे पेहेला आर्तध्यान नामना वैराग्यनु स्वरूप कहे छे.

इष्टेतरवियोगादि, निमित्त प्रायशो हि यत् ॥
यथाशक्त्यपि हेयादा, वप्रवृत्त्यादिवर्जितम् ॥२॥
उद्वेगकृद्विषादाढ्य, मात्मघातादिकारणम् ॥
आर्तध्यान ह्यदो मुख्यं, वैराग्य लोकतो मतम् ॥३॥

अर्थ-प्रायें करीने प्रिय अने अप्रिय वस्तुनो अनुक्रमे जे वियोग, अने संयोग, तेना निमित्तरूप, तथा यथाशक्तियें करीने हेय आदिक वस्तुमा अप्रवृत्त्यादिकें करीने वर्जित, तथा उद्वेग करनारो, दीनतावालो, वली शरीरना ताडन आदिकना कारणरूप एवो ते आर्तध्यानरूप वैराग्य लौकिकथी मानेलो छे

टीकानो भावार्थ-प्रायें करीने प्रिय अने अप्रिय वस्तुनो अनु-

क्रमें, जे वियोग, अने संयोग, ते छे कारण जेनुं, तेम पोतानो विकल्प पण छे कारण जेनुं, एवुं ते आर्तध्यान वैराग्य छे; हवे ते वैराग्य आर्तध्यानरूप शामाटे छे? ते कहे छे के, श्रद्धाना अतिशयथी शक्तिने उल्लंघीने तो एक बाजु रह्युं, पण, यथाशक्तियें करीने हेय अने उपादेय वस्तुना विषयमां अनुक्रमे जे निवर्तन अने प्रवर्तन, तेथी ते रहित छे, माटे ते आर्तध्यानवालुं वैराग्य छे. केमके, जे शुद्ध वैराग्य छे, ते तो तजवा लायक एवा इंद्रियार्थोमां, अने ग्रहण करवालायक एवा तप अने ध्यानादिकमां यथाशक्तियें करीने निवृत्ति प्रवृत्तिथी युक्त छे; कारण के, तेनुं तेवुंज स्वरूप छे; अने आ वैराग्य तो तेथी रहित छे, माटे तेने आर्तध्यानरूप वैराग्य कह्यो.

वली ते वैराग्य उद्वेग करनारो, तथा दीनतायें करीने सहित छे; (आथी करीने तेनुं मनना दुःखनुं हेतुपणुं कह्युं) हवे तेनुं शरीरना दुःखनुं हेतुपणुं कहे छे के, ते वैराग्य आत्मा केतां (अहीं) पोतानुं शरीर, तेने ताडन आदिकना कारणरूप छे; एवुं आ आर्तध्यानरूप वैराग्य मुख्य कहेलुं छे;

अहीं वादी शंका करे के, आ तो आर्तध्यानरूप छे, तो तेने वैराग्यपणाथी केम कह्युं? तेने माटे तेने कहे छे के, ते तो पृथक् जनने आश्रीने कहेलुं छे, पण तेने पंडितोए तत्वथी वैराग्य मानेलुं नथी.

हवे मोहगर्भित वैराग्यनुं स्वरूप देखाडवा माटे कहे छे.

एको नित्यस्तथाबद्धः, क्षय्यसन्त्वेह सर्वथा ॥
आत्मेति निश्चयाद्भूयो, भवनैर्गुण्यदर्शनात् ॥४॥
तत्त्यागोपशांतस्य, सद्वृत्तस्यापि भावतः ॥
वैराग्यं तद्गतं यत्तन्, मोहगर्भमुदाहृतम् ॥ ५ ॥

अर्थ—आत्मा सर्वथा प्रकारे एक नित्य, सर्वथा प्रकारे अबद्ध केतां कोइनी साथे पण नहीं जोडाएलो, सर्वथा प्रकारे क्षयी, केतां क्षणिक, तथा सर्वथा प्रकारे असत् केतां अछतो छे, एवी रीतना

निश्चयथी फरीने संसारनी असारता जोवाथी, ते संसारना त्याग माटे शांत थएला, तथा उत्तम क्रियावालाने भावथी जे वैराग्य थाय छे, ते वैराग्यने " मोहगर्भित " वैराग्य कहेलु छे

टीकानो भावार्थ— केटलाको कहे छे के, आ आत्मा लोकमा व्यापी रहेलो एकज छे, तेओ कहे छे के, सघला प्राणीओमा एकज आत्मा रहेलो छे, अने ते जलमा प्रतिबिंबित थएला चन्द्रनी पेठे एक प्रकारनो अथवा बहु प्रकारनो देखाय छे, तथा कपिल दर्शनवाला आत्माने नित्य माने छे, वली केटलाको आत्माने " अबद्ध " माने छे, केमके तेओ प्रकृतिनेज बंध मोक्ष माने छे, तथा केटलाको आत्माने क्षणिक माने छे, तथा केटलाको आत्माने अछतो माने छे, (पण ते सघलु असंभवित छे,) माटे एवी रीतना असंभवित एवा आत्माना स्वरूपना निश्चयथी फरीने, संसारमा (आववामा) असारता जोइने, ते संसारना त्यागमाटे कपाय अने इन्द्रिओना निग्रहवाला, तथा पोताना सिद्धांतने आधारे शुभ क्रियावाला, एवा माणसने उत्तम भावें करीने जे वैराग्य थाय छे, ते वैराग्यने वैराग्यनु स्वरूप जाणनाराओए " मोहगर्भित " वैराग्य कहेलो छे, केमके, तेणे आत्मानुं स्वरूप यथार्थ जाण्यु नथी, तेथी तेनो ते वैराग्य अत्यंत सन्निपातवाला माणसने आपेला सदौषधनी पेठे परमार्थने साधनारो नथी

हवे ते आत्मानु एकत्व आदिक माननाराओनुं खंडन नीचे प्रमाणे जाणवुं

आत्मानु सामान्यरूपनी अपेक्षाए एकपणु छे, अने विशेषरूपनी अपेक्षाए अनेकपणुंज छे, केम के, समता प्रत्ययना निबंधनपणाने प्राप्त थएला ते सामान्य कहेवाय छे, अने विषमता प्रत्ययना निबंधनपणाने प्राप्त थएला ते विशेष कहेवाय छे वली आत्माने नित्यपणु द्रव्यार्थनी अपेक्षाए घटी शके छे, पण सर्वथा प्रकारे नित्यपणु घटी शकतु नथी, केम के, पर्यायार्थनी अ-

पेक्षाए तेने अनित्यपणुं प्राप्त थाय छे. वळी आत्माने सर्वथा प्रकारे बंधनो जो अभाव मानीयें, अने प्रकृतिनेज जो बंध मानीयें; तो आत्माने मोक्ष घटी शकतो नथी; केम के लोकमां पण एमज मनाय छे के, जेने बंध होय, तेनोज मोक्ष केतां बंधनरहितपणुं थाय; पण अबद्धनो मोक्ष कहेवातो नथी; तेम जो प्रकृतिने बंध मानीयें, तो पुरुषने मोक्ष थतो नथी. तेम आत्माने सर्वथा क्षणिकपणुं पण घटी शकतुं नथी, केम के ते पण कथंचित छे; माटे तेनुं क्षणिकपणुं तथा अक्षणिकपणुं नित्यानित्यनी पेठेज जाणवुं; तथा आत्माने सर्वथा प्रकारे अछतापणुं पण घटी शकतुं नथी; पण कथंचित् घटी शके छे; केम के, पररूपे करीने तेनुं अछतापणुं छे, पण सर्वथा प्रकारे नथी; कारण के, जो सर्वथा प्रकारे तेनुं अछतापणुं मानीयें, तो परलोक सिद्ध थतो नथी.

माटे आत्मा एक अने अनेक, नित्य अने अनित्य, अबद्ध अने बद्ध, क्षयी अने अक्षयी, असत् अने सत्, एम स्याद्वादमय छे.

हवे ज्ञानसंगतवैराग्यना प्रतिपादनमाटे कहे छे.

भूयांसो नामिनो बद्धा, बाह्येनेछादिनाह्यमी ॥
आत्मानस्तद्वशात्कष्टं, भवे तिष्ठंति दारुणे ॥६॥
एवं विज्ञाय तत्त्याग, विधिस्त्यागश्च सर्वथा ॥
वैराग्यमाहुः सद्ज्ञान, संगतं तत्वदर्शिनः ॥ ७ ॥

अर्थ—घणां, परिणामी, बाह्य एवी इछादिकथी बंधनयुक्त, एवा आ आत्माउ (जीवो) ते इछादिकना वशथी दुःखी थया थका भयंकर एवा संसारमां रहे छे, एम जाणीने, तेना (संसारना) त्यागनी जे क्रिया, अने सर्वथा प्रकारे तेनो जे त्याग करवो, तेने तत्वना जाणनाराउ सद्ज्ञानसंगत नामनो वैराग्य कहेछे.

टीकानो भावार्थ—“ भूयांसः ” एटले घणा, “ नामिनः ” के-

ता परिणामी एटले परापरपर्याय प्रते गमन करनारा, तथा " वत्था " केता " बाह्य " एटले आत्माथी जुदा एवा स्त्री, मूर्छा, आदिके करीने बधाएला, एवा लोकव्यवहारने गोचर जीवो, ते स्त्रीआदिकथी उत्पन्न थएला बंधना सामर्थ्यथी दु खसहित एवा आ भयकर संसारमा रहे छे, एम जाणीने तेने त्याग करवानो जे विधि, तथा सर्वथा प्रकारे जे त्याग करवो, तेने " सद्ज्ञानसगत " नामनो वैराग्य कहे छे, अर्थात् आप्तना उपदेशथी ससारमां भमता जीवोने,जोइने, भवना कारणरूप एवी ते स्त्री आदिकने तजवामा जे उद्यम करवो, अर्थात् सर्व भावथी विरक्त थवाने यत्न करवो, तथा सर्वथा प्रकारे ते स्त्री आदिकने जे तजवी, तेने वैराग्यना परमार्थने जाणनाराओ " सद्ज्ञानसगत" वैराग्य कहे छे, केम के तेथी यथास्थित वस्तुनो बोध थाय छे

हवे ते " सद्ज्ञानसगत " वैराग्यज सिद्धिना (मोक्षना) साधनरूप छे, एवु प्रतिपादन करता थका कहे छे

एतत्तत्वपरिज्ञाना, न्नियमेनोपजायते ॥
यतोऽतःसाधनंसिद्धे, रेतदेवोदित जिनैः ॥ ८ ॥

अर्थ– तत्वना जाणपणाथी आ वैराग्य जेथी निश्चयें करीने थाय छे, ते हेतुथी जिनेश्वर प्रभुओए मोक्षना साधनरूप तेनेज कह्यो छे

टीकानो भावार्थ– उपर कहेलो सद्ज्ञानसंगत वैराग्य, (पेहेला बे वैराग्य नहीं) आत्मादिक वस्तुना परिणामीपणाआदिक स्वरूपना जाणपणाथी निश्चयें करीने थाय छे, अने तेथी करीने ते वैराग्यने, राग आदिकने जितनारा एवा जिनेश्वरोए मोक्षना साधनरूप कहेलो छे

एवी रीते दशमा अष्टकनु विवरण समाप्त थयु

एकादशमाष्टकं प्रारभ्यते.

वैराग्यवाळा माणसे तप करवो जोइयें, तेथी हवे वैराग्याष्टक पछी तप अष्टकनो प्रारंभ करे छे; अने तेमां पण परमतनी आशंका करता थका कहे छे. (अर्थात् वादीनुं कहेवुं छे.)

दुःखात्मकं तपःकेचिन्, मन्यंते तन्न युक्तिमत्॥
कर्मोदयस्वरूपत्वाद्, बलीवर्दादिदुःखवत् ॥ १ ॥

अर्थ—केटलाको तपने तो, तेमां कर्मोदयनुं स्वरूपपणुं होवाथी बलद आदिकना दुःखनी पेठे, दुःखात्मक मानीने, तेने युक्तियुक्त मानता नथी.

टीकानो भावार्थ— केटलाको के, जेओए जिनेश्वर प्रभुना आगमना भावार्थने जाण्यो नथी, तेओ अनशनादिक तपने दुःखरूप मानीने, तेने मोक्षना अंगरूप मानता नथी. हवे ते तप दुःखरूप छे, पण ते मोक्षनुं अंग केम नथी? तेने माटे कहे छे के, तेमां असाता वेदनीय आदिक कर्मोनुं विपाकपणुं छे, माटे, ते मोक्षनुं अंगरूप नथी; केमके, कह्युं छे के, अनशनादिक तपमां क्षुधा, तृषा आदिक परिसहो सहन करवा पडे छे, अने ते वेदनीय कर्मना उदयथी उत्पन्न थाय छे, एम आगममां कह्युं छे; माटे ते तप मोक्षनुं अंग नथी. हवे ते कोनी पेठे? ते कहे छे के, बलद आदिकना दुःखनी पेठे.

हजुपण ते वादीनुंज कहेवुं छे.

सर्व एव च दुःख्येवं, तपस्वी संप्रसज्यते ॥
विशिष्टस्तद्विशेषेण, सुधनेन धनी यथा ॥ २ ॥

अर्थ— (सामान्य रीते) सघळा प्राणीओ दुःखी छे, अने एवी रीते दुःखरूप तपने मानवाथी तो सघळा प्राणीओ, धनवडे करीने धनवाननी पेठे उत्कृष्ट तपस्वीओ थाय.

टीकानो भावार्थ—जो दुःखरूप तपने मानीयें तो सघळा प्रा-

णीऒ दुःखी होवाथी, तेऒ सघला उत्तम तपस्वीऒ कहेवाय, केमके, अनशनादिक तपनुं, अने व्याधि आदिकनुं दुःखपणु तो सरखुंज छे, कोनी पेठे के, जेम घणा धनें करीने माणस धनवान कहेवाय तेम

हजु पण आचार्य महाराजनेज ते वादी कहे छे के, एवी रीते सघला दुःखीऒने तपस्वी कहेवामा शु दोप आवे छे?

महातपस्विनश्चैवं, त्वन्नीत्या नारकादय. ॥
शमसौख्यप्रधानत्वा, द्योगिनस्त्वतपस्विनः ॥ ३ ॥

अर्थ-एवी रीतनी तमारी नीतिथी तो नारकी आदिकना जीवो (दुःखी होवाथी) महातपस्वीऒ कहेवाय, अने योगीऒ तो समतारूप उत्तम सुखवाळा होवाथी तपविनाना कहेवाय!!!

टीकानो भावार्थ-"जेटला दुःखी तेटला तपस्वी," एवी रीतनी तमारी नीतिथी तो महा दुःखवाळा एवा नारकीना अने तिर्यचना जीवो पण मोटा तपस्वी कहेवाय!!! अने समता रूप छे उत्तम सुख जेऒने, एवा समाधिवाळा योगीऒ तो अतपस्वी कहेवाय!!!

हजु पण वादीज पोतानो पक्ष कहे तो थको कहे छे

युक्त्यागमबहिर्भूत, मतस्त्याज्यमिदं वुधै. ॥
अशस्तध्यानजननात्,प्राय आत्मापकारकम्॥४॥

अर्थ-ते तप युक्ति अने आगमने वाधा करनारो छे, माटे ते पडितोए तजवो, केम के, ते दुर्ध्यानने उत्पन्न करनार होवाथी, प्राये करीने आत्माने अहित करनारो छे

टीकानो भावार्थ-युक्ति अने आगमने वाधा करनारो एवो ते तप, पंडितोए तजवो, केम के, तेमा पोताना शरीरने पीडा थाय छे, माटे युक्ति अने आगमना हृदयने जाणनाराऒए लोकरूढीथी प्रवर्तवु जोइये नही, केम के, तेम करवाथी तेना पंडितपणाने

बाधा पहोंचे छे. वली ते तप पोताना आत्माने अनर्थना कारण-रूप छे. ते शामाटे? के, ते प्रायें करीने खराब ध्यानने उत्पन्न करनारो छे; केम के, भोजन आदिकना अभावथी दुर्ध्यान उत्पन्न थाय छे; कह्युं छे के,

आहारवर्जिते देहे, धातुक्षोभः प्रजायते ॥
तत्र चाधिकसत्वोऽपि, चित्तभ्रंशं समश्नुते ॥ १ ॥

अर्थ—आहाररहित शरीरमां धातुनो क्षोभ थाय छे, अने ते थवाथी अधिक बलवाननुं चित्त पण डामाडोल थाय छे.

अहीं "प्रायें करीने" कहेवाथी महावीर प्रभु आदिकना तप वास्तेनुं दूषण दूर कर्युं.

माटे ते तप पंडितोए तजवो, एम वादीनुं कहेवुं थयुं. हवे तेने माटे आचार्य उत्तर आपे छे.

मनइंद्रिययोगाना, महानिश्चोदिता जिनैः ॥
यतोऽत्र तत्कथंत्वस्य, युक्ता स्याद्दुःखरूपता ॥ ५ ॥

अर्थ—आ तपने विषे जिनेश्वर प्रभुजए मन, इंद्रिय अने योगनी अहानि कहेली छे; अने तेथी ते तपने दुःखरूपपणुं शी रीते घटी शके?

टीकानो भावार्थ—वादीए जे कह्युं के, कर्मोदयना स्वरूपपणाथी दुःखरूप एवो तप युक्तियुक्त नथी, पण ते तपने "दुःखात्मक" एवुं विशेषणज सिद्ध थइ शकतुं नथी; ते हवे देखाडे छे. मन, इंद्रिय, अने संयमना व्यापाररूप जे योगो, तेनी आ तपमां अहानि जिनेश्वर प्रभुए कहेली छे; कह्युं छे के,

सोहु तवो कायव्वो, जेण मणो मंगुलं न चिंतेइ ॥
जेण न इंदियहाणी, जेणय जोगा न हायंति ॥ १ ॥

अर्थ—जेथी मन दुर्ध्यान न चिंतवे, अने जेथी इंद्रियोनी हानि

न थाय, तथा जेथी योगोने पण हानि न पहोंचे एवो ते तप करवो अने तेथी कोइ पण रीते तपने दुःखरूपपणुं घटी शकतुंज नथी, अने तेथी तेने अयुक्तिपणुं पण घटी शकतुं नथी

अहीं वादी शका करे के, देहने पीडा करवायें करीने अनशनादिक तपनु दुःखरूपपणुं तो साक्षात अनुभवाय छे, छता तेने दुःखरूपपणु न घटी शके, एम केम कहेवाय ? तेने माटे हवे तेने कहे छे

यापिचानशनादिभ्यः, कापीडामनाक्कचित् ॥
व्याधिक्रियासमासापि, नेष्टसिद्धयात्र बाधनी॥६॥

अर्थ–अनशन आदिक तपथी जे कोइ वखते जरा शरीरने पीडा थाय छे, ते पण रोगना उपाय सरखी छे, अने वाछित अर्थने साधवाथी ते बाधा करनारी नथी

टीकानो भावार्थ–उपर कहेला न्यायथी तो अनशन आदिक तपथी देहने पीडा थतीज नथी, पण वली कदाच अनशन, उपवास, उनोदरी आदिक तपथी, कोइकज देश कालने विषे जे स्वल्प देहपीडा थाय छे, (मननी पीडा नहीं) पण ते मनने दुःख आपनारी नथी शामाटे के, ते वाछित अर्थने साधवावाली छे, वली तेवी कायपीडाने सिद्धातमा रोगना उपाय सरखी कहेली छे, अर्थात् जेम रोगना उपायमा थोडी देहने पीडा थाय छे, तो पण तेथी जेम आरोग्यता प्राप्त थाय छे, तेम आ तपथी पण जरा देहपीडा कदाच थाय, तो पण ते भावथी बाधा करनारी नथी

हवे वाछित अर्थनी सिद्धिमा शरीरपीडानां पण अदुःखपणाने दृष्टातथी देखाडता थका कहे छे

दृष्टा चेष्टार्थसंसिद्धौ, कायपीडा ह्यदुःखदा ॥
रत्नादिवणिगादीनां, तद्वदत्रापि भाव्यताम् ॥ ७ ॥

अर्थ–रत्नादिकनो व्यापार करवावाळा वणिक् आदिकोने, वांछित अर्थनी सिद्धिमां (थती) शरीरनी पीडा, दुःखने देनारी जोएली नथी; अने तेनी पेठे आ तपने विषे पण जाणी लेवुं.

टीकानो भावार्थ–"इष्ट अर्थनी प्राप्तिमां थती देहपीडा दुःख करनारी नथी," एम केवल अमोज कहीयें छीयें, एम नहीं, लोकमां पण ते वात प्रसिधज छे; हवे ते कोने छे? ते कहे छे, के, रत्न, वस्त्र, सुवर्ण आदिकनो व्यापर करनाराउने तथा खेडु आदिकोने थती देहपीडा जेम तेउने दुःखदाइ थती नथी, तेम आ अनशनादिक तपने विषे पण निपुण बुद्धिथी विचारी लेवुं. अर्थात् जेम रत्न, सोनुं अने वस्त्रादिकनो व्यापार करता एवा वेपारी, तथा खेती करता एवा खेडु आदिक, के जेउए वांछित अर्थनी सिद्धिमांज एक निश्चय बांधेलो छे, एवा, अने वली अपार समुद्रमां, तथा वनोमां भटकवावाला, तथा खेती आदिक अनेक व्यापारमां तत्पर, एवा तेउने भूख, तृषा, तथा थाक आदिकथी उत्पन्न थएली शरीरनी पीडा मनने दुःख आपनारी थती नथी, तेम आ अपार संसारसमुद्रथी तरवानी इछा राखनारा साधुउने अनशन अने उनोदरी आदिक तपस्याथी थती देहनी पीडा मनने खेद करनारी थती नथी.

अहीं केटलाक आचार्यो वली नीचे प्रमाणे पण कहे छे.

कोइक दरिद्र व्यापारीए दूर देशांतरमां जइ, घणीक मेहेनते केटलांक रत्नो मेलव्यां; त्यारे विचारवा लाग्यो के, आ महामूल्यवाळां, तथा सर्व आशाने उत्पन्न करनारां रत्नोने लेइ, चोरोथी भरेलां आ वनने उलंघी, घेर जइ, तेनो उपभोग शीरीते लेइश? पछी तेणे बुद्धीवडे करीने ते रत्नो एक जगोए राख्यां; तथा काच आदिकना कटका एक पोटलीमां बांधीने, ते पोटली लाकडीने छेडे लटकावी; पछी "अरे आ रत्ननो वेपारी चोरनी पल्लीमांथी जाय छे;" एम पोकार करतो थको वनमांथी जवा

लाग्यो पछी ते मार्गमा चोरनी पल्लीमा रहेनारा चोरोए संभ्रम-सहित तेनी तपास करी, तो तेनी पासे काचना कटकाउं जोया, त्यारे तेउंए विचार्यु के, आतो कोइ गांडो माणस छे, एम विचारि तेउंए तेनो तिरस्कार कर्यो पाछो फरीने पण ते तेवीज रीते पाछो वल्यो, अने त्यारे पण पेहेला जेउंए तेने नहीं जोयो हतो, तेउंए पण तेनी तपास करी, तेने कहाडी मेल्यो, वली पण पाछो ते तेवीज रीते वनमा गयो, एवी, रीते त्रीजी वखते पण चोरोए, तेनो परिचय होवाथी तेने जवा दीधो पछी तेणे विचार्यु के, हवे मने खरेखर आ वनमा कोइ अटकावशे नहीं, एम विचारी, रत्नोने लेइ, तेना उपयोग माटे, वान्छित नगरप्रते जवाने माटे उत्सुकपणाथी, जलदी जलदी मोटी मोटी मजलो करीने पण, तथा भूख, तृषा अने थाक आदिकने पण न गणतो थको जवा लाग्यो घणो मार्ग उलघवा बाद तृषा लागवाथी ते विचारवा लाग्यो के, अरे! आजे तो हु पाणी विना मरी जउ छु, अने वली हु आ रत्नोनो उपभोग पण मेलवी शकीश नहीं, एवी रीते मृत्युनी बीकवालो, तथा रत्नोना उपभोगनी इच्छावालो ते वेपारीए एक कादवयुक्त पाणीवालुं तलाव जोयुं ते तलावना कादवमा खुंची गयेला एवा हरिणआदिकना कलेवरमा उत्पन्न थएला कीडाथी दुर्गंधयुक्त थएलुं, तथा रसविनानुं, तुच्छ जल जोइने, तेनी दुर्गंधने नहीं सुंघतो थको, तथा तेना रसनो स्वाद पण न लेतो थको, आखी विचीने ते खोबेथी पाणी पीवा लाग्यो, अने तेथी शात थयो, अने ते पाणीना आधारथी तृषानु दुःख मटाडीने, तुरत पोताने नगर जइ, ते रत्नोनु सुख भोगववा लाग्यो

आनो उपनय तो प्रथमज कहेलो छे

एवी रीते तपना दुःखात्मकपणानु खंडन करीने, तेना कर्मोदयना स्वरूपपणानुं हवे खडन करता थका कहे छे

विशिष्टज्ञानसंवेग, शमसारमतस्तपः
क्षायोपशमिकं ज्ञेय, मव्याबाधसुखात्मकम् ॥ ८ ॥

अर्थ– उत्तम ज्ञान, संवेग, अने समता छे, सार जेनो, एवो तप छे, माटे तेने क्षायोपशमिक, अने अव्याबाध सुखरूप जाणवो.

टीकानो भावार्थ–उत्तम एवा ज्ञान, संवेग केतां संसारनी असारतानो भाव,अथवा मुक्तिमार्गनो अभिलाप, तथा शम एटले कपाय अने इंद्रियनो निरोध, ते छे, सार जेनो एवो तप जाणवो; माटे ते दुःखरूप नथी. अने तेथी ते तपने क्षायोपशमिक जाणवो; अर्थात् चारित्रमोहनीय कर्मना छेदनी साथे थएलो जे उपशम, केतां विपाकमां उदय आवता चारित्रमोहनीय कर्मनो अटकाव, ते मय छे; पण तेमां कर्मोदयनुं स्वरूप नथी; वली ते तप अविरतिथी उत्पन्न थएल, आंतरारहित, अथवा परंपरावाली,एवी आ लोकसंबंधी, तथा परलोकसंबंधी जे बाधा, ते जेमां नथी, एवो छे; अर्थात् अव्याबाध सुखवालो, एटले सिद्धना सुखनुं अनुकरण करनारो छे; एवी रीते आ श्लोके करीने, तपनुं अकर्मोदयस्वरूपपणुं, तथा अदुःखस्वरूपपणुं जणाव्युं.

एवी रीते अगीयारमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

द्वादशमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते नाना प्रकारना अर्थोने विषे विवाद करता मिथ्यात्विओने शिखामण देइने, ते शिखामणनी विधिरूप जे वाद, तेनुं स्वरूप देखाडता थका हवे कहे छे.

शुष्कवादो विवादश्च, धर्मवादस्तथापरः ॥
इत्येष त्रिविधो वादः, कीर्तितः परमर्षिभिः ॥१॥

अर्थ– शुष्कवाद, विवाद, अने धर्मवाद, एवी रीते त्रण प्रकारना वादो, महान ऋषिओए कहेला छे.

टीकानो भावार्थ– “ शुष्क ” एटले रसविनानो, अर्थात् गळुं

अने तालवाना शोषमात्र फलवाळो, एटले कोइ वादीनी साथे ठलटाज विषयने आश्रीने बोलवुं ते, "शुष्कवाद" कहेवाय, तथा "विवाद" एटले जयनी प्राप्ति थाय, तो पण परलोकादिकने जे बाधा पहोंचाडे, ते "विवाद" कहेवाय, तथा धर्मवडे करीने प्रधान एवो जे वाद, ते "धर्मवाद" कहेवाय, अर्थात् मध्यस्थपणाथी धर्मरूपी सुवर्णनी कष आदिक परीक्षाना लक्षणवाळो ते "धर्मवाद" कहेवाय, एवी रीतना त्रण प्रकारना वादो उत्तम मुनिउंए कहेला छे.

हवे तेउंमाथी पेहेला वादनु स्वरूप कहे छे

अत्यतमानिना सार्धं, क्रूरचित्तेन च दृढम् ॥
धर्मद्विष्टेन मूढेन, शुष्कवादस्तपस्विनः ॥ २ ॥

अर्थ– अत्यंत गर्विष्ठ, क्रूर चित्तवाळो, तथा धर्मनो अत्यत द्वेष करनारो, अने मूर्ख, एटलानी साथे जे साधुनो वाद, ते "शुष्कवाद" कहेवाय

टीकानो भावार्थ– अत्यंत जेने गर्व होय, ते अत्यत मानी कहेवाय, (तेवो माणस पराजय पामे, तो पण सामानो गुण मानतो नथी) तथा क्रूर अध्यवसायवाळो, (तेवो माणस पराजय पाम्याथी वैरी थाय छे,) तथा दुर्गतिमा पडता प्राणिउंनो उद्धार करनार, एवो जिनेश्वर प्रभुए कहेलो जे श्रुतचारित्ररूप धर्म, तेनो अत्यत द्वेष करनार, (तेवो माणस पराजय पामे तो पण ते शुद्ध धर्मने अगीकार करतो नथी, माटे तेनी साथे वाद करवो, ते व्यर्थ प्रयास छे) तथा "मूढ" केता युक्त अयुक्तना तफावतने नहीं जाणनारो, (तेवो माणस तो वादनो अधिकारीज नथी) एटला माणसोनी साथे जे तपस्वीए कहेता साधुए विवाद करवो, ते "शुष्कवाद" केता निरर्थक वाद कहेवाय (अहीं "तपस्वी" शब्दनु ग्रहण एटला माटे कर्यु छे के, तेवोज माणस हमेशा पोताना उचित प्रवर्तनपणायें करीने, योग्यताथी शास्त्रोने विषे अधिकारी छे, एवु देखाडवा माटे, अने तेथी बीजा अनुचित प्रवृत्तिवाळाउं

तेने माटे अधिकारी नथी; एवुं पण देखडवा माटे "तपस्वी" शब्द मुकेलो छे.) अथवा हे "तपस्वीजी!" एवो अर्थ पण करी लेवो. हवे तेवा वादने शुष्कवादपणुं शामाटे छे? तो के, तेमां अनर्थनी वृद्धिपणुं छे, माटे; एम अमो कहीयें छीयें. तेज बाबत हवे कहे छे.

विजयेऽस्यातिपातादि, लाघवं तत्पराजयात् ॥
धर्मस्येति द्विधाप्येष, तत्वतोऽनर्थवर्धनः ॥ ३ ॥

अर्थ–जो ते अजिमानी वादीने तपस्वी जीते, तो तेनुं (अजिमानीनुं) मृत्यु आदिक थाय; अने तेमां जो ते तपस्वीनो पराजय थाय, तो तेथी धर्मने लघुता पहोंचे; माटे एवी रीतनो "शुष्कवाद" बन्ने प्रकारे तत्वथी अनर्थने वृद्धि करनारो छे.

टीकानो जावार्थ– तपस्वी साधु ज्यारे ते अजिमानी वादीनो पराजय करे छे, त्यारे ते अजिमानथी मृत्यु पामे छे, तथा अशुज कर्मना बंधथी संसारमां परिज्रमण आदिकने पामे छे. अथवा साधुनी साथे वैर थवाथी, पोतानो लाग आवे, ते वखते ते शासनने हानी पहोंचाडे. तथा ते साधुनो कदाच तेवा वादीथी पराजय थाय, तो शासनना महिमानी हानि थाय; अर्थात् एवो अवर्णवाद थाय के, वादमां जैन तो हारी गयो, माटे जैनशासन तो असार छे. माटे एवी रीते "शुष्कवाद" तो बन्ने प्रकारथी रमार्थें करीने संसारनुं कारण होवाथी अनर्थनी वृद्धि करनारो छे.

हवे बीजा वादनुं स्वरूप कहे छे.

लब्धिख्यात्यर्थिनातुस्या, दुःस्थितेनामहात्मना ॥
छलजातिप्रधानो यः, स विवाद इति स्मृतः॥४॥

अर्थ– सुवर्ण आदिकनी प्राप्तिनो, अने कीर्तिनो अर्थी, तथा दरीद्री, अने क्षुद्र चित्तवालो, एवा वादीनी साथे, छल अने जातिवडे करीने प्रधान एवो जे वाद करवो, तेने, "विवाद" नामे बीजो वाद जाणेलो छे.

टीकानो भावार्थ– "लब्धि" एटले सुवर्ण आदिकनी प्राप्ति, अने "ख्याति" एटले कीर्ति, ते बन्नेनुं छे प्रयोजन जेने, एवा, तथा "दुःस्थित" एटले दरिद्री अथवा जेनुं मन दुभाएलु छे एवा, अने "अमहात्मा" केता उदारतारहित चित्तवाला, एवा वादीनी साथे, जे वाद करवो, ते "विवाद" कहेवाय, केमके, एवा माणसनो जो वादमा पराजय (हार) थाय, तो तेने विषाद एटले खेद थाय, अने तेनी आजीविकानो पण भंग थाय, अने तेथी जीतनार एवा साधुने पोताना परलोकने बाधा पहोंचे, अने तेथी करीने तेवो वाद विशेषे करीने विरुद्ध छे हवे ते वाद केवो? तो के छलवालो, एटले "नवकबलो देवदत्त (नवाकंबलावालो देवदत्त, अथवा नवनी संख्यावाला छे कबलो जेनी पासे एवो देवदत्त, एम बे अर्थो थाय) तेने छलवाद जाणवो तथा "जाति" एटले दूषणाभासवालो वाद, जेमके, "अनित्य शब्द. कृतकृत्त्वात् घटवत्" (शब्द कृत्रिम होवाथी घटनी पेठे अनित्य छे) आमा हेतु दूषणयुक्त छे, केमके, घटमा जे कृत्रिमपणानो हेतु छे, ते शब्दे करीने असिद्ध छे, माटे ते हेतुअसिद्ध छे, वली जो ते कृत्रिमपणाने शब्दगत मानीयें, तो ते अनित्यपणायें करीने व्याप्त सिद्ध थई शकतु नथी, माटे ते असाधारण अनेकातिक हेतु छे एवी रीतनो जे वाद करवो, तेने "विवाद" कहेलो छे

हवे आवा वादने शामाटे "विवाद" कहेलो छे? ते कहे छे

विजयो यत्र सन्नीत्या, दुर्लभस्तत्ववादिन. ॥
तद्भावेऽप्यतरायादि, दोपोऽदृष्टविघातकृत् ॥

अर्थ– एवी रीतना छलादिकथी करेला विवादमा तत्ववादीने उत्तम नीतिथी विजय मलवो दुर्लभ छे, अने कदाच विजय थाय, तो पण तेमा (ते वादीने थता) अतराय आदिक दोष आवे, अने ते दोष परलोकनो विघात करनारो छे

टीकानो भावार्थ– छलादिकवाला विवादमा वस्तुना तत्वोने

जाणनार एवा साधुने, उत्तम न्यायपूर्वक विजय मलवो दुर्लभ छे; अने कदाच प्रमादना रहीतपणाथी, छलादिकने नाश करीने ते साधु विजय मेलवे, तोपण तेमां दोष आवे छे; ते कहे छे. एवी रीते वादीने हराव्याथी, ते वादीने सुवर्णादिकनो थतो लाभ, तथा कीर्ति मली शकतां नथी; पण उलटो तेने तेथी शोक अने द्वेष उपजे छे; केमके तेवो वादी वादमां जो हारी जाय, तो तेने राजादिकपासेथी कंइं मली शकतुं नथी; अने मल्युं होय, ते पण राजाआदिक पातुं लेइ ले छे; माटे एवी रीते तेमां अंतरायादिक दोष छे; ते दोष केवो छे? तो के, परलोकने घात करनारो छे.

हवे धर्मवादनुं स्वरूप निरूपण करवा माटे कहे छे.

परलोकप्रधानेन, मध्यस्थेन तु धीमता ॥

स्वशास्त्रज्ञाततत्वेन, धर्मवाद उदाहृतः ॥ ६ ॥

अर्थ– परलोक छे प्रधान जेने, तथा मध्यस्थ, बुद्धिवान, अने पोताना शास्त्रोनुं जाणेलुं छे, तत्व जेणे, एवा माणसनी साथे जे वाद करवो, तेने "धर्मवाद" कहेलो छे.

टीकानो भावार्थ– परलोक छे प्रधान जेने, एवा माणसनी साथे जे वाद करवो,ते "धर्मवाद" कहेवाय; केमके, तेवो माणस परलोकना भयथी असमंजसनो बोलनार के करनार थतो नथी; वली "मध्यस्थ" कहेतां जेने पोताना धर्मनो अत्यंत राग नथी,तेम परधर्मपर द्वेष नथी, तेवानी साथे करेलो वाद धर्मवाद कहेवाय; केमके, तेवा माणसोने सुखेथी समजावी शकाय छे; कारण के, ते गुणदोषने जाणनारो होय छे. वली जेणे पोताना धर्मशास्त्रोनुं तत्व जाणेलुं छे, एवा माणसनी साथे करलो वाद "धर्मवाद" कहेवाय; केम के, तेवो माणस पोताना दूषित अथवा अदूषित धर्मने जाणी शके छे. माटे एवी रीतना प्रतिवादी साथे जे वाद करवो, तेने "धर्मवाद" कह्यो छे.

एवी रीतना वादथी उत्तम फल मले ले, माटे ते "धर्मवाद" कहेवाय ले, ते फलने माटे हवे कहे ले

विजयेऽस्य फलं धर्म, प्रतिपत्त्याद्यनिंदितम् ॥
आत्मनो मोहनाशश्च, नियमात्तत्पराजयात् ॥७॥

अर्थ–एवा धर्मवाद करनारने जितवाथी तेने (प्रतिवादीने) धर्मनी प्राप्ति आदिक उत्तम फल मले ले, अने कदाच तेमा साधुनो पराजय थाय, तो निश्चयें करीने तेना (साधुना) आत्मानी मूढतानो नाश थाय

टीकानो जावार्थ–परलोक ले प्रधान जेने, इत्यादि विशेषणवाला वादीनी, साधु साथेना विवादमा जो हार थाय, तो तेने (ते वादीने) जिनेश्वरे कहेला श्रुतचारित्ररूप धर्मनी प्राप्तिरूप उत्तम फल प्राप्त थाय अने कदाच तेवा वादीथी जो साधुनो पोतानो पराजय थाय, तो तेना (साधुना) अतत्वादिकोने विषे तत्वादिकना अध्यवसायरूप अज्ञाननी निश्चयें करीने हानि थाय

त्यारे हवे शुं धर्मवादज करवो ? अने बीजा बन्ने वादो न करवा ? एवी आशंकामा जे करवानुं ले, तेनो उपदेश देता थका कहे ले

देशाद्यपेक्षया चेह, विज्ञाय गुरुलाघवम् ॥
तीर्थकृद्ज्ञातमालोच्य, वाद कार्यो विपश्चिता ८

अर्थ–देशादिकनी अपेक्षायें करीने, गुरुता तथा लघुताने जाणीने, श्री वीरप्रजुना दृष्टांतने विचारिने अहीं पंडित माणसे वाद करवो

टीकानो जावार्थ–देश, एटले गाम, नगर, जनपदादिक, तथा आदि शब्दथी काल, राजा, सजासद, तथा प्रतिवादी आदिकनी अपेक्षाए वाद करवो, अर्थात् देश एटले ज्या कुती-

थिउनो घणो प्रचार न होय, तेवो देश जोवो; “ काल ” एटले दुकाल आदिक ज्यां काल न होय, ते; तेम राजा आदिको पण ज्यां मध्यस्थ तथा डाह्या होय, तथा प्रतिवादी पण ज्यां वादने योग्य होय, तथा पोते पण वाद करवाने समर्थ छे के, नहीं? इत्यादिकनी अपेक्षायें करीने वाद करवो. कह्युं छे के,

कःकालःकानि मित्राणि, को देशः कौव्ययागमौ ॥
कश्चाहं काच मे शक्ति, रिति चिंत्यं मुहुर्मुहुः ॥ १ ॥

अर्थ—कयो काल छे? कोण मित्रो छे? कयो देश छे? शुं आवक जावक छे? हुं कोण छुं? तथा मारी शक्ति केटली छे? एवी रीते वारंवार चिंतववुं.

वली एवी रीतना अमुक देशादिकने विषे वाद करवाथी मारी तथा शासननी गौरवता थशे, तथा अमुक देशादिकोने विषे वाद करवाथी लघुता थशे; एवी रीतनो विचार करीनेज जेथी गौरवता वधे, तेवी रीतनो वाद करवो. वली ते वाद शुं विचारिने करवो? तो के, जेम भगवान श्री वीरप्रभुए प्रथम समवसरणमां मलेली अभव्योनी पर्षदाने तजीने, बीजी जगोए उत्तम देशना आपी, तेम, विद्वान माणसे पण अनुचित एवा देशादिकने, तथा पोताना अने परना उपकारना अभावने वर्जिने, बीजी जगोए उपर कहेलो त्रणे प्रकारनो वाद करवो.

एवी रीते बारमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

त्रयोदशमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते उपर वादोनुं स्वरूप कंह्यु, हवे तेउमांहेलो धर्मवादज मुख्य वृत्तिथी करवो; एवा हेतुथी ते विषयने देखाडता थका कहे छे.

विषयो धर्मवादस्य, तत्तत्तंत्रव्यपेक्षया ॥
प्रस्तुतार्थोपयोग्येव, धर्मसाधनलक्षणः ॥ १ ॥

अर्थ–ते ते दर्शननी अपेक्षायें करीने, प्रस्तुत अर्थमा उपयोगी, तथा धर्मना साधनना लक्षणवालो एवो धर्मवादनो विषय छे

टीकानो भावार्थ–जेजे दर्शननो प्रतिवादीए आश्रय करेलो होय, ते ते दर्शननी अपेक्षाएं, धर्मवादनो विषय होय छे, हवे ते धर्मवादनो विषय केवो ? तो के, मुमुक्षुउनो जे मोक्षार्थ, तेमां जे उपयोग एटले प्रयोजननो भाव, ते छे जेमां, एवो धर्मवादनो विषय जाणवो, वली ते, कर्मोपादाननी जे निर्जरा ते छे लक्षण जेनु, एवो जे धर्म, तेना अहिंसादिक जे साधनो, ते छे स्वभाव जेनो एवो ते धर्मवादनो विषय छे

हवे ते धर्मना साधनोनुं वर्णन करे छे

पंचैतानि पवित्राणि, सर्वेषा धर्मचारिणाम् ॥
अहिंसासत्यमस्तेय, त्यागो मैथुनवर्जनम् ॥ २ ॥

अर्थ– सघला धर्मचारिउना, पवित्र एवा, अहिसा, सत्य, अस्तेय (चोरी नहीं करवी ते) त्याग, अने मैथुननु वर्जन, ए पाच (साधनो) छे

टीकानो भावार्थ– अहिसा एटले प्राणीनी हिंसाथी निवृत्त थवु ते, तथा सत्य, चोरी नहीं करवी ते, सर्व सगनो त्याग, तथा मैथुननो त्याग, एवी रीतना पाच पवित्र व्रतो, जैन, साख्य, बौद्ध तथा वैशेषिक विगेरे सर्वने माननीक छे, अने ते व्रतोने जैनो महाव्रतो कहे छे, अने व्यासने अनुसरनारा साख्य लोको तेउने यमो कहे छे, केमके, तेउ अहिसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, तथा अव्यवहार, तेउने यमो कहे छे, अने अक्रोध (क्रोध नहीं करवो ते) गुरुनी सेवा, पवित्रता, अल्प भोजन, अने अप्रमाद तेउने नियमो कहे छे वली पाशुपत मतवाला ते दशेने धर्म कहीने माने छे, वली भागवत मतने माननाराउ ते दशेने पाच व्रतो, तथा पाच उपव्रतो कहीने माने छे, अने बौद्धो तेउने कुशलधर्मो कहीने माने छे, अने वैदिको तेउने ब्रह्म शब्दे करीने माने छे

हवे ज्यारे ते व्रतो पवित्र छे, त्यारे ते कया दर्शनमां केवी रीते जोडी शकाय छे? ते कहे छे.

क खल्वेतानि युज्यंते, मुख्यवृत्त्या क वा नहि ॥
तंत्रे तत्तंत्रनीत्यैव, विचार्यं तत्वतो ह्यदः ॥ ३ ॥
धर्मार्थिजिः प्रमाणादे, र्लक्षणं नतु युक्तिमत् ॥
प्रयोजनाद्यजावेन, तथा चाह महामतिः ॥ ४ ॥

अर्थ—कया तंत्रनी अंदर ते व्रतो, तेज तंत्रनी नीतियें करीने मुख्यवृत्तिथी घटी शके छे? अने कया तंत्रमां घटी शकतां नथी? एवी रीते धर्मना अर्थि माणसोए तत्वथी विचारवुं; अने प्रमाणादिकनुं लक्षण, प्रयोजन आदिकना अजावथी युक्तियुक्त नथी; अने तेने माटे महाज्ञानी एवा सिद्धसेन महाराज पण तेमज कहे छे.

टीकानो जावार्थ—उपर कहेलां अहिंसादिक पांचे व्रतो, कया तंत्रनी अंदर मुख्य वृत्तिथी योग्य रीते छे, अने कया तंत्रमां नथी? तेने माटे विचार करवो; अने ते विचार पण तेनाज शास्त्रोथी करवो; पण वीजाना शास्त्रथी करवो नहीं; केमके, वीजाना शास्त्रना न्यायथी विचारतां तो तेउनुं अघटितपणुं प्रगटज जणाय; माटे एवी रीतनो तत्वथी विचार करवो; पण वीजी उलटी रीते विचारवुं नहीं, केमके, तेम कर्याथी तो धर्मवादना अजावनो प्रसंग आवे. हवे एवी रीतनो विचार कोणे करवो? तो के, धर्मना अर्थीजए करवो. माटे "स्वपरावजासिज्ञानं प्रमाणं" एवी रीते प्रमाणादिकनुं लक्षण विचारवुं ते युक्तिवालुं नथी; केमके, तेम करवामां कंइ पण प्रयोजन नथी; माटे जे जे प्रयोजन आदिकथी रहित छे, ते ते युक्तिवालुं नथी; जेम कांटावाली वृक्षनी डालीनुं मर्दन करवुं तेम. अने तेवीज रीते महाबुद्धिवान एवा सिद्धसेन आचार्य पण कहे छे.

तेज हवे कहे छे

प्रसिद्धानि प्रमाणानि, व्यवहारश्च तत्कृतः ॥
प्रमाणलक्षणस्योक्तौ, ज्ञायते न प्रयोजनम् ॥५॥

अर्थ-प्रत्यक्ष आदिक प्रमाणो प्रसिद्ध छे, अने ते प्रमाणोथी करेलो व्यवहार पण प्रसिद्धज छे, माटे प्रमाणनु लक्षण कहेवामा कइ प्रयोजन जणातु नथी

टीकानो भावार्थ- प्रसिद्ध एवा जे प्रत्यक्ष आदिक प्रमाणो, ते लोकोमा पोतानी मेळेज प्रसिद्ध छे, पण कंइ प्रमाणना लक्षण बाधनाराओनाज करेला नथी तथा ते प्रमाणथी करेलो एवो जे स्नानपानादिक व्यवहार, ते पण गोवाल, बाल, स्त्री आदिकोमा प्रसिद्धज छे माटे "अविसंवादिज्ञान प्रमाण" इत्यादि, प्रमाणनु लक्षण बाधवु युक्त नथी, केमके, तेम करवानु कइ पण प्रयोजन जणातु नथी

एवी रीते प्रमाणनुं लक्षण शोधवामा प्रयोजननो अभाव कह्यो हवे तेज प्रमाणमा उपायनो अभाव देखाडवा माटे कहे छे

प्रमाणेन विनिश्चित्य, तदुच्येत न वा ननु ॥
अलक्षितात्कथं युक्ता,न्यायतोऽस्यविनिश्चितिः ६

अर्थ- (वादीने कहे छे के,) ते, तु प्रमाणे करीने निश्चय करीने कहे छे? के नहीं? वळी लक्ष्यमा नहीं आववाथी न्याये करीने तेनो निश्चय शीरीते युक्त कहेवाशे?

टीकानो भावार्थ- अहीं वादीने कहे छे के, ते प्रमाणनु लक्षण, तु प्रमाणलक्षणना बनावनारना प्रत्यक्ष आदिक प्रमाणथी निश्चय करीने कहे छे के, ते विना कहे छे? तेमाथी जो तु पेहेलो पक्ष अगीकार करीश, तो ते प्रमाणना लक्षणने निश्चय करनारुं प्रमाण, तेना लक्षणथी निश्चित थएलु छे? के, अनिश्चित थएलु छे? अने कदाच निश्चित थएलु छे, तो तेज अगीकार करेला प्रमा-

णथी के, कोइ बीजा प्रमाणथी निश्चित थएलुं छे? त्यारे जो तुं कहीश के, तेज प्रमाणथी निश्चित करेलुं छे, तो तेथी "अन्योन्याश्रय" नामनो दोष आवशे. एवी रीते प्रमाणना लक्षणनो निश्चय, प्रमाणथी थाय छे, अने ते लक्षणनो ज्यारे निश्चय थाय छे, त्यारे ते प्रमाण कहेवाय छे. अने ज्यांसुधी तेनुं लक्षण निश्चित नथी थयुं, त्यांसुधी ते प्रमाणने प्रमाणपणुं घटी शके नहीं; अने ज्यांसुधी प्रमाणने प्रमाणपणुं घटी शकतुं नथी, त्यांसुधी लक्षणनो निश्चय थइ शकतो नथी; तेम अनवस्थादोषना प्रसंगथी बीजा प्रमाणथी पण तेना लक्षणनो निश्चय थइ शकतो नथी. केमके, जे बीजुं प्रमाण छे, ते निश्चित लक्षणवालुं छे, के, तेथी उलटी रीतनुं छे? जो उलटी रीतनुं कहेशो, तो वक्ष्यमाण दोषनी प्राप्ति थशे. तेम निश्चित लक्षणवालुं पण ठरी शकतुं नथी; केमके, तेना लक्षणनो निश्चय शुं तेथीज छे? के, बीजाथी छे? जो "तेथीज" एम कहेशो तो आगलनी पेठेज अन्योन्याश्रयदोष आवशे; वली जो प्रमाणांतरथी कहेशो तो तेने विषे पण निश्चित अने अनिश्चित पक्षो घटी शकशे नहीं. कह्युं छे के, अनिश्चित लक्षणवाला, प्रमाणलक्षणना निश्चय करवावाला प्रमाणथी, ते प्रमाणलक्षणनो निश्चय कोइ पण प्रकारे न्यायवालो कहेवाय नहीं; आनो भावार्थ एके, निश्चित लक्षणवाला प्रमाणवडे करीने निश्चय करीने, प्रमाणनुं जे लक्षण कहेवुं, ते न्याय्य छे, पण इक्षित प्रमाणना लक्षणने उत्पन्न करनार शास्त्रविना, प्रमाणना लक्षणने निश्चय करनार, एवा प्रमाणना लक्षणनो निश्चय करवो, ते न्याजवी नहीं; तेथी ते प्रमाणनुं प्रमाण अनिश्चित लक्षणवालुं ठर्युं, अने एवी रीते ज्यारे प्रमाणनुं लक्षण नथी मलतुं, त्यारे तेना लक्षणनो निश्चय करवो, ते वात युक्त नथी.

हवे अनिश्चित लक्षणवाला प्रमाणथी पण प्रमाणना लक्षणनो निश्चय थशे, एवी जो वादी शंका करे, तो तेने माटे हवे कहे छे.

सत्यां चास्यां तदुक्त्या किं, तद्धद्विषयनिश्चितेः ॥
ततएवाविनिश्चित्य, तस्योक्तिर्ध्यांध्यमेव हि ॥७॥

अर्थ– एवी रीते प्रमाणना लक्षणनो अनिश्चय सिद्ध होते छते तेनी पेठेज विषयना निश्चयथी ते कहेवाथी शुं? अने तेथीज निश्चय कर्याविना जे तेनु कहेवु, ते बुद्धिनुं अंधपणुंज छे

टीकानो भावार्थ– उपर कह्या प्रमाणे प्रमाणना लक्षणनो अनिश्चय सिद्ध होते छते, ते प्रमाणने अंगीकार करवानुं शुं प्रयोजन छे? अर्थात् कंइ प्रयोजन नथी शामाटे? के, प्रमाणना लक्षणनी पेठेज तेथी तो प्रमेयना लक्षणनो पण निश्चय थशे, अर्थात् जेम निर्णित नहीं करेला लक्षणवाला प्रमाणें करीने प्रमाणनुं लक्षण जो निश्चय करी शकाय, तो प्रमेयने पण तत्वथी अनिश्चितपणानो प्रसंग आवशे एवी रीते वादीना प्रथम पक्षनुं खडन थयु हवे "अनिश्चित्य" एवा वादीना पक्षना दूषण माटे कहे छे जेथी प्रमाणें करीने निश्चय करीने प्रमाणना लक्षणनुं प्रतिपादन उपर कहेली युक्तिथी मोहरूप छे, तेथीज प्रमाणें करीने निश्चय कर्याविना, प्रमाणना लक्षणनुं जे कहेवुं, ते बुद्धिनु अंधपणुज बतावे छे, अर्थात् प्रमाणना लक्षणने प्रतिपादन करनारनी ते केवल मूर्खताज छे, कारण के, ते फोकट प्रयास छे

एवी रीते प्रमाणना लक्षणना विचारनु, निष्प्रयोजनपणु, तथा अनुपायपणुं देखाडीने, उपसंहरता थका प्रकृत धर्मवादनुज विधेयपणु देखाडता थका हवे कहे छे

तस्माद्यथोदितं वस्तु, विचार्यं रागवर्जितैः ॥
धर्मार्थिभिः प्रयत्नेन, तत इष्टार्थसिद्धित. ॥ ८ ॥

अर्थ– माटे राग रहित एवा धर्मना अर्थी माणसोए यथास्थित वस्तुने प्रयत्ने करीने विचारवी, केमके, तेथी ईष्ट अर्थनी सिद्धि थाय छे

टीकानो भावार्थ- जेथी प्रमाण आदिकना लक्षणनो विचार प्रयोजन आदिकथी रहित छे, तेथी धर्मसाधनना स्वरूपवाली यथोक्त वस्तुनुं विवेचन करवुं; कोणे ते विवेचन करवुं? तो के, स्वदर्शनना पक्षपातविनाना, अने उपलक्षणथी परदर्शनपर द्वेषविनाना एवा धर्मना अर्थि माणसोए आदरपूर्वक विवेचन करवुं. केमके, धर्मार्थना साधनभूत एवा विषयना विचारथी वांछित अर्थनी प्राप्ति थाय छे.

एवी रीते तेरमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

चतुर्दशमाष्टकं प्रारभ्यते.

उपरना अष्टकमां कया दर्शनमां तेनाज शास्त्रनी नीतियें करीने, अहिंसादिक जोडी शकाय छे? अने कया दर्शनमां नथी जोडी शकातां? एवो विचार करवानुं तो कह्युं. हवे तेज तेवीज रीते विचारता थका कहे छे.

तत्रात्मा नित्य एवेति, येषामेकांतदर्शनम् ॥
हिंसादयः कथं तेषां, युज्यंते मुख्यवृत्तितः ॥१॥

अर्थ-त्यां आत्मा नित्यज छे, एवी रीते जेउंनो एकांत मत छे, तेउंने मुख्यवृत्तिथी हिंसादिक शीरीते घटी शके?

टीकानो भावार्थ-जे हमेशां अपर अपर पर्यायप्रते गमन करे, ते "आत्मा" कहेवाय; एवो जे आत्मा, ते धर्मसाधनरूप एवा विषयना विचारमां "नित्यज" छे, अर्थात् अस्खलित, उत्पन्न न थइ शके एवो, तथा स्थिररूपवालो छे; अने कोइ पण रीते अनित्य नथी; एवो जे नैयायिक, वैशेपिक, तथा सांख्य आदिकनो अनेकांत वस्तुमां पण एकांत मत छे, तेउंने हिंसा, असत्य, अहिंसा, कर्तापणुं, भोगववापणुं, तथा जन्मादिक पण शी रीते घटी शके? अर्थात् कोइ पण रीते घटी शके नहीं.

अहिं वादी शंका करे के, नित्य आत्मामां पण ते हिंसादिक घटी शके छे, केमके, अमारा शास्त्रोमा कह्युं छे के,

ज्ञानयत्नादिसंबधः, कर्तृत्त्वं तस्य वर्ण्यते ॥
सुखदुःखादिसंवित्ति, समवायस्तु भोक्तृता ॥ १ ॥

अर्थ—ज्ञान यत्नादिकनो संबध, कर्तापणुं, सुख-दुःखादिकना ज्ञाननो समवाय, तथा भोक्तापणु आत्माने कहेलुं छे

निकायेन विशिष्टाभि, रपूर्वाभिश्च सगतिः ॥
बुद्धिभिर्वेदनाभिस्तु, तस्य जन्माभिधीयते ॥ २ ॥

अर्थ—उत्तम अने अपूर्व एवी बुद्धिउंथी आत्मानुं शरीर साथे जोडाण थाय छे, अने वेदनाउंये करीने तेनो जन्म कहेवाय छे

प्रागात्ताभिर्वियोगस्तु, मरणं जीवनं पुनः ॥
सह देहस्य मनोयोगो, धर्माधर्माभिसंस्कृतः ॥ ३ ॥

अर्थ—तेउंनी साथे जे वियोग, ते मरण कहेवाय, अने धर्म अधर्मे करीने संस्कृत थएलो जे देहनी साथे मननो योग, ते जीवन कहेवाय

एवं मरणादियोगेन, हिंसा युक्तावसीयते ॥
तत्प्रतिपक्षभूतापि, किमहिंसा न युज्यते ॥ ४ ॥

अर्थ—एवी रीते मरणादिकना योगें करीने, आत्माने हिंसा घटी शके छे, अने तेथी तेनाथी प्रतिपक्षरूप जे अहींसा ते शामाटे न घटी शके?

सत्यादीन्यपि तेनैव, घटंते न्यायसगतेः ॥
एव हिंसादयो ज्ञेया, वैशेषिकविकल्पनाः ॥ ५ ॥

अर्थ—अने तेथीज सत्यादिक पण आत्माने न्याय पूर्वक घटी शके छे, एवी रीते हिंसादिकनी वैशेषिक कल्पनाउं पण जाणी लेवी

वली सांख्यो आटलुं विशेष माने छे, के,

प्रतिबिंबोदयन्यायाद्, देव तस्योपभोक्तृता ॥
न जहाति स्वरूपं तु, पुरुषोऽय कदाचन ॥ १ ॥

अर्थ–प्रतिबिंबना उदयना न्यायथीज आत्माने भोक्तापणुं घटी शके छे, पण ते पोतानुं स्वरूप कोइ पण वखते तजतो नथी.

एवी रीते सघलुं वादीनुं कहेवुं थयुं; हवे तेने आचार्य महाराज कहे छे के, आत्माने ते हिंसा आदिक मुख्यवृत्तिथी घटी शकतां नथी, पण उपचारथी घटी शके छे. माटे एवी रीते एकांत नित्य आत्माने बुद्धि, वेदना, वियोग आदिक घटी शकतां नथी; अने तेथी आत्मानुं एकांत नित्यपणुं घटी शकतुं नथी; केम के, नित्यने तो एकस्वरूपपणुं होय छे.

हवे ते एकांत नित्य आत्माने ते हिंसादिक मुख्यवृत्तिथी केम घटतां नथी? तेने माटे कहे छे.

निष्क्रियोऽसौ ततो हंति,हन्यते वा न जातुचित् ॥
किंचित्केनचिदित्येवं, न हिंसास्योपपद्यते ॥ २ ॥

अर्थ–आ (एकांतनित्य) आत्मा क्रियारहित छे, तेथी कोइ पण वखते कंइ पण ते हणतो नथी, अने कोनाथी पण ते हणातो नथी; अने तेथी तेने हिंसा लागती नथी.

टीकानो भावार्थ–क्रियाथी जे रहित होय, ते "निष्क्रिय" कहेवाय; एवो आ आत्मा एकांत नित्य छे. हवे ते वादीने कहे छे के, ते नित्य आत्मा अनुक्रमे कार्य करे छे? के, एकी वखते कार्य करे छे? क्रमवडे करीने तो ते कार्य करी शकतो नथी; त्यारे ते एक कार्य करती वेलाए बीजुं कार्य करवाने समर्थ छे, के, असमर्थ छे? असमर्थ तो घटशे नहीं; केम के, नित्यने एकरूपपणुं होवाथी हमेशां तेने असमर्थपणानो प्रसंग आवशे; तेम समर्थ पण घटशे नहीं; केम के, तेथी तो कालांतरमां करवाना सघलां कार्योने करवानो प्रसंग आवशे; वली कारण होते छते संपूर्ण सामर्थ्य पण कार्य नथी करतुं, ते कहेवुं युक्त नथी; कारण के, तेथी तो अहीं कहेवाना कार्यने पण नहीं करवानो प्रसंग आवशे; त्यारे वादी कहे छे के, आत्मा सहकारी कारणना अ-

न्नावथी बीजुं कार्य करी शकतो नथी, त्यारे वली आचार्य महाराज तेने पूछे छे के, ते सहकारीपणुं उपकारवालुं थाय? के उपकारविनानु थाय? जो उपकारविनानुं कहेशो, तो वध्यापुत्रादिकना पण सहकारीपणानो प्रसंग आवशे, अने कदाच उपकारी कहेशो, तो तेनाथी भिन्न उपकार करे छे के, अभिन्न उपकार करे छे? तेमा जो भिन्न मानशो तो, ते हमेशा उपकाररहितज छे, अने जो अभिन्न उपकार कहेशो, तो तो तेनो तेज कर्यो कहेवाशे, अने एवी रीते आत्माना नित्यपणानो नाश थशे, एवी रीते नित्य आत्माने क्रमवडे करीने कार्य करवानुं घटी शकतुं नथी तेम एकी वखते पण ते कार्य करी शकतो नथी, केम के, वर्तमान समयमाज, तेनाथी जन्य एवा सघला कालना कार्यो करवानो तेने प्रसंग आवशे, अने तेवी रीते तो बनी शकतु नथी, माटे जे नित्य ते अक्रिय होय छे, अथवा केटलाक नित्यात्मवादीओ पण आत्मानु अकर्तापणुं माने छे, एवी रीते आत्मा ज्यारे क्रिया विनानो थयो, त्यारे तेनाथी कइ पण सूक्ष्मबादरादिक जीवनी हिंसा थइ शकशे नहीं, तेम वली ते आत्मा कोइ दहाडो कोइ घातकी पुरुषथी दंडादिक वडे हणातो पण नथी, माटे एवी रीते एकात नित्य आत्माने हिंसा घटी शकती नथी

हवे ते हिंसा नहीं घटी शकवाथी शु थाय? ते कहे छे

अभावे सर्वथैतस्या; अहिंसापि न तत्त्वतः ॥

सत्यादिन्यपि सर्वाणि, नाहिंसासाधनत्वतः ॥३॥

अर्थ–सर्वथा हिंसानो आत्माने अभाव होते छते तत्वथी तेने अहिंसा पण घटी शके नहीं, अने तेवीज रीते अहिसाना साधनपणाथी सत्य आदिक सर्व पण तेने घटी शके नहीं

टीकानो भावार्थ–ते हिंसानु आत्माने सर्वथा अविद्यमानपणु होते छते, परमार्थथी तेने अहिसा पण घटी शके नहीं.

अही वादी शंका करे के; ते आत्माने भले अहिंसा न घटे, पण सत्य आदिक धर्मनां साधनो तो तेने घटी शके. तेने माटे तेने कहे छे के, ते सत्य आदिक सघलां धर्मनां साधनो पण तेने घटी शके नहीं; केम के, ते सत्यादिक अहिंसाथीज साधी शकाय छे. माटे साध्यनो अभाव होते छते साधननी क्रिया निरर्थकज छे, केम के आकाशना पुष्पना रक्षण माटे कीला आदिक बांधवानो यत्न करवो, ते लायक कहेवाय नहीं. अने ते सत्यादिको अहिंसाना साधनरूप छे, एम सघला आस्तिकोनो मत छे; अने तेमां पण जैनोनो तो ते मुख्य मत छे. कह्युं छे के,

एकंचियइत्थवयं, निद्दिठ्ठं जिणवरेहिं सव्वेहिं ॥
पाणाइवायविरमण, मवसेसा तस्स रक्खठ्ठत्ति ॥ १ ॥

अर्थ– सघला जिनेश्वरोए प्राणातिपातविरमण नामनुं मुख्य व्रत कहेलुं छे, अने बाकीना बीजां व्रतो तो तेना रक्षण माटे छे.

हवे ज्यारे हिंसाना अभावथी आत्माने सत्यादिक पण नथी घटी शकतां, त्यारे शुं थाय? तेने माटे कहे छे.

ततः सन्नीतितो भावा, दमीषामसदेव हि ॥
सर्वं यस्मादनुष्टानं, मोहसंगतमेव च ॥ ४ ॥

अर्थ– उत्तम नीति पूर्वक ते अहिंसादिकना अभावथी यमनियमादिक सघली क्रियाउं पण असत् ठरे, अने ते तो सघलुं मूढता भरेलुंज कहेवाय.

टीकानो भावार्थ– तेथी तो उत्तम न्यायथी, ते अहिंसादिकना अभावथी, ते यमनियमादिकनी क्रियाउं पण अविद्यमानपणानेज प्राप्त थाय. (यम एटले अहिंसादिकथी निवृत्ति, अने नियम एटले शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, तथा ईश्वरनुं ध्यान) हवे कदाच ते अहिंसादिक आत्माने उपचारथी कोइ माने, तो ते पण अज्ञानयुक्त छे; केमके, एक स्वभाववाला आत्माने मुक्तिनो असंभव होवाथी, तेनेमाटे जे क्रिया करवी, ते अज्ञानयुक्तज छे.

वळी आत्मानुं नित्यपणुं अगीकार करवामा वीजु दूपण ह्वे कहे छे

शरीरेणापि संबंधो, नात एवास्य संगतः ॥
तथा सर्वगतत्वाच्च, संसारश्चाप्यकल्पितः ॥ ५ ॥

अर्थ-अने तेथी करीने आत्माने शरीरनी साथे पण सबंध घटी शकतो नथी, तथा तेने सर्वव्यापकपणु होवाथी तात्विक ससार पण घटी शकतो नथी

टीकानो भावार्थ-ते अनित्य एवा आत्मामा केवल अहिंसादिकोज नथी घटी शकता तेम नही, पण ते निष्क्रिय होवाथी, तेने शरीर साथे पण संवध घटी शकतो नथी केम के, क्रियारहितने सवधक्रिया होती नथी हवे अही आचार्य महाराज वादीने कहे छे के, नित्य एवा आत्माने शरीरनो संवध, पूर्वरूपना त्यागथी थाय छे? के अत्यागथी थाय छे?

जो अत्यागथी कहेशो, तो ते आत्मा शरीरसाथे सवधविनानो थशे, केम के, शरीरना सवधपणारूप जे लक्षण जेनुं, एवा पूर्वरूपने ते अवस्थापणुं छे जो त्यागथी कहेशो तो, आत्माने अनित्यपणु आवशे, केम के, स्वभावना त्यागने अनित्यनुं लक्षणु छे माटे एवा नित्य आत्माने शरीरनी साथे संवध थइ शकतो नथी वळी केटलाको ते आत्माने सर्व भुवनमा व्यापक माने छे, तेथी, तथा निष्क्रिय अथवा नित्य होवाथी, तेने तिर्यंच, नर, नारक, तथा देवपणारूप ससार पण घटी शकतो नथी, केम के, ससार तो तात्विक रीते असर्वव्यापकनेज तथा सक्रिय अने कथंचित् अनित्यनेज घटी शके छे, अने कल्पित रीते तो ससार घटावीये, तो पण ते आकाशना पुष्पनी पेठे हेयोपादेय कोटीने प्राप्त थतो नथी

एवी रीते आत्माने सर्वव्यापकपणाथी ससारनो अभाव होते छते, जे प्राप्त थयु ते हवे कहे छे

ततश्चोर्ध्वगतिर्धर्मा, दधोगतिरधर्मतः ॥
ज्ञानान्मोक्षश्च वचनं, सर्वमेवौपचारिकम् ॥ ६ ॥

अर्थ– अने तेथी तो, "धर्मथी आत्माने ऊर्ध्वगति" अधर्मथी अधोगति, तथा ज्ञानथी मोक्ष थाय छे, एवी रीतनुं (शास्त्रनुं) सर्व वचन औपचारिक गणाय.

टीकानो भावार्थ– एवी रीते आत्माने संसारनो अभाव होते छते, "अहिंसादिक धर्मथी आत्माने स्वर्गादिक ऊर्ध्वगति मळे छे; तथा हिंसादिक अधर्मथी आत्माने नरक आदिक अधोगति मळे छे, तथा पचीश तत्वना ज्ञानथी आत्माने सकळ कर्मोथी मुक्त थवारूप मोक्ष मळे छे," एवी रीतनुं (शास्त्रनुं) वचन, ते सघळुं निरर्थकपणाने प्राप्त थाय.

सांख्योए धर्मथी आत्माने ऊर्ध्वगति नीचे प्रमाणे मानेली छे.

कृष्ण ईश्वर कहे छे के,

धर्मेण गमनमूर्ध्वं, गमनमधस्ताद् भवत्यधर्मेण ॥
ज्ञानेन चापवर्गो, विपर्ययादिष्यते बंधः ॥ १ ॥

अर्थ– धर्मथी आत्मानुं ऊर्ध्वगमन थाय, तथा अधर्मथी आत्मानुं अधोगमन थाय छे, अने ज्ञानथी तेने मोक्ष मळे छे, अने तेथी उलटी रीते आत्माने बंध पडे छे.

पंचविंशतितत्वज्ञो, यत्र तत्राश्रमे रतः ॥
जटी मुंडी शिखी चापि, मुच्यते नात्रसंशयः ॥ २ ॥

अर्थ– पचीश तत्वोने जाणनार एवो जटाधारी, मुंडित, अने चोटलीवालो, गमे ते आश्रममां रक्त थयो थको पण मोक्ष पामे छे, तेमां कंइ पण संशय नथी.

अहीं वादी शंका करे के, आत्माने सर्वव्यापकपणायें करीने संसारनो अभाव होते छते पण, ज्यारे ऊर्ध्वलोकमां पोताना हेतुथीज तेने भोगायतन थाय छे, त्यारे ऊर्ध्वगति देखाय छे; अने

अधोगतिथी अधोगति देखाय छे, एवी रीते जोगायतनना द्वारे करीने आत्माने ऊर्ध्वगत्यादिक थशे

तेने माटे हवे ते वादीने कहे छे

जोगाधिष्ठानविषये, ऽप्यस्मिन् दोषोऽयमेव तु ॥
तद्भेदादेव जोगोऽपि, निःक्रियस्य कुतो जवेत्॥१॥

अर्थ– जोगना स्थानकरूप एवा शरीरना विषयवाळा आ संसारमां पण तेज दोष आवे छे, अने जोग पण क्रियानो छेद होवाथी, निष्क्रिय एवा आत्माने ते शी रीते घटी शके ?

टीकानो जावार्थ– "जोग" एटले विषयने जणावनार एवा मननुं आत्माने विषे स्फटिकोपाधिना न्यायथी जे प्रतिबिंब पडे छे ते, कोइ विंध्यवासी कहे छे के,

पुरुषोऽविकृतात्मैव, स्वनिर्भासमचेतनम् ॥
मनः करोति सांनिध्या, दुपाधिः स्फटिकं यथा ॥१॥

अर्थ– पुरुष विकाररहित आत्मावाळो छे, पण तेने अचेतन एवुं जे मन, ते उपाधि जेम स्फटिकने, तेम पोताना सरखो करी दे छे

ततश्चेद्दृक्परिणतौ, बुद्धौ भोगोऽस्य कथ्यते ॥
प्रतिबिंबोदयः स्वच्छे, यथा चंद्रमसोऽम्भसि॥ २ ॥

अर्थ– जेम स्वच्छ पाणीमा चंद्रना प्रतिबिंबनो उदय थाय छे, तेम एवी रीतनी परिणतिवाळी बुद्धिमा तेनो जोग कहेवाय छे

ते जोगनुं जे स्थानक, ते "जोगाधिष्ठान" कहेवाय, अर्थात् बुद्धि, अहंकार, तथा इंद्रियादिकरूप प्रकृतिनो विकार होते छते, आत्मानो जेमा जोग थाय छे, ते शरीर, अने ते छे विषय ज्या एवा पण आ संसारमा उपर कहेलोज ऊर्ध्वगत्यादिक संसारना अपारपणाने जणाववावाळोज दोष आवे छे, केमके, जोगोनुं स्थानक शरीरज छे, अने तेनी साथे आत्माना निष्क्रियपणाथी तेनो संबंध थवो युक्त नथी, अने ते संबंधना अज्ञानथी तेने धारण

करनार जे संसार, ते औपचारिकज छे. माटे एवी रीते भोगाधिष्ठानरूप शरीरनी कल्पना करवी, ते अयुक्त छे, केमके, भोगनुंज आत्माने जोडावापणुं छे. अने तेथी सघली क्रियाओथी रहित एवा आत्माने, भोगाधिष्ठानना विषयरूप एवो संसारज घटतो नथी, एटलुंज नहीं, पण क्रियाना भेदरूप होवाथी भोग पण तेने क्यांथी घटी शके? अर्थात् नज घटी शके.

एवी रीते आत्माने निष्क्रयज मानवाथी तेने अहिंसा, शरीरनो संबंध, तथा भोगना अभावरूप दोष आवे छे, तेथी आत्माने कर्तापणुं मानवुं योग्य छे; तेने माटे हवे कहे छे.

इष्यते चेत्क्रिया प्यस्य, सर्वमेवोपपद्यते ॥
मुख्यवृत्त्यानघंकिंतु, परसिद्धांतसंश्रयः ॥ ८ ॥

अर्थ– जो ते अनित्य आत्माने कंइ पण क्रिया घटे, तो ते निर्दोष एवुं अहिंसादिक सर्व तेने घटी शके; पण तेमां जैनोए मानेला परिणामवादनो आश्रय लेवो पडे छे.

टीकानो भावार्थ– जो अनित्य आत्माने शरीरसंबंध आदिक कंइ पण क्रिया मानीयें, तो तेने निर्दोष एवुं अहिंसादिक सर्व घटी शके छे; ते पण केवी रीते घटी शके? तो के मुख्यवृत्तिथी केतां परमार्थपणाथी घटी शके. पण तेमां जैनोए मानेला परिणामवादनो आश्रय लेवो पडे छे; पण कदाग्रहविनाना मोक्षनी इछावाला माणसने ते कबुल करवुं अति दुष्कर नथी. माटे एवी रीते एकांत नित्य आत्माने मानवावालाना मतमां अहिंसादिक घटी शकतां नथी; एम नक्की थयुं.

एवी रीते चौदमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

पंचदशमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते द्रव्यास्तिक मतमा जे धर्मवादना विषयभूत एवा अहिंसादिक धर्मना साधनो नथी घटता, ते उपर कह्युं, हवे पर्यायास्तिक मतमा जेम ते नथी घटी शकता, तेम कहे छे

क्षणिकज्ञानसंतान, रूपेऽप्यात्मन्यसंशयम् ॥
हिंसादयो न तत्वेन, स्वसिद्धांतविरोधतः ॥ १ ॥

अर्थ– क्षणिक ज्ञानना संतानरूप एवा आत्मामा संशयरहितपणे, पोतानाज सिद्धांतना विरोधथी, तत्वे करीने हिंसादिको घटी शकता नथी

टीकानो भावार्थ– केवल नित्यरूपमा नहीं, पण क्षणिक ज्ञाननो जे प्रवाह, ते रुप एवा आत्मामा पण, संदेह रीते जेम थाय तेम, हिंसादिको निरुपचार वृत्तिथी घटी शकता नथी, वली ते केवल वचनमात्रथीज नथी घटता तेम नथी, पण तेना पोतानाज शास्त्रना विरोधथी ते घटता नथी

हवे तेना पोतानाज सिद्धातनो ते विरोध देखाडता थका कहे छे

नाशहेतोरयोगेन, क्षणिकत्वस्य संस्थितिः ॥
नाशस्य चान्यतोऽभावे, नवेद्धिंसाप्यहेतुका ॥२॥

अर्थ– नाशना हेतुना अयोगथी क्षणिकपणानी स्थिति छे, अने नाशनो बीजी रीते अभाव होते छते, हिंसा पण हेतुविनानी थाय

टीकानो भावार्थ– नाशना कारणना अयोगथी (बौद्धोनी) क्षणक्षयीपणानी व्यवस्था छे, ते नीचेप्रमाणे, ते क्षणवादीओ कहे छे के, मुद्गरादिक नाना प्रकारना हेतुओथी घटादिकनो नाश थाय छे, त्यारे तेने आचार्य महाराज पूछे छे के, ते नाश ते घटथी भिन्न कराय छे? के अभिन्न कराय छे? जो भिन्न कहेशो, तो ते घटो तेवोने तेवोज रहेवो जोइए, अ[illegible] भिन्न कहे-

शो, तो घडो पोतेज बन्यो, एम थशे; अने ते घडो तो, पोता-संबंधी कारणना समूहवडेज कराणो, माटे तेने कंइ पण करणीय नथी; एवी रीते नाशना हेतुनुं घटमानपणुं नहीं होवाथी, नाश थनारा पदार्थो पोतानी मेळेज नाश पामे छे; अने पोतानी मेळे नाश थनारने तो फरीने उदय थवानी पेहेलांज मोक्ष थवो जोइए.

हवे नाशहेतुना अभावथी जो क्षणिकपणानी व्यवस्था थाय तो तेथी शुं थाय? ते कहे छे.

स्वभावथी व्यतिरिक्त एवा अनाशना हेतुथी, नाशनो अभाव होते छते, सर्व नाशोने निर्हेतुपणुं आवशे; अने तेथी केवळ घटादिकनो क्षयज निर्हेतु थशे तेम नहीं, पण तेथी तो हिंसा पण हेतुविनानी थशे;

हवे ते हिंसाना निर्हेतुपणामां जे दूषण आवे छे, ते कहे छे.

ततश्चास्याःसदा सत्ता, कदाचिन्नैव वा भवेत् ॥
कादाचित्कं हि भवनं, कारणोपनिबंधनम् ॥ ३ ॥

अर्थ–तेथी करीने आ हिंसानुं हमेशां छतापणुं कदाचित् थाय, अथवा नज थाय. अने कदाचित् थवापणुं तो कारणना निबंधनरूप छे.

टीकानो भावार्थ–ज्यारे आ हिंसा हेतुरहित छे, त्यारे तेनुं छतापणुं कोइकज वखते होय, अथवा नज होय; ते एवी रीते केम? तो के, कदाचित् पण जे थवापणुं छे, ते कारणना निबंधनरूप छे. कह्युं छे के,

नित्यं सत्वमसत्वं वा, हेतोरन्यानपेक्षणात् ॥
अपेक्षातो हि भावानां, कदाचित्कत्वसंभवः ॥ १ ॥

अहीं वादी शंका करे के, उत्पादकज हिंसक छे, माटे हिंसाने निर्हेतुपणुं शामाटे कहेवाय? अने निर्हेतुपणाना आश्रयवाळो एवो नित्यसत्वादिकनो दोष पण (आत्माने) केम घटे?

तेने माटे वादीने पूछे छे के, ज्यारे उत्पादकनेज हिंसक क-

होयें, त्यारे ते संताननो के क्षणिकनो हिंसक छे ? (एवा बे विकल्पो थया.)

हवे तेमाथी पेहेला विकल्पनो दोष देखाडता थका कहे छे

नच संतानभेदस्य, जनको हिंसको भवेत् ॥
सांवृतत्वान्न जन्यत्वं, यस्मादस्योपपद्यते ॥ ४ ॥

अर्थ-संतानभेदने उत्पन्न करीनारो हिंसक थई शकतो नथी, केम के, काल्पनिक होवाथी संतानभेदने जन्यपणुं घटी शकतु नथी

टीकानो भावार्थ-"संतानभेद" एटले क्षणनी जे परंपरा, तेने उत्पन्न करनारो हिंसक ठरी शकतो नथी, जेम हणाता एवा हरिणनी क्षणपरंपराना छेदे करीने, उत्पन्न थनारी एवी जे मनुष्यादिकना क्षणनी परपरा, तेने उत्पन्न करनारो जे पाराधि आदिक ते हिसक थइ शकतो नथी ते शामाटे ? के, काल्पनिकभावपणाथी सतानभेदने जन्यपणुं घटी शकतुज नथी, अर्थात् जे पदार्थ जन्य नथी, तेने आकाशपुष्पनी पेठे उत्पन्न करनारो पण नथी, अने एवी रीते संतानभेद अजन्य छे, माटे तेनो उत्पादक पण कोइ नथी, अने तेना अभावथी हिसकनो पण अभाव छे, अने सतानपरपरा काल्पनिक होवाथी तेने अजन्यपणु असिद्ध नथी, केम के, जे काल्पनिक छे, ते आकाशकमलनी पेठे अजन्य छे, अने काल्पनिक सतानरूप छे, माटे ते अजन्य छे, केम के, काल्पनिकपणुं, सतानिथी भेदाभेदना विकल्पद्वारायें चिंतवन कराता सताननें घटी शकतु नथी

हवे बीजा विकल्पना दूषण माटे कहे छे

नच क्षणविशेषस्य, तेनैव व्यभिचारत ॥
तथा च सोऽप्युपादान, भावेन जनको मतः ॥५॥

अर्थ-क्षणविशेषने उत्पन्न करनारो पण, तेनीज (अंत्यद-

णनी) साथे विरोध आववाथी हिंसक ठरी शकतो नथी; अने ते अंत्यक्षण पण उपादनभावें करीने उत्पन्न करनारो मानेलो छे.

टीकानो भावार्थ—मरता एवा भुंड आदिकना क्षण पछी उत्पन्न थनारा मनुष्यादिकना क्षणनो उत्पादक हिंसक थइ शकतो नथी. शामाटे ? तो के, मरता एवा हरिणादिकना अंत्यक्षणें करीने तेमां व्यभिचार आवे छे. वली पाराधिनो क्षणज नहीं, पण मरता एवा हरिणादिकनो अंत्य क्षण पण, परिणाम कारणपणायें करीने उत्पादक मानेलो छे; एवी रीते उपादान क्षणने पण हिंसकपणुं प्राप्त थयुं.

अहीं वादी शंका करे के, उपादान क्षणने भले हिंसकपणुं आवे, तेमां अमने शुं अडचण छे ? तेने माटे हवे ते वादीने कहे छे.

तस्यापि हिंसकत्वेन, न कश्चित्स्यादहिंसकः ॥
जनकत्वाविशेषेण, नैवं तद्विरतिः क्वचित् ॥६॥

अर्थ— तेना पण हिंसकपणायें करीने, कोइ पण अहिंसक थइ शकतो नथी; अने जनकपणाना अविशेषें करीने तेनी विरति क्वचित् पण थती नथी.

टीकानो भावार्थ— पाराधिना अंत्य क्षणना हिंसकपणायें करीने तो एक बाजु रह्युं, पण मरनार एवा हरिणादिकना अंत्य क्षणना हिंसकपणायें करीने पण, कोइ वोधिसत्वादिक पण, अहिंसक न थइ शके. ते शामाटे? के, बुद्धादिक तथा पाराधिकादिना अनंतर क्षणना उत्पादकपणामां अविशेषपणुं छे, माटे; अने उपादान सहकारी भावें करीने तेउमां जो के विशेष मानीयें, तोपण तेमां ज्यारे सहकारीपणाथी हिंसकपणुं आवे, तो उपादानभावथी तो ते सुखेथी थइ शके. ज्यारे ते बन्नेमां कंइ जुदापणुं नथी, त्यारे भले हिंसकपणुं आवे, एवी आशंका करीने कहे छे के, एम नहीं; केमके, आ जनकहिंसकत्ववाला प्रकारें करीने, हिंसानी निवृत्ति

देशांतरे, कालांतरे, पुरुषांतरे, अवस्थांतरे, अने विषयांतरे पण थइ शकती नथी अहीं वादी शंका करे के, जले अहिंसको न थाओ? तेमा अमोने नुकशानी थती नथी तेने माटे हवे तेने कहे छे

उपन्यासश्च शास्त्रेऽस्याः, कृतो यत्नेन चिंत्यताम् ॥
विषयोऽस्य यमासाद्य, हंतैष सफलो भवेत्॥ ७॥

अर्थ- (हे बौद्धो!) ते अहिंसानो अंगीकार तमाराज शास्त्रमा कर्यो छे, माटे तेनो विषय यत्नपूर्वक चितववो, के, जे विषयने पामीने तमारो ते शास्त्रनो उपन्यास सफल थाय

टीकानो भावार्थ-हे बौद्धो!!! तमारा शास्त्रमा ते अहिंसानु प्रतिपादन करेलु छे, कह्यु छे के,

सर्वे त्रसति दंडिनां, सर्वेषा जीवित प्रियम् ॥
आत्मानमुपमं मत्वा, नैवहिंसे न घातये ॥ १ ॥

अर्थ-(बुद्धमतनो कोइ साधु कहे छे के) सघला लोको हथीयारवालाथी बीए छे, केम के, सर्वने जीवित प्रिय छे, माटे तेउने मारा आत्मा सरखा मानीने, हु कोइनी हिंसा के, घात कतो नथी

माटे एवी रीतनो ताराज शास्त्रमा प्रतिपादन करेलो अहिंसानो विषय, तारे आदरपूर्वक चिंतववो, ते विषय केवो छे? तो के जेने मेलव्याथी ते तारा शास्त्रनो उपन्यास सफल थाय

हवे अहिंसाना अघटमानपणाथी, सत्यादिक जे धर्मसाधनो ते पण नहीं घटी शके, तेने माटे कहे छे

अभावेऽस्या न युज्यते, सत्यादीन्यपि तत्वत. ॥
अस्या. संरक्षणार्थं तु, यदेतानि मुनिर्जगौ ॥ ८ ॥

अर्थ-अहिंसानो अभाव होते छते, तत्वथी सत्यादिको पण घटी शकता नथी, केम के, ते अहिंसाना रक्षण माटेज जिनेश्वरोए तेमने कहेला छे, (केम के, सत्यादिक पालवा' विनाना

आचरणमां विद्वान प्रयत्न करतो नथी.) (टीकानो भावार्थ उपर प्रमाणेज छे.)

एवी रीते पंदरमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

षोडशाष्टकं प्रारभ्यते.

ज्यारे एकांत नित्य अने अनित्य आत्मामां हिंसादिको नथी घटतां, त्यारे क्यां घटे छे? तेने माटे हवे कहे छे.

नित्यानित्ये तथा देहाद्, भिन्नाभिन्ने च तत्वतः ॥
घटंते आत्मनिन्यायाद्, हिंसादीन्यविरोधतः॥१॥

अर्थ-नित्य अने अनित्य, तथा देहथी भिन्न अने अभिन्न एवा (स्याद्वादमय) आत्मामां तत्वथी अने न्यायथी अविरोधपणे हिंसादिको घटी शके छे.

टीकानो भावार्थ-नित्यानित्य आत्ममां हिंसादिको घटी शके छे, पण एकांत नित्यानित्य वस्तु कंइ पण कार्य करवाने समर्थ नथी. केम के, रूप बदलाइ जवाथी माटीना पिंडनी पेठे घडो पिंडनुं कार्य करी शकतो नथी; कारण के, माटीना पिंडपणानो भाव बुटी जवाथी तेने अनित्यपणानी प्राप्ति आवे छे; अने पटनी पेठे सर्वथा प्रकारे माटीपणानो अभाव मानवाथी, घडो माटीना पिंडनुं कार्य थइ शकतो नथी; अने माटीना पिंडना पर्यायनो नाश थवाथी, तथा तेनी साथे माटीपणुं पण आववाथी वस्तुने नित्यानित्यपणुं घटे छे. कह्युं छे के,

घटः कार्यं पिंडस्य, पिंडभावानतिक्रमात् ॥
पिंडवत्पटवच्चेति, स्यात्क्षयित्वादिरन्यथा ॥ १ ॥

भावार्थ-पिंड अने पटनी माफक, पिंडपणाने न उलंगी जवाथीज पिंडनुं कार्य घडो थाय छे; अने जो एम नहीं मानीयें, तो घडानी उत्पत्तिज घटशे नहीं.

माटे एवी रीते नित्यानित्यज वस्तु कार्य करवाने समर्थ छे;

अहीं वादी शंका करे के, नित्य अने अनित्यपणाने तो परस्पर विरोध छे, तो ते बन्ने स्वावोलुं एक वस्तुमां होवापणुं केम घटे? तेने माटे हवे तेने कहे छे के, जेम परमार्थ अने व्यवहारनी अपेक्षाथी ज्ञाननी भ्रान्ति अने अभ्रान्ति साथेज थाय छे, तेम द्रव्यथी नित्यपणु, अने पर्यायथी अनित्यपणुं विरुद्ध नथी, तेम द्रव्य अने पर्यायमा परस्पर भेद नथी, केम के, वस्तुमा जे रूप मुख्यताथी नथी रह्युं, ते द्रव्य कहेवाय छे, अने जे मुख्यताथी रह्युं छे, ते पर्याय कहेवाय छे (पण बन्ने साथे तो रह्याज छे) तथा शरीरथी भिन्न अने अभिन्न एवा आत्मामा ते हिंसादिको घटी शके छे, केम के आत्मा शरीरथी भिन्नाभिन्न छे कारण के, जीव अरूपी होवाथी, तथा देह रूपी होवाथी, रूपी अने अरूपीपणा तरिके तेमा भेद छे, तथा देहने स्पर्शादिक थवाथी, जीवनेज सुखदुःखनी प्राप्ति थाय छे, माटे तेमा अभेद पण छे अने जो एकांत रीते तेमा भेद मानीए, तो शरीरे करेला कर्मो भवांतरमा जीवने भोगववा न पडे, अने जो एकांत अभेदज मानीयें, तो परलोकनी हानि थाय, केम के, तेथी तो शरीरना नाशथी जीवनो पण नाश थाय (माटे एवी रीते आत्माने विषे नित्यानित्यपणु तथा देहथी भिन्नाभिन्नपणु केवल कल्पनाथी नहीं पण, परमार्थथीज घटे छे,) तेवा स्याद्वादमय आत्मामा न्यायपूर्वक आश्रव, संवर, बंध, मोक्ष तथा सुख आदिक घटी शके छे, ते पण केवी रीते? तो के, अविरोधपणाथी, एटले एकांत पक्षमा हिंसादिकनी प्राप्तिमा जे दूषणो आवता हता, तेना परिहारें करीने, अर्थात् निर्दोषपणायें करीने घटी शके छे

हवे आत्माना परिणामीपणामा हिंसानो अविरोध देखाडवा माटे कहे छे

पीडाकर्तृत्वयोगेन, देहव्यापत्त्यपेक्षया ॥
तथा हन्मीति संक्लेशा, द्धिंसैषा सनिबंधना ॥२॥

अर्थ–पीडाना कर्तापणाना योगें करीने, तथा देहना नाशनी अपेक्षायें करीने, तथा हुं एने मारुं छुं, एवी रीतना त्रण प्रकारना चित्तना क्लेशथी, आ हिंसा निमित्तवाली कहेली छे.

टीकानो भावार्थ–पीडाना कर्तापणाना योगें करीने, अने देहना नाशनी अपेक्षाएं करीने, तथा हुं आ प्राणीने मारुं, एवी रीतना चित्तना क्लेशपणाथी, परिणाम वादीउंए आ हिंसा निमित्तवाली कहेली छे. परिणामवादमां पीडनारने अने पीडनीयने परिणामपणुं होवाथी पीडानुं कर्तापणुं, देहनो नाश, अने संक्लेश आवे छे; अने एकांत वादमां तो आगल कहेला न्यायें करीने, पीडा कर्तृत्वादिक अघटमान होवाथी हिंसा कारण विनानी थाय छे. जेने माटे कहे छे के, नाशना हेतुयें करीने नाश देहथी भिन्न कराय छे? के, अभिन्न कराय छे? जो भिन्न कहेशो, तो शरीरनी स्थिति तेमनी तेमज रहेवी जोशे; अने अभिन्न कहेशो तो देहज नाश थयो कहेवाशे, अने ते अयुक्त छे. केम के, अभिन्न नाश करवामां तो वस्तुनो नाशज संभवे छे, पण करेलुं संभवतुं नथी; जेम भिन्न उत्पन्न करवामां उत्पत्तिज संभवे.

आ श्लोकें करीने हिंसाना त्रण प्रकारो देखाड्या छे.

अहीं वादी शंका करे के, अमुक प्राणीथी अमुक प्राणीनुं मरण थवानुं छे, एवा पोताना पूर्वे करेलां कर्मथी हिंसा थाय छे? के कोइ बीजी रीतथी हिंसा थाय छे? तेमांथी जो तमो पेहेलो पक्ष मानशो, तो पुरुषांतरे करेली हिंसाने विषे जेम, तेम कर्मना निर्जराना हेतुपणाथी हिंसकने पण वैयावच्च करवावालानी माफक कर्मना क्षयथी प्राप्त थतो उत्तम गुण थशे. अने जो तेथी उलटो पक्ष मानशो, तो, निर्विशेषपणाथी सघलुं हिंसनीय थशे; तेम स्वर्गना सुखादिको पण पोताना कर्मोथी अनुत्पादितज थशे; अने एवी रीते तो कर्मनुं अंगीकारपणुं फोकट थशे; एवी रीते (तमोने) जैनीउंने पण हिंसानो असंभवज थशे.

हवे ते वादीने तेने माटे कहे छे

हिंस्यकर्मविपाकेऽपि, निमित्तत्वनियोगतः ॥
हिंसकस्य भवेदेषा, दुष्टादुष्टानुबंधत ॥ ३ ॥

अर्थ– हिंस्यकर्मना विपाकमा पण, निमित्तपणाना नियोगथी हिंसकने, दुष्टादुष्टना अनुबंधथी, ते हिंसा सभ्भवे छे

टीकानो भावार्थ– हिंस्यकर्मना विपाकनी अभाव कल्पनामा तो एक बाजु रह्यु, पण हिंस्यकर्मना विपाकरूपमा पण निमित्तपणाना अवश्य भावथी हिसकने आ हिंसा लागे छे, जो के, प्रधान हेतुना भावें करीने कर्मना उदयथी मरनारनी हिंसा थाय छे, तो पण तेमा ते हिसकने निमित्तभावथी जोडावापणुं होवाथी, तेने ते थाय छे, एम कहेवाय छे, पण एम नहीं कहेवु के, मरनारना कर्मथीज मारनारने हिसा करवी पडी, माटे तेमा मारनारने दोष नथी केमके, कोइनी प्रेरणाथी हिंसा करवाथी लोकमा पण दोष कहेवाय छे

वली अही वादी शका करे के, जो निमित्तभावथी पण हिंसा मानशो, तो वैद्योने पण तेवी हिंसानो प्रसग आवशे, तेने माटे तेने कहे छे के, तारु केहेवु खरु छे, पण ते हिसा तेउने दोषवाली नथी, केमके, हिंसामा तो दुष्ट आशयपणुं रहेलु छे, माटे दुष्ट आशयपणाथी हिंसा थाय छे, पण शुभ आशयपणाथी हिंसा थती नथी, आथी करीने तें जे हिसकने वैयावच्च करनारनी पेठे, कर्मनी निर्जरा कही हती, ते तारा पक्षनु खडन थयु, केमके, हिसक वैयावच्च करनारनी पेठे शुभ आशयवालो नथी

एवी रीते परिणामी आत्मामा हिसानो सभ्भव देखाडीने, हवे अहिंसानो सभव कहे छे

ततः सदुपदेशादेः, क्लिष्टकर्मवियोगतः ॥
शुभभावानुबंधेन, हंतास्याविरतिर्भवेत् ॥ ४ ॥

अर्थ–तेथी, उत्तम उपदेशथी, तथा क्लिष्ट कर्मोना नाशथी, अने शुभ भावना अनुबंधे करीने, हिंसानी विरति थइ शके छे.

टीकानो भावार्थ– परिणामी आत्मामां जेम हिंसा घटे छे, तेम तेमां अहिंसा पण घटे छे; केवी रीते? तो के, जिनादिकना उपदेशादिकथी, अथवा उत्तम भावोना उपदेशादिकथी, (आदि शब्दथी ज्ञान, श्रद्धा अथवा अभ्युत्थानादिक पण जाणवां) तथा लांबी स्थितिवालां एवां ज्ञानावरणादिक कर्मोना क्षयोपशमथी, तथा उत्तम अध्यवसायना अनुबंधे करीने, हिंसानी निवृत्ति घटे छे; अर्थात् अहिंसा घटे छे.

तेथी शुं थयुं? ते हवे कहे छे.

अहिंसैषा मता मुख्या, स्वर्गमोक्षप्रसाधनी ॥
एतत्संरक्षणार्थं च, न्याय्यं सत्यादिपालनम् ॥५॥

अर्थ– आ उत्तम एवी जे अहिंसा, ते स्वर्ग अने मोक्षने साधवावाली मानेली छे, अने तेना रक्षण माटे सत्यादिकनुं पण पालवापणुं कहेलुं छे.

टीकानो भावार्थ– उपर कहेली अहिंसा उपचाररहित, तथा प्रासंगीक रीते, स्वर्गने तथा अनुक्रमे मुख्य रीते मोक्षने देवावाली विद्वानोए मानेली छे.

अहीं वादी शंका करे के, ज्यारे ते अहिंसाज स्वर्गादिक आपनारी छे, त्यारे सत्यादिक पालवानी शी जरूर छे? तेने माटे तेने कहे छे के, अहिंसारूपी धान्यना रक्षण माटे सत्यादिक वाडनी न्यायथी जरूर छे.

हवे उपर कहेला आत्माना नित्यानित्यपणाना तथा देहथी भिन्नाभिन्नपणाना साधनने विषे प्रमाण देखाडवा माटे कहे छे.

स्मरणप्रत्यभिज्ञान, देहसंस्पर्शवेदनात् ॥
अस्य नित्यादिसिद्धिश्च, तथा लोकप्रसिद्धितः॥६॥

अर्थ– स्मरण, आ ते छे, एवी रीतनुं प्रत्यभिज्ञान, तथा देहना स्पर्शथी थतुं ज्ञान, तेओवडे करीने, तथा लेवी रीतनी लोकनी प्रसिद्धिथी, आत्माना नित्यानित्यादिकपणानी सिद्धि थाय छे

टीकानो भावार्थ– पूर्वे प्राप्त थएला अर्थनु स्मरण, तथा "आ ते छे" एवी रीतनु अभिज्ञान, तथा शरीरनी साथे बीजी वस्तुना स्पर्शनु ज्ञान, तेओथी आत्मानी नित्यानित्यनी, तथा देहथी भिन्नाभिन्नपणानी प्रतीति थाय छे, आत्माने नित्यानित्यनुं विशेषण आपवाथी अहिंसा आदिक सिद्ध थाय छे, तथा स्मरण आदिकथी नित्यानित्यपणु सिद्ध थाय छे, एकात नित्य आत्मामा स्मरणनो संभव होतो नथी, केमके, अनुभवज स्पष्ट रूपे करीने अनुवर्ते छे, नहिंतर नित्यताने हानि आवे तेम अनित्यपणामां पण स्मरणनो संभव नथी, केमके तेथी तो बोध थवा वखतेज नाश थाय, माटे तेमा स्मरण कोने थाय? केमके, एके अनुभवेलु बीजो याद करी शकतो नथी

अहीं वादी शका करे के, अनुभवक्षणना संस्कारथी, एवी रीतनोज स्मरणनो क्षण उत्पन्न थाय छे त्यारे तेने कहे छे के, एम नहीं, केम के, ते गया कालनो लेशमात्र पण वर्तमान कालमा नहीं आववाथी, याद करती वखतना पूर्वकालना अनुभवनो संस्कार कदाच श्रद्धाथी मानीये तो चाले, पण युक्तिवालो मलतो नथी, केम के, प्रथमना अनुभवनो क्षण तो घणा कालनो नाश थएलो होवाथी, ते पछीना क्षणमा तेना संस्कारनो लेशमात्र पण याद आवी शकतो नथी, केम के, एकदमज तुरतना क्षणथी उतावीज रीतनी स्मरणक्षणनी उत्पत्तिनी प्राप्ति थाय छे, अने नित्यानित्य पक्षमा तो अहितना संस्कारनी पेठे, प्रथमना अनुभवक्षणवडे करीने, ते क्षणना प्रवाहरूप जुदा जुदा धर्मना स्वभाववाला आत्माना संगथी, स्मरणनो क्षय, ने उत्पत्ति युक्तिवाली थाय छे वली एम नहीं बोलवु के, आवता

क्षणोमां अनुभवनो संस्कार थतो नथी; ते केम बनी शके? तो के, स्मरणना निर्बीजपणायें करीने, तेने अप्राप्तिनो प्रसंग आवशे; तेम नित्यानित्य आत्मा छे, केमके, बीजी रीते प्रत्यभिज्ञाननी उत्पत्ति थती नथी; कारण के, एकांत नित्यपणुं मानवाथी, साक्षात अनुभवनीज अनुवृत्ति छे, पण तेथी प्रत्यभिज्ञाननो संभव नथी; अने अनित्यपणामां तो पूर्वे दीठेली वस्तुनो नाश थवाथी, तथा पूर्वे देखवावालानो पण नाश थवाथी, अने पछीना नवीन देखवावालानी तथा नवीन वस्तुनी उत्पत्ति थवाथी प्रत्यभिज्ञाननो संभवज होतो नथी; केमके, नहीं देखनार माणसने नहीं देखाएली वस्तुमां प्रत्यभिज्ञान होतुं नथी; केमके तेवा प्रकारनी खातरी नथी. अहीं वादीने कहे छे के, जो तुं एम कहीश के कापेला अने फरीने पाछा उगेला केशादिकमां पण प्रत्यभिज्ञान छे, अने एवी रीते ग्राह्यप्रते तेना व्यभिचारपणायें करीने, ए प्रमाणताथी सघलामां अप्रमाणपणुं आवशे. पण एम नहीं; केमके, प्रत्यक्षने पण कोइक जगोए व्यभिचार आववाथी सर्वमां अप्रामाण्यनो प्रसंग आवशे. तेम आत्मा देहथकी भिन्नाभिन्न जणाय छे; कारण के, जो एम नहीं मानीयें, तो स्पर्शादिकना ज्ञाननो असंभव थशे; केमके जो ते आत्मा देहथी एकांत भिन्न होय, तो देहथी स्पर्श करेली वस्तुनुं तेने ज्ञान न थाय; जेम देवदत्ते स्पर्श करेली वस्तुनुं ज्ञान यज्ञदत्तने थतुं नथी तेम. तेम एकांत अभिन्न पण नथी; केमके, एकांत अभिन्न मानवाथी तो देहमानपणायें करीने, तेने परलोकना अभावनो प्रसंग आवे छे; तेम तेना एक अवयवना नाशथी चैतन्यनी पण हानीनो प्रसंग आवे छे; माटे एवी रीते लोक प्रतीतिथी पण आ- आत्मादिक वस्तुओ नित्यानित्यरूपे छे.

आत्माना व्यापकपणामां प्रथम दोष कह्यो, हवे तेना अव्यापकपणामां तेनो गुण कहे छे.

देहमात्रे च सत्यस्मिन्, स्यात्संकोचादिधर्मिणि ॥
धर्मादेरूर्ध्वगत्यादि, यथार्थंसर्वमेव तु ॥ ७ ॥

अर्थ–शरीर जेवडो, तथा सकोचादिक स्वजाववालो, एवो आ आत्मा होते उते, धर्मादिकथी ऊर्ध्वगति आदिक सघलुं यथार्थ थाय ठे

टीकानो जावार्थ–नित्यानित्यादि स्वजाववाला आत्मामां हिंसादिक घटे ठे, अने शरीर जेवडा आत्मामा सघलु यथार्थ घटे ठे वली ते आत्मा केवो? तो के, सकोच अने विस्तारनो ठे स्वजाव जेनो, एवो ते आत्मा ठे, एवो आ आत्मा होते उते, धर्मथी ऊर्ध्वगति, तथा अधर्मथी अधोगति इत्यादि सघलु उपचाररहित थाय ठे

हवे आ अष्टकने सपूर्ण करता थका कहे ठे

विचार्यमेतत् सद्बुध्या, मध्यस्थेनांतरात्मना ॥
प्रतिपत्तव्यमेवेति, न खल्वन्य. सतां नयः ॥ ८ ॥

अर्थ–माटे ते मध्यस्थपणावाला अतरात्माथी, उत्तम बुद्धियें करीने विचारवु, अने ते अगीकार करवुं, ते शिवाय बीजी उत्तम पुरुषोनी नीति नथी

टीकानो जावार्थ–उपर कहेलो अहिंसादिकनो विचार उत्तम बुद्धिपूर्वक, तथा पक्षपातविनाना अतरात्माथी अथवा मनथी विचारवो, वली ते केवल विचारवो, एटलुज नहीं, पण तेने अगीकार करवो, शा माटे अगीकार करवो? तो के, उपर कहेला लक्षणथी उलटो उत्तम पुरुषोनो न्याय होय नहीं

एवी रीते शोलमा अष्टकनु विवरण संपूर्ण थयु

सप्तदशमाष्टकं प्रारभ्यते.

धर्मवादने देखाडता एवा आचार्ये, तेना तेना शास्त्रोनी अपेक्षाथी हिंसा आदिकनी घटना देखाडी, हवे हिंसाथी दूर रहे-

ता एवा पण कुतीर्थीउए जे मांसनक्षण आदिक अदोषपणे अंगीकार करेलुं ढे, ते तेनाज शास्त्रनी अपेक्षाथी, धर्मवाद देखाडवा माटेज कहे ढे.

तेमां पण हवे प्रथम मांसनक्षण माटे कहे ढे.

नक्षणीयं सता मांसं, प्राण्यंगत्वेनहेतुना ॥
उदनादिवदित्येवं, कश्चिदाहाति तार्किकः ॥ १ ॥

अर्थ–कोइक (बौद्ध) तार्किक कहे ढे के, प्राणीना अंगपणाना हेतुथी, नात आदिकनी पेठे, उत्तम माणसे मांसनक्षण करवुं.

टीकानो नावार्थ–उत्तम माणसे मांसनक्षण करवुं; शामाटे? के, ते प्राणीनुं अंग होवाथी; कोनी पेठे? तो के, नात आदिकनी पेठे; अर्थात् जे जे प्राणीनुं अंग होय, ते नात आदिकनी पेठे नक्षण करवुं; हवे मांस ढे, ते प्रसिद्ध रीते प्राणीनुं अंग ढे, अने चोखा ढे, ते पण एकेंद्रिय प्राणीनुं अंग ढे; एवी रीते मांसनक्षण माटे कोइक महान बुद्धतार्किक कहे ढे.

हवे तेना पूर्वपक्षना दूषण माटे कहे ढे,

नक्ष्यानक्ष्यव्यवस्थेह, शास्त्रलोकनिबंधना ॥
सर्वैव नावतो यस्मात्; तस्मादेतदसांप्रतम् ॥ २ ॥

अर्थ–अहीं नक्ष्य अनक्ष्यनी सघली व्यवस्था, नावथी शास्त्र अने लोकना निबंधनवाली ढे, माटे तेम कहेवुं अयुक्त ढे.

टीकानो नावार्थ– अहीं आचार्य माहाराज ते बौद्धने पुढे ढे के, प्राणीनुं अंग होवाथी जे मांस खावानुं कह्युं, ते स्वतंत्रसाधनवालुं ढे के, प्रसंगसाधनवालुं ढे? जो स्वतंत्र साधनवालुं मानशो, तो, तेमां जे उदन आदिकनी पेठे, एवुं जे दृष्टांत दीधुं ढे, ते साधनथी उलटुं ढे, केम के, बौद्धो वनस्पति आदिक एकेंद्रिय पदार्थने प्राणीतरिके मानता नथी; अने तेथी प्राणीना

अंगतरीके जक्षणना साधनमा ते मलतु आवतु नथी, माटे तें कहेलो हेतु दोषणवालो छे अने प्रसगसाधन पक्षमा, ओदन आदिक जक्षण करवा लायक छे, अने मध, मास तथा कुगली आदिक अजक्ष्य छे, एवी रीतनी जे जक्ष्याजक्ष्य तथा पेयापेयनी व्यवस्था, आ श्लोकमा आप्तना वचन अने लोकव्यवहारना हेतुवाली छे, वली ते व्यवस्था सघली, अने परमार्थथी छे, माटे "उत्तम पुरुषे मासजक्षण करवु" एम कहेवु अयुक्त छे हवे आ आयुक्तने अनेकातिक हेतुपणे देखाडता थका कहे छे

तत्र प्राण्यगमप्येकं, जक्ष्यमन्यत्तु नो तथा ॥
सिद्धं गवादिसत्क्षीर,रुधिरादौ तथेक्षणात् ॥ ३ ॥

अर्थ-त्या प्राणीनु एक अंग जक्ष्य छे, अने बीजु तेम नथी, अने ते गाय आदिकना दूध अने रुधिर आदिकमा प्रत्यक्ष रीते जोवाथी सिद्ध थाय छे

टीकानो जावार्थ- ते शास्त्र अने लोकमा प्राणीनुं एक अग जक्ष्य छे, अने बीजु अजक्ष्य छे, ते वात प्रसिद्धज छे केवी रीते ते प्रसिद्ध छे? तो के, गाय अने माता आदिकना उत्तम दूध अने लोहीमा तथा मासादिकमा पण जक्ष्य अजक्ष्यपणु प्रसिद्ध देखाय छे, माटे एवी रीते प्राणीनु एक अग जक्ष्य छे, अने बीजु अजक्ष्य छे, तेथी हे वादी !! तारो हेतु सपक्ष अने विपक्ष बन्नेमा वर्ततो होवाथी, ते अनेकातिक छे

वली हे वादी !! प्रसगसाधन तो परना अंगीकारने अनुसरीने थाय छे, अने अमारो कइ एवो अजिप्राय नथी, के, प्राणीनुं अग मानीने मासजक्षण करवु, पण तेमा उत्पन्न थता जीवोनी अपेक्षाथी अमो ते खाता नथी, एवु देखाडवामाटे हवे कहे छे

प्राण्यंगत्वेन न च नो, जक्षणीय मिदं मतम् ॥
किंत्वन्यजीवजावेन, तथा शास्त्रप्रसिद्धित. ॥४॥

अर्थ-(अमोए) कंइ प्राणीना अंगपणाथी मांसभक्षण नहीं करवुं, एम मानेलुं नथी, पण तेमां अन्य जीवोनी उत्पत्ति होवाथी अमोए मांसभक्षणनो त्याग करेलो छे; अने मांसमां जीवनी उत्पत्ति थवानी वात शास्त्रमा प्रसिद्ध छे; माटे.

टीकानो भावार्थ- फक्त प्राणीना अंगमात्रना हेतुथी अमोए मांसने अभक्ष्य मान्युं छे, एम नहीं, पण ते मांसनां प्राणी शिवाय बीजा जीवोनी पण तेमां उत्पत्ति थवाथी अमोए तेने अभक्ष्य मान्युं छे. हवे ते मांसमां अन्य जीवोनी उत्पत्ति केम जणाय? ते कहे छे के, एवी रीते आप्तना आगमोमां कहेलुं छे. कह्युं छे के,

आमासुय पक्कासुय, विपच्चमाणासु मांसपेसिसु॥
आयंतियमुववाओ, भणिओयनिगोयजीवाणं॥१॥

अर्थ- काचा तथा पकावेला, अने पकावाता एवा मांसमां निगोदीआ जीवोनी उत्पत्ति कहेली छे.

आ श्लोकें करीने, परमते अज्ञानपणाथी अंगीकार करेला प्रमाणनुं प्रसंगसाधनपणुं दूर कर्युं.

हवे तेउए अंगीकार करेलो हेतु, इष्ट अर्थने साधवावालो नथी, एवुं देखाडता थका कहे छे.

भिक्षुमांसनिषेधोऽपि, न चैवं युज्यते क्वचित्॥
अस्थ्याद्यपि च भक्ष्यं स्यात्, प्राण्यंगत्वाविशेषतः ५

अर्थ-हे बौद्धवादी!!! एवी रीते तो (तमारा) साधुना मांसनो निषेध पण कोइ वखते थइ शकतो नथी; अने वली तेथी हाडकां आदिक पण भक्ष्य थाय; केमके, ते पण प्राणीना अंगरूप छे.

टीकानो भावार्थ- हे बौद्धो!!! तमारा मतवडें करीने, गाइ आदिकना मांसनो निषेध तो एक बाजु रह्यो; पण अतिपूज्य एवा साधुना मांसनो पण निषेध थइ शकशे नहीं; माटे एवी रीते प्राणीना अंगना हेतुथी, मांसनुं भक्षण कालांतर, देशांतर,

अथवा पुरुषांतरनी अपेक्षाथी घटी शकशे नहीं वळी पण तेज वावतनुं अयोग्यपणु कहे ने वळी एम मानवाथी तो केवल साधुनु मास खावुं, एटलुंज नहीं, पण हाडका, शिंगडा, खरी आदिक प्राणीना अंगो पण खावा जोइशे, केमके, मास अने हाडका आदिकमा प्राणीअंगपणु तो सरखुंज ठे, माटे एवी रीते अजदयने जदयपणु कहेवाथी ते हेतु विरूद्धतावालो ठे

वळी एमा वीजुं दूषण पण हवे कहे ठे

एतावन्मात्रसाम्येन, प्रवृत्तिर्यदि चेष्यते ॥
जायायां स्वजनन्यां च, स्त्रीत्वात्तुल्यैव सास्तु ते ॥६॥

अर्थ- (हे वादी ! ! !) वळी प्राणीना अंगपणाना सरखापणाथी जो तुं प्रवृत्ति करीश, तो स्त्रीपणाना हेतुथी स्त्री अने मातामा पण तारे (जोगविलास अने पूज्यपणानी) सरखी प्रवृत्ति करवी पडशे

टीकानो जावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज ठे

हवे प्रकरणना अर्थनो निश्चय करवा माटे कहे ठे

तस्माच्छास्त्रं च लोकं च, समाश्रित्य वदेद् बुधः ॥
सर्वत्रैवं बुधत्वं स्या, दन्यथोन्मत्ततुल्यता ॥ ७ ॥

अर्थ- तेथी शास्त्र अने लोकने आश्रीने पंडिते सर्व वावतमा वोलवु, अने तेथी तेनी पंडिताइ थाय ठे, अने तेथी उलटी रीते वोलवाथी उन्मत्तपणानी तुल्यता थाय ठे

टीकानो जावार्थ- हे वादी ! ! ! उपर कहेला न्यायथी तारु कहेलु साधन वहु दोषपणवालु ठे, माटे शास्त्रना वचनने, अने उत्तम एवा लोकने आश्रीने पंडिते सर्व विषयोमां वोलवु जोइयें, अने तेथी पंडिताइ कहेवाय, अने तेथी उलटी रीते वोलवाथी उन्मत्तपणानी तुल्यता थाय ठे. कह्यु ठे के,

सतां पथा प्रवृत्तस्य, तेजोवृद्धीरवेरिव ॥
यदृच्छयाप्रवृत्तस्य, रूपनाशोऽस्ति वायुवत् ॥ १ ॥

अर्थ– उत्तम माणसोना मार्गे चालनारनी, सूर्यनी पेठे तेजनी वृद्धि थाय छे, तथा स्वेच्छाचारे वर्तनारना रूपनो नाश वायुनी पेठे थाय छे.

मांसभक्षण माटे बौद्धना आप्तोए पण निषेध कर्यो छे, एवुं देखाडता थका हवे उपसंहारमाटे कहे छे.

शास्त्रे चाप्तेन वोऽप्येतन्निषिद्धं यत्नतो ननु ॥
लंकावतारसूत्रादौ, ततोऽनेन न किंचन ॥ ८ ॥

अर्थ– हे बौद्धो! तमारा आप्ते पण लंकावतार सूत्र आदिक शास्त्रमां प्रयत्नपूर्वक मांसभक्षण निषेध्युं छे, माटे ते मांसभक्षण करवानी तमारे पण कंइ जरूर नथी.

टीकानो भावार्थ– हे बौद्धो!!! मांसभक्षण केवल लोकमां अने अमारां शास्त्रमांज निषेध्युं छे, एम नहीं, पण तमारा राग आदिकथी रहित एवा बुद्धे तमारां शास्त्रमां पण आदरपूर्वक निषेध्युं छे; क्या शास्त्रमां ते निषेध्युं छे? तो के, जे "लंकावतारसूत्र" (राक्षसोने शिखामण देवा माटे बुद्धनो अवतार जेमां वर्णव्यो छे; ते शास्त्रमां) तथा "शीलपटल" आदिक शास्त्रमां ते निषेध्युं छे. तेमां कह्युं छे के, "प्राणीनां अंगथी उत्पन्न थएलुं शंखचूर्ण मोहथी (अजाणता) पण खावुं नहीं" एवी रीते तमारांज शास्त्रमां ज्यारे निषेध्युं छे, त्यारे तमारे पण मांसभक्षणनी कंइ जरूर नथी.

एवी रीते सतरमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

अष्टादशमाष्टकं प्रारभ्यते.

माटे एवी रीते, लोक अने शास्त्रमां विरोध आवतो होवाथी, "मांसभक्षण न करवुं" एवी रीते धर्मवाद निश्चय करते छते,

कोइ एम कहे के, मासभक्षणमा कइ दोष नथी, एवा तेना मतना विवेचन माटे हवे कहे छे

अन्योऽविमृश्य शब्दार्थं, न्याय्यंस्वयमुदीरितम् ॥
पूर्वापरविरुद्धार्थ, मेव माहात्र वस्तुनि ॥ १ ॥

अर्थ– अन्य एटले बौद्धथी अन्य एवो ब्राह्मण, मास शब्दे पोते जणावेला न्यायवाला, शब्दार्थने विचार्याविना, आ बाबतमा पूर्वापर विरोध आवे, एवा अर्थनेज कहे छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतो छे)

हवे जे ते कहे छे, ते देखाडे छे

न मांसभक्षणे दोषो, न मद्ये नच मैथुने ॥
प्रवृत्तिरेषा भूतानां, निवृत्तिस्तु महाफला ॥ २ ॥

अर्थ–मासभक्षणमा, मद्यपानमा अने मैथुनमा पण दोष नथी, केमके, ते तो प्राणीओनी प्रवृत्ति छे, अने तेओथी जे निवृत्ति करवी ते, तो महाफलदायक छे

टीकानो भावार्थ– मासभक्षणमा, मद्यपान करवामा, तथा मैथुन सेववामा कर्मना बधरूप दूषण नथी शा माटे? के, तेवी रीतनी प्राणीओनी प्रवृत्ति छे, अने ते मासभक्षणथी जे निवृत्त थवुं, ते अभ्युदय आदिक महाफलने देवावालु छे

हवे " मास शब्द" पोतेज जे अर्थ जणावे छे, ते कहे छे

मां स भक्षयिता मुत्र, यस्यमांसमिहाद्म्यहम् ॥
एतन्मांसस्य मांसत्वं, प्रवदंति मनीषिणः ॥ ३ ॥

अर्थ– जेनुं मास हु अहीं खाउ छु, ते मने परलोकमा भक्षण करशे एवी रीतनु मासनु मासपणु बुद्धिवानो कहे छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थजेवोज छे)

हवे " मासभक्षणमां दोष नथी, " एम शा माटे कह्यु? तेने माटे हवे वादीने कहे छे

इत्थं जन्मैव दोषोऽत्र, न शास्त्राद्बाह्यभक्षणम् ॥
प्रतीत्यैषनिषेधश्च, न्याय्यो वाक्यांतराद्गतेः ॥५॥

अर्थ– एवी रीते, अहीं जन्म थवो, तेज दूषण छे; वळी बीजा वाक्यनी प्राप्तिथी, शास्त्रथी बहारनाभक्षणने आश्रीने आ प्रतिषेध कंइं न्यायवाळो कहेलो नथी.

टीकानो भावार्थ– एवी रीते मांसभक्षणमां भक्षण करनारने, ते मांसनो स्वामी भक्षण करशे, अने तेथी तेने पुनर्जन्म लेवो पडशे; तेज दूषण उत्पन्न थयुं; बीजुं दूषण शोधवानी शी जरूर छे? माटे हे वादी!! तारे शा माटे कहेवुं जोइयें के, "मांसभक्षणमां दूषण नथी." त्यारे वादी कहे के, एवी रीते मांसभक्षणमां दूषण नथी; केमके मांसभक्षणनो निषेध अने तेथी थतुं पुनर्जन्मनुं दूषण तो, आगममां कह्या शिवाय बीजा मांसना भक्षण माटे छे; पण शास्त्रनी विधिपूर्वक मांसभक्षणमां दोष नथी; केमके, तेने माटे "प्रोक्षितं भक्षयेन्मांसं" इत्यादि शास्त्रोनुं वाक्य छे.

हवे ते शास्त्रनुं वाक्य वादी कहे छे.

प्रोक्षितं भक्षयेन्मांसं, ब्राह्मणानां च काम्यया ॥
यथाविधिनियुक्तस्तु, प्राणानामेववात्यये ॥ ६ ॥

अर्थ– वेदना मंत्रथी पवित्र करेलुं मांस, विधिपूर्वक ब्राह्मणोनी अनुज्ञाथी, अथवा जीव जतो होय, ते वखते खावुं.

टीकानो भावार्थ– "प्रोक्षित" एटले वेदना मंत्रोथी पवित्र करेलुं एवुं मांस, ब्राह्मणो खाइ रह्या बाद, तेओनी अनुज्ञाथी, यज्ञ, श्राद्ध अने परोणा आदिकनी विधिपूर्वक खावुं; यज्ञविधि एटले पशुमेध, अश्वमेध आदिक जाणवो. वळी श्राद्धनो विधि श्राद्धशास्त्रमां नीचेप्रमाणे कह्यो छे.

उरभ्रेणेह चतुरः, शाकुनेन तु पंच वै ॥
षण्मासांश्छागमांसेन, पार्षतीयेन सप्त वै ॥ १ ॥
अष्टावेणस्य मांसेन, शौकरेण नवैव तु ॥
दशमासास्तु तृप्यंति, वराहमहिषामिषैः ॥ २ ॥
कूर्मशशकमासेन, मासानेकादशैव तु ॥
संवत्सरं तु तृप्यंति, पयसापायसेन तु ॥ ३ ॥

अर्थ– घेटाना मासथी (पितृजने) चार मासनी, पक्षिना मासथी पाच मासनी, बकराना मासथी छ मासनी, सफेद डाघावाला मृगना मासथी सात मासनी, हरिणना मासथी आठ मासनी, सूकरना मासथी नव मासनी, वराह अने पाडाना मासथी दश मासनी, काचबा अने ससलाना मासथी अगीयार मासनी, अने दूध तथा दूधपाकथी एक वर्षनी तृप्ति थाय छे

वली परोणानो विधि याज्ञवल्क्ये नीचेप्रमाणे कह्यो छे

महोक्ष वा महाज वा, श्रोत्रियाय कल्पयेत् ॥

अर्थ–श्रोत्रियने माटे मोटो बलद अथवा मोटो बकरो मारवो तथा मास पोताना प्राणना रक्षण माटे खावु, केमके कह्यु छे के, सर्व आपदाथी आत्मानु रक्षण करवु

एवी रीते वादीए कह्यु के, शास्त्रसंबंधी मासभक्षणमा दोषनो अभाव अमो कहीयें छीयें, पण सामान्यपणाथी कहेता नथी, एवी रीतना तेना मतनु खंडन करता थका हवे आचार्य महाराज कहे छे

अत्रैवासावदोषश्चे, न्निर्वृत्तिर्नास्य सज्यते ॥
अन्यदाभक्षणादत्रा, भक्षणे दोषकीर्तनात् ॥ ७ ॥

अर्थ– हे वादी !!! जो आ यज्ञ आदिकमा मासभक्षणने निर्दोष मानशो, तो तेनी निवृत्ति सभवशेज नहीं, केमके, ते यज्ञादिक काल शिवाय मासभक्षणनो निषेध छे; (केमके, यज्ञा-

दिकमा विधिपूर्वक मांस खावानुं कह्युं छे.) तेम यज्ञादिकमां नहीं खावाथी दोप कहेलो छे.

टीकानो भावार्थ- हे वादी !!! आ वेदना मंत्रथी पवित्र थएला मांसने भक्षण करवामां जो तुं निर्दोपपणुं मानीश; तो मांसभक्षणनो निपेधज संभवशे नहीं; शा माटे? के, ते यज्ञादिक समय शिवाय बीजी वखते मांस खावानो निपेध छे; माटे एवी रीते बीजे समये मांस खावानी प्राप्तिज नथी; तो तेनी निवृत्ति केम संभवे? केमके, प्राप्तिनो निपेध करवो, ते सफल कहेवाय. तेम आ यज्ञादिकमां मांस नहीं खावाथी दोप कहेलो छे.

हवे ते दोप देखाडे छे.

यथाविधिनियुक्तस्तु, यो मांसं नात्ति वै द्विजः ॥
स प्रेत्य पशुतां याति, संभवानेकविंशती ॥ ७ ॥

अर्थ- यज्ञ आदिक विधिमां जोडाएलो जे ब्राह्मण मांस खातो नथी, ते परलोकमां एकवीश भवसुधी पशुपणाने पामे छे.

टीकानो भावार्थ- शास्त्रनी विधिपूर्वक यज्ञादिकमां जोडाएलो, एवो जे कोइ ब्राह्मण मांस नथी खातो, ते परलोकमां तिर्यंचपणाने पामे छे; केटली मुदतसुधी? तो के एकवीश भवोसुधी तिर्यंचपणाने पामे छे.

हवे मांसभक्षणनी निवृत्ति माटे वादी तरफनीज शंका उगवीने, तेनुं खंडन करता थका कहे छे.

पारिव्राज्यं निवृत्तिश्चेद्, यस्तदप्रतिपत्तितः ॥
फलाभावः स एवास्य, दोपो निर्दोपतैव न ॥८॥

अर्थ- हे वादी !!! जो तुं परिव्राजकपणाने, मांसभक्षणनी निवृत्ति मानीश, तो तेओना (परिव्राजकोना) अनंगीकारपणाथी जे फलनो अभाव कह्यो, तेज दूपण आवशे; माटे मांसभक्षणमां निर्दोपपणुं तो घटी शकतुंज नथी.

टीकानो जावार्थ- हे वादी!!! निवृत्तिना कारणपणाथी परिव्राजकपणाने एटले गृहस्थपणाना अजावनेज जो तु मासजक्षणनी निवृत्तिरूप मानीश, अर्थात् गृहस्थपणामा प्रोक्षितादि मास खावुं, अने परिव्राजक अवस्थामा ते न खावु, एवी रीतनी प्राप्तिपूर्वक जो तुं तेनी निवृत्ति कहीश, तो, परिव्राजकोना अनगीकारपणाथी जे अज्युदयादिक प्रयोजनरूप फलनो अजाव कह्यो, तेज दूषण आवशे, वीजु दूषण शा माटे शोधवुं जोइये? माटे तेथी मासजक्षणमा निर्दोषपणु तो घटी शकशेज नहीं

वली हे वादी! तें जे आगल कह्यु छे के, निवृत्ति महाफलवाली छे, तो ते निवृत्ति निर्वद्य वस्तुथी करवी? के सावद्य वस्तुथी करवी? जो कहीश के, निर्वद्य वस्तुथी करवी, तो तापसपणा आदिकनी पण निवृत्ति (त्याग) करवी पडशे, केमके, तापसपणु निर्वद्य छे, पण तेम करवुं तो पालवशे नहीं अने जो तुं कहीश के, सावद्यथी निवृत्ति करवी, तो मासजक्षणथीज निवृत्ति थइ, केमके, ते सावद्य छे

एवी रीते अढारमा अष्टकनु विवरण समाप्त थयुं

एकोनविंशतीतमाष्टक प्रारज्यते.

एवी रीते "मांसजक्षणमा दोष नथी" एवा वादीना वचननुं खंडन कर्यु, हवे "मद्यपानमा दोष नथी" एवा वादीना वचनने खडन करता थका कहे छे

मद्य पुन प्रमादांग, तथासच्चित्तनाशनम् ॥
संधानदोषवत्तत्र, न दोष इति साहसम् ॥ १ ॥

अर्थ- मद्य (मदिरा) प्रमादनु कारण छे, तथा उत्तम चित्तने नाश करनारु, अने सधान दोषवालु छे, माटे "तेमा दूषण नथी" एम कहेवु धृष्टता जरेलु छे

टीकानो भावार्थ– जे मद चडावे ते "मद्य" कहेवाय; ते मद्य "प्रमादांग" केतां जीवना अशुद्ध परिणामनुं कारण छे; अथवा मदिरा, विषय, कषाय, निद्रा, अने विकथारूप पांच प्रकारना प्रमादमांहेला प्रमादनुं एक अंग छे; तथा शुद्ध चित्तने नाश करनारुं छे; तेम जलथी मिश्रित थएला पिष्ट आदिक द्रव्यमां उपजता जीवोना दोषवालुं छे; माटे एवी रीतना मद्यमां कर्मबंधरूप "दूषण नथी" एम जे कहेवुं ते धृष्टता भरेलुं छे. केमके, तेमां प्रत्यक्ष रीतेज घणां दूषणो देखाय छे. कह्युं छे के,

वैरूप्यं व्याधिपिंडः स्वजनपरिभवः कार्यकालातिपतो
विद्वेषो ज्ञाननाशःस्मृतिमतिहरणं विप्रयोगश्चसद्भिः।
पारुष्यं नीचसेवा कुलबलतनुता धर्मकामार्थहानिः
कष्टं भोःषोडशैते निरुपचयकरा मद्यपानस्य दोषाः॥१॥

अर्थ– वेडोल आकृति, व्याधिनो समूह, स्वजननो पराभव, कार्यना वखतनो नाश, द्वेष, ज्ञाननो नाश, याददास्तीनो नाश, बुद्धिनो नाश, उत्तम माणसोनो वियोग, कठोरता,, नीचनी सेवा, कुल अने बलनी हलकाइ, तथा धर्म, काम अने धननी हानी, एवी रीतना मद्यपानना शोल दोषो, अरे रे ! ! ! हलकाइ करावनारा छे.

अथवा हजु ते केटलाक देखाडीयें ? तेने माटे हवे कहे छे.

किं वेह बहुनोक्तेन, प्रत्यक्षेणैव दृश्यते ॥
दोषोऽस्य वर्तमानेऽपि, तथा भंडनलक्षणः ॥२॥

अर्थ– अहीं वधारे कहेवाथी शुं ? वर्तमान कालमां पण, ते मद्यपाननुं संग्रामरूप दूषण प्रत्यक्षज मालुम पडे छे.

टीकानोभावार्थ– आ मद्यपानना दूषणमाटे वधारे शुं कहीयें ? प्रत्यक्ष प्रमाणथी पण आ मद्यपाननुं असमंजस बोलवारूप, तथा मारामारीरूप दूषण आ वर्तमान कालमां पण द्वारिका नगरीना दाह आदिकथी दृष्टीए आवे छे.

एवी रीते ते मद्यपाननुं दूषण केवल प्रत्यक्ष देखाय छे, एट-लुज नहीं, पण शास्त्रमायें सज्जलाय छे, ते हवे कहे छे

श्रूयते च ऋषिर्मद्यात्, प्राप्तज्योतिर्महातपाः ॥
स्वर्गाङ्गनाभिराक्षिप्तो, मूर्खवन्निधनं गतः ॥ ३ ॥

अर्थ- पुराणोमा सज्जलाय छे के, जेने ज्ञान प्राप्त थएलुं छे, एवो, तथा महा तपस्वी एवो कोइ ऋषि मद्यपानथी देवांगनाओए करीने आक्षिप्त थयो थको, मूर्खनी पेठे नाशने प्राप्त थयो

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

हवे ते ऋषिनुं स्वरुप देखाडता थका कहे छे

कश्चिदृषिस्तपस्तेपे, भीतइन्द्रः सुरस्त्रियः ॥
क्षोभाय प्रेषयामास,तस्यागत्यचतास्तकम् ॥ ४ ॥
विनयेन समाराध्य, वरदाभिमुखंस्थितम् ॥
जगुर्मद्यं तथाहिंसां, सेवस्वाब्रह्म वेच्छया ॥ ५ ॥
सएवं गदितस्ताभि, र्द्वयोर्नरकहेतुताम् ॥
आलोच्य मद्यरूपं च, शुद्धकारणपूर्वकम् ॥ ६ ॥
मद्यं प्रपद्यतद्भोगान्, नष्टधर्मस्थितिर्मदात् ॥
विदंशार्थमजं हत्वा, सर्वमेव चकार सः ॥ ७ ॥
ततश्च भ्रष्टसामर्थ्यः, स मृत्वाडुर्गतिं गतः ॥
इत्थं दोषाकरो मद्यं, विज्ञेय धर्मचारिभिः ॥ ८ ॥

अर्थ- कोइक ऋषि तप तपतो हतो, तेनाथी भय पामीने इन्द्रे, तेने क्षोभावना माटे देवांगनाओने मोकली तेओए त्यां तेनी पासे आवीने, तेने विनयपूर्वक आराध्यो, त्यारे ते ऋषिए तेओने वरदान मागवानुं कह्यु, त्यारे तेओए तेने कह्यु के, मद्यपान, हिंसा अथवा मैथुन तारी इच्छाप्रमाणे सेव ? त्यारे ते ऋषिए हिंसा तथा मैथुनने, नरकना हेतुरूप जाणीने, तथा मद्यने शुद्ध जाणीने, तेने

सेव्युं; तेथी तेनी धर्मनी स्थिति नाश थवाथी, मदथी मुखवास माटे बकरो मारीने, (खाधो) तथा एवी रीते सघलुं (नहीं करवालायक पण कार्य) तेणे कर्युं; पछी तेनुं सामर्थ्य नाश थवाथी ते मरीने दुर्गतिमां गयो; एवी रीते धर्माचारीउंए मद्यने दूषणनी भूमि सरखुं जाणवुं.

टीकानो भावार्थ—कोइक बालतपस्वी मोटी अटवीमां रहीने, अनशन आदिक अघोर तप एक हजार वर्षसुधी तपतो हतो; त्यारे इंद्रे विचार्युं के, आ ऋषिए बहु तप कर्यो, तेथी मने मारी इंद्रनी पदवीपरथी पाडी नाखशे; एवी शंकाथी भय पाम्यो; तेथी तेणे तिलोत्तमा आदिक अप्सराउंने ते ऋषिने चलाववामाटे वनमां मोकली. ते अप्सराउं तेना तपना तेजथी ते वनमां प्रवेश करवाने शक्तिवान न थवाथी, वननी बहार तेनी सन्मुख विकस्वर फूलोना समूहो विखेरीने, तथा मस्तके हाथ जोडीने, तेना गुणोनां गायनसहित उत्तम नाटक करवा लागीउं. ते नाटकथी ते ऋषि तद्गत मनवालो थयो थको, चित्रितनी पेठे थइ गयो; पछी ते अप्सराउं तेनी पासे आवी; तथा ते ऋषिने, विविध प्रकारनां मीठां वचन, नमस्कार, तथा पादपतन आदिकथी आराधीने, तेने प्रसन्न चित्तवालो कर्यो; पछी ज्यारे ते वरदान देवाने आतुर थयो, त्यारे तेउंए तेने सोगंदपूर्वक कह्युं के, मदिरा, हिंसा, अथवा मैथुनमांथी तारी इच्छाप्रमाणे तुं भोगव ? त्यारे ते ऋषिए हिंसा अने मैथुनने शास्त्रप्रमाणे, नरकना हेतु जाणीने, तथा मदीरानी उत्पत्तिने, तेनी मद्यावस्था पेहेलां गोल, धातकी, तथा पाणी आदिकथी उत्पन्न थएली, निर्दोष मानीने, तेने अंगीकार करीने, विचित्र प्रकारना मणि आदिकथी जडेला सोनाना वासणमां रहेलुं, अने अत्यंत सुगंधिपणाथी खेंचाएला भमराना समूहथी विंटाएलुं छे, आकाश मंडल जेथी, तथा इंद्रियरूपी भमराना समूहने ललचावनारुं,

तथा ते अप्सराउंए संभ्रमसहित लावेलुं मद्य तेणे पीधुं, अने तेथी तेनी उत्तम क्रियावाळी धर्मनी व्यवस्था नाश पामी पछी चित्तने विभ्रम थवाथी, मद्यपान उपर नास्तावास्ते एक बकराने हणीने, ते अप्सराउंए कहेलु, तथा नहीं कहेलु एवुं सघळु पाप तेणे आचर्यु, तथा ते मांस पकाववाना लाकडा माटे पोताने पूजा करवानी लाकडानी देवमूर्तिने पण तेणे भागी एवी रीते ते मद्यपानथी नाश थएलु छे, तपरूपी वीर्य जेनु, एवो ते ऋषि मरीने, नरके गयो, माटे एवी रीते धर्मना अनुरागी माणसोए मदिराने दोषनी खाणरूप जाणवु

एवी रीते उंगणीसमा अष्टकनु विवरण समाप्त थयु

त्रिंशत्तमाष्टकं प्रारभ्यते.

हवे "मैथुनमा दोष नथी" एवी रीतना वादीना वचननु खंडन करता थका कहे छे

रागादेव नियोगेन, मैथुनं जायते यत· ॥
तत·कथ न दोषोऽत्र, येन शास्त्रे निषिध्यते ॥ १ ॥

अर्थ–जेथी तु शास्त्रमा मैथुनमा दोषनो निषेध करे छे, पण जे कारणमाटे रागथीज अवश्य भावे करीने, मैथुन थाय छे, तेथी तेमा दोष केम न कहेवाय ?

टीकानो भावार्थ–कामना उदयरूप एवा विषयरागथी अवश्य भावे करीने मैथुननी उत्पत्ति थाय छे, माटे तेमा ते रागरूप, अथवा ते रागथी उत्पन्न थता कर्मरूप दूषण केम न कहेवाय ? के जेथी. तु शास्त्रमा मैथुनने निर्दोष गणे छे ! ! ! भावार्थ एवो के, जे रागजन्य छे, ते दूषणवालु छे, जेम हिंसा, अने तेथी रीते मैथुन पण रागजन्य छे, माटे ते दोषवालु छे

आ हेतु पक्षना एक देशथी असिद्ध छे, एवी परमतनी आशका करता थका हवे कहे छे

वादें कह्युं; आथी करीने, अपवादिक मैथुनमां पण, रागभाव देखाडवाथी पक्षना एक देशमां हेतुनी असिद्धतानो परिहार कर्यो; केमके, यतिनी अपेक्षायें गृहस्थाश्रम हीन छे; अने तेशी शुं? के, धर्मार्थादिक विशेषणवाळुं मैथुन गृहस्थाश्रममां संभवे छे; केमके स्त्रीनो संग्रह गृहस्थावस्थामांज थाय छे; माटे एवी रीतना न्यायथी ते मैथुननी प्रशंसा करवी, ते लायक कहेवाय नहीं; अने वळी अपुत्रीआने गति नथी; एवुं जे वादीए कह्युं, ते तेनाज मतथी अयुक्त छे; केमके कह्युं छे के,

अनेकानि सहस्राणि, कुमारब्रह्मचारिणाम् ॥
दिवं गतानि विप्राणा, मकृत्वा कुलसंततिम् ॥ १ ॥

अर्थ– हजारो ब्राह्मणोना ब्रह्मचारी कुमारो, संतति कर्याविना देवलोकमां गया छे.

मैथुननी प्रशंसा करवी, ते लायक नथी, एवुं जे कह्युं; तेथी हवे अहीं परमतने आशंकता थका कहे छे.

अदोषकीर्तनादेव, प्रशंसा चेत्कथं भवेत् ॥
अर्थापत्त्या सदोषस्य, दोषाभावप्रकीर्तनात् ॥ ५ ॥

अर्थ– हे वादी !!! जो निर्दोष कहेवाथीज ते मैथुननी तुं प्रशंसा मानीश, तो अर्थापत्तिथी सदोषने निर्दोषपणुं कहेवाथी, ते शी रीते थशे?

टीकानो भावार्थ–अहीं वादी एम कहे के, मनु ऋषिए, "मैथुनमां दोष नथी" एम जे कह्युं छे, तेथीज सिद्ध थयुं के, ते प्रशंसनीक छे; त्यारे तेने आचार्य महाराज कहे छे के, जो तुं एम मानीश, तो तेने अदोष कहेवामां प्रशंसा शी रीते थाय ? केमके "वेद भणीने स्नान करवुंज" एवा पूर्वोक्त प्रमाणथी, पापरूप एवा मैथुनने निर्दोष कहेवाथी, "नच मैथुने दोष" ए श्लोकमां जे दोषनो अभावज जणाव्यो हतो, ते अप्रमाण थयुं; अर्थात् जे

अर्थापत्तिथी दोषवालुं निश्चित थएलु छे, तेने अप्रमाणी वचनथी निर्दोष कही शकाय नहीं, एवो भावार्थ छे

अदोष कहेवाथी आनी प्रशंसा युक्त छे, एवु जे वादीए कह्युं, तेमा अदोष कहेवानुंज अन्यायपणु देखाडता थका हवे कहे छे

तत्र प्रवृत्तिहेतुत्वात्, त्याज्यबुद्धेरसंभवात् ॥
विध्युक्तेरिष्टसंसिद्धेरुक्तिरेषा न भद्रिका ॥ ६ ॥

अर्थ– ते मैथुनमा प्रवृत्तिना हेतुपणाथी, तथा ते तजवानी बुद्धिना असंभवथी, वळी ते सेववानी विधि कहेवाथी, तथा तेमा मनोवाञ्छितनी सिद्धि होवाथी, "ते प्रशसनीक छे" ए कहेवु सारु नथी

टीकानो भावार्थ– "ते मैथुन प्रशसनीक छे, एम कहेवुं सारु नथी, शा माटे? के, ते मैथुनमा अर्थापत्ति न्यायथी उपर जे दोष देखाड्यो, तेमा प्राणीओनी प्रवृत्ति होवाथी ते उत्तम नथी अर्थात् प्राणीओने दोषवाळा पदार्थोमा प्रवृत्ति करवानु जे कहेवुं, ते हिंसाने निर्दोष कहेवानी पेठे शोभनीक नथी वळी ते मैथुनने तजवानी बुद्धिनोज असंभव छे, केमके, "मैथुनमा दोष नथी" एवा वचन उपर श्रद्धा राखनारने, ते त्याग करवानी बुद्धिज शी रीते थशे? अने त्याग करवानी बुद्धिनोज ज्यारे अभाव थयो, त्यारे तेमा प्रवृत्ति कोण नहीं करे? हवे ते त्यागबुद्धिनो असंभव शा माटे छे? तो के "शास्त्रमा कहेली नक्षत्रादिक विधिपूर्वक मैथुन सेववामा दोष नथी," एवु वचन मानीने, कयो माणस तेने अंगीकार नहीं करे? वळी अनादि कालनी महामोहनी वासनावाळा जीवोने व्हालु, एवु जे मैथुन, तेने निर्दोष कहेवाथी, तेओने मनगमतीज प्राप्ति थवाथी, तेने निर्दोष गणीने, ते इष्टने कोण माणस अंगीकार न करे? केमके, ते मैथुन सर्वे जीवोने व्हालु छे कह्यु छे के,

कामिनीसंनिभा नास्ति, देवतान्या जगत्त्रये ॥
यां समस्तोऽपि पुंवर्गो, धत्ते मानसमंदिरे ॥ ६ ॥

अर्थ– त्रणे जगतमां स्त्री समान कोइ देवता नथी; के जे ते देवताने सघलो पुरुषवर्ग पोताना मनरूपी मंदिरमां राखे छे.

वली मैथुननुं वीजा प्रकारथी दूषण देखाडता थका कहे छे.

प्राणिनां बाधकं चैत, च्छास्त्रे गीतं महर्षिभिः ॥
नलिकातप्तकणक, प्रवेशज्ञाततस्तथा ॥ ७ ॥

अर्थ– (रुथी) भरेली वांसनी नलीमां (अग्निथी) तपावेला सलीआने नाखवाना दृष्टांतथी, ते मैथुन, (प्रज्ञप्तिआदिक) शास्त्रमां वीरप्रभु आदिक महान मुनिओए, प्राणीओने बाधा करनारुं कह्युं छे.

टीकानो भावार्थ– (श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

आप्तना वचनपूर्वक मैथुननुं वीजुं पण दूषण कहेता थका हवे प्रकरण पुरुं करवा माटे कहे छे.

मूलं चैतदधर्मस्य, भवभावप्रवर्धनम् ॥
तस्माद्विषान्नवत्त्याज्य, मिदं मृत्युमनिच्छता ॥ ८ ॥

अर्थ– अधर्मना मूल समान, तथा भवनी सत्ताने, अथवा भवने उत्पन्न करनारा एवा हिंसा आदिक भावोने वधारनारुं आ मैथुन छे; माटे मृत्युने नहीं इच्छता, अर्थात् मोक्षने इच्छता एवा माणसे, तेने विषमिश्रित अन्ननी पेठे तजवुं.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

एवी रीते वीशमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

एकविंशतीतमाष्टक प्रारभ्यते

एवी रीते कुतीर्थिउने शिखामण आपीने, हवे पोताना समुदायवालाउने शिखामण आपता थका आचार्य महाराज कहे छे

सूक्ष्मबुद्ध्या सदा ज्ञेयो, धर्मो धर्मार्थिभिर्नरैः ॥
अन्यथा धर्मबुद्ध्यैव, तद्विघातः प्रसज्यते ॥ १ ॥

अर्थ–धर्मनी श्रद्धावाला माणसोए हमेशा निपुण बुद्धियें करीने, धर्मने जाणवो, अने जो स्थूल बुद्धिथी जाणीयें, तो (कुतीर्थीउनी पेठे) धर्मना अभिप्रायथीज ते धर्मनो नाश थाय छे.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

हवे तेज देखाडता थका कहे छे

गृहित्वा ग्लानभैषज्य, प्रदानाभिग्रहंयथा ॥
तदप्राप्तौ तदंतेऽस्य, शोकं समुपगच्छत ॥ २ ॥

अर्थ– कोइ रोगी (साधु आदिकने) औषध देवानो अभिग्रह लेइने, ते रोगी नहीं मलवाथी, ते अभिग्रहने अंते शोकने प्राप्त थनाराने जेम, तेम, धर्मबुद्धिथी पण अधर्म थाय छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

हवे ते शोक देखाडे छे

गृहितोऽभिग्रहःश्रेष्ठो, ग्लानो जातो न च क्वचित् ॥
अहो मेऽधन्यता कष्टं, न सिद्धमभिवांछितम् ॥३॥

अर्थ–(ते माणस एवी रीते शोक करे के,) में अभिग्रह तो उत्तम लीधो, पण कोइ (साधु) रोगी थयो नही ! ! माटे अरेरे ! ! ! मारी अधन्यता केटली ! ! ! के, मारु वान्छित कार्य सिद्ध थयु नहीं ! ! !

टीकानो भावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

हवे चालती वातने जोडवा माटे कहे छे

एवं ह्येतत्समादान, ग्लानभावाभिसंधिमत् ॥
साधूनां तत्त्वतो यत्तद्, दुष्टं ज्ञेयं महात्मभिः॥४॥

अर्थ–एवी रीते (धर्मने व्याधात करनारो) जे अभिग्रह लेवो, ते साधुउनी मांदगी चिंतववावालो छे, अने तेथी, तेवा अभिग्रहने, उत्तम लोकोए दुष्ट जाणेलो छे.

टीकानो भावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

एवी रीतनी अर्थापत्तिथी दोपनी प्राप्ति अन्यदर्शनीउए पण अंगीकार करेली छे; ते देखाडता थका हवे कहे छे.

लौकिकैरपि चैषोऽर्थो, दृष्टःसूक्ष्मार्थदर्शिभिः ॥
प्रकारांतरतःकैश्चि, दत एतदुदाहृतम् ॥ ५ ॥

अर्थ–सूक्ष्म अर्थोने जोनारा, एवा केटलाक वाल्मीकि आदिय लौकिकोए पण उपर कहेलो अर्थ, प्रकारांतरथी जोएलो छे; केम के तेउए नीचेप्रमाणे कहेलुं छे.

टीकानो भावार्थ–उपर कहेलो अर्थापत्तिथी उत्पन्न थता दोषवालो अर्थ, केवल जैनीउएज जाण्यो छे, तेम नहीं, पण लौकिक एवा वाल्मीकि आदिक केटलाक ऋपिउए पण जाण्यो छे; तेउ केवा ? तो के, सूक्ष्म अर्थोने जोनारा; (केम के, अतिस्थूल बुद्धिवाला माणसो तेवा अर्थोने जाणी शकता नथी.)

अहीं कोइ शंका करे के, मिथ्यात्विउने सूक्ष्मदृष्टिपणुं शी रीते घटी शके? तो के तेउने पण मतिअज्ञानावरणादिक कर्मनो क्षयोपशम होय छे; माटे कह्युं छे के, "सयसयविसेसाणाउगाहा."

हवे तेउए केवी रीते जाण्यो छे ? तो के, अमोए कहेला प्रकारथी बीजी रीते तेउए जाण्यो छे; केम के, तेउए नीचेप्रमाणे कह्युं छे.

अंगेष्वेव जरा यातु; यत्त्वयोपकृतं मम ॥
नरःप्रत्युपकाराय, विपत्सु लभते फलम् ॥ ६ ॥

अर्थ-(सुग्रीवे पोतानी स्त्री ताराना मलवाथी रामचंद्रजीने कह्युं के) मारा अंगोमा जले घडपण आवो ? (पण सामा उपकार करवावडे करीने पाछु उपकृत मा थाउं) केम के, तमोए (वलिपासेथी मारी स्त्री ताराने छोडावीने) मारापर उपरकार कर्यो छे केम के, उपकृत माणस सामा उपकारमाटे, उपकारीने ज्यारे आपदा पडे, त्यारेज फलने मेलवे छे

टीकानो जावार्थ-(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

एवीज रीते मघली प्रवृत्तिउंमा पण व्याघात आवे छे, ते देखाडता थका हवे कहे छे

एवं विरुद्धदानादौ, हीनोत्तमगतेः सदा ॥
प्रव्रज्यादिविधाने च, शास्त्रोक्तन्यायबाधिते ॥ ७ ॥
द्रव्यादिभेदतो ज्ञेयो, धर्मव्याघातएव हि ॥
सम्यग्माध्यस्थ्यमालंब्य, श्रुतधर्मव्यपेक्षया ॥ ८ ॥
॥ युग्मम् ॥

अर्थ-एवी रीते, विरुद्ध दानादिकमा, तथा शास्त्रमा कहेला न्यायथी बाधित एवा, दीक्षा आदिकना ग्रहण करवामा, हीन प्रते उत्तमपणाना बोधथी, हमेशा, द्रव्यादिकना भेदथी धर्मनो व्याघातज थाय छे माटे सारी रीते मध्यस्थपणाने आश्रीने, आगमनी अपेक्षायें करीने, ते जाणवो

टीकानो जावार्थ- जेम रोगीने धर्मबुद्धिथी औषध देवाना अभिग्रहमा, बुद्धिदोषथी धर्मनो व्याघात थाय छे, तेम शास्त्रमा निवारण करेला एवा आधाकर्मादिक आहार देवामा, अथवा कुपात्रने आहार देवाआदिकमा पण सूक्ष्म बुद्धिविना धर्मनो व्याघातज थाय छे, शामाटे ? के, हीनप्रते उत्तमपणाना ज्ञानथी, ज्यारे दान देवाय, त्यारे प्रगट रीतेज धर्मनो व्याघात थाय छे, वली केवल विरुद्धदानादिकमाज धर्मनो व्याघात थाय छे, तेम

नहीं, पण सर्वविरति अने देशविरतिपणुं ग्रहण करवामां पण सूक्ष्म बुद्धिविना धर्मनो व्याघात थाय छे; ते दीक्षादिकनुं ग्रहण करवुं केवुं ? तो के, आगममां कहेला न्यायथी बाधित; हवे ते विरुद्ध दानादिकमां, तथा प्रव्रज्या आदिकना ग्रहण करवामां द्रव्य, क्षेत्र, काल, अने भावने आश्रीने सूक्ष्म बुद्धिविना धर्मनो व्याघातज जाणवो. द्रव्यथी विरुद्ध दान आपवुं एटले, साधुने अनेषणीय एवो आहार पण उत्तम जाणीने जे आपवो, ते द्रव्यविरुद्ध दान जाणवुं; तेवीज रीते क्षेत्र, काल, अने भावथी पण दाननुं विरुद्धपणुं जाणी लेवुं; तेम उत्सर्गिक शास्त्रने बाधा करनार एवा दीक्षा आदिक ग्रहण करवामां पण द्रव्य, क्षेत्र, काल अने भावथी, सूक्ष्म बुद्धिविना धर्मनो व्याघातज जाणवो. हवे ते धर्मनो व्याघात केवी रीते जाणवो ? तो के, सारी रीते मध्यस्थपणाने आश्रीने, आगमनी अपेक्षायें करीने जाणवो.

एवी रीते एकवीशमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

द्वाविंशतीतमाष्टकं प्रारभ्यते.

विरुद्ध दानादिकमां पण भावशुद्धिथी धर्मज थाय छे, पण तेथी कंइ धर्मनो व्याघात थतो नथी; ते हवे कहे छे.

भावशुद्धिरपि ज्ञेया, यैषा मार्गानुसारिणी ॥
प्रज्ञापनाप्रियात्यर्थं, न पुनः स्वाग्रहात्मिका ॥१॥

अर्थ-(ते विरुद्ध दानादिकमां) भावशुद्धि केतां मनना असंक्लिष्ट भाव पण जाणवो; ते भावशुद्धि केवी ? तो के, जिनेश्वर प्रभुए कहेलो एवो ज्ञानादिकरूप जे मोक्षमार्ग तेने अनुसरवावाली छे; तथा जेमां आगमना अर्थनो उपदेश प्रिय छे, एवी ते छे; पण ते भावशुद्धि कंइ पोताना आग्रहरूपज नथी.

टीकानो भावार्थ-(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

अहीं वादी शंका करे के, पोताना आग्रहरूप, एवी पण ज्ञानशुद्धि शामाटे न थाय? तो तेने कहे छे के, स्वाग्रहमा ज्ञानशुद्धिथी विपरीत एवु ज्ञानमालीन्यपणुं छे, माटे, अने तेज वावत हवे त्रण श्लोकोयें करीने कहे छे

रागो द्वेषश्च मोहश्च, ज्ञानमालिन्यहेतव ॥
एतदुत्कर्षतो ज्ञेयो, हंतोत्कर्षोऽस्य तत्वतः ॥२॥

अर्थ-राग, (अप्रीतिरूप) द्वेष, तथा (अज्ञान छे, लक्षण जेनु एवो) मोह, आत्माना परिणामोने अशुद्ध करवाना हेतुरूप छे, (अर्थात् स्वाग्रहादिक ज्ञानना कारणरूप छे,) माटे तेओना उपचयथी परमार्थे करीने, स्वाग्रहादिकनो पण उपचय जाणवो

टीकानो ज्ञावार्थ-(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे) तेथी शु? ते हवे कहे छे

तयोत्कृष्टे च सत्यस्मिन्, शुद्धिर्वे शब्दमात्रकम् ॥
स्वबुद्धिकल्पनाशील्प, निर्मितं नार्थवद्भवेत् ॥ ३ ॥

अर्थ- एवी रीते राग- द्वेषादिकनो उत्कर्ष थये छते, जे ज्ञानशुद्धि थवी, ते तो फक्त कहेवामात्रज छे, केमके, पोतानी बुद्धिथी एटले प्रमाणविनानी बुद्धिथी बनावटनी जे कला तेथी बनावेलु जे शब्दरूप ते सार्थक थतु नथी

टीकानो ज्ञावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे) हवे स्वाग्रहना ज्ञानमालिन्यना स्वरूपने स्पष्ट करता थका कहे छे

न मोहोद्रिक्तताज्ञावे, स्वाग्रहो जायते क्वचित्॥
गुणवत्पारतन्त्र्य हि, तदनुत्कर्षसाधनम् ॥ ४ ॥

अर्थ- मोहनो (तथा उपलक्षणथी राग अने द्वेषनो) उन्नालो थयाविना कोइ पण वस्तुमा (ज्ञानशुद्धिथी उलटा लक्षणवालो) स्वाग्रह थतो नथी, माटे ते मोहादिकनो उन्नालो नहीं

थवानुं साधन, (ज्ञान अने क्रियारूप) गुणोने धारण करनाराउंने आधीन रहेवारूप छे.

टीकानो ज्ञावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे गुणवाननुं आधीनपणुं, मोहना उछालाने अटकाववानुं साधन छे, एवुं आगमना जाणनाराउंना आचरणथी समर्थन करता थका कहे छे.

अतएवागमज्ञोऽपि, दीक्षादानादिषु ध्रुवम् ॥
क्षमाश्रमणहस्तेने, त्याह सर्वेषु कर्मसु ॥ ५ ॥

अर्थ- (गुणवाननुं आधीनपणुं मोहना उछालाने अटकाववनारुं छे.) तेथीज आप्तना वचनने जाणनार (एवो साधु पण) कहे छे के दीक्षा देवा आदिक उद्देश समुद्देष विगेरे, सर्वे कार्योमां खरेखर सद्गुरुना हाथनोज उपयोग करवो; (पण स्वतंत्र थइने पोताने हाथेज दीक्षा लेवी नहीं; अर्थात् उत्तम गुरुने हाथे दीक्षा लेवी.)

माटे एवी रीते गुणवानना आधिनपणाथीज मोहना उछालाने अटकावनारी ज्ञावशुद्धि थाय छे, पण ते शिवाय बीजी रीते थती नथी.

टीकानो ज्ञावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे तेज कहे छे.

इदं तु यस्य नास्त्येव, स नोपायोपिवर्तते ॥
ज्ञावशुद्धेःस्वपरयो, र्गुणाद्यज्ञस्य सा कुतः ॥ ६ ॥

अर्थ- उपर कहेलुं गुणवाननुं आधीनपणुं जेने नथी, ते माणस ज्ञावशुद्धिना उपायमां पण वर्ती शकतो नथी; केमके, आत्माना अने आत्माथी इतर एवा पुद्गल आदिकना गुण दोषो जेणे जाण्या नथी, तेने ते ज्ञावशुद्धि क्यांथी थाय?

टीकानो ज्ञावार्थ- जे प्राणीने उपर कहेलुं गुणवाननुं आधी-

नपणु नथी, ते प्राणी, जावशुद्धि तो एक बाजु रही, पण तेना उपायमार्ये वर्ती शकतो नथी ते शामाटे वर्ती शकतो नथी ? तो के, ते माणस आत्मा अने आत्माथी उत्तर एवा परपुद्गलिक संबधि गुण दोषोने जाणी शकतो नथी, माटे तेने ते जावशुद्धि क्यांथी थाय

हवे जेवी रीतनी जावशुद्धिमा धर्मनो व्याघात थतो नथी, ते देखाडवा माटे कहे छे

तस्मादासन्नजव्यस्य, प्रकृत्या शुद्धचेतसः ॥
स्थानमानांतरज्ञस्य, गुणवद्बहुमानिनः ॥ ७ ॥
औचित्त्येन प्रवृत्तस्य, कुग्रहत्यागतो भृशम् ॥
सर्वत्रागमनिष्ठस्य, जावशुद्धिर्यथोदिता ॥ ८ ॥

अर्थ– ते गुणवानना आधीनपणाथी, नजदीक छे मुक्ति जेने एवा जव्य माणसने, तथा उत्तम प्रकृतिथी राग आदिकथी रहित चित्तवाळाने, तथा आचार्यादिकनो दरजो अने तेनी पूजाना अतरने जाणनारने, तथा सद्गुणीनो पक्ष करनारने, तथा उचितपणाथी प्रवर्तनारने, तथा कदाग्रह तजीने अत्यत रीते सर्व बाबतमा आगमना वचनने प्रमाण गणनाराने, परमार्थवाळी जावशुद्धि थाय छे

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थते मळतोज छे)

एवी रीते बावीसमा अष्टकनु विवरण समाप्त थयु

त्रयोविंशतीतमाष्टक प्रारज्यते.

धर्मना अर्थी माणसे जावशुद्धि करवी जोइयें, ते तो कह्यु हवे ते जावशुद्धिने इच्छता एवा माणसे, शासनने थती मलीनतानु सर्वथा प्रकारे रक्षण करवु, नहीं तो महा अनर्थ थाय, एम देखाडता थका हवे कहे छे

य: शासनस्य मालिन्ये, ऽनाभोगेनापि वर्तते
स तन्मिथ्यात्वहेतुत्वा, दन्येषां प्राणिनां ध्रुवम् ॥१॥
बध्नात्यपि तदेवालं, परं संसारकारणम्
विपाकदारुणं घोरं, सर्वानर्थविवर्धनम् ॥ २ ॥

अर्थ–जे कोइ साधु शासनना मलीनपणामां अजाणतां पण वर्ते छे, ते साधु, ते शासनमां बीजा प्राणीउने पण मिथ्यात्वना हेतुपणाथी खरेखर, उत्कृष्टुं, अने संसारना कारणरूप, तथा विपाकें करीनें दारुण, भयंकर, अने, सघला अनर्थने वधारनारुं, एवुं मिथ्यात्वमोहनीय कर्म बांधे छे.

टीकानो भावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.

हवे कहेलाथी उलटा गुणना प्रतिपादन माटे कहे छे.

यस्तून्नतौ यथाशक्ति, सोपि सम्यक्त्वहेतुताम्
अन्येषां प्रतिपद्येह, तदेवाप्नोत्यनुत्तरम् ॥ ३ ॥

अर्थ–जे माणस पोतानी शक्तिप्रमाणे शासननी उन्नतिमां वर्ते छे, ते पण बीजाउना सम्यक्त्वना हेतुने पामीने आ जन्ममां तेज क्षायिक सम्यक्त्वने पामे छे.

टीकानो भावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे सम्यक्त्वनुं स्वरूप कहे छे.

प्रक्षीणतीव्रसंक्लेशं, प्रशमादिगुणान्वितम्
निमित्तं सर्वसौख्यानां, तथा सिद्धिसुखावहम् ॥ ४ ॥

अर्थ– क्षीण थएल छे, तीव्र क्लेश जेमां, तथा शांत गुणवालुं, अने सर्व सुखनुं निमित्त, तथा मोक्षरूपी सुखने धारण करणारुं सम्यक्त्व छे.

टीकानो भावार्थ–"क्षीण" एटले निःसत्ताने प्राप्त थएल छे, तीव्र एवो अनंतानुबंधि कषायोदयना लक्षणवालो क्लेश जेमां, एवुं

सम्यक्त्व छे; (केम के, अनंतानुबंधि कषायनो उदय थये छते सम्यक्त्व प्राप्त थतुं नथी) वली ते सम्यक्त्व प्रशम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा, तथा आस्तिकपणारूप गुणोएं करीने सहित छे, अथवा सम्यग्दृष्टिने, उत्तम बोधना सामर्थ्यथी प्रशमआदिक उत्तम गुणो थाय छे कह्युं छे के

तत्त्वास्य विषयतृष्णा, प्रभवत्युचैर्नदृष्टिसंमोहः
अरुचिर्धर्मपथ्ये, न च पापात्क्रोधकंडुतिः ॥ १ ॥

अर्थ–सम्यग्दृष्टिने विषयनी तृष्णा होती नथी, तेम उचा प्रकारे दर्शनमोहनी पण तेने होती नथी, धर्मरूपी पथ्यमा तेने अरुचि थती नथी, तेम पापथी क्रोधरूपी खरज पण तेने थती नथी.

अही आदिशब्दथी जिनशासननी कुशलता आदिक बीजा गुणोनु पण ग्रहण करवु वली ते सम्यक्त्व सघला मनुष्यभव अने देव भवना आनदनु कारण छे, वली ते मोक्षसुखने प्राप्त करनारु छे

हवे पूर्वे कहेली प्रवचननी मलीनताने दूर करवानो उपदेश देता थका कहे छे

अतः सर्वप्रयत्नेन, मालिन्य शासनस्य तु ॥
प्रेक्षावता न कर्तव्यं, प्रधान पापसाधनम् ॥५॥

अर्थ– आथी करीने सर्व आदरें करीने, बुद्धिवान माणसे शासनने मलीनता लगाडवी नहीं, केम के, मलीनता लगाडवी ते उत्कृष्ट अशुभ कर्मनुं साधन छे

ते एम केम छे ? ते हवे कहे छे

अस्माच्छासनमालिन्या, ज्जातो जातो विगर्हितम्॥
प्रधानभावादात्मानं, सदा दूरी करोत्यलम्॥६॥

अर्थ–आ शासनना मलीनपणाथी, (प्राणी) भवभव प्रते आत्माने निंदित करे छे, तथा हमेशा उत्कृष्ट भावथी अतिशयपणायें करीने तेने दूर करे छे

टीकानो भावार्थ- (उपरनां श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

शासनना मलीनपणाने तजवानो उपदेश दइने, हवे तेनुंज जे कंइ करवुं, तेनो उपदेश देता थका कहे छे.

कर्तव्या चोन्नतिः सत्यां, शक्ता विह नियोगतः॥

अवंध्यं बीजमेपाय, तत्वतः सर्वसंपदाम् ॥ ७ ॥

अर्थ- पोतानी शक्तिप्रमाणे आ जिनशासनमां अवश्यें करीने, उन्नति केतां प्रभावना करवी; केम के, ते प्रभावना तत्वथी सर्व संपदाउनुं फल उपजावनारूं बीज छे.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

ते केम ? ते हवे कहे छे.

अत उन्नतिमाप्नोति, जातौ जातौ हितोदयम्॥

क्षयं नयति मालिन्यं, नियमात्सर्ववस्तुषु ॥ ८ ॥

अर्थ- एवी रीते जिनशासननी उन्नति करवाथी, भवभव प्रते (प्राणी) जाति, कुल, रूप, अने विभव आदिकथी उन्नतिने पामे छे; अने जाति, कुल, बुद्धि आदिक सर्व भावोमां पोतानां दुपणोनो अवश्यें करीने नाश करे छे.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

एवी रीते त्रेवीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

चतुर्विंशतीतमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते शासननी उन्नति करवाथी प्राणी हितना उदयवाली उन्नतिने पामे छे; एम कह्युं; त्यारे अहीं कोइ शंका करे के, अहितना उदयवाली पण शुं कोइ उन्नति छे? त्यारे तेने कहे छे के, तेवीपापनुबंधि पुण्यजन्य उन्नति छे; अने तेना पुण्यापुण्यना विचारमां नीचेप्रमाणे चार भांगाउ थाय छे. एक पुण्यानुबंधि पुण्य,

बीजु पापनुबंधि पुण्य, त्रीजु पापानुबंधि पाप, अने चोथुं पुण्यानुबंधि पाप तेउंमांथी पेहेला भागानु स्वरूप हवे कहे छे

गेहाद्गेहांतरं कश्चि, छोभनादधिक नरः ॥
याति यद्वत्सुधर्मेण, तद्वदेवभवाद्भवम् ॥ १ ॥

अर्थ– जेम कोइक पुरुष सारा घरमांथी निकलीने तेथी वधारे सारा घरमा जाय छे, तेम पुण्यानुबंधि पुण्यथी प्राणी मनुष्यरूपी सारा भवमांथी निकलीने, तेथी वधारे सारा एवा देवभवमा जाय छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

हवे बीजा भागानुं स्वरूप कहे छे

गेहाद् गेहांतरं कश्चि, छोभनादितरन्नरः ॥
याति यद्वदसद्धर्मा, तद्वदेवभवाद्भवम् ॥ २ ॥

अर्थ–जेम कोइ पुरुष सारा घरमांथी निकलीने नठारा घरमा जाय छे, तेम प्राणी पापानुबंधि पुण्यथी मनुष्य रूपी सारा भवमांथी निकलीने, नारकी आदिक नठारा भवमा जाय छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

हवे त्रीजा भागानु स्वरूप कहे छे

गेहाद्गेहांतरकश्चि, दशुभादधिकं नर. ॥
यातियद्वन्महापापा, तद्वदेव भवाद्भवम् ॥ ३ ॥

अर्थ– जेम कोइ पुरुष नठारा घरमांथी निकलीने, तेथी पण वधारे नठारा घरमा जाय छे, तेम प्राणी पापानुबंधि पापथी तिर्यंच आदिकना भवथी निकलीने, तेथी वधारे नठारा एवा नारकी आदिकना भवमा जाय छे

हवे चोथा न्नांगानुं स्वरूप कहे छे.

गेहाद्गेहांतरंकश्चि, च्छुन्नादितरन्नरः ॥

यातियद्वत्सुधर्मेण, तद्देवन्नवाद्न्नवम् ॥ ४ ॥

अर्थ– जेम कोइ पुरुष नगारा घरमांथी निकलीने, सारा घरमां जाय छे, तेम प्राणी पुण्यानुबंधि पापथी तिर्यंच आदिकना न्नवथी निकलीने, मनुष्यादिक न्नवमां जाय छे.

हवे उपदेश कहे छे.

शुन्नानुबंध्यतः पुण्यं, कर्तव्यं सर्वथा नरैः ॥

यत्प्रन्नावादपातिन्यो, जायंते सर्वसंपदः ॥ ५ ॥

अर्थ– आथी करीने, माणसोए सर्वथा प्रकारे, पुण्यानुबंधी पुण्य करवुं; केजेना प्रन्नावथी नाश न थाय एवी, सघली सोन्नादिक संपदाउ थाय छे.

टीकानो न्नावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थ मलतोज छे.)

हवे, ते पुण्यानुबंधि, पुण्य शी रीते कराय, ते कहे छे.

सदागमविशुद्धेन, क्रियते तच्च चेतसा ॥

एतच्च ज्ञानवृद्धेच्यो, जायते नान्यतः क्वचित् ॥६॥

अर्थ– ते पुण्यानुबंधि पुण्य, हमेशां आगमथी शुद्ध थएला चित्तथी कराय छे; अने आगमथी शुद्ध एवुं जे चित्त, ते ज्ञानथी वृद्ध एवा माणसोनीउत्तम उपासना करवाथी थाय छे पण बीजी रीते थतुं नथी.

टीकानो न्नावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

जो चित्त शुद्ध न होय, तो शुं थाय? ते हवे कहे छे.

चित्तरत्नमसंक्लिष्टं, सांतरं धनमुच्यते ॥

यस्य तन्मूषितं दोषै, स्तस्यशिष्टाविपत्तयः ॥ ७ ॥

अर्थ– रागादिक दोषोयें करीने वर्जित एवुं जे चित्तरूपी रत्न,

ते आध्यात्मिक धन कहेवाय छे, माटे जे माणसनु ते चित्तरूपी रत्न, राग आदिक (चोरोथी) लुटाएलुं छे, ते माणसने कुगतिगमनरूपी आपदाओज बाकीमा रहे छे

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थ मलतोज छे)

हवे ते पुण्यानुबंधिपुण्यनो उपाय बतावे छे

दयाभूतेषु वैराग्यं, विधिवद्गुरुपूजनम् ॥
विशुद्धा शीलवृत्तिश्च, पुण्यं पुण्यानुबंध्यदः ॥८॥

अर्थ– प्राणीओमा दया, वैराग्य, विधिपूर्वक गुरुपूजन, तथा शुद्ध एवी शीलनी वृत्ति, ते पुण्यानुबंधी पुण्य कहेवाय

टीकानो जावार्थ– सामान्य जीवो प्रते दया, वैराग्य, तथा श्रद्धा, सत्कार आदिक विधिपूर्वक जक्तपानादिकथी गुरुपूजन तथा हिंसा, अनृत, अदत्त, अब्रह्म, अने परिग्रहना त्यागरूप शुद्धवृत्ति, तेओथी पुण्यानुबंधि पुण्य थाय छे

एवी रीते चोवीसमा अष्टकनु विवरण संपूर्ण थयु

पचविंशतीतमाष्टक प्रारज्यते.

हवे तेज प्रधानफलथी देखाडता थका कहे छे

अतःप्रकर्षसंप्राप्ता, विज्ञेयं फलमुत्तमम् ॥
तीर्थकृत्त्वं सदौचित्य, प्रवृत्त्या मोक्षसाधकम् ॥१॥

अर्थ– ते पुण्यानुबंधि पुण्य वृद्धि पामवाथी, उचित प्रवृत्तिथी मोक्षने साधनारु, एवु तीर्थंकररूपी उत्तम फल जाणवु

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

हवे ते उचित प्रवृत्तिनु स्वरूप कहे छे

सदौचित्यप्रवृत्तिश्च, गर्भादारभ्य तस्य यत् ॥
तत्राप्यभिग्रहो न्याय्यः, श्रूयते हि जगद्गुरो ॥२॥

अर्थ– हमेशा औचित्यनी प्रवृत्ति, गर्भथी माडीने तीर्थंकरने

होय छे; केमके, ते गर्भावस्थामां पण जगतना गुरु एवा, श्रीमहावीर स्वामीनो उचित अभिग्रह संभलाय छे.

हवे ते अभिग्रह केवो? ते कहे छे:

पित्रुद्वेगनिरासाय, महतां स्थितिसिद्धये ॥
इष्टकार्यसमृद्ध्यर्थ, मेवं भूतो जिनागमे ॥ ३ ॥

अर्थ- मावापना उद्वेगनो नाश करवा माटे, तथा महानोनी सिद्धि माटे तथा मोक्षरूपी जे इष्टकार्यनी समृद्धि, तेने माटे, एवी रीतनो अभिग्रह आप्तना आगममां संभलाय छे.

हवे जेवो ते अभिग्रह संभलाय छे, ते कहे छे.

जीवतो गृहवासेऽस्मिन्, यावन्मे पितराविमौ ॥
तावदेवाधिवत्स्यामि, गृहानहमपीष्टतः ॥ ४ ॥

अर्थ- (श्री वीरप्रभुए अभिग्रह लीधो के,) ज्यांसुधी आ गृहस्थावासमां मारां मातपिता जीवे, त्यांसुधी हुं पण मारी इच्छाथी घरमां रहीश.

टीकानो भावार्थ-श्री महावीर स्वामी भगवान देवभवथी चवीने, पूर्वे उपार्जन करेला नीचगोत्रकर्मना उदयथी ब्राह्मणकुंडग्राम नामना नगरमां ऋषभदत्त नामना ब्राह्मणनी देवानंदा नामनी स्त्रीनी कुक्षीए उत्पन्न थया; पछी एंसीमे दिवसे पोतानुं आसन चलित थवाथी, इंद्रे अवधिज्ञानथी ते वात जाणीने, हरिणगमेषी नामना देवनी मारफते, क्षत्रीयकुंड नामना नगरना सिद्धार्थ राजानी त्रीशला नामनी राणीना गर्भमां प्रभुने संक्रमाव्या. त्यारे देवानंदा, पोते जोएलां चौद स्वप्नना अपहारथी पोताना गर्भनो संहार जाणीने, अत्यंत शोकरूपी समुद्रमां डुबवा लागी; त्यारे भगवाने अवधिज्ञानथी जाण्युं, के, अहो! मारा निमित्तथीज आने आटलुं बधुं दुःख थयुं!!! पण हवे मारा अंगहलनथी आ त्रिशलामाताने दुःख न थाय, तो सारूं, एम विचारिने भ-

भगवान गर्भस्थानमा स्थिर रह्या, त्यारे त्रिशलामाताए विचार्युं के, अरे! मारो गर्भ गली गयो के शु? इत्यादि शोक करती थकी महा दु:खने प्राप्त थइ, त्यारे भगवान स्फुरायमान थया, अने विचार्युं के, अहो! हजु मने जोयो नथी, त्याज मातापितानो मारापर ज्यारे आटलो स्नेह छे, त्यारे मने जोया बाद, ज्यारे हुं दीक्षा लेइश, त्यारे तो तेमने महासंताप थशे माटे तेमनो संताप दूर करवा माटे, ज्यासुधी तेओ जीवशे, त्यासुधी हु दीक्षा लेइश नहीं," एवी रीतनो सातमे महिने तेमणे गर्भावासमाज अभिग्रह लीधो

अहीं कोइ शका करे के, एवी रीतनो अभिग्रह करवाथी, मातपिताना उद्वेगनो नाश थाय, अने एवी रीतनी महानोनी स्थिति छे, ते तो सिद्ध थयु, पण तेथी मोक्षनी समृद्धि मलवानुं तो बनी शकतुं नथी, केमके, ते गृहस्थावस्थामा थइ शक्ति नथी कारण के, गृहस्थावस्थाने दीक्षानु विरोधिपणु छे, तेने माटे हवे तेने कहे छे

इमौ शुश्रूषमाणस्य, गृहानावसतो गुरू ॥
प्रव्रज्याप्यानुपूर्व्येण, न्याय्यांते मे भविष्यति ॥५॥

अर्थ– आ मातपितानी सेवा करता थका, घरे रह्या बाद अंते परिपाटीथी मने युक्त एवी प्रव्रज्या पण थशे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

सर्वपापनिवृत्तिर्यत्, सर्वथैषा सतां मता ॥
गुरूद्वेगकृतोऽत्यंतं, नेयं न्याय्योपपद्यते ॥६॥

अर्थ– सर्व पापोनी निवृत्तिरूप एवी आ दीक्षा उत्तम माणसोए सर्वथा प्रकारे मानेली छे, अने तेथी मावापने अत्यंत उद्वेग करावनारनी आ दीक्षा न्यायवाली घटती नथी

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

ते एम केम ? तेने माटे हवे कहे छे.

प्रारंभमंगलं ह्यस्या, गुरुशुश्रूषणं परं ॥
एतौ धर्मप्रवृत्तानां, नृणां पूजास्पदं महत् ॥७॥

अर्थ– मावापनी जे सेवा, ते आ प्रव्रज्यानुं प्रारंभमंगल, केतां भावमंगल छे; केम के, मोक्षना हेतुभूत एवी धर्मक्रियामां प्रवर्त थएला माणसोने, ते मातपिता, मोटुं पूजानुं स्थानक छे.

टीकानो भावार्थ– (श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे ते पूजानुं स्थानकपणुंज समर्थन करता थका कहे छे.

स कृतज्ञः पुमान् लोके, स धर्मगुरुपूजकः ॥
स शुद्धधर्मभाक् चैव, य एतौ प्रतिपद्यते ॥ ८ ॥

अर्थ– जे माणस मातपितानी सेवा करे छे, ते माणस आ जगतमां कृतज्ञ छे, तथा ते पोताना धर्मगुरुने पूजनारो छे, तथा ते शुद्धधर्मने भजनारो छे.

एवी रीते पचीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

षड्विंशतितमाष्टकं प्रारभ्यते.

हवे अहीं वादी शंका करतो थको कहे छे के, तीर्थंकरनुं दान संख्यावालुं छे, माटे तेने महत्वपणुं केम कहेवाय ? केम के, महाननुं दान पण महान होवुं जोइये. ते बाबत देखाडतो थको हवे वादी कहे छे.

जगद्गुरोर्महादानं, संख्यावच्चेत्यसंगतम् ॥
शतानि त्रीणिकोटीनां,सूत्रमित्यादिचोदितम् ॥१॥

अर्थ– जगतना गुरुनुं (तीर्थंकरनुं) दान संख्यावालुं छे, माटे तेने महादान कहेवुं, ते अनुचित छे; केम के, ते दान त्रण-सें क्रोड इत्यादि सूत्रमां कहेलुं छे.

टीकानो भावार्थ– (श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

बुद्धनुं महादान छे, एम कहेतो थको हजु वादीज कहे छे

अन्यैस्त्वसंख्यमन्येषां, स्वतंत्रेषूपवर्ण्यते ॥
तत्तदेवेह तद्युक्तं, महच्छब्दोपपत्तितः ॥ २ ॥

अर्थ –बीजा एटले बौद्ध लोको, पोताना बोधिसत्त्वोनु दान, पोताना शास्त्रमा असख्यातुं कहे छे, एवी रीते "महत्" शब्दनी उपपत्तिथी, तेनु ते दान युक्त छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)
तेथी शु ? ते हवे कहे छे

ततो महानुभावत्वा, त्तेषामेवेह युक्तिमत् ॥
जगद्गुरुत्वमखिलं, सर्वं हि महतां महत् ॥ ३ ॥

अर्थ –ते महादानना योगथी, तेओनेज सघलु जगतनु गुरुपणुं, युक्तिवाळु छे, केम के, महानोनु सघलुं कार्य महानज होय छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)
हवे ते पूर्वपक्षने उपसंहरता थका कहे छे

एवमाहेह सूत्रार्थं, न्यायतोऽनवधारयन् ॥
कश्चिन्मोहात्ततस्तस्य, न्यायलेशोऽत्रदर्श्यते ॥४॥

अर्थ– एवी रीते कोइक बौद्ध, मूढताथी, सूत्रना अर्थने न्यायथी नहीं जाणीने कहे छे, माटे तेने हवे तेमा न्यायनो लेश देखाडाय छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)
हवे तेनाज प्रतिपादन माटे कहे छे

महादानं हि संख्याव, दर्थ्यभावाज्जगद्गुरोः ॥
सिद्ध वरवरिकात, स्तस्या सूत्रे विधानतः ॥५॥

अर्थ– याचकना अभावथी, जगद्गुरुनुं (तीर्थंकरनु) दान

संख्यावालुं छे; (पण उदारताना के ऽव्यना अजावथी नहीं.) माटे तेमनुं दान वरवरिकाथी (कोइपण वरदान मागो ?) महादानज सिद्ध थाय छे; वली ते “ वरवरिका ” सूत्रमां पण कहेली छे.

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे ते केम सिद्ध थयुं ? ते कहे छे.

तया सह कथं संख्या, युज्यते व्यजिचारतः ॥
तस्माद्यथोदितार्थं तु, संख्याग्रहणमिष्यताम् ॥६॥

अर्थ– ते वरवरिकानी साथे, व्यजिचार आववाथी दाननी संख्या केम घटी शके ? माटे उपर कहेला प्रयोजनवालुंज संख्यानुं ग्रहण जाणवुं.

हवे जे “ महानुजावत्व ” आदिक जे वादीए कह्युं, तेने दोषवालुं कहेता थका कहे छे.

महानुजावताप्येषा, तद्भावेन यदर्थिनः ॥
विशिष्टसुखयुक्तत्वा, त्संति प्रायेण देहिनः ॥७॥

अर्थ– महानुजावता पण तेज कहेवाय, के, ते जगद्गुरुना जावमां मागणो न होय; शामाटे के, प्रायें करीने प्राणीउ विशिष्ट सुखें करीने युक्त होय छे.

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

तथा,

धर्मोद्यताश्च तद्योगा, त्तदा ते तत्वदर्शिनः ॥
महन्महत्वमस्यैव, मयमेव जगद्गुरुः ॥ ८ ॥

अर्थ– ते जगद्गुरुपणाना संबंधथी, तेउ कुशल अनुष्ठानोमां उद्यमवंत होय छे, तथा ते वखते तेउ तत्वने जानारा होय छे;

माटे एवा जिनेश्वर प्रभुनेज महन्महत्व घटी शके छे, अने तेज जगतना पण गुरु छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

एवी रीते छवीशमा अष्टकनुं विवरण सपूर्ण थयुं

सप्तविंशतितमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते उपर जगद्गुरुनुं महादान कह्युं, पण ते युक्त नथी, एवी रीते परमतने देखाडता थका हवे कहे छे

कश्चिदाहास्यदानेन, कश्वार्थ· प्रसिध्यति ॥
मोक्षगामी ध्रुवं ह्येप, यतस्तेनैव जन्मना ॥ १ ॥

अर्थ– कोइक एम कहे के, तेना दानथी कयो पुरुपार्थ सिद्ध थवानो छे, केम के, ते तो तेज जन्में करीने खरेखर मोक्षगामी छे

टीकानो भावार्थ– (श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

हवे तेनो उत्तर आपे छे

उच्यते कल्पएवास्य, तीर्थकृन्नामकर्मण· ॥
उदयात्स्सर्वसत्त्वानां, हित एव प्रवर्तते ॥

अर्थ– तीर्थंकर प्रभुनो ते आचारज कहेवाय छे, केम के, तीर्थंकरनामकर्मना उदयथी ते सघला प्राणीउना हितमाज प्रवर्ते छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

हवे वीजो परिहार कहे छे

धर्मांगख्यापनार्थं च, दानस्यापि महामति ॥
अवस्थौचित्ययोगेन, सर्वस्यैवानुकंपया ॥ ३ ॥

अर्थ– दानने, धर्मना एक अंगरूप कहेवामाटे, महावोधवाला एवा प्रभुए, अवस्थाना उचितपणाना योगथी अथवा सर्वेनी अनुकपायें करीने, दान दीधु छे

ते दान धर्मनुं अंगज छे, ते देखाडवा माटे हवे कहे छे.

शुभाशयकरं ह्येत, दाग्रहछेदकारि च ॥

सदभ्युदयसारांग, मनुकंपाप्रसूति च॥ ४ ॥

अर्थ- ते दान, (चित्तना) शुभ आशयने करनारुं, तथा ममतानो नाश करनारुं, अने उत्तम अभ्युदयनुं उत्तम कारण, तथा दयाने उत्पन्न करनारूं छे.

मुनिए पण उचित दान देवुं, एवुं दृष्टांतथी देखाडता थका हवे कहे छे.

ज्ञापकं चात्रभगवान्, निष्क्रांतोऽपि द्विजन्मने ॥

देवदूष्यं ददद्धीमा, ननुकंपाविशेषतः ॥ ५ ॥

अर्थ- अहीं ते दृष्टांत जाणवुं के, महाज्ञानी एवा भगवान श्री वीरप्रभुए दीक्षा लीधा पछी पण, अनुकंपाथी ब्राह्मणने देवदूष्य वस्त्र आप्युं छे.

टीकानो भावार्थ- श्री वीरप्रभुए एक वर्षसुधि प्राणीउने वांछित दान आप्युं, तथा पछी दीक्षा लइने, ज्ञातवनखंडमां आव्या; ते दान वखते भगवानना पितानो मित्र कोइ ब्राह्मण देशांतर गयो हतो; पण त्यां तेने कंइ नहीं मलवाथी पाछो दीण थयो थको पोताने घेर आव्यो; त्यारे तेनी स्त्रीए तेने कह्युं के, भगवाने सघला प्राणीउने इच्छित दान दइने दीक्षा लीधी; अने ते वखते तुं तो तारा दुर्भाग्यथी देशांतर गयो हतो; माटे हवे तुरत भगवान पासे जइने कंइक याचना कर? केमके, हजु पण ते अनुकंपावान प्रभु तने कंइक आपशे. पछी ते ब्राह्मण प्रभुपासे आवीने याचना करवा लाग्यो; त्यारे भगवाने पण तेनापर दया लावीने पोतानी पासेनुं अरधुं देवदुष्य वस्त्र आप्युं.

इत्थमाशयभेदेन, नातोऽधिकरणं मतम् ॥

अपि त्वन्यगुणस्थानं, गुणांतरनिबंधनम् ॥ ६ ॥

अर्थ-एवी रीते आशयना नेदें करीने ते असंयत दानथी, अधिकरण मानेलुं नथी, केमके, अन्य गुणस्थानक गुणांतरनुं कारण छे

टीकानो नावार्थ- (श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

ये तु दानं प्रशसंती, त्यादिसूत्रं तुयत्स्मृतम् ॥
अवस्थानेदविषय, दृष्टव्यं तन्महात्मनिः ॥७॥

अर्थ-"जे दाननी प्रशंसा करे छे" इत्यादिक जे सूयगडांगमां कहेलुं छे, ते महात्मा पुरुषोए अवस्थानेदना विषयवालुं जाणवुं

टीकानो नावार्थ- (श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

एवी रीते प्रसंगोपात्त वर्णन कर्युं, हवे चालती वातने जोडवा माटे कहे छे

एवं नकश्चिदस्यार्थ, स्तत्वतोऽस्मात्प्रसिद्ध्यति ॥
अपूर्व.किंतुतत्पूर्व, मेवंकर्मप्रहीयते ॥ ८ ॥

अर्थ- एवी रीते आचारपूर्वक दान देवाथी, परमार्थे करीने, तीर्थंकरनो कोइ पण उमदो पुरुषार्थ सिद्ध थतो नथी, पण तेथी तीर्थंकरपणाना निमित्तरूप एवुं कर्म नाश थाय छे

एवी रीते सत्तावीशमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं

अष्टविंशततिमाष्टकं प्रारन्यते

हवे प्रनुना राज्यादिक दानमां परमतनी अपेक्षायें दूषण देखाडता थका, कहे छे

अन्यस्त्वाहास्य राज्यादि, प्रदाने दोषएवतु ॥
महाधिकरणत्वेन, तत्वमार्गेऽविचक्षण. ॥ १ ॥

अर्थ- तत्वमार्गने नही जाणनारो एवो कोइक वादी एम कहे छे, के, दुर्गतिना हेतुरूप एवी क्रियायें करीने, तीर्थंकरनुं राज्य आदिकनुं जे दान, तेमां दोषज छे

टीकानो नावार्थ- (श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

हवे तेनो आचार्य महाराज उत्तर आपे छे.

अप्रदाने हि राज्यस्य, नायकाजावतो जनाः ॥
मिथो वैकालदोषेण, मर्यादाजेदकारिणः ॥ २ ॥
विनश्यंत्यधिकं यस्मा, दिहलोके परत्र च ॥
शक्तौ सत्यामुपेक्षा च, युज्यते न महात्मनः ॥३॥
तस्मात्तडुपकाराय, तत्प्रदानं गुणावहम् ॥
परार्थदीक्षितस्यास्य, विशेषेण जगजुरोः ॥ ४ ॥

अर्थ– जो जगवान राज्य सोंपी न जाय, तो नायकना अजावथी माणसो, कालना दोषथी मांहो मांहे पोतानी मर्यादानो जंग करनारा थाय; अने एवी रीते आ लोक अने परलोकमां तेमनो अधिक विनाश थाय; अने वली पोतानी शक्ति बतां महात्माने उपेक्षा करवी, ते युक्त कहेवाय नहीं; माटे तेउना उपकारने अर्थे, ते राज्य सोंपी आपवुं, ते उत्तम छे; अने तेमां पण परने अर्थे जेणे दीक्षा लीधी छे, एवा जगतना गुरु तीर्थंकर महाराजने तो तेम करवुं, विशेषे करीने युक्त छे.

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे अहीं कोइ वादी एवी शंका करे के, जगवाने जे विवाह आदिक व्यवहार देखाड्यो, ते दोषणवालुं छे, तेने माटे हवे तेने कहे छे.

एवं विवाहधर्मादौ, तथा शिल्पनिरूपणे ॥
न दोषोऽुत्तमं पुण्य, मित्थमेव विपच्यते ॥ ५ ॥

अर्थ– एवी रीते विवाह अने राज्य धर्मादिकमां, तथा कलाउ शिखववामां, तीर्थंकरने दोष नथी; केम के, तीर्थंकरनामकर्मरूपी जे उत्तम पुण्य, ते तेवीज रीते विपाकने पामे छे.

टीकानो भावार्थ- (श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

किंचेहाधिकदोषेभ्यः, सत्त्वानां रक्षणं तु यत् ॥
उपकारस्तदेवैषां, प्रवृत्त्यंगं तथास्य च ॥ ६ ॥

अर्थ- वली ते राज्य आदिक सोंपवामा अधिक दोषोथी, मुमुक्षु प्राणीओनुं रक्षण थाय छे, माटे एवी रीते, तेवा प्राणीओनो जे उपकार करवो, तेज तेमनी प्रवृत्तिनुं अंग छे

टीकानो भावार्थ- (श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

हवे कहेला अर्थने दृष्टांतथी समर्थन करता थका कहे छे

नागादेरक्षणं यद्वद्, गर्ताद्याकर्षणेन तु ॥
कुर्वन्नदोषवांस्तद्व, दन्यथा संभवादयम् ॥ ७ ॥

अर्थ- जेम खाडा आदिकमा पडिने पण नाग (हाथी) आदिकथी रक्षण कराय छे, तेवी रीते उपकार करता थका प्रभु निर्दोषी छे, केम के, तेम कर्याविना उपकार थई शकतो नथी

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

इत्थं चैतदिहेष्टव्य, मन्यथा देशनाप्यलम् ॥
कुधर्मादिनिमित्तत्वा, द्दोषायैव प्रसज्यते ॥ ८ ॥

अर्थ- एवी रीते, ते राज्यप्रदान आदिक जाणी लेवुं, जो एम न मानीयें तो तेमनी देशना पण, कुधर्म आदिकना निमित्तपणाथी अतिशयें करीने दोषने माटेज थाय ! ! !

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

अवी रीते अठावीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं

एकोनत्रिंशतितमाष्टक प्रारभ्यते.

राज्यादिकना दानपूर्वक प्रभुए सामायिक अंगीकार करेलुं छे, माटे हवे तेनुं स्वरूप निरुपण करवा माटे कहे छे

सामायिकं च मोक्षांगं, परं सर्वज्ञभाषितम् ॥
वासीचंदनकल्पाना, मुक्तमेतन्महात्मनाम् ॥१॥

अर्थ– वांसला प्रते चंदनतुल्य, एवा महात्माउने माटे, सर्वज्ञ प्रभुए कहेलुं एवुं सामायिक उत्कृष्टुं मोक्षनुं अंग कहेलुं छे.

टीकानो भावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे ते सामायिकनुं स्वरूपथी वर्णन करता थका कहे छे.

निरवद्यमिदं ज्ञेय, मेकांतेनैव तत्वतः ॥
कुशलाशयरूपत्वात्सर्वयोगविशुद्धितः ॥ २ ॥

अर्थ– ते सामायिक, उत्तम आशय रूप होवाथी, तथा सघला मन, वचन, अने कायाना योगनी शुद्धिथी, परमार्थे करीने एकांतथीज निरवद्य जाणवुं.

टीकानो भावार्थ– (श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे बौद्धे अंगीकार करेला सामायिकना दूषणमाटे कहे छे.

यत्पुनः कुशलं चित्तं, लोकदृष्ट्या व्यवस्थितम् ॥
तत्तथौदार्ययोगेऽपि, चिंत्यमानं न तादृशम् ॥३॥

अर्थ– पण जे लोकदृष्टिथी कुशल चित्त रहेलुं छे, ते, तेवा प्रकारनी उदारतानो योग होते छते पण, चिंतवन करातुं थकुं, शुद्ध सामायिक सरखुं कहेवाय नहीं.

हवे ते बुद्धे कल्पेलुं कुशल चित्त देखाडता थका कहे छे.

मय्येवनिपतत्वेत, ज्जगद्दुश्चरितं यथा ॥
मत्सुचरितयोगाच्च, मुक्तिः स्यात्सर्वदेहिनाम्॥४॥

अर्थ– बुद्ध कहे छे के, जगतनुं आ दुश्चरित्र मारामांज आवीने पडो ? के जेथी करीने मारा उत्तम चरित्रना योगथी सघला प्राणीउने मोक्ष थाय.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

एवी रीतनुं उदारतायें करीने युक्त एवुं पण चित्त, सामायिक सरखुं केम नथी ? तेने माटे हवे कहे छे

असंज्ञवीदं यदस्तु, बुद्धानांनिर्वृत्तिश्रुते॰ ॥
सज्ञवित्वेत्वियंनस्या, त्तत्रैकस्याप्यनिर्वृतौ ॥ ५ ॥

अर्थ– आ वावत असंज्ञवित छे, केम के, बुद्धोनी निवृत्ति कहेली छे, अने कदाच ते वावतनु सज्ञवपणु मानीयें, तो, जगतोमा एकनी पण निवृत्ति न होते छते ते बुद्धनी निवृत्ति न सज्ञवे; अर्थात् बुद्ध ज्यारे जगतनु दुश्चरित्र लीधु, त्यारे तेने मोक्ष शी रीते घटी शके ?

टीकानो जावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

एवी रीते ते चित्त ज्यारे सामायिक सरखुं नथी, तो ते केवुं छे ? ते हवे कहे छे

तदेवं चितनं न्याया, त्तत्वतो मोहसंगतम् ॥
साध्ववस्थांतरे ज्ञेय, बोध्यादे॰प्रार्थनादिवत् ॥६॥

अर्थ– तेथी करीने, एवी रीतनु जे चितवन, ते न्यायथी अने तत्वथी मोहयुक्त छे, अने तेनी रीतनु चितवन, बोधिवीज आदिकनी प्रार्थनानी पेठे, अवस्थातरमा एटले सराग अवस्थामा शोजन जाणवुं

जो के व्याघ्रादिकने पोतानु मास देवा आदिकमा कुशल चित्त परमतवालो वादी माने छे पण सामायिकनी अपेक्षाथी अशोजन छे, एवु देखाडता थका हवे कहे छे

अपकारिणि सद्बुद्धि, र्विशिष्टार्थप्रसाधनात् ॥
आत्मंज्ञरित्वपिशुना, तदपायानपेक्षिणी ॥ ७ ॥

अर्थ– मोक्षरूपी उत्तम पुरुषार्थना साधनथी, अपकार (नुकशान) करनार एवा व्याघ्रादिकमा जे शोजन बुद्धि धापरनी,

ते फक्त आपपेटभरापणाने सूचवनारी, तथा ते व्याघ्रादिकोनी दुर्गति आदिकनी अपेक्षावाली छे.

हवे चालती वातने संपूर्ण करता थका कहे छे.

एवंसामायिकादन्य, दवस्थांतरभद्रकम् ॥

स्याच्चित्तं तत्तु संशुद्धे, र्ज्ञेयमेकांतभद्रकम् ॥ ८ ॥

अर्थ– एवी रीते सामायिकथी जुदी रीतनुं जे चित्त, ते अवस्थांतरमां भद्रक होय, अने सामायिक तो, समस्त दोषना वियोगथी एकांत शोभनिक जाणवुं.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

एवी रीते ओगणत्रीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

त्रिंशत्तितमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते उपर सामायिकने एकांत भद्र कह्युं; हवे ते केवुं होय? ते कहे छे.

सामायिकविशुद्धात्मा, सर्वथा घातिकर्मणः ॥

क्षयात्केवलमाप्नोति, लोकालोकप्रकाशकम् ॥१॥

अर्थ–सामायिके करीने शुद्ध छे, आत्मा जेनो एवो प्राणी, सर्वथा प्रकारे घातिकर्मोना क्षयथी, लोकालोकने प्रकाश करनारा एवा केवलज्ञानने पामे छे.

हवे ते भावता थका कहे छे.

ज्ञाने तपसि चारित्रे, सत्येवास्योपजायते ॥

विशुद्धिस्तदंतस्तस्य, तथाप्राप्तिरिहेष्यते ॥ २ ॥

अर्थ– ज्ञान, तप, अने चारित्र, होते छतेज आत्माने विशुद्धि थाय छे; अने तेथी तेवी रीते केवलज्ञाननी प्राप्ति थाय छे.

टीकानो भावार्थ– ज्ञान एटले ज्ञेय वस्तुने प्रकाश करवामां दीपक समान एवुं श्रुत आदिक, उपलक्षणथी सम्यक्त्व पण

जाणी लेवुं, केम के, ते सम्यक्त्वविनानुं ज्ञान पण अज्ञानज छे, तथा तप एटले जुना कर्मरूपी कचराने शोधनार एवुं अनशनादिक तप, तथा चारित्र एटले नवा कर्मरूपी रजने निवारण करनारुं संयम, ते त्रणे होते छते आत्मानी शुद्धि थाय छे, ते शुद्धि केवी ? तो के घातिकर्मरूपी मेलने शुद्ध करनारी जाणवी अने तेथी करीने आत्माने केवलज्ञाननी प्राप्ति थाय छे

हवे ते केवलज्ञान केवुं ? ते कहे छे

स्वरूपमात्मनोह्येतत्, किंत्वनादिमलावृतम् ॥
जात्यरत्नांशुवत्तस्य, क्षयात्स्यात्तदुपायत. ॥ ३ ॥

अर्थ– ए केवलज्ञान खरेखर आत्मानु स्वरूप छे, पण ते अनादिकालना ज्ञानावरणादिक कर्मरूपी मेलथी आच्छादित थएलुं छे, पण उत्तम रत्नना किरणोनी पेठे, तेनो कर्मरूपी मेल निकली जवाथी, तथा सामायिकना अभ्यासरूप तेना उपायथी, ते केवलज्ञान प्रगट थाय छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

अहीं कोई शंका करे के, अरूपपणामा पण आ केवलज्ञान, लोकालोकने प्रकाश करनारु केम कहेवाय ? तेने माटे हवे तेने कहे छे

आत्मनस्तत्स्वभावत्वा, ल्लोकालोकप्रकाशकम् ॥
अतएवतदुत्पत्ति, समयेऽपि यथोदितम् ॥ ४ ॥

अर्थ– आत्मानु ते स्वभावपणु होवाथी, ते ज्ञान लोकालोकने प्रकाश करनारु छे, अने तेथीज उत्पत्ति वखते पण, ते सर्व वस्तुओने एकीवारे प्रकाश करनारु छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

आत्मस्यमात्मधर्मत्वा, त्संवित्त्या चैव सिध्यते ॥
गमनादेरयोगेन, नान्यथा तत्त्वमस्य तु ॥ ५ ॥

अर्थ– वली ते केवलज्ञान आत्मधर्मरूप होवाथी, स्वसंवेदनथी आत्मामां रहेलुं जणाय छे; वली ते गमनादिकना अयोगथी थाय छे; अने गमनादिकना सद्भाववालुं ते केवलज्ञानपणुं होइ शकतुं नथी.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे ज्यारे ते केवलज्ञान आत्माना स्वरूपवालुंज छे, त्यारे तेने चंद्रादिकनी प्रभा सरखुं केम कहे छे? त्यारे तेने हवे उत्तर कहे छे.

यच्च चंद्रप्रभाद्यत्र, ज्ञातं तद्ज्ञातमात्रकम् ॥

प्रभापुद्गलरूपाय, त्तद्धर्मो नोपपद्यते ॥ ५ ॥ ६ ॥

अर्थ– आ केवलज्ञानना स्वरूपमां चंद्रप्रभा आदिकनुं जे दृष्टांत छे, ते प्रकाशमात्रना साधर्म्यथी फक्त दृष्टांतज छे; केमके प्रभा छे ते, पुद्गलरूप छे; माटे ते चंद्रादिकना पर्यायवाली घटी शकती नथी.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हजु पण तेनुं ज्ञातमात्रपणुं समर्थन करता थका कहे छे.

अतः सर्वगताभास, मप्येतन्नयदन्यथा ॥

युज्यते तेन सन्न्याया, त्संविस्यादोपिभाव्यताम् ७

अर्थ–ए चंद्रप्रभाना दृष्टांतथी सर्व वस्तुउमां प्राप्त थएलो छे आभास जेनो, एवुं केवलज्ञान पण घटी शकतुं नथी; केमके अन्यथा प्रकारे, एटले चंद्रप्रभाना दृष्टांतना सर्व साधर्म्यपणाना ज्ञानथी, घटे छे; अने तेथी उपर कहेला उत्तम न्यायथी, अने स्वसंवेदनथी ते ज्ञातमात्र पण जाणी लेवुं.

पूर्वे कहेलुं छे, स्वरूप जेनुं, एवा केवलज्ञाननुं वर्णन करता थका हवे कहे छे.

नाद्रव्योऽस्तिगुणोऽलोके, न धर्मांतौविभुर्नच ॥

आत्मातद्गमनाद्यस्य, नास्तु तस्माद्यथोदितम्॥७॥

अर्थ–द्रव्यविनानो गुण नथी, अने अलोकमा धर्मास्तिकाय तथा अत नथी, वळी आत्मा सर्वव्यापी पण नथी, ते कारणथी आ केवल-ज्ञानने गमनादिक नथी, माटे केवलज्ञान आत्मामाज रहलुं छे.

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे)

एवी रीते त्रिंशमा अष्टकनु विवरण संपूर्ण थयु

एकत्रिंशत्तितमाष्टक प्रारभ्यते.

अहीं कोई शंका करे के, जगवानने ज्यारे केवलज्ञान थयुं, त्यारे तो ते कृतार्थ थया, पछी तेने धर्मदेशना करवानी शी जरूर छे? तेने माटे हवे तेने कहे छे

वीतरागोऽपि सद्वेद्य, तीर्थकृन्नामकर्मण· ॥
उदयेन तथा धर्मे, देशनायां प्रवर्तते ॥ १ ॥

अर्थ– जगवान वीतराग छे, तो पण शोजन तीर्थकृत् नामकर्मना उदयथी, ते प्रकारे करीने जगवान धर्मदेशनामा प्रवर्ते छे

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे)

हवे ते कर्मनु स्वरूपज कहे छे

वरबोधित आरभ्य, परार्थोद्यतएव हि ॥
तथाविध समादत्ते, कर्मस्फीताशय· पुमान् ॥२॥

अर्थ– सम्यग्दर्शननी प्राप्तिथी मांमीने, परना कार्यमा उद्यमवंत थएलो, तथा उदार आशयवाळो एवो पुरुष, तेवी रीतना कर्मने बांधे छे

टीकानो जावार्थ–(श्लोकना अर्थने मळतोज छे)

तेवी शुं? ते हवे कहे छे

यावत्संतिष्ठते तस्य, तत्तावत्संप्रवर्तते ॥
तत्स्वजावत्वतो धर्म, देशनाया जगद्गुरु ॥ ३ ॥

अर्थ- ज्यांसुधी ते तीर्थंकरने, ते तीर्थकृत् नामकर्म, रहे छे, त्यांसुधी ते ते जगतना गुरु एवा भगवान् धर्मदेशनामां प्रवर्ते छे? केम के, ते कर्मनो तेवो स्वभाव छे.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

जगद्गुरुना कारणरूप एवा तेमना वचननुं स्वरूप प्रगट करता थका हवे कहे छे.

वचनं चैकमप्यस्य, हितां भिन्नार्थगोचरां ॥

भूयसामपिसत्वानां, प्रतिपत्तिं करोत्यलम् ॥ ४ ॥

अर्थ- ते जगद्गुरुनुं एक पण वचन, घणां प्राणीओनी पण, हितकारी, अने जुदा जुदा अर्थवाली, एवी प्रतिपत्तिने अतिशयें करीने करे छे.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे ते वात केम संभवे? तेने माटे कहे छे.

अचिंत्यपुण्यसंभार, सामर्थ्यादेतदीदृशम् ॥

तथाचोत्कृष्टपुण्यानां, नास्त्यसाध्यं जगत्त्रये ॥ ५ ॥

अर्थ- अचिंत्यपुण्यना संभारना समर्थनपणाथी तीर्थंकरमहाराजनुं तेवा अतिशयवालुं वचन छे; केमके, जेओनां पुण्यो उत्कृष्ट होय छे, तेओने आ त्रणे जगतमां कंइ पण असाध्य होतुं नथी.

अहीं कोइ शंका करे के, प्रभुनुं वचन ज्यारे प्राणीओना भिन्नार्थोने पण जणावी आपे छे, त्यारे अभव्यो प्रते पण तेनी असर केम थती नथी? तेने माटे हवे तेने कहे छे.

अभव्येषु चभूतार्था, यदसौ नोपपद्यते ॥

तत्तेषामेवदौर्गुण्य, ज्ञेयंभगवतो नतु ॥ ६ ॥

अर्थ-- अभव्योन विषे ते देशना जीवादिक तत्वोने जणावनारी जे नथी थती, तेमां ते अभव्योनुंज दुर्गुणपणुं छे; पण तेमां भगवाननो कंइ पण वांक नथी.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)
हवे तेज अर्थने दृष्टांतथी समर्थन करता थका कहे छे

दृष्टश्चाभ्युदये भानोः, प्रकृत्या क्लिष्टकर्मणाम् ॥
अप्रकाशोऽप्युलूकानां, तद्वदत्रापि भाव्यताम् ॥७॥

अर्थ– सूर्यनो उदय होते छते, प्रकृतिथीज दुष्ट कर्मोवाला एवा घुवडोने प्रकाश नहीं थतो, जणाएलो छे, तेनी पेठे अहीं पण जाणी लेवु

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)
हवे प्रभुनी देशनानुंज स्वरूप कहे छे

इय च नियमाद्ज्ञेया, तथानंदाय देहिनाम् ॥
तदात्वेवर्तमानेपि, भव्यानां शुद्धचेतसाम् ॥८॥

अर्थ– प्रभुनी ते देशना निश्चयें करीने ते कालने विषे, वणिग्वृद्धदासीना उदाहरणें करीने, प्राणीओना आनद माटे थइ छे, अने वर्तमान कालमा पण शुद्ध चित्तवाला एवा भव्योना आनंद माटे थाय छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)
एवी रीते एकत्रीशमा अष्टकनु विवरण संपूर्ण थयु

द्वात्रिंशत्तमाष्टकं प्रारभ्यते.

हवे सकल कर्मोना क्षयथी जे थाय छे ते देखाडवा माटे कहे छे

कृत्स्नकर्मक्षयान्मोक्षो, जन्ममृत्स्वादिवर्जित· ॥
सर्ववाधाविनिर्मुक्त, एकांतसुखसंगतः ॥१॥

अर्थ– सघला ज्ञानावरणादिक आठे कर्मोना क्षयथी, जन्म अने मृत्यु आदिकथी रहित, तथा सर्व आपदाओविनानो, अने एकात सुखना संगमवालो मोक्ष थाय छे

हवे परम पदनुं स्वरूप देखाडता थका कहे छे.

यन्न दुःखेन संभिन्नं, न च भ्रष्टमनंतरम् ॥

अभिलाषापनीतं य, त्तद्ज्ञेयं परमं पदम् ॥ २ ॥

अर्थ– जे दुःखथी मिश्रित नथी, तथा जे क्षीण थतुं नथी, तथा जे आंतराविनानुं छे, तथा जे इच्छाओथी रहित छे, तेने परमपद जाणवुं.

टीकानो भावार्थ– (श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

मोक्ष एकांतसुखना संगमवालो छे, एम उपर कह्युं, तेमां परनी विप्रतिपत्ति देखाडता थका हवे कहे छे.

कश्चिदाहान्नपानादि, भोगाभावादसंगतम् ॥

सुखं वै सिद्धिनाथानां, पृष्टव्यः स पुमानिदम् ॥३॥

अर्थ– (पारमार्थिक सुखना स्वरूपने नहीं जाणनारो,) एवो कोइक पुरुष अहीं एम कहे के, मोक्षे गएलाओने तो, त्यां अन्न, पाणी, पुष्प, स्त्री आदिकना भोगोनो अभाव होवाथी, तेओने सुख घटी शकतुं नथी; (त्यारे आचार्य महाराज कहे छे के,) तेवा पुरुषने नीचेप्रमाणे पूछवुं.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे ते पूछवानुं कहे छे.

किं फलोऽन्नादिसंभोगो, बुभुक्षादिनिवृत्तये ॥

तन्निवृत्तेः फलंकिंस्या,त्स्वास्थ्यं तेषांतुतत्सदा॥४॥

अर्थ– अन्नादिकनो जे संभोग, ते शुं फलवालो छे ? त्यारे ते वादी एम कहे के, क्षुधा आदिकनी निवृत्तिने माटे छे; त्यारे वली आचार्य महाराज तेने पूछे छे के, ते क्षुधा आदिकनी निवृत्तिनुं शुं फल छे ? त्यारे वली वादी एम कहे के, तेनुं फल स्वस्थता छे; त्यारे वली आचार्य महाराज तेने कहे छे के, ते स्वस्थता तो ते सिद्धोने हमेशनीज छे.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)
हवे तेज अर्थने वीजा भेदे करीने कहे छे

अस्वस्थस्यैव भैपज्यं, स्वस्थस्य तु न दीयते ॥
अवासस्वास्थ्यकोटीनां,भोगोऽन्नादेरपार्थकः॥५॥

अर्थ- रोगीनेज औपध देवाय छे, पण निरोगीने देवालुं नथी, माटे एवी रीते प्राप्त थएल छे स्वस्थतानी कोटी जेउने, एवा सिद्धोने अन्नादिकनो परिभोग अनर्थक छे

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

अकिंचित्करकंक्षेय, मोहाभावाद्रताद्यपि ॥
तेषां कंड्वाद्यभावेन, हंतकंडूयनादिवत् ॥ ६ ॥

अर्थ- पुनेदादिक मोहनीयना अभावथी रतादिक पण ते सिद्धोने निष्फल जाणवु, केम के, खर्ज आदिकना अभावथी, खर्ज करवानु पण निरर्थक छे

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)
हवे सिद्धना सुखनुं स्वरूप कहे छे

अपरायत्तमौत्सुक्य, रहित निष्प्रतिक्रियम् ॥
सुखं स्वाभाविक तत्र, नित्यं भयविवर्जितम् ॥७॥

अर्थ- सिद्धोनु सुख स्वाधिन, तथा विषयनी आकाक्षाविनानु, तथा प्रतिक्रियाविनानु, तथा स्वाभाविक, नित्य, अने भयें करीने रहित छे

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे)

परमानंदरूपं तद्, गीयतेऽन्यैर्विचक्षणैः ॥
इत्थ सकलकल्याण, रूपत्वात्सांप्रतं ह्यद॰ ॥ ८ ॥

अर्थ-- वीजा विचक्षण एवा अन्यदर्शनीउ ते सुखने पर-

मानंदरूप मानेछे; एवी रीते ते सुख सकल कल्याणरूप हो-
वाथी युक्त छे.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे ते कोने जाणवुं? ते कहे छे.

संवेद्यं योगिनामेत, दन्येषांश्रुतिगोचरः ॥
उपमाभावतोव्यक्त, मभिधातुं न शक्यते ॥९॥

अर्थ– ते सुख केवलीउ जाणी शके तेवुं छे, अने बीजाउने ते क-
र्णगोचर छे; अने वली उपमाविना प्रगट कहेवाने पण ते शक्य नथी.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे आ ग्रंथनी समाप्तिने सूचनारो श्लोक कहे छे.

अष्टकाख्यं प्रकरणं, कृत्वायत्पुण्यमर्जितम् ॥
विरहात्तेन पापस्य, भवंतु सुखिनो जनाः ॥१०॥

अर्थ– आ अष्टक नामनुं प्रकरण करीने जे पुण्य उपार्जन क-
रेलुं छे, तेथी पापना विरहथी लोको सुखी थाउ.

टीकानो भावार्थ– आ श्लोकमां जे " विरह " शब्द मुकेलो
छे, तेथी आ मूल ग्रंथ हरिभद्रसूरि महाराजे बनावेलो छे, एम
प्रत्यक्ष जणाय छे, केमके हरिभद्रसूरि महाराजनो " विरहांक " छे

एवी रीते बत्रीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

प्रशस्तिः

जिनेश्वरानुग्रहतोऽष्टकानां ॥
विविच्य गंभीरमपीदमर्थम् ॥
अवाप्यसम्यक्त्वमपेतरेकं ॥
सदैवलोकास्तरणेयतध्वम् ॥ १ ॥
सूरेः श्रीवर्धमानस्य, निःसंवरिणः सदा ॥
हारिचारित्रपात्रस्य, श्रीचंद्रकुलभूषिणः ॥ २ ॥
पादांभोजद्विरेफेण, श्रीजिनेश्वरसूरिणा ॥

अष्टकानां कृतावृत्तिः, सत्वानुग्रहहेतवे ॥ ३ ॥
समेमानाधिकेऽशीत्या, सहस्रे विक्रमाद्गते ॥
श्रीजावालिपुरे रम्ये वृत्तिरेपासमापिता ॥ ४ ॥

एवी रीते आ अष्टकजीनु गुजराती छापातर जामनगरनिवासि पंडित श्रावक हीरालाल वि० हंसराजे कर्युं छे, तेमा प्रमादथी के मति दोषथी जे कंइ विपरीत लखायुं होय, ते " मिच्छामि दुक्कड" तथा ते सुज्ञ जनोए कृपा करी सुधारीने वाचवुं, केम के

गच्छतः स्खलनं क्वापि, भवत्येव प्रमादतः ॥
हसंति दुर्जनास्तत्र, समादधति सज्जनाः ॥ १ ॥

अर्थ– मार्गे चालता थका प्राणीने स्खलना तो क्याक पण थायज छे, पण त्या दुर्जनोज हासी करे छे, अने सज्जनो तो तेने सारी रीते उगाडीने बेठो करे छे

हवे छापातर कर्ता पडित हीरालाल समाप्तिमंगलमाटे पोताना गुरु श्री चारित्रविजयजी महाराजनी स्तुति करे छे.

लब्ध्वा यदीयचरणाबुजतारसारं ॥
स्वादच्छटाधरितदिव्यसुधाममूद्दम् ॥
समारकाननतटेध्यटतालिनेव ॥
पीतोमया प्रवरबोधरसप्रवाहः ॥ १ ॥
वंदे मम गुरु नच, चारित्रविजयाह्वयम् ॥
परोपकारिणां धुर्यं, दत्तानंदकदंबकम् ॥२॥ युग्मम् ॥

हीनपुण्या न पश्यंति, रागांधास्तत्वसंस्थितिम् ॥
लाभेऽलाभफलं चैव, लभते ते नराधमा ॥ १ ॥

इति श्री जिनेश्वराचार्यकृतातच्छिष्यश्रीमदजयदेवसूरिमितिसंस्कृताष्टकवृत्ति समाप्ता श्रीरस्तु ॥

समाप्तोऽयं ग्रंथः गुरु श्रीमच्चारित्रविजयसुप्रसादात् ॥

जाहेर खबर.

सर्वे जैनबंधुर्जने मालम थाय जे आमरा तरफथी हालमां नीचेना नवा अपूर्व जैनी ग्रंथो, गुजराती जाषांतर साथे ठपावीने पाकां पुठांथी वांधी वहार पडवामां अव्या ठे.

योगशास्त्र.—(कर्ता श्री हेमचंद्राचार्य) किम्मत रु. ३—४—०

सामुद्रिक शास्त्र.(कर्ता श्री जद्रवाहुस्वामि)किम्मत रु. १—०—०

शुकनशास्त्र.—(कर्ता श्री जिनदत्तसूरि) किम्मत रु. ०—६—०

प्रतिष्ठाकल्प. (कर्ता श्री सकलचंद्रजी) किम्मत रु.०—६—०

जलजात्रादिविधि.—(कर्ता श्री रत्नशेखरसूरि) किम्मत रु.०—६—०

अष्टकजी.—(कर्ता श्री हरिजद्रसूरि, टीकाकार श्री जिनेश्वरसूरि) किम्मत रु. १—१२—०

कल्पसूत्र.(सुखबोधिकाटीकानुं गुजराती जाषांतर चित्रोस.)३—०—०

धर्म सर्व स्वाधिकार.(कर्ता श्री जयशेखरसूरि) तथा कस्तूरिप्रकरण. (कर्ता श्री हेमविमलगणि) } किम्म.रु.०—५—०

शत्रुंजय माहात्म्य खंड पेहेलो(कर्ता श्री धनेश्वरसूरि)कि. रु.२-४-०

नीचेनां पुस्तको गुजराती जाषांतरसहित तैयार थाय ठे, अने थोडाज वखतमां ठपाइ वहार पडशे.

वैराग्यकल्पलता. (कर्ता श्री यशोविजयजी उपाध्याय)

हिंगुलप्रकरण. (कर्ता श्री विनयसागरोपाध्यायजी)

जैनकुमारसंजव महाकाव्य. (कर्ता श्री जयशेखरसूरि)

जद्रवाहु संहिता.(जैननोअपूर्वज्योतिषग्रंथ)(कर्ता श्रीजद्रवाहुस्वा०

प्रजाविक चरित्र जैनधर्ममां थएला महान पुरुषोनां चरित्र)

शत्रुंजय माहात्म्य, खंड बीजो. (कर्ता श्री धनेश्वरसूरि)

मेघमालाविचार. (कर्ता श्री विजयप्रजसूरि)

शा. भीमसिंह माणेक

ठे. मुंबइ, मांडवीबंदर, शाकगली.